प्रेमचन्द और जयशंकर प्रसाद की कहानियों के संवाद तत्व का विश्लेषणात्मक अनुशीलन

PREMCHAND AUR JAYASHANKAR PRASAD KI KAHANIYOM KE SAMVAD TATV KA VISHLESHANATMAK ANUSHEELAN

Thesis submitted to

Cochin University of Science and Technology

for the award of the degree of

Doctor of Philosophy
in
Hindi

By

LOVELY VARGHESE

Supervising Teacher

Prof. (Dr) N.G. DEVAKI

Department of Hindi
Cochin University of Science and Technology
Kochi-682 022

October - 2011

PREMCHAND AUR JAYASHANKAR PRASAD KI KAHANIYOM KE SAMVAD TATV KA VISHLESHANATMAK ANUSHEELAN

Ph.D thesis (Hindi) in the field of Stories

Author

Lovely Varghese
Research Scholar, Department of Hindi
Cochin University of Science and Technology, Kochi-22

Research Advisor

Dr. N.G. Devaki
Professor, Department of Hindi
Cochin University of Science and Technology, Kochi-22

Type setting

Udayan Kalamassery

Department of Hindi
Cochin University of Science and Technology
Kochi-22

October 2011

“मेरे पूज्य पिताजी

एस. वर्गीज़ एवं

प्रिय पुत्र नेविन को

सप्रेम समर्पित.....”

Declaration

I hereby declare that the thesis entitled **"Premchand Aur Jayashankar Prasad Ki Kahaniyom Ke Samvad Tatv Ka Vishleshanatmak Anusheelan"** is outcome of the original work done by me, and the work did not form part of any dissertation submitted for the award of any degree, diploma, associateship, or any other title or recognition.

Department of Hindi
Cochin University of
Science and Technology
Kochi-22.

Lovely Varghese
Research Scholar

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY

Certificate

This is to certify that, to the best of my knowledge the thesis entitled ***"PREMCHAND AUR JAYASHANKAR PRASAD KI KAHANIYOM KE SAMVAD TATV KA VISHLESHANATMAK ANUSHEELAN"*** is a bonafide record of research carried out by **LOVELY VARGHESE** under my supervision.

Department of Hindi
Cochin University of
Science and Technology

Kochi-22.

Dr. N.G. Devaki
Supervising Teacher

''कहानी वास्तव में एक मानवीय
संबोधन और संवाद है।''
'हिन्दी कहानी का रचनाशास्त्र'

- डॉ. धनंजय वर्मा

शोधार्थिनी द्वारा प्रकाशित शोध प्रपत्र

1. **'दिनकर का गद्य साहित्य : 'रेती के फूल' के विशेष संदर्भ में'** - संग्रथन - मई 2008, हिन्दी विद्यापीठ, तिरुवनन्तपुरम, केरल।

2. **'दिनकर का गद्य साहित्य : 'रेती के फूल' के विशेष संदर्भ में'** - अनुशीलन, (दिनकर विशेषांक - जनवरी 2009) हिन्दी विभाग, कोच्चिन विश्वविद्यालय, कोच्चि।

3. **"डॉ. शिवराम कारंद"** - (मलयालम प्रपत्र) - **"इंड्ययिले साहित्य प्रतिभकल"** (संपादक) - डॉ. शशिधरन - 2009

4. **"प्रेमचंद की कहानियों में बुलंद दलित मुक्ति की आवाज़"** - अनुशीलन - (दलित विशेषांक) - फरवरी 2011, हिन्दी विभाग, कोच्चिन विश्वविद्यालय, कोच्चि।

5. **"सच सुने हुए कई दिन हुए"** - कविता का वर्तमान - अक्तूबर-2011, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।

6. **"पसीना"** (मलयालम कहानी का हिन्दी अनुवाद) - (संप्रेषित)

7. **"नाटक और कहानी के संवाद-तत्व में अन्तर"** - (संप्रेषित)

8. **"लॉटरी"** - कहानी (संप्रेषित)

पुरोवाक्

'संवाद' शब्द का शाब्दिक अर्थ है 'मिलकर बोलना', 'कथोपकथन' या 'आपस में बातचीत करना'। इस दृष्टि से विचार करने पर सच्चा साहित्य अपने समय और जनता के साथ एक सार्थक संवाद होता है। जिस साहित्य में वक्ता और श्रोता के बीच एक सार्थक संवाद संभव नहीं होता है, उसे साहित्य की संज्ञा से अभिभूत करना अनुचित ही होगा। कहने का तात्पर्य यह है कि संवाद शिल्प, साहित्य का अविभाज्य अंग है। तात्विक दृष्टि से परखने पर साहित्य की सभी सृजनात्मक विधाओं में संवाद-तत्व का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है। कविता, नाटक आदि आदिम साहित्यिक विधाओं से लेकर आधुनिक अधिकांश विधाओं में भी संवाद मौजूद हैं। संवाद के अभाव में किसी भी रचना का कलात्मक कार्य संभव नहीं हो सकता। इन सभी विधाओं में वस्तु की प्रगति, चरित्र के विकास और भावों के स्पष्टीकरण के लिए संवाद आवश्यक है।

कथा साहित्य में तो संवाद-योजना का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि संवाद के बिना कथा रची नहीं जाती है। कथा का भाषिक माध्यम ही संवाद है। कहानी की वास्तविक प्रगति पात्रों के मुँह से निकलने वाले संवादों से ही शुरू होती है। एक कुशल कहानीकार, जिसमें कहानी कला की वास्तविक पहचान, अभिव्यक्ति की श्रेष्ठता एवं अनुभूतियों की सार्थक एवं गहन पकड़ है, वह संवादों के ज़रिये ही अपनी कहानी को रूपायित करेगा। श्रेष्ठ रचना की यही कसौटी है। इस अर्थ में विचार करने पर पता चलता है कि किसी भी कहानी की सफलता उसमें प्रयुक्त संवादों के अवसरोचित, पात्रोचित एवं प्रभावशाली प्रयोग पर निर्भर है।

प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद ऐसे ही दो महान एवं सफल कहानीकार हैं जिन्होंने अपने कथा साहित्य में मानव जीवन की स्वाभाविक एवं सार्थक अभिव्यक्ति हेतु संवादों की विशेषता को स्वीकार किया है और उसीके अनुरूप अपनी कहानियों को रूपायित किया है। उनकी कहानियों की सफलता काफी हद तक उनमें प्रयुक्त संवाद-योजना के बहुआयामी प्रयोग एवं प्रभाव पर निर्भर है। हिन्दी कहानी साहित्य को उसके प्रारंभिक काल में ही प्रेमचंद और प्रसाद जैसे, कालचक्र की सीमाओं को लाँघकर आगे बढ़ने वाले कथाकार मिले जिनकी साहित्य साधना में पलकर वह उत्तरोत्तर विकास की ओर अग्रसर हुए। इन दो महान कहानीकारों की साहित्यिक उपलब्धियों पर आज तक जितना भी शोध कार्य संपन्न हुआ है, मेरे ख्याल से वे सब उनके कृतित्व एवं व्यक्तित्व की ओर झाँकना मात्र ही है। अर्थात्, प्रेमचंद और प्रसाद के पूरे कहानी साहित्य को आधार बनाकर उनके समग्रतामूलक और गहन अध्ययन का कार्य अभी भी पूरा नहीं हुआ है। प्रेमचंद और प्रसाद के सृजनधर्मी व्यक्तित्व निरन्तर समय की सीमाओं का अतिक्रमण कर रहे हैं जिनकी गहराई को नापना एक शोधार्थी के लिए टेढ़ी खीर है। क्योंकि उनके साहित्य-संसार की चर्चा नित नवीन एवं प्रासंगिक है। हम निस्सन्देह कह सकते हैं कि उनका साहित्य जितना उनके समय में प्रासंगिक एवं नवीन था, उतना आज भी है। प्रस्तुत शोध-कार्य, **"प्रेमचन्द और जयशंकर प्रसाद की कहानियों के संवाद-तत्व का विश्लेषणात्मक अनुशीलन"** - इसी दिशा में किया गया एक विनम्र प्रयास है।

ये दोनों रचनाकार साहित्य के क्षेत्र अलग-अलग जीवन बोध से अनुप्राणित है तो भी दोनों ने अपनी कहानियों को गतिशील बनानेवाले प्रमुख तत्व

के रूप में संवाद तत्व के बहुआयामी प्रयोग पर बल दिया है। इस विश्लेषणात्मक अध्ययन को ही शोधार्थिनी ने अपने शोध प्रबंध का विषय बनाया है। प्रस्तुत शोध प्रबंध का शीर्षक है - **"प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों के संवाद-तत्व का विश्लेषणात्मक अनुशीलन।"** विषय की की समग्रता को ध्यान में रखते हुए इस शोध कार्य को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है।

इस शोध-प्रबंध का पहला अध्याय है - **"हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का स्वरूप।"** इसमें संवाद तत्व के स्वरूप एवं कहानियों में इसकी उपयोगिता एवं महत्व, नाटक और कहानी में इस का भिन्न स्वरूप तथा साहित्य की अन्य विधाओं में इसकी प्रासंगिकता आदि कई बातों को अध्ययन के केन्द्र में रखा गया है। कहानी कला के अन्य तत्वों के साथ संवाद-तत्व के अभिन्न संबन्ध की ओर भी यहाँ विश्लेषण किया गया है।

"हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास" - दूसरा अध्याय है। इसमें हिन्दी कहानियों के विभिन्न पड़ाव में संवाद तत्व के प्रयोग की दिशा में आए विकास क्रम को सोदाहरण रेखांकित किया है। इसकी विस्तृत व्याख्या के लिए कहानियों के इतिहास को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है - प्रेमचंद-पूर्व युगीन कहानियाँ, प्रेमचंद-युगीन कहानियाँ और प्रेमचन्दोत्तर-युगीन कहानियाँ। इन तीनों युगों में संवाद-तत्व के प्रयोग में आए विभिन्न परिवर्तनों का विश्लेषणात्मक निरूपण इस अध्याय में लक्षित किया गया है।

शोध-प्रबंध का तीसरा अध्याय - **"प्रेमचन्द की कहानियों में संवादात्मकता के विविध आयाम"** है। इस अध्याय में 'मानसरोवर' के आठ

भागों में से तथा 'कफन' संग्रह से प्रतिनिधि कहानियों को छाँटकर उनमें प्रयुक्त संवाद योजना के बहुआयामी प्रभाव की दिशा में विचार-विमर्श किया गया है। मुख्य रूप से इन कहानियों में प्रयुक्त संवाद-तत्व किस हद तक कहानी को गतिशील बनाने में तथा कहानी के अन्य तत्वों को बढ़ावा देने में सहायक निकला है - इस दिशा में अध्ययन का ढाँचा खोला है।

चौथा अध्याय है - **"जयशंकर प्रसाद की कहानियों में संवादात्मकता"**। इसमें प्रसाद कृत पाँच कहानी संग्रहों से प्रतिनिधि कहानियों को चुनकर उनमें प्रयुक्त संवादात्मकता के विभिन्न पहलुओं का निरूपण प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है। इन कहानियों की सफलता में संवाद-योजना ने कहाँ तक सार्थक सहयोग दिया है - इस बात को ही अध्ययन के केन्द्र में रखा गया है।

"प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों के संवाद-तत्व का तुलनात्मक अध्ययन" - इस शोध-प्रबंध का पाँचवाँ अध्याय है। इस अध्याय में तुलनात्मक दृष्टि से दोनों कहानीकारों की कहानियों में प्रयुक्त संवाद-तत्व के भाषापरक अन्तर, कथ्यपरक अन्तर, कथन-शैली परक अन्तर और अन्य विधायी प्रभाव की दृष्टि से अध्ययन को नया मोड़ दिया है। वास्तव में इस शोध प्रबंध में निहित उद्देश्य को इस अध्याय में समाहित करने की कोशिश की गई है।

अन्त में **उपसंहार** है, जिसमें प्रस्तुत शोध कार्य के अध्ययनोपरान्त निकले निष्कर्षों को संक्षेप में समाहित किया गया है।

उपसंहार के बाद **परिशिष्ट** में ऐतिहासिक क्रमानुसार प्रेमचंद की कहानियों की सूची दी गई है। परिशिष्ट के बाद, शोध कार्य के सहायक ग्रन्थों की

सूची पंचसूत्री प्रणाली के अनुसार दी गई है। इन सभी ग्रन्थों का प्रत्यक्ष अवलोकन-मनन करने का सुयोग शोधार्थिनी को प्राप्त हुआ है।

यह विश्लेषणात्मक अनुशीलन प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद के कहानी-साहित्य को एक नई दृष्टि से देखने की माँग में अवश्य सहयोग देंगे - यही कामना है।

इस शोध प्रबंध को मैं सविनय विद्वानों के सामने प्रस्तुत कर रही हूँ। इसकी कमियों तथा गलतियों के लिए शोधार्थिनी क्षमाप्रार्थी हूँ।

विनम्र

कोच्चि-22
/10/2011

लव्ली वर्गीज़

कृतज्ञता ज्ञापन

प्रस्तुत शोध-प्रबंध कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के प्रोफसर डॉ. एन.जी. देवकी के अनवरत निर्देशन एवं निरीक्षण में तैयार किया गया है। उनकी प्रेरणा, प्रोत्साहन एवं अवसरोचित सलाहों से ही यह कार्य निर्विघ्न संपन्न हुआ है। मेरी कमियों को सुधारने में वे हर वक्त तैयार रहती हैं। उनके मन की यह विशालता और ओजस्वी व्यक्तित्व ने ही मुझे इस मंजिल तक पहुँचाने में सक्षम बनाया है। एक शोध छात्रा से कहीं ऊपर उठकर जो आत्मीयता उन्होंने मेरे साथ निभायी है, उसे मैं कभी नहीं भूल सकती। उनकी छत्रछाया में पलने का जो सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है, उसके लिए मैं हर पल आभारी रहूँगी।

कोच्चिन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष के प्रति भी मैं सदैव आभारी हूँ। इस शोध कार्य को सार्थक बनाने में उन्होंने मेरी काफी मदद की है। हिन्दी विभाग के अन्य पूज्य गुरुजनों के प्रति भी मैं भरे दिल से आभार प्रकट करती हूँ जिनसे मैं ने प्रेरणा एवं प्रोत्साहन पाया है।

निर्मला कॉलेज, मुवाट्टुपुषा के अध्यापक, प्रो. डॉ. विश्वनाथनजी के प्रति भी मैं सविनय कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ जिन्होंने मुझे उचित समय पर इस शोध कार्य की राह प्रशस्त किया और प्रोत्साहन का हाथ बढ़ाया।

पुस्तकालय एवं कार्यालयी कर्मचारियों के प्रति भी मैं अपना आभार इस वक्त प्रकट करती हूँ जिनसे मुझे समय-समय पर हर प्रकार से सहयोग मिले।

मैं अपने विभाग तथा छात्रावास के प्रिय मित्रों के प्रति सस्नेह आभारी हूँ जिनके अनवरत सहयोग, प्यार-भरी मेहरबानियों एवं समझौते ने मेरे शोध कार्य

को सुगम और सरल बनाते का काम किया है। जब भी मैं उलझनों में डूब जाती थी, वे मुझे सान्त्वना देकर मेरी हिम्मत को बढ़ाते हैं।

मेरे आदरणीय माता-पिता, भाई-बहनों एवं परिवार के प्रिय बन्धुजनों के प्रति भी मैं सदैव आभारी हूँ जिनकी प्रेरणा, एवं अनगिनत प्रार्थना ने मुझे इस मुकाम तक पहुँचाने में काबिल बनाया। मैं सचमुच उनकी कर्जदार हूँ।

इस शोध-कार्य की संपूर्ति का बहुत बड़ा श्रेय मैं अपने प्यारे बेटे नेविन को देना चाहती हूँ जिसने मेरे लिए अपने बचपन की खुशियों की कुर्बानी दी। वास्तव में यह उनके समझौते भरी सहयोग का फल है। यह शोध प्रबंध मैं अपने आदरणीय पिताजी, श्री. एस. वर्गीस, माताजी, श्रीमती. क्लारम्मा वर्गीस और मेरे प्यारे नेविन मोन के लिए समर्पित कर रही हूँ। वे मेरे शोध कार्य का पाथेय रहा है। मैं उनकी कर्जदार हूँ और सदैव रहूँगा भी।

सबसे पहले मैं उस परम श्रद्धेय ईश्वर के सामने विनम्र होकर घुटने टेकती हूँ। उस असीस, अक्षय, दयानिधि के कृपा कटाक्ष से ही मैं ने शक्ति अर्जित की है। उनके आशीर्वाद एवं शक्ति की बदौलत ही मैं इस शोध कार्य को पूरा कर सकी हूँ।

लव्ली वर्गीज़

शोध छात्रा
हिन्दी विभाग
कोच्चिन विश्वविद्यालय
कोच्चिन-22

/10/2011

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

पहला अध्याय : हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का स्वरूप 1-57

1.1 संवाद-तत्व का तात्पर्य एवं महत्व

1.2 नाटक और कहानी के संवाद-तत्व में अन्तर

1.3 संवाद-रहित और संवाद-युक्त कहानियों में अन्तर

1.4 कहानी के अन्य तत्वों के साथ संवाद-तत्व का संबन्ध

1.4.1 संवाद-तत्व और कथा वस्तु

1.4.2 संवाद-तत्व और पात्र एवं चरित्र-चित्रण

1.4.3 संवाद-तत्व और देशकाल या वातावरण

1.4.4 संवाद-तत्व और भाषा-शैली

1.4.5 संवाद-तत्व और उद्देश्य

निष्कर्ष

दूसरा अध्याय : हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास 58-153

2.1 प्रेमचंद-पूर्व युगीन प्रतिनिधि हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास

2.2 प्रेमचंद-युगीन प्रतिनिधि हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास

2.3 प्रेमचन्दोत्तर युगीन प्रतिनिधि हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास (1960 तक)

निष्कर्ष

तीसरा अध्याय : प्रेमचंद की कहानियों में संवादात्मकता 154-306

3.1 प्रेमचंद की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

3.2 'मानसरोवर' - भाग-1 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

3.3 'मानसरोवर' - भाग-2 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

3.4 'मानसरोवर' - भाग-3 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

3.5 'मानसरोवर' - भाग-4 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

3.6 'मानसरोवर' - भाग-5 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

3.7 'मानसरोवर' - भाग-6 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

3.8 'मानसरोवर' - भाग-7 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

3.9 'मानसरोवर' - भाग-8 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

3.10 'कफ़न' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

निष्कर्ष

चौथा अध्याय : जयशंकर प्रसाद की कहानियों में संवादात्मकता 307-378

4.1 जयशंकर प्रसाद की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

4.2 'छाया' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

4.3 'प्रतिध्वनि' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

4.4 'आकाशदीप' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

4.5 'आंधी' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

4.6 'इन्द्रजाल' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

निष्कर्ष

पाँचवाँ अध्याय : प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों के संवाद-तत्व का तुलनात्मक अध्ययन 379-435

5.1 प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों का भाषापरक अन्तर

5.2 प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त भाषा की विशेषताएँ
5.3 जयशंकर प्रसाद की कहानियों में प्रयुक्त भाषा की विशेषताएँ
5.4 प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों की कथन शैली परक अन्तर
5.5 प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त विभिन्न शैलियाँ
5.6 जयशंकर प्रसाद की कहानियों में प्रयुक्त विभिन्न शैलियाँ
5.7 प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों के कथ्य परक अन्तर
5.8 प्रेमचंद की कहानियों की कथ्यपरक विशेषताएँ
5.9 जयशंकर प्रसाद की कहानियों की कथ्यपरक विशेषताएँ
5.10 अन्य विधायी प्रभाव की दृष्टि से प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों की तुलना
5.11 प्रेमचंदीय कहानियों में अन्यविधायी प्रभाव
5.12 जयशंकर प्रसाद की कहानियों में अन्य विधायी प्रभाव
निष्कर्ष

उपसंहार 436-442

परिशिष्ट : ऐतिहासिक क्रमानुसार प्रेमचंद की कहानियों की सूची 443-461

सहायक ग्रन्थ सूची 462-484

पहला अध्याय

हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्त्व का स्वरूप

सारांश – *इस अध्याय में संवाद-तत्त्व का स्वरूप, कहानी में इसकी आवश्यकता, कहानी के अन्य तत्त्वों के साथ इसका संबंध तथा नाटक और कहानी में प्रयुक्त संवाद के अन्तर को अध्ययन के केन्द्र में रखा गया है। पात्रों के बीच भाषा के माध्यम से होनेवाले भाव-विचार-विनिमय को ही हम संवाद कहते हैं। कहानी में वर्णित कथा-प्रसंगों और घटनाओं को क्रमबद्ध करने में संवाद की भूमिका सर्वप्रथम ही है। संवाद कहानी के पात्रों को पाठकों के सामने बिजली की तरह प्रकाशित करते हैं। संवाद जितने ही सरल, संक्षिप्त, सारपूर्ण एवं प्रभावशाली होंगे, कहानी उतनी ही श्रेष्ठ और ग्राह्य होगी। क्योंकि संवाद लेखक और पाठक के संप्रेषण की कड़ी बनती है। कहानी के सभी तत्त्वों के साथ संवाद-तत्त्व का अन्योन्याश्रित संबंध है। इसी वजह से संवाद रहित कहानियाँ नीरस और लम्बे वर्णनों की अधिकता के कारण रस एवं प्रभावहीन होकर पाठकों को आकर्षित करने में असफल रह जाती हैं। इस प्रकार की कहानियों में गतिशीलता का बिल्कुल अभाव दर्शनीय है।*

नाटक के संवाद अभिनय केलिए संरचित होते हैं। लेकिन कहानी के संवाद पढ़ने केलिए लिखे जाते हैं। नाटक के संवाद सुगठित, चुटीला, संक्षिप्त एवं प्रेष्यत्वपूर्ण होते हैं तो कहानी में इसका गतिशील, स्वाभाविक एवं भावव्यंजक प्रयोग ही अभीष्ट होते हैं। संवाद नाटक का प्राण है तो कहानी का मूलभूत आलम्बन संवाद है।

पहला अध्याय
हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का स्वरूप

हिन्दी गद्य साहित्य वास्तव में भारतेन्दु युग की देन है तो भी इसके बीज प्रागैतिहासिक काल से ही प्राप्त होता है। भारतेन्दु युग में पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हिन्दी गद्य साहित्य विकास की ओर अग्रसर हुए और अनेक विधाओं के रूप में अलग-अलग पहचान बनाने लगा। उस पहचान में कहानी साहित्य सजीव रूप में साहित्य की अन्य गद्य विधाओं से अपना अलग स्थान जमा लिया।

कहानी आधुनिक युग की देन है तो भी इसका मूल रूप उपनिषदों और ब्राह्मण ग्रंथ में विद्यमान कथा तत्व में ढूँढना ज़्यादा समुचित है।[1] उपर्युक्त कथा-तत्व से प्रेरणा एवं प्रभाव अपनाते हुए आगे चलकर विभिन्न पौराणिक कथाओं का जन्म हुआ और इन कथाओं से कथा कहने की एक परंपरा आरंभित हुई होगी।[2]

कहानी का प्राचीनतम रूप ऋग्वेद में मनोरंजक शिक्षाप्रद आख्यानों के रूप में मिलता है। कथा-तत्व के विकास में जातक कथाओं और वृहतकथा का महत्वपूर्ण स्थान है। इन सब के आधार पर अनेक प्रकार की कहानियों का प्रचलन हुआ।[3] लेकिन इन कहानियों में शिल्प पक्ष पर उतना ध्यान नहीं दिया है तो भी 'हिदोपदेश', 'पंचतंत्र' जैसे ग्रन्थों में आधुनिक कहानी शिल्प के कुछ अव्यक्त रूप बिखरे हुए मिलते हैं।

---

1. डॉ. गणपतिचन्द गुप्त - हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - पृ. 451
2. डॉ. हेतु भारद्वाज - हिन्दी कथा साहित्य का विकास - पृ. 17
3. डॉ. हेतु भारद्वाज - हिन्दी कथा साहित्य का इतिहास - पृ. 18

सन् 1800 में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के साथ संस्कृत की कुछ कहानियों का अनुवाद या रूपान्तरण हिन्दी में हुए तो भी कथासूत्र संस्कृत से जुडे रहने के कारण शिल्प पक्ष एवं भाषा का कोई सुदृढ़ रूप सामने नहीं आया।[1] सन् 1867 से 1900 ई तक की रचनाओं में भी कथा-तत्व इधर-उधर बिखरे हुए तो मिलता है, पर कोई स्वतंत्र रूप सामने नहीं आया। बाद में 'सरस्वती' तथा 'इन्दु' पत्रिकाओं ने भी कहानी के विकास में बड़ा योगदान किया है। आधुनिक कहानी शिल्प का कोई व्यक्त स्वरूप इन कहानियों में भी दृढ़ता व्यर्थ ही है।

कथ्य और शिल्प दोनों की दृष्टि से हिन्दी कहानी को विकास की गति प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद जैसे कहानीकार की साहित्य साधना से प्राप्त हुआ है।[2] हिन्दी कहानी साहित्य को एक नया मोड़ देने में प्रेमचंद का हाथ सबसे बड़ा है। वास्तव में हिन्दी कहानी का द्वितीय उत्थान प्रेमचंद युग है। इसमें कोई दूसरा पक्ष नहीं है।

कई विद्वानों तथा आलोचकों द्वारा कहानी के शिल्पक्ष को लेकर अनेक तत्व निर्धारित किए तो भी कहानी के शास्त्रीय तत्व, कथानक, पात्र और चरित्र चित्रण, कथोपकथन या संवाद, भाषा-शैली, वातावरण या देशकाल और उद्देश्य है।[3]

1.1 कहानी में संवाद - तत्व का तात्पर्य एवं महत्व

सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से कहानी में कथानक और चरित्र-चित्रण के बाद संवाद-योजना अथवा कथोपकथन आता है। आधुनिक कहानी-शिल्प का महत्वपूर्ण

---

1. डॉ. हेतु भारद्वाज - हिन्दी कथा साहित्य का इतिहास - पृ. 19
2. ओम प्रभाकर - अज्ञेय का कथा साहित्य - पृ. 108
3. गुलाबराय - काव्य के रूप - पृ. 206-207

एवं अभिन्न अंग वास्तव में संवाद है, क्योंकि यह तब अन्य सभी तत्वों को बढ़ावा देता है और उसके साथ सीधा संबन्ध स्थापित करता है। वास्तव में इसी तत्व के ज़रिये ही पात्रों के चरित्र का परिचय पाठकों को मिलता है और कथानक आगे की ओर अग्रसर होता है तथा पूरी कहानी में आवश्यक सजीवता उत्पन्न होती हैं।

संवाद-योजना के द्वारा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से पाठक तथा पात्रों के बीच एक निकट संपर्क का अनुभव होता है।[1] हिन्दी के आरंभिक काल की कहानियों में यह निकटता का अनुभव नहीं के बराबर है। इसका कारण यह है कि उस समय की कहानियों में संवाद-योजना का कोई विकसित या मंजा हुआ रूप देखने को नहीं मिलता है या जो दिखाई पड़ता है, वह केवल कलात्मक स्तर पर ही था। प्रेमचंद पूर्व कहानियों में वर्णनों की प्रधानता होने के कारण संवाद अगर है तो भी अधिक निखर नहीं पाए। क्योंकि उस समय बहुत लम्बे, नीरस तथा असंबद्ध संवादों के प्रयोग के कारण, कहानी की रोचकता और स्वाभाविकता नष्ट होती थी। शायद उस समय प्रचलित अंग्रेज़ी परम्परा के अनुकरण के कारण हिन्दी रचनाओं में यह प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है।

इसके विपरीत प्रेमचंद युगीन कहानियों में संवाद ने अपनी सजीवता, जीवन्तता कुतूहलता, अनुकूलता, स्वाभाविकता और हास्य-व्यंग्यात्मकता के कारण कहानी का केन्द्रीय स्थान अपना लिया है। अर्थात् हम कह सकते हैं कि राजा-रानी की कहानी के चहारदिवार से जब हिन्दी कहानी-साहित्य बाहर निकला तो कथोपकथन ने अपनी निजी विशेषताओं द्वारा उसे आभूषित किया।[2]

---

1. डॉ. सुरेश सिन्हा - कहानी : उद्‌भव और विकास - पृ. 98
2. वही - पृ. 97

इस तत्व का सफल प्रयोग, कुशल कहानीकार की सृजनधर्मी प्रतिभा पर आधारित है।[1] सैद्धान्तिक दृष्टि से देखने पर कथोपकथन का प्रयोग एक कहानी में अनेक उद्देश्यों से किया जाता है। कथावस्तु को लक्षित उद्देश्य तक, सफलता के साथ क्रमिक विकास की ओर आगे बढ़ाना इसका परम उद्देश्य है। कथावस्तु के क्रमिक विकास के लिए घटनाओं का सुनियोजित विन्यास अवश्यंभावी है और जो काम संवाद-योजना के बिना पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं करते हैं। क्योंकि वर्णनात्मक प्रसंग द्वारा जो घटना विस्तृत रूप से चित्रित की जाती है, वहीं संवाद-योजना के द्वारा संक्षिप्त तथा प्रभावपूर्णता के साथ चित्रित की जा सकती है।

इसके अलावा पात्रों की चारित्रिक विशेषताएँ, वर्णित घटनाओं का देशकाल, प्रयुक्त भाषाशैली तथा लेखक के निहित उद्देश्य आदि की सफल अभिव्यक्ति अगर पाठकों तक पहूँचाना है तो लेखक के सामने कथोपकथन के अलावा दूसरा कोई साधन नहीं है। सभी विद्वानों ने इस मत का समर्थन किया है। इस विषय में डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा का कथन विशेष उल्लेखनीय है। उनका कहना है कि, "यदि देश-काल और संस्कृति विशेष का कोई प्राणी किसी से भी किसी प्रकार की बातचीत करता है तो उसकी बातचीत की प्रांजलता और विदग्धता, शब्द और वाक्य के प्रयोग, भाषा और पदावली से हमें प्रत्यक्ष मालूम होता है कि व्यक्ति किस कोटि, वर्ग, देश और काल का है। संवाद से अन्य सभी तत्वों का सीधा संबन्ध होता है। संवाद जहाँ एक ओर कथा के प्रसार का मुख्य साधन होता है, वहीं चरित्रोद्घाटन का भी; साथ ही देश-काल का भी पर्याप्त बोध करा देता है।"[2]

---

1. गुलाबराय - काव्य के रूप - पृ. 210
2. डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा - कहानी का रचना विधान - पृ. 121

कहानी में कुतूहलता एवं रोचकता उत्पन्न कराने में तथा चरित्र-चित्रण में सार्थकता पैदा करने के लिए कथोपकथन बहुत ज़रूरी है। इसे आकर्षक, सौद्देश्यपूर्ण तथा कथा प्रसार से पूर्णतया साभिप्राय बनाने के लिए कहानीकार को अन्य सभी तत्वों में सामंजस्य-पूर्ण प्रस्तुतीकरण पर बल देना परम आवश्यक है। अर्थात् उनके विचार एवं निर्णय-शक्ति परिपक्व होनी चाहिए। उनके विचार एवं निर्णय-शक्ति जितनी परिपक्व होगी उतनी संवाद-योजना सफल निकलेगी। कहानी की विश्वसनीयता और रोचकता बढ़ाने के लिए इस तत्व पर विशेष बल देना चाहिए। संवाद-तत्व के बहुआयामी पक्ष के विषय में डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा का कथन यहाँ स्मरणीय ही है। उनके अनुसार, "यों तो जहाँ भी कहानी में इसका उपयोग किया जाएगा, वहाँ अपने-अपने ढंग के परिणाम खिल उठेंगे, पर जहाँ इस तत्व का क्षिप्र ओर द्रुत प्रयोग कथा भाग को उत्कर्षोन्मुख करेगा, वहाँ एक प्रकार का विशेष चमत्कार दिखाई पडेगा। कहानी में जिस अंश में संवाद-सौन्दर्य निखरा मिलेगा, वह अंश अपनी संपूर्ण शक्ति के साथ उमड़ पडेगा। यदि कहानी का आरंभ लघु और गतिशील, पर प्रकृत और औचित्यपूर्ण संवादों से किया गया है तो पाठकों का ध्यान विषय की ओर उसी प्रकार केन्द्रित हो उठता है जैसे रंगमंच पर होनेवाले किसी अभिनय की ओर।"[1] डॉ. वर्माजी ने ठीक ही कहा है कि संवाद-सौन्दर्य सचमुच कहानी को पढनीय एवं रोचक बना देता है। इसके बिना कहानी में जान नहीं आती है।

कथा-विकास को संवाद पूर्ण सहयोग देता है। क्योंकि वर्णित घटना और कार्यों की स्पष्ट झलक कथोपकथनों के द्वारा ही पाठकों तक प्रतिफलित होता है। आगामी घटनाओं की ओर इशारा देने में संवाद-तत्व का हाथ सबसे बड़ा है।

---

1. डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा - कहानी का रचना विधान - पृ. 122

कहानी के विषय में कुछ विचारक तो इस सीमा तक पहूँचते हैं कि वे इसे, "संवादात्मक चित्र विधान मानते हैं। उनके अनुसार कहानी वह चित्र है जिसकी कड़ियाँ और जोड़ संवाद से बाँध लिये जाते हैं। अपने मनोमन्दिर में रूपायित होने वाली किसी घटना या संवेदना को कहानीकार जब संवादों के माध्यम से यथार्थता से व्यक्त करते हैं तो वहाँ एक सफल कहानी का जन्म होता है। ये संवाद सारगर्भित, लघु तथा अभिनयात्मक होने से लक्षित प्रभाव सौ गुना बढ़ जाता है। लघुप्रसारी, भावात्मक संवाद से भावों की परिपक्वता और दृढ़ता का अनुपम परिचय पाठक को मिलता है।

जिसप्रकार महान चरित्र की वाणी और कर्म में एकरूपता या संगति होनी चाहिए, उस प्रकार कहानी में प्रयुक्त संवाद भी चरित्रोद्घाटन हेतु तथा पात्रानुकूल होना बहुत ज़रूरी है। कहानी की सफलता काफी हद तक उसमें प्रयुक्त संवाद की उपादेयता पर अवलंबित है। जो कथोपकथन, कथानक अथवा पात्र के चरित्र विकास में सहायक नहीं होता, उनका उपयोग निरर्थक है।"[1] इसलिए संवाद-तत्व के तर्क-संगत एवं कुशलतापूर्वक संगठन पर कहानीकार को ध्यान देना चाहिए।

कहानी में वर्णित पात्रों की विभिन्न परिस्थितियों की गहनता की पकड उनकी मानसिक गतिविधियों का सम्यक् ज्ञान और उनके व्यक्तित्व का सूक्ष्म परिचय आदि पर कहानीकार को दृष्टि जमाए रखना चाहिए। नहीं तो संवाद प्रकृत और सजीव नहीं बन पडेगा तथा कहानी चमत्कार रहित और आकर्षणहीन दीख पड़ेगा। मतलब यह है कि संवाद कहानी की जीवन्तता का निदान है। प्रेषक को

---

1. डॉ. सुरेश सिन्हा - उपन्यास-शिल्प और प्रवृत्तियाँ - पृ. 95

रसास्वादन की अनुभूति अगर होती है तो उसका कारण भी कहानी में प्रयुक्त अवसरानुकूल, नाटकीय भावोद्‌बोधक संवाद है।

आधुनिक कहानी शिल्प में संवाद-तत्व का महत्व अन्य सभी तत्वों से कहीं आगे हैं, इसका कोई दूसरा पक्ष नहीं है। कहानी की लोकप्रियता का कारण भी उसमें प्रयुक्त संवाद ही है। संवाद पढ़ने से ही कहानी की ओर पाठक की रुचि बढ़ती है और समय निकालकर उसे पढ़ने लगता है। वर्णित घटनाओं से बढ़कर पात्रों की बदलती हुई मनःस्थितियों एवं अन्तर्द्वन्द्वों का खुलकर चित्रण वास्तव में संवाद के ज़रिये अनावृत होते हैं। इस प्रकार की चरित्रगत विशेषताओं का पता भी इसके माध्यम से पाठक को मिलता है। समय, स्थिति और परिवेश के अनुकूल संवाद कहानी को सोद्देश्यता के उच्च शिखर तक पहूँचाते हैं।

संवाद, कहानी को नीरस वर्णनों से बचाकर उसे स्वाभाविकता से आभूषित करने के साथ अधिक से अधिक उसे परसंवेद्य बनाते हैं। इसलिए कहा जा सकता है कि संक्षिप्तता और उपयुक्तता इसकी महत्वपूर्ण विशेषताएँ हैं। कहानी कला में संवाद-तत्व का स्थान सर्वोपरी है। इसलिए इसका सदुपयोग करना कहानीकार का दायित्व है। डॉ. गुलाबराय ने अपने 'काव्य के रूप' नामक ग्रंथ में कहानी के कथोपकथन के स्वरूप की विशिष्टता बताते हुए लिखा है कि "कथोपकथन या वार्तालाप द्वारा ही हम पात्रों के हृदयगत भावों को जान सकते हैं। यदि वार्तालाप पात्रों के चरित्र के अनुकूल न हो, तो हम उनके चरित्र के मूल्यांकन करने में भूल कर जायेंगे। कहानीकार घर के मौतबिरनाई की भाँति विश्वासपात्र अवश्य है किन्तु मार्मिक स्थलों पर पात्रों के वार्तालाप को ज्यों का त्यों उपस्थित कर देने में हमको

दूसरे द्वारा बताई हुई बात की अपेक्षा परिस्थिति का ठीक अन्ताज़ लग जाता है। कहानी में कथोपकथन का तिहरा काम रहता है। उसके द्वारा पात्रों के चरित्र का परिचय ही नहीं मिलता, वरन् उसके सहारे कथानक भी अग्रसर होता है और एक जी उबाने वाले प्रबन्ध-कथन के भीतर आवश्यक सजीवता उत्पन्न हो जाती है।"[1]

प्रयोग की दृष्टि से कथोपकथन के कई भेद भी हैं। जैसे, भावात्मक, व्यंग्यात्मक, नाटकीय, दार्शनिक आदि। ये सभी चरित्रांकन को अपने-अपने तरीके से सहायता देते हैं। आरंभिक युगीन कहानियों में जो कथोपकथन मिलते हैं, उसका आधार केवल नाटकीयता या भावात्मकता थी। लेकिन उत्तर प्रेमचंद काल में आकर इसके क्षेत्र में नवीन विकास लक्षित होते हैं। संवाद-सौंदर्य तो आज की कहानी की एक प्रमुख विशेषता है तो भी इसके अधिक प्रयोग कहानी को, कहानी के स्तर से नीचे गिरा देगा। इसलिए सारगर्भित, एवं छोटे-छोटे वाक्य ही संवाद-योजना में अभिलषणीय है।

पात्रों के मनोभावों को पाठक तक बडी आसानी से पहूँचाने के लिए कहानीकार स्वगत कथन, स्वगत भाषण, स्वगत विश्लेषण आदि कई रूपों का भी प्रयोग करते हैं। वास्तव में भावों के स्पष्टीकरण तथा कथा में जीवन्तता लाने के उद्देश्य से ये सफल भी है।

कथोपकथन का सफल आयोजन तथा प्रभावोत्पादकता के लिए कुछ विशेषताओं का होना भी बहुत ज़रूरी है। स्वाभाविकता, नाटकीयता, उपयुक्तता,

---

1. डॉ. गुलाब राय - काव्य के रूप - पृ. 210

संबद्धता, सांकेतिकता, विश्वसनीयता, सजीवता, अनुकूलता, मार्मिकता, भावात्मकता और सोद्देश्यता कथोपकथन के अनिवार्य गुण है। वास्तव में इन गुणों से युक्त संवाद-योजना से कथा रची जाती है।

उपर्युक्त सभी बातों से ज्ञात होता है कि कहानी में कथोपकथनों का जो विशिष्ट स्थान है, उसे किसी भी दृष्टि से नकारा नहीं जा सकता। कहानीकार अपने सृजनशील व्यक्तित्व या प्रतिभा के ज़रिये इस तत्व को कहानी के सबसे मनोरंजक तत्व बना सकता है। केवल मनोरंजन के लिए कहानी पढ़नेवाले पाठक गण, पढ़ने से पूर्व एक नज़र संवाद पर डालकर यह अनुमान लगाते हैं कि अमुक कहानी कहाँ तक रोचक प्रतीत होती है। कारण यह है कि केवल सैद्धान्तिक आलोचना से बढ़कर कहानी का मूल्य मनोरंजन के क्षेत्र में अधिक निखरता है। इसीलिए संवादों को सारगर्भिता एवं नाटकीयता से विभूषित बनाना ज़्यादा अभीष्ट रहेगा।

ऐसा कहा जा सकता है कि कहानी एक ऐसी साहित्यिक विधा है जिसमें कथा-विन्यास से लेकर उद्देश्य तक - पूरी कहानी में एक संतुलन बना रहता है। ये संतुलन संवाद-योजना के बिना संभव नहीं है। इस अर्थ में संवाद का महत्व निर्विवाद है। कहानीकार अपनी व्यावहारिक कुशलता के ज़रिये इसे रोचक और आकर्षक बनाते हैं और पाठक को रस-निष्पत्ती के उच्च सोपान तक पहुँचाते हैं। लेकिन अतिभावुकता से इसे बचाये रखना भी उनका परम दायित्व है। क्योंकि प्रेषणीयता संवाद का अनिवार्य गुण है। इसलिए केवल क्रियोत्तेजक, गतिशील और प्रभावोत्पादकता से युक्त संवाद ही कहानी में अभीष्ट है। इस प्रकार विभिन्न गुणों से

युक्त संवाद-योजना कहानी का एक महत्वपूर्ण अंग तथा संपूर्ण कहानी सौंदर्य का केन्द्र भी है।

1.2 नाटक और कहानी के संवाद-तत्व में अंतर

मानवीय भावनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति के माध्यम होने के कारण नाटक और कहानी साहित्य में कई समानताएँ हैं। यह इसलिए है कि दोनों में प्रभावान्विति को सबसे प्रमुख स्थान दिया गया है। लेकिन दोनों की रचनात्मक प्रकृति में कोई प्रत्यक्ष समानताएँ दिखाई नहीं देता, बल्कि विषय-वैविध्य एवं एकता की दृष्टि से परखने पर दोनों में कई असमानताएँ देखने को मिलते हैं। इस बात का समर्थन करते हुए डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा ने लिखा है कि "नाटक के साथ यदि कहानी की तुलना की जाय तो दो बातें स्पष्ट दिखाई पडेगी :-

1) विषय के एकत्व के विचार से कहानी और नाटक की प्रकृति भिन्न है।

2) प्रभावान्विति के आधार पर दोनों रचनाएँ एक वर्ग की हैं। इस प्रकार एक बात में समानता और दूसरे में भिन्नता मिलेगी। किसी एक नाटक या किसी एक कहानी की प्रवृत्तियों का यदि विश्लेषणात्मक ढंग से विचार किया जाय तो यह स्पष्ट हो जायगी।"[1] इन दोनों विधाओं में वर्णित विषय में काफ़ी अन्तर दृष्टिगोचर हैं तो भी कथा-प्रवाह को गतिशीलता से आगे बढ़ाने के लिए दोनों में संवाद-तत्व का ही सहारा लेता है।

---

1. डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा - कहानी का रचना विधान - पृ. 23

कहानी में विषय एवं घटनाएँ संक्षिप्त रूप से स्पष्ट की जाती है तो नाटक का विषय क्षेत्र व्यापक एवं वैविध्य की ओर अग्रसर होता है। जहाँ कहानी की आस्वाध्यता केवल पढ़ने से मिलती हैं तो नाटक एक दृश्य-श्रव्य माध्यम होने के कारण पाठक आस्वाद्यता के उच्च सोपन तक पहुँच सकते हैं। नाटक में कथा-विन्यास को अभीष्ट तक मोड़ने तथा वर्णित-घटनाओं को गति प्रदान करने का महान कार्य संवाद-योजना के ज़रिये ही संपन्न होता है।[1] मूलतः संवाद नाटक का एक अभिन्न अंग है तो भी सामान्यतः कहानी जैसे अन्य रचना प्रकारों में भी इसका विशद प्रयोग अनिवार्य रूप से होता है।

आज के बदलते परिवेश में जब कहानी ने अपना रूप बदला तो संवाद-सौन्दर्य ने उसे एक नई चेहरा प्रदान की है। कहानी और नाटक दोनों में संवाद-तत्व का पूरा-पूरा निर्वाह है तो भी प्रभाव की दृष्टि से दोनों के संवाद में काफी अन्तर है।

वास्तव में संवाद नाटक का प्राण-तत्व माना जाता है। इसलिए नाटकीयता संवाद की सर्वप्रथम विशेषता है। चाहे नाटक हो या कहानी, नाटकीय कथोपकथन रचना को और आकर्षक तथा रोचक बना देते हैं। साधारणतः नाटकों के संवाद संक्षिप्त, चुटीला, विषय एवं पात्र के अनुकूल, सुगठित और प्रेष्यत्वपूर्ण होता है।[2] लेकिन कहानी में इसका लघु प्रसारी, पात्रानुकूल, वैदग्ध्यपूर्ण, आकर्षक तथा चमत्कारी प्रयोग ही अभीष्ट होता है। पात्रों के चरित्र-चित्रण, कथावस्तु के सफल विन्यास और विभिन्न रसों की निष्पत्ति के उत्तम साधन के रूप में दोनों विधाओं में

---

1. डॉ. शान्ति मलिक - हिन्दी नाटकों में शिल्प-विधि का विकास - पृ. 43
2. डॉ. रवीन्द्रकुमार जैन - साहित्यालोचन के सिद्धान्त - पृ. 171

संवाद-तत्व का एक महत्वपूर्ण स्थान है। एक दृश्य-श्रव्य माध्यम होने के कारण कथोपकथन नाटक का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है।[1] संवाद तो एक तरह से देखने से वाचिक अभिनय होता है। इसलिए नाटक में पात्रों के आंगिक अभिनय की पुष्टी प्रयुक्त संवाद द्वारा पूर्ण होती है। लेकिन कहानी में केवल वाचिक अभिनय द्वारा ही कथा आगे बढ़ती है। नाटक और कहानी दोनों में प्रभावान्विति को ही सबसे प्रमुख स्थान दिया गया है।

नाटकीय कथोपकथन कहानी के सौन्दर्य में चार चाँद लगा देते हैं। दोनों विधाओं में संघर्ष की अभिव्यक्ति एवं प्रस्फुटन संवादों को द्वारा ही पूर्णता प्राप्त होते हैं। इस प्रकार के संवाद-योजना के सफल प्रयोग नाटक में अधिक देखने को मिलता है। क्योंकि बाह्य और आन्तरिक रूप से संघर्ष की प्रधानता नाटक में कहानी की अपेक्षा ज़्यादा है। अभिनय की प्रधानता होने के कारण नाटक के संवाद हमेशा पात्रानुकूल ही होते हैं। लेकिन कहानी एक ऐसी साहित्यिक विधा है जिसमें अभिनय से नहीं, पात्रों के मुँह से स्वाभाविक रूप से निकलने वाले गतिशील संवादों के ज़रिये कथा-वस्तु का क्रमिक विकास और पात्रों का चरित्र-चित्रण संभव होता है। कहानी में जो संघर्ष है, क्रिया-कलाप है, द्वन्द्व है, सबकी सफल अभिव्यक्ति के लिए कहानीकार पात्रानुकूल तथा अवसरानुकूल संवादों का ही सहारा लेता है। पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' कृत 'माँ को चुनरी की साथ' नामक कहानी में माता के हृदय में होने वाले संघर्षशील मानसिकता को कहानीकार ने संवादों के ज़रिये ज़्यादा प्रभावशाली बनाया है।

---

1. डॉ. शांति मलिक - हिन्दी नाटकों में शिल्प-विधि का विकास - पृ. 503

माता का हृदय हाहाकार कर उठा - "मेरी बेटी चार गज़ सूत की चूनरी के लिए मरी जा रही है। समाज और रिवाज़ उसे विधवा होने के कारण वह नहीं दे सकते। आग लगे इस समाज में ! वज्र पड़े ऐसे रिवाज़ पर ! मैं अपनी रानी की साध पूरी करूँगी। उसे चूनरी दूँगी।"[1]

यहाँ माता के संवाद से कहानीकार ने समाज में प्रचलित अमानवीय रूढियों पर तीखा व्यंग्य प्रकट करने के साथ-साथ पात्र के मानसिक संघर्ष एवं अन्तर्द्वन्द्व को भी वाणी दी गयी है। यह वास्तव में कहानी के संवाद योजना का कमाल है।

संवाद-तत्व, पात्र-तत्व के अन्तर्गत आनेवाला तत्व है। नाटक और कहानी दोनों में पात्र और चरित्र की महत्ता होने के कारण संवाद का महत्व भी निर्विवाद है। नाटक में तो पात्र अभिनय द्वारा अपनी निजी व्यक्तित्व को दर्शाते हैं और संवाद उसमें पूर्ण सहयोग भी देते हैं। इस बात का समर्थन करते हुए डॉ. रवीन्द्रकुमार जैन कहते हैं कि "नाटक में वर्णित पात्र के समग्र व्यक्तित्व की रसभरी छटा उसके सहज वेग से प्रकट हुए व्यक्तव्यों, संवादों एवं स्वगत भाषणों के द्वारा ही प्रस्तुत होती है।"[2] केवल श्रव्य माध्यम होने के कारण कहानी में पात्र के आन्तरिक तथा बाह्य व्यक्तित्व की झलक दिखाने के लिए कहानीकार संवादों का ही बखूबी आश्रय लेते हैं। इसलिए कहानी में संवाद का स्थान सर्वोपरि है।

---

1. पाण्डेय बेचन शर्मा - उग्र, पोली इमारत - पृ. 3
2. डॉ. रवीन्द्रकुमार जैन - साहित्यालोचन के सिद्धान्त - पृ. 171

नाटक में भावाभिनय की प्रमुखता होने के कारण चरित्र संबन्धी जानकारी अभिनय द्वारा पाठक को मिलते हैं। मगर कहानी में कथावस्तु से लेकर उद्देश्य तक के सभी तत्वों में सामंजस्य उत्पन्न करके कहानी को रोचक तथा जीवन्त बनाने का महान कार्य संवाद योजना के ज़रिये ही संपन्न होता है। कहानी में संवाद-तत्व के बहुआयामी प्रभाव पर बल देते हुए डॉ. गुलाबराय का कहना है कि ".....कहानी में कथोपकथन का तिहरा काम रहता है। उसके द्वारा पात्रों के चरित्र का परिचय ही नहीं मिलता, वरन् उसके सहारे कथानक भी अग्रसर होता है और एक जी उबाने वाले प्रकथन के भीतर आवश्यक सजीवता उत्पन्न हो जाती है। कथोपकथन को संगत, सजीव, चमत्कारपूर्ण और परिस्थिति के अनुकूल होना चाहिए। हम साधारण जीवन में बहुत-सा निरर्थक वार्तालाप भी करते हैं। किन्तु कहानी में इसकी गुंजाइश नहीं।[1] दोनों विधाओं में संवाद कथा-विन्यास का अभिन्न अंग है तो भी उस का स्वरूप एवं प्रभाव दोनों में अलग ही है। कहानी के संवाद में यथार्थता और सजीवता होना बहुत ज़रूरी है तो नाटक में वह उतना ज़रूरी नहीं है।

कहानी का विषय-क्षेत्र सीमित होने के कारण संवाद-तत्व में भी संक्षिप्तता लक्षित होती है। अनावश्यक या निरर्थक शब्दों का कहानी में कोई स्थान नहीं रहा है। एक समयबन्धित दौड में आगे बढ़नेवाली कहानी द्वारा पाठकों को रस-निष्पत्ति के उच्च सोपान तक ले जाने के लिए कहानीकार भावव्यंजक, मर्मस्पर्शी एवं गतिशील संवादों का आश्रय लेते हैं। इसलिए सारगर्भिता और सार्थकता कहानी के संवाद की परम विशेषताएँ हैं। प्रेमचंद-युगीन कहानियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय ही

---

1. डॉ. गुलाबराय - काव्य के रूप - पृ. 210

है। वास्तव में उस समय की कहानियों में संवाद-तत्व कहानी को रोचकता तथा जीवन्तता बढ़ाने वाले प्रमुख तत्व के रूप में प्रयुक्त होते थे। खुद प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त संवाद उसका उत्तम उदाहरण है। प्रेमचंद की लिखी 'सच्चाई का उपहार' नामक कहानी के निम्नलिखित संवाद में उपर्युक्त सारी विशेषताएँ हम देख सकते हैं।

जयराम ने कहा - "कह क्या देंगे अपने ही तो हैं, हमने जो कुछ किया है वह सब के लिए किया है, कवल अपनी भलाई के लिए नहीं। चलो यार तुम्हें बाज़ार की सैर करा दें, मुँह मीठा कर दें।"

बाजबहादूर ने कहा - "नहीं, मुझे आज घर पर पाठ याद करने का अवकाश नहीं मिला। यहीं बैठ कर पढ़ूँगा।"

जगतसिंह - "अच्छा मुंशीजी से कहोगे तो न?"

बाजबहादूर - "मैं स्वयं कुछ न कहूँगा, लेकिन उन्होंने मुझसे पूछा तो?"

जगतसिंह - "कह देना मुझे नहीं मालूम।"

बाजबहादूर - "यह झूठ मुझसे न बोला जायगा।"

जयराम - "अगर उमने चुगली खायी और हमारे ऊपर मार पडी तो हम तुम्हें पीटे बिना न छोडेंगे।"

बाजबहादूर - "हमने कह दिया कि चुगली न खायेंगी। लेकिन मुंशीजी ने पूछा तो झूठ भी न बोलेगे।"

जयराम - "तो हम तुम्हारी हड्डियाँ भी तोड देगे।"

बाजबहादूर - "इसका तुम्हें अधिकार है।"[1]

उपर्युक्त संवाद से कहानी के कथानक से लेकर उद्देश्य तक की ओर स्पष्ट संकेत मिलता है। इसमें शीर्षक की सफल अभिव्यक्ति के लिए भी सवादों का ही इस्तेमाल किया है।

नाटक के संवाद तो हमेशा पात्रानुकूल तथा भावव्यंजक होते हैं। कथा को अभीष्ट तक मोड़ने तथा चरित्र को उजागर करने के लिए नाटककार संवादों का ही इस्तेमाल करते हैं। लेकिन कहानी से भिन्न होकर नाटककार संवाद-योजना में शब्द-शक्तियों का सुन्दर प्रयोग भी करते हैं। भारतेन्दु कृत कई नाटकों में इसका उदाहरण देखने को मिलता है। 'वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति' नाटक में इस प्रकार के संवाद दर्शनीय है।

विदूषक - क्यों वेदान्ती जी, आप माँस खाते है कि नहीं?

वेदान्ती - तुमको इससे कुछ प्रयोजन है?

विदूषक - नहीं, कुछ प्रयोजन तो नहीं है। हमने इस वास्ते पूछा कि आप वेदान्ती अर्थात् बिना दान्त के हैं - सो आप भक्षण कैसे करते होंगे।"[2]

उपर्युक्त संवाद में भावाभिव्यंजना लाने के लिए नाटककार ने व्यंग्य का भी सहारा लिया जिसके कारण लक्षित प्रभाव में वृद्धि आई है। नाटक और कहानी

---

1. प्रेमचंद - मानसरोवर - भाग-8 - सच्चाई का उपहार - पृ. 72
2. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र - वैदिकी हिंसा, हिंसा न भवति - दूसरा अंक

दोनों में नाटकीय संवादों से रचना का समारंभ करने में अमुक रचना अधिक प्रभावशाली बनता है। नाटकीय संवाद-योजना कथा को सजीव तथा गतिशील बनाने में काफी सहायक सिद्ध होती है। एक मंजे हुए नाटककार होने के कारण जयशंकर प्रसाद की रचनाओं में, चाहे नाटक हो, या कहानी, इस प्रकार के नाटकीय संवादों का कमाल दर्शनीय है। नाटकीय संवाद-योजना के कमाल से प्रभावसाली एवं उच्चकोटी की बनी प्रसादजी की कहानी है 'आकाशदीप'। कहानी का आरंभिक संवाद ही पाठक का ध्यान आकर्षित करने योग्य प्रभावशाली है। संवाद की कतिपय सारी विशेषताओं से युक्त प्रस्तुत संवाद प्रसाद जी के नाटककार व्यक्तित्व को सचमुच उजागर करने वाला ही है।

"बन्दी!"

"क्या है? सोने दो।"

"अभी नहीं, निद्रा खुलने पर, चुप रहो।"

"फिर अवसर न मिलेगा।"

"बडी शीत है, कहीं से एक कम्बल डाल कर कोई शीत से मुक्त करता।"

"आँधी की संभावना है। यही अवसर है। आज मेरे बंधन शिथिल है।"

"तो क्या तुम भी बन्दी हो।"

"हाँ धीरे बोलो, इस नाव पर केवल दस नाविक और प्रहरी है।"

"शस्त्र मिलेगा?"

"मिल जाएगा। पोत से संबद्ध रज्जु काट सकोगे?"

"हाँ।"

समुद्र में हिलोरें उठने लगीं। दोनों बन्दी आपस में टकराने लगे। पहले बन्दी ने अपने को स्वतंत्र कर लिया। दूसरे का बन्धन खोलने का प्रयत्न करने लगा।[1]

छोटे-छोटे वाक्यों से युक्त इस नाटकीय कथोपकथन में वह सारी बातें मौजूद हैं जिससे पाठक का ध्यान कहानी की ओर आकर्षित हो जाय। कहानी के आद्यन्त इस तरह के संवादों के ज़रिये ही कहानीकार ने पूरी कहानी का ताना-बाना बूँदा है। यही वास्तव में कहानी के संवाद की विलक्षण शक्ति है। एक सफल नाटककार होने के कारण प्रसादजी की कहानियों के संवाद तो रंगमंचीय अभिनय के समतुल्य प्रभावशाली है। प्रसादजी के प्रसिद्ध नाटक 'चन्द्रगुप्त' भी नाटकीय संवादों से शुरू होती है। इसमें ऐतिहासिक नाटक के अनुरूप प्रसादजी ने पात्रानुकूल तथा विषयानुकूल सुगठित शब्दावलियों का प्रयोग कर संवाद को ज़्यादा प्रेषणीय बनाया है।

चाणक्य - "अच्छा तुम मालव जाकर क्या करोगे?"

सिंहरण - "अभी तो मैं मालव नहीं जाता, मुझे तक्षशिला की राजनीति पर दृष्टि रखने की आज्ञा मिली है।"

---

1. जयशंकर प्रसाद - आकाशदीप - पृ. 107

चाणक्य - "मुझे प्रसन्नता होती है कि तुम्हारा अर्थशास्त्र पढ़ना सफल होगा। क्या तुम जानते हो कि यवनों के दूत यहाँ क्यों आये हैं?"

सिंहरण - "मैं उसे जानने की चेष्टा कर रहा हूँ, आर्यावर्त का भविष्य लिखने के लिए कुचक्र और प्रतारणा की लेखनी और मसि प्रस्तुत हो रही उत्तरपथ के खण्ड राजद्वेष से जर्जर शीघ्र भयानक विस्फोट होगा।"[1]

यहाँ भी संवाद द्वारा ही कथावस्तु का पर्दाफाश होते हैं और साथ ही आगामी कथा की ओर स्पष्ट संकेत मिलता है। अभिनेयता तो नाटक के संवाद की सर्वप्रथम विशेषता है। कहानी और नाटक दोनों के संवाद-योजना की सर्वप्रथम विशेषता स्वाभाविकता है, जिसके वजह से रचना की अर्थवत्ता तथा विश्वसनीयता बढ़ता है। नाटक में तो भावाभिनय द्वारा काफी हद तक स्वाभाविकता लाया जा सकता है। लेकिन कहानी में इसके लिए प्रसंगानुकूल संवादों का ही प्रयोग होते हैं।

कहानी और नाटक दोनों का लक्ष्य पाठकों का स्वस्थ मनोरंजन करना है। लेकिन फ़र्क केवल इस बात में है कि एक का विषय क्षेत्र सीमित है तो दूसरे का क्षेत्र व्यापक है। आचार्य श्यामसुन्दरदास ने अपने 'साहित्यालोचन' नामक पुस्तक में कहानी की परिभाषा देते हुए लिखा है कि "आख्यायिका एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को रखकर लिखा गया नाटकीय आख्यान है।"[2] मतलब यह है कि नाटक और कहानी दोनों में रचनात्मक दृष्टि से कोई समानताएँ नहीं है। मगर प्रबावान्विति की दृष्टि से देखने पर दोनों समान प्रकृति के हैं।

---

1. जयशंकर प्रसाद - चन्द्रगुप्त - पृ. 55
2. आचार्य श्यामसुन्दरदास - साहित्यालोचन - पृ. 299

नाटक के संवाद-तत्व की सबसे प्रमुख विशेषता अभिनेयता है। नाटक दृश्य-श्रव्य माध्यम होने के कारण इसमें आंगिक और वाचिक दोनों प्रकार के अभिनय की प्रधानता रहता है। इसलिए अभिनय के साथ-साथ पात्रानुकूल संवाद भी नाटकों में अभीष्ट रहता है। लेकिन कहानी में केवल वाचिक अभिनय अर्थात् संवाद-तत्व का ही प्रमुखता है। पात्रों के चरित्र-विधायक संवाद ही कहानी को जीवन्तता तथा रोचकता प्रदान करते हैं। जयशंकर प्रसाद कृत 'सिकन्दर की शपथ' नामक कहानी के निम्नलिखित संवाद इस दृष्टि से प्रभावपूर्ण ही है।

सिकन्दर घुटने के बल बैठ गया और बोला - "सुन्दरी! एक जीव के लिए तुम्हारी दो तलवारें बहुत थी, फिर तीसरी की क्या आवश्यकता है?"[1]

सिकन्दर की कामुकता को दर्शाने के लिए कहानीकार ने व्यंग्य के सहारे संक्षिप्त शब्दों में जो संवाद-योजना का प्रयोग किया, उससे कहानी की रोचकता बढ़ने के साथ-साथ पात्र के चरित्र भी उद्‌घाटित हो जाते हैं। भावाभिव्यंजना लाने में इसप्रकार के संवाद काफी हद तक सहायक ही है। अभिनेयता प्रस्तुत संवाद की खास विशेषता है।

नाटक में प्रयुक्त संवाद की पुष्टी पात्रों के भावानुकूल अभिनय द्वारा सफल होता है जबकि कहानी में कथात्मकता की सफलता प्रयुक्त संवाद-योजना के कारण होता है। नाटकों में कभी-कभी चमत्कार प्रदर्शन और सिद्धान्त-विवेचन के लिए संवादों के प्रयोग होते हैं। लेकिन कहानी में इसका प्रयोग कहानी को कहानी के स्तर से नीचे गिरायेगा। कहानी के संवाद हमेशा सोद्देश्य तथा पात्रानुकूल होते हैं।

---

1. जयशंकर प्रसाद - छाया - सिकन्दर की शपथ - पृ. 32

पाठक तथा कहानी के पात्रों के बीच एक सेतुबन्धन का काम सफल संवाद-योजना द्वारा ही संभव होता है।

नाटक के संवाद कभी-कभी अनावश्यक रूप से विस्तृत तथा लम्बे हो जाते हैं। कहीं दार्शनिकता और उपदेशात्मकता की प्रवृत्ति भी संवादों को बोझिल बना देते हैं। लेकिन कहानी में प्रायः इस प्रकार के संवाद कम मिलते हैं।

संक्षेप में कहें तो दोनों विधाओं में संवाद-तत्व का एक महत्वपूर्ण स्थान है। नाटक और कहानी दोनों में संवाद-योजना कथा विन्यास का एक अभिन्न अंग है। नाटक के संवाद-योजना में व्यापकता और वैविध्य का समावेश है तो कहानी का क्षेत्र सीमित है। इसलिए सारगर्भित, अवसरानुकूल, गतिशील एवं रोचक संवाद योजना ही कहानी में अभीष्ट है। नाटक के संवाद अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक त्वरूपूर्ण, अधिक अनुभूतिमय, अधिक गतिशील, संवेदनशील, गंभीर, पुष्ट और आकर्षक होते हैं। संवाद नाटक का प्राण है तो कहानी का मूलभूत आलम्बन संवाद है। इसीलिए कहा जा सकते हैं कि दोनों विधाओं में इसका प्रयोग रचना को प्रभावोत्पादक तथा रोचक बनाने के लिए सर्वथा ज़रूरी है।

1.3 संवाद-रहित और संवाद-युवक कहानियों में अंतर

आधुनिक कहानी-शिल्प का एक अभिन्न अंग है संवाद-तत्व। इस तत्व के विशेष प्रयोग पर आज कहानीकार का ध्यान काफ़ी बढ़ गया है। वास्तव में आज संवाद-सौंदर्य का निर्वाह, कहानी की एक प्रमुख विशेषता है। मगर संवाद-तत्व की दृष्टि से हिन्दी की आरंभिक युगीन कहानियाँ काफी हद तक शिथिल मानी जाती

हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि उन दिनों की कहानियों में घटनाओं एवं वर्णनों की प्रधानता रहने के कारण संवाद अधिक सफल नहीं उतरा। इन कहानियों में जो संवाद इधर-उधर बिखरे हुए मिलते हैं, वे भी अक्सर नीरस, असंबद्ध, अरोचक एवं बहुत लम्बे हो गए हैं। इसका एक कारण यह हो सकता है कि उस समय संवाद का आधार केवल नाटकीयता एवं भावात्मकता थी।

उत्तर प्रेमचंद काल में आते ही कहानी कला के क्षेत्र में काफ़ी बदलाव आ गए हैं, जिसका प्रतिफलन आगे की विकासशील कहानियों में देखने को मिलता है। जहाँ प्रेमचंद-पूर्व कहानियाँ लम्बी होती थी तो बाद की कहानियाँ एक सीमीत कलेवर के अन्दर रची जाती थी। इसमें उद्देश्य के स्पष्टीकरण के लिए दार्शनिक या उपदेशक के रूप में नैतिक उक्तियाँ देने के लिए लेखक स्वयं उपस्थित नहीं हो जाते थे, बल्कि कथोपकथन का सहारा लेते थे। इसी कारण पहले की कहानियों की अपेक्षा विश्वसनीयता ओर सार्थकता इन कहानियों में स्पष्ट दृष्टिगोचर है।

प्रेमचंद-पूर्व युग में केवल कलात्मक स्तर पर संवादों का प्रयोग होता था तो आज की कहानियों में इसका प्रयोग भावाभिव्यक्ति के उत्तम साधन के रूप में होता है। क्योंकि आज कहानी राजमहल की चहारदिवारों में बँध नहीं, बल्कि बाहर के खुले आसमान में आम जनता के जीवन के साथ हेलमेल हो चुकी है। व्यावहारिक दृष्टि से आज कहानी का मूल्य काफी बढ़ गया है। आज कहानी मानव जीवन की सहज अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है जिसमें काल्पनिकता के स्थान पर स्वाभाविकता और विश्वसनीयता को स्थान मिला है। इस प्रकार कहानी का रूप बदलने में संवाद-तत्व ने बड़ा महत्वपूर्ण योगदान किया है।

संवाद रहित कहानियाँ जहाँ प्रतिपाद्य-विषय और व्यक्ति-विशेष की अभिव्यक्ति की दृष्टि से अस्पष्ट एवं जटिल थी वहाँ संवाद युक्त कहानियाँ बहुत सरल एवं सोद्देश्यपूर्ण है। क्योंकि आज नीरस वर्णनों के बदले कहानीकार उचित, परिस्थिति के अनुकूल संवाद-योजना से कथा, विषय एवं व्यक्ति-बोध की सफल अभिव्यक्ति रोचकता के साथ करते हैं।

संवाद-रहित कहानियों में पात्रों की चारित्रिक विशेषता और मानसिक स्थितियों की जानकारी पाठक तक पहूँचाने में कहानीकार के सामने दूसरा कोई रास्ता नहीं था। इसीलिए संवाद रहित कहानियों में प्रेषणीयता का गुण नहीं के बराबर था। जहाँ प्रेषणीयता नहीं है, वहाँ रोचकता नहीं आयेगा। इसप्रकार देखने से संवाद रहित कहानियाँ पाठक का मनोरंजन करने में सर्वथा असमर्थ रहीं। आम जनता की अपनी विधा होने के कारण कहानी बौद्धिक आलोचना के क्षेत्र में नहीं, मनोरंजन के क्षेत्र में खरा उतरती है। वास्तव में यही कहानी की लोकप्रियता का कारण भी है।

संवाद-युक्त कहानियों में कथा वस्तु का क्रमिक विकास, चरित्रोद्घाटन, पात्रों के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व आदि की अभिव्यक्ति सारगर्भित, पात्रोचित तथा रोचक संवादों के माध्यम से कहानीकार कर सकते हैं। इसप्रकार के संवाद पढ़ने से पाठक अमुक रचना की ओर आकृष्ट हो जाते हैं। कहानीकार की सृजनात्मक क्षमता भी इसप्रकार की संवाद-योजना में काफी योगदान देते हैं। 'पुरस्कार' कहानी में मदूलिका के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व की सफल अभिव्यक्ति के लिए जयशंकर प्रसाद ने जिन संवादों का प्रयोग किया है वे बड़ा मार्मिक तथा प्रभावोद्दीपक है। प्रसाद के नाटककार व्यक्तित्व का झलक इस संवाद योजना को चार चाँद लगा दिया है।

"रमणी जैसे विकारग्रस्त स्वर में चिल्ला उठी–

"बाँध लो, मुझे बाँध लो, मेरी हत्या करो। मैं ने अपराध ही ऐसा क्या है।"

सेनापति हँस पड़े, बोले "पगली है।"

"पगली!" नहीं, यदि वही हो तो, उतनी विचार वेदना क्यों होती? "मुझे बाँध लो। राजा के पास ले चलो।"

"क्या है? स्पष्ट कर।"

"श्रावस्ती का दुर्ग एक प्रहर में दस्युओं के हस्तगत हो जाएगा। दक्षिणी नाले के पार उनका आक्रमण होगा।"

सेनापति चौंक उठे। उन्होंने आश्चर्य से पूछा–

"तू क्या कह रही है?"

"मैं सत्य कह रही हूँ, शीघ्रता करो।"

(प्रसाद - पुरस्कार)[1]

पात्र की आन्तरिक वेदना के साथ-साथ आन्तरिक उद्वेग भी उपर्युक्त संवाद से मिलता है। छोटे-छोटे वाक्यों के इस संक्षिप्त, सारगर्भिता संवाद से लेखक अपने उद्देश्य को बड़ी आसानी से पाठक के भावजगत में पहूँचाने में कामयाब हुए।

कहानीगत प्रधान समस्या या भाव के चित्रण करने में भी संवाद-योजना का हाथ सबसे बड़ा है। इसप्रकार के चित्रण में संवाद रहित कहानियाँ प्रभावरहित

---

1. जयशंकर प्रसाद - पुरस्कार - पृ. 259

मानी जाती है। क्योंकि कहानी से लक्षित उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति पाठक तक पहूँचाने में कहानीकार को नीरस वर्णनों का आश्रय लेना पडता है।

कथावस्तु के क्रमिक विकास के लिए संवाद अवश्यंभावी है, क्योंकि संवादों के बिना वर्णित घटनाओं की कोई विशेष गति नहीं आती है। इसलिए संवाद रहित कहानियों में घटनाओं की कोई विशेष गति दिखाई नहीं देती है। इसमें पाठक जल्दी ही ऊब जाते हैं। इसीकारण संवाद रहित कहानियाँ सस्ते माल की तरह पाठकों के आकर्षण से अछूते रहते हैं। संवादरहित कहानियाँ 'मैं' शैली में लिखी जाने के कारण बोलने वाला ही अंत तक बोलता रहता है जो नीरस और अरोचक प्रतीत होता है। प्रयाग शुक्ल कृत 'इसके बाद' नामक कहानी इसी कोटि में आनेवाली है।

"मैं बहुत देर से सोच रहा हूँ कि बात किस तरह शुरू की जाये। असल में मैं पिछले दिनों जिन परिस्थितियों से गुज़र रहा हूँ, उन्हें बातों में नहीं बाँध पाता। अक्सर किसी बात पर सोचता हूँ और फिर वह बात बीच में ही रह जाती है।"

(प्रयाग शुक्ल - इसके बाद)[1]

संवाद युक्त कहानियों में कहानीकार अपनी सृजनात्मक कुशलता के ज़रिये विभिन्न शैलियों के प्रयोग से कहानी को प्रभावव्यंजक बनाते हैं। लेकिन संवाद रहित कहानियों में या जिन कहानियों में संवाद-तत्व का शुष्क एवं जटिल प्रयोग हुआ है, वहाँ अभिव्यक्ति पक्ष दुर्बल दिखाई देता है। भाषा से बढ़कर

---

1. प्रयाग शुक्ल - छायाएँ और अन्य कहानियाँ - पृ. 93

अभिव्यक्ति को सशक्त बनाने वाला दूसरा कोई माध्यम नहीं है। पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग संवाद-योजना की सफलता के लिए बहुत ज़रूरी है। इसलिए संवाद रहित कहानियाँ पाठकों की पकड़ से हमेशा पिछड़ी रह जाती हैं।

संवादों का अभाव, कहानी को आस्वाद्यता के स्तर से नीचे गिरायेगा, क्योंकि उस प्रकार की कहानियों में शैलिगत विभिन्न, प्रयोग नहीं होने के कारण एकरसता का अनुभव पाठक को दृष्टिगोचर होता है। इसी कारण संवाद रहित कहानियों में घटनाओं और वर्णनों का अस्त-व्यस्त चित्रण पायी जाती है और पाठक को एक प्रकार से आत्म विश्लेषण की प्रतीति होती है।

संवाद-युक्त कहानियों में संवाद के ज़रिये जाने-अनजाने ही पाठक और पात्रों के बीच एक निकट संपर्क स्थापित हो जाते हैं। लेकिन संवाद रहित कहानियों में इस प्रकार का संबन्ध कथापि नहीं हो पाता है, क्योंकि संवादों के बिना पाठक, पात्रों के भावजगत में प्रवेश नहीं कर पाते हैं। पात्रों तथा कथावस्तु को गतिशील बनाने में संवाद का हाथ सबसे आगे हैं। वास्तव में कुशल कहानीकार संपूर्ण कथावस्तु का नियोजन संवाद के ज़रिये ही करता है। इसप्रकार के संवाद कथावस्तु को गतिशील तथा जीवन्त बना देते हैं। जैनेन्द्रकुमार की 'वे तीन' नामक कहानी उपर्युक्त बात का स्पष्ट उदाहरण है।

"युवक ने कहा, "गुरु अब?"

गुरु चर्खे पर बैठे थे। कहा, "अब", यह प्रश्न छोडो। बहुतों को..... सबको.... मरना शेष है। जो मौत के पास पहूँचे हैं, उनके पास पहूँचो। कर्म यही है। इसमें 'अब?' को अवकाश कहाँ है?

युवक ने कहा, 'गुरू'।

गुरू ने कहा, 'जाओ।'

(जैनेन्द्रकुमार - 'वे तीन')[1]

उपर्युक्त संवाद में पाठक का ध्यान आकर्षित कराने योग्य सभी विशेषताएँ मौजूद है; साथ ही आगामी कथा की ओर भी ये पाठक को कुतूहलता के साथ खींच लाने में सक्षम है। इस छोटे सारगर्भित संवाद से संक्षिप्त रूप से आम पाठक को भी यह पता मिलता है कि अमुक पात्र किस वर्ग, स्थिति-विशेष, देशकाल, शिक्षा-दीक्षा, और संस्कारों का है। आस्वादन की परिपूर्णता के लिए उक्त सभी बातों की जानकारी पाठक को होना बहुत ज़रूरी है। जिस प्रकार शब्द रहित या संभाषण रहित सिनेमा आस्वादकों का ध्यान आकर्षित कराने में या उन्हें रस-निष्पत्ति प्रदान करने में असमर्थ रह जाते हैं, ठीक उसी प्रकार का अनुभव पाठकों को संवाद रहित कहानी पढ़ने से होता है। जो घटना वर्णनात्मक प्रसंग द्वारा विस्तृत रूप से चित्रित की जाती है, वही संवादों के ज़रिये संक्षेप में स्वाभाविकता के साथ चित्रित करने से पाठक के मन में उसका प्रभाव स्थायी रूप से बैठ जाता है। अर्थात पाठक को साधारणीकरण का अनुभव मिलते हैं।

संवाद की एक दूसरी विशेषता यह है कि ये पाठक के मनोजगत को भावविभोर बनाकर आगे की कथा की ओर अनजाने ही खींच लायेगा। जयशंकर प्रसाद कृत 'आकाशदीप' के प्रकृत और स्वाभाविक औचित्यपूर्ण संवाद इस प्रकार पाठक का ध्यान आकर्षित करता है कि जैसे रंगमंच पर घटित होने वाले किसी

---

1. जैनेन्द्र कुमार - वे तीन - पृ. 15

अभिनय। इस प्रकार देखने से पता चलता है कि संवाद पूरी कहानी का एक प्रतिबिंब है जिस के ज़रिये पूरी कहानी पाठक के सामने अनावृत होती हैं। इसलिए कहानीकार को संवाद-योजना पर पैनी दृष्टि रखनी चाहिए।

शुद्ध इतिवृत्त-प्रधान कहानियों में संवाद-तत्व बिलकुल नहीं के बराबर है। संवाद रहित होने के कारण इस प्रकार की कहानियों से घटनाओं और कार्यों की स्पष्ट झलक पाठक को नहीं मिलती है।

पात्रों के हृदयगत भावों को भलीभान्ति पाठक तक पहूँचाने के लिए कहानीकार भावात्मक संवाद, सांकेतिक संवाद, नाटकीय संवाद, व्यंग्यात्मक संवाद और मनोवैज्ञानिक संवाद के यथोचित शैलियों का सुन्दर प्रयोग कहानियों में करते हैं। इस प्रकार के संवाद योजना वास्तव में कहानी को श्रेष्ठ बनाते हैं। इसके विपरीत उचित शैलियों के अभाव में श्रेष्ठ रचनाएँ भी प्रभाव हीन बन कर स्वाभाविकता से अलग रह जाती हैं।

इसप्रकार संवाद युक्त कहानियों में संवाद, कथा विकास को पूर्ण सहयोग देते हैं और उसके अन्दर आयी हुई क्रियाओं और परिणामों का तर्कसंगत क्रमन्यास रोचकता से पाठकों के सामने प्रस्तुत करते हैं। लेकिन संवाद रहित कहानियों में इस प्रकार के आन्तरिक क्रिया कलापों तथा परिस्थितियों का आभास पाठक तक पहूँचाने में कोई दूसरा मार्ग नहीं है। वहाँ केवल बोलनेवाले पात्र के मुँह से विवरणात्मक रीति से पाठक को अमुक बात का संकेत मिलता है। इसमें हास्य, व्यंग्य या भावों के उथल-पुथल का कोई विशेष ज्ञान पाठक को नहीं मिलता है, बल्कि जो कुछ घटित होता है, उसका केवल विवरण कहानीकार के ज़रिये मिलता

है, क्योंकि ये कहानियाँ प्रथम पुरुष के मुँह से कहलवाने की रीति पायः अपनाती हैं। कभी-कभी इन कहानियों में उद्देस्य की सफल अभिव्यक्ति पाठक को नहीं मिलती हैं। अगर कहीं कोई संवाद है तो भी वह सांकेतिक रूप से होने के कारण प्रभावहीन होकर उद्देश्य रहित बन जाते हैं। इसलिए कलात्मक सौन्दर्य प्रदान करने के लिए संवादों को आकर्षणीयता से अलंकृत होना बहुत ज़रूरी है। जयशंकर प्रसादकृत 'देवरथ' कहानी के निम्नलिखित संवाद उस समय के बौद्ध धर्म का कच्चा चित्र उसकी सारी विकृतियों के साथ हमारे सामने चित्रित करते हैं।

"सुजाता! तुमने अविश्वासी हृदय से धर्म-द्रोह किया है।"

"धर्मद्रोह? आश्चर्य!!"

"तुम्हारा शरीर देवता को समर्पित था सुजाता।

तुमने....."

"बीच ही में उसे रोककर तीव्र स्वर में सुजाता ने कहा - चुप रहो असत्यवादी। वज्रयानी नर-पिशाच..." एक क्षण मे उस भीषण मनुष्य की कृत्रिम शान्ति विलीन हो गई। उसने किटकिटाकर कहा।

"मृत्यु-दण्ड।"

सुजाता ने उसकी ओर देखते हुए कहा - "कठोर से भी कठोर मृत्यू-दण्ड मेरे लिए कोमल है। मेरे लिए इस स्नेहमयी धरणी पर बचा ही क्या है?

"स्थविर ! तुम्हारा धर्मशासन घरों को चूर-चूर करके विहारों की सृष्टि करता है - कुचक्र में जीवन को फँसाता है। पवित्र गार्हस्थ बन्धनों को तोड़कर तुम लोग भी अपनी वासना-तृप्ति के अनुकूल ही तो एक नया घर बनाते हो, जिसका नाम बदल देते हो। तुम्हारी तृष्णा तो साधारण सरल गृहस्थों से भी तीव्र है, क्षुद्र है और निम्न कोटि की है।

"किन्तु सुजाता तुमको मरना होगा।"

"तो मरूँगी स्थविर - किन्तु तुम्हारा यह काल्पनिक आडम्बरपूर्ण धर्म भी मरेगा। मनुष्यता का नाश करके कोई धर्म खड़ा नहीं रह सकता।"[1]

कहानी में 'सुजाता' के उपर्युक्त कथन पाठक के भावजगत को झकझोर किये बिना नहीं रह जाते, क्योंकि संक्षिप्त शब्दों में लेखक ने एक महान सत्य का पर्दाफाश इस संवाद के ज़रिये किया है। इसी बात को संवाद रहित कहानियों में चित्रित करने के लिए कहानीकार को कोई लम्बी घटना या वर्णनों का सहारा लेना पड़ता है। लेकिन पाठक के भाव जगत में उसकी कोई विशेष प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं होती हैं। यह एक प्रकार से नीरसता का अनुभव प्रदान करेगा। यह एक तरह से संवाद रहित कहानियों की सबसे बड़ी बिड़म्बना मानी जाती है।

आधुनिक कहानीकार घटनाओं के अतिक्रमण पर अधिक आकर्षित नहीं है, क्योंकि घटना की अपेक्षा वह घटना - हेतु पर अधिक बल देता है जिसके ज़रिये कुतूहलता अपने आप आते हैं। इस दृष्टि से देखने पर संवाद का काम सचमुच

---

1. जयशंकर प्रसाद - देवरथ - पृ. 329-330

कमाल का है। आज सभी दृष्टियों से परखने पर संवाद और संवादयुक्त कहानियों का महत्व असन्दिग्ध ही है। मनोरंजन का सस्ते माल होने के कारण कहानी आज आम आदमी की अपनी साहित्यिक विधा है। इसकी सफलता, प्रयुक्त अनुकूल एवं सार्थक संवाद-योजना पर आधारित है। संप्रेषणीयता आज की संवाद-युक्त कहानियों की सबसे बड़ी खूबी है जिसके माध्यम से कहानीकार अपने मन में उगने वाले जीवन सत्यों को पाठकों के मनोमण्डल तक पहुँचाते हैं। इसका सेतुबंधन भावानुकूल संवाद ही है। इस प्रकार के संवाद कहानीकार के संदेशवाहक होकर घटना-विस्तारक या पात्र-परिचायक के रूप में उपस्थित होते हैं।

विदित हैं कि संवाद युक्त कहानियाँ पाठक के मन जीतने में सबसे आगे हैं। कहानी की सफल अभिव्यक्ति में प्रेरक तथा संकलन-त्रय के निर्वाह के साथ इसे रोचकता प्रदान करने वाला तत्व संवाद ही है। वास्तव में कहानी की लोकप्रियता काफी हद तक उसमें प्रयुक्त अवसरानुकूल, पात्रोचित तथा कथोचित संवाद पर केंद्रित है। इसलिए कहानीकार को इस तत्व के सटीक, स्वाभाविक तथा नाटकीय प्रयोग पर अति जागरूक होना चाहिए। संवाद बिजली की तरह कहानी रूपी शरीर को प्रकाशित कर उसकी ओर लोगों की रुचि बढ़ाते हैं।

1.4 कहानी के अन्य तत्वों के साथ संवाद-तत्व का संबंध

1.4.1 संवाद तत्व और कथा वस्तु

कलात्मक दृष्टि से हिन्दी कहानी को विकास की गति, प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद जैसे महान कहानीकारों की साहित्य साधना से प्राप्त हुई है। उन्होंने सचमुच हिन्दी कहानी साहित्य को शिल्प और कथ्य दोनों दृष्टियों से नया चेहरा

प्रदान किया। इसी के फलस्वरूप कहानी के शिल्पपक्ष अधिक विकास प्राप्त कर पाए है। कई आलोचकों द्वारा अनेक तत्व निर्धारित किए गए तो भी कहानी के सर्वमान्य तत्व, कथानक, पात्र और चरित्र-चित्रण, कथोपकथन या संवाद, भाषा-शैली, देशकाल या वातावरण और उद्देश्य हैं।

कहानी की सफलता की दृष्टि से देखने पर सारे तत्वों का अपना-अपना महत्व है। फिर भी इन सारे तत्वों के बीच परस्पर सामंजस्य उत्पन्न करने की दृष्टि से संवाद का महत्व सर्वोपरि है। कथावस्तु से लेकर उद्देश्य तक के बीच सेतुबन्धन का काम संवाद के जरिये ही संभव है। रचनाकार इसके ज़रिये कथावस्तु का विकास पात्रों की चारित्रिक व्याख्या, देशकाल, वातावरण का ज्ञान तथा अपना उद्देश्य पूरा करता है। कथावस्तु या कथानक के साथ संवाद का संबन्ध सबसे आगे है। कथावस्तु के बिना कहानी का कोई आकार नहीं है। कथावस्तु रूपी कहानी के शरीर को जीवन्त बनाने का महान कार्य संवाद के माध्यम से ही सफल बनता है। इस दृष्टि से देखने पर संवाद कथावस्तु की आत्मा है।

व्यावहारिक जीवन में अक्सर हम कोई भी काम शुरू करने से पहले उसकी रूपरेखा तैयार करते हैं जो सफलता की पहली सीढ़ी है। कथानक कहानी की वह रूप- रेखा है जिससे उसकी सार्थकता और अर्थवत्ता का बोध पाठक को मिलता है। कथानक जितना सुगठित हो उनकी कहानी के अनुसार कथानक का आकार बदलता रहता है। कथानक को सुगठित बनाने के लिए शिल्पगत सभी उपकरणों का पूर्ण सहयोग बहुत ज़रूरी है। क्योंकि शिल्पगत अन्य सभी तत्व इसपर आधारित है।

'कथानक' शब्द का अर्थ 'कथन' या 'कहना' है। अर्थात्, किसी घटना को कहना या उसका विवरण प्रस्तुत करना इस दृष्टि से देखने पर कथानक का विस्तृत अर्थ है कथोपकथन द्वारा किसी वस्तु को प्रस्तुत करना। इसलिए कहा जा सकता है कि कथानक, 'कथोपकथन' के सहारे ही पाठक के सामने अनावृत होते हैं। यहाँ कथानक और कथोपकथन का संबन्ध परस्पर पूरक सिद्ध होता है।

कथावस्तु को बिना कोई रुकावट से आगे बढ़ाने का महत्वपूर्ण तथा स्वाभाविक काम संवाद या कथोपकथन के ज़रिये ही संपन्न होता है। कथा प्रवाह में वर्णनात्मक प्रसंगों के बीच उपयुक्त विराम-स्थल का सृजन करने तथा चमत्कार उत्पन्न करने में संवाद का हाथ सर्वोपरि है। कथानक का क्रमिक विकास संवाद के बिना असंभव है। बीच-बीच में संवाद आगामी घटनाओं को पाठकों के सामने पहले ही आभासित कर देते हैं। इस प्रकार वर्णनात्मक प्रसंगों के बीच उपयुक्त संवाद प्रयुक्त करने से पाठक के मन को एक तरीके से नयापन का अनुभव महसूस होते हैं, साथ ही सुखद परिणाम की ओर कथा आगे बढ़ता है। इस प्रकार की संवाद-योजना द्वारा पाठकों की आँखों के सामने पूरी कहानी एक चित्र-सा खड़ी हो जाती है। संवाद अगर भावानुकूल या पात्रानुकूल नहीं है तो सुखद परिणाम के बदले हानि भी पहुँच सकते हैं। इसीलिए इसके प्रयोग पर कहानीकार को अति जागरूक होना भी बहुत ज़रूरी है। कहने का मतलब यह है कि संवाद, कथानक से प्रत्यक्ष संबंद्ध रखता है। यहाँ संवाद, घटना-विस्तारक होकर या चरित्र-परिचायक बनकर एक संदेशवाहक का रूप धारण कर लेता है।

इसी तत्व के ज़रिये कथानक के अन्तर्गत आनेवाले सारे क्रिया-कलापों की अभिव्यक्ति होती है। "जो वार्तालाप कथानक को अग्रसर नहीं करता, या चरित्र पर प्रकाश नहीं डालता, वह चाहे जितना सजीव हो उपयुक्त न होगा।"[1] अर्थात् संवाद-योजना कथावस्तु के निर्माण में उतना महत्वपूर्ण है। प्राचीन कहानियों के कथानक में इतिवृत्तात्मकता, काल्पनिकता, घटनाओं का आधिक्य आदि के कारण कथावस्तु जटिल तथा लम्बे हो गए थे। लेकिन आज की कहानियों के कथानक में अत्यन्त संक्षिप्तता और वास्तविक रचना-विधान को प्रमुखता दी जाने के कारण उसका आकार बहुत छोटा हो गया है। इस छोटे कलेवर में समय बन्धित होकर आगे बढ़ने वाली कहानी की कथावस्तु को जीवन्त बनाने का सफल काम संवादों पर निर्भर है। कम से कम घटनाओं के ज़रिये, आज कहानीकार कहानी का सृजन करते हैं तो पात्र तथा प्रसंग भी उसी परिधि के अन्तर्गत समाहित होते हैं। यहाँ छोटे-छोटे वाक्यों वाले संवाद के प्रभावोत्पादक शैली के ज़रिये कहानीकार कथावस्तु का इस प्रकार आयोजन करते हैं कि प्रभावव्यंजना कहीं भी कम नज़र नहीं आते हैं।

कथानक में औत्सुक्य वृत्ति का विधान उचित संवाद के माध्यम से ही संभव है। आगामी कथा की स्पष्ट झलक इसप्रकार के चुटीले, संक्षिप्त तथा सारगर्भित संवाद के ज़रिये पाठक को मिलता है। वास्तव में यह सफल कहानीकार का एकमात्र औजार है जिसके जरिये कथाप्रवाह को कोई कमी के बिना रोचकता और स्वाभाविकता का पुट नष्ट किये बगैर आगे खींच लेता है। कथावस्तु तो घटनाओं एवं वर्णनों का एक समाहार है जिसे संक्षिप्तता देकर कहानी का रूप

---

1. गुलाब राय - काव्य के रूप - पृ. 181

प्रदान कर मनोरंजन का उत्तम साधन बनाने में संवाद सर्वथा उपयुक्त तथा ज़रूरी भी है। साथ ही प्रयुक्त अवसरानुकूल कथा प्रवाह को आवश्यक गति प्रदान करने वाले संवाद के प्रयोग से कहानी में स्वाभाविकता तथा रोचकता आ जाती हैं।

कथावस्तु, के बाह्य एवं आन्तरिक क्रिया-कलापों और अन्तर्द्वन्द्वों की सफल अभिव्यक्ति भी कहानीकार उचित संवाद-योजना के कुशल प्रयोग से करते हैं। प्रयुक्त संवाद से पाठक को कथानक की सोद्देश्यता स्पष्ट होने के साथ वास्तविकता का आभास भी मिलता है। कथानक को शब्द बद्ध कर कथा के आनंद को आदि से अंत तक बनाये रखने में संवाद या कथोपकथन का हाथ बहुत कुछ निर्भर रहता है। उपर्युक्त सभी बातों के अलावा कथावस्तु को अगर कहीं भी कहानीकार को अपनी इच्छानुसार मोडना है तो वह काम संवाद-योजना के बिना संभव नहीं है। इस दृष्टि से परखने पर इसका महत्व और उद्‌घाटित होता है। यहाँ संवाद घटनाओं को गतिशील बनाकर कहानी की रोचकता को बढ़ाता देता है। एक अर्थ में हम कह सकते हैं कि संवाद के माध्यम से कथा रची जाती है। विषय के सम्यक प्रस्तुतीकरण के लिए विषयानुकूल संवाद बहुत ज़रूरी है, नहीं तो पाठक की रुचि कम पड़ जाते हैं और प्रेषणीयता नहीं आयेगी। इसलिए संवाद योजना पर बडी सावधानी बरतनी चाहिए। कुशल कहानीकार को अपनी कहानियों के संवाद इस प्रकार गढ़ना चाहिए कि कथा प्रवाह, या घटना, या कार्यों की स्पष्ट छाप पाठक के मनोजगत पर सटीक रूप से जमा हो जिसके ज़रिये कहानी में नाटकीयता का समावेश हो जाते हैं।

कथा के प्रसार में बाधक नहीं, बल्कि साधक के रूप में आज संवाद का महत्व निर्विवाद है। पात्रों एवं पात्रगत संवाद के माध्यम से कथावस्तु रूपी चित्र का

पट खोलता है। इसके बिना किसी भी हालत में कथावस्तु आगे नहीं बढेगी। इन्हीं के ज़रिये पाठकों को ज्ञानार्जन का मौका प्रदान होता है। इसलिए कथावस्तु की कलात्मक अभिव्यक्ति पक्ष पर अधिक ध्यान देना है जो संवाद रूपी लकीरों के बिना संभव नहीं है। यों कथानक का सीधा संबंध संवाद के साथ सिद्ध होता है।

1.4.2 संवाद-तत्व और पात्र एवं चरित्र चित्रण

कथावस्तु रूपी कहानी के कलेवर को चित्रबद्ध बनाने का सफल काम पात्रों के ज़रिये संपन्न होता है। पात्र तथा चरित्र चित्रण कहानी के शिल्प पक्ष में एक अनिवार्य तत्व है जिसका अभाव कथा रचना की स्थिति पर प्रश्नचिह्न लगा देता है। वास्तव में पात्रों की प्रकृति से घटनाओं और प्रसंगों का जन्म होता है। जहाँ घटनाएँ और प्रसंगों का समावेश है, वहाँ पात्र एक अवश्यंभावी वस्तु है। जहाँ पात्र है, वहाँ संवाद का जन्म होता है क्योंकि कहानी तो पात्रों के मुँह से कही जाती है। उसे रोचकता प्रदान करने के लिए समस्याओं एवं प्रसंगों का समावेश होता है। कहानी के प्राण रूपी संवाद का आकार है पात्र। इन पात्रों के चरित्र उद्‌घाटित करने का एक मात्र माध्यम संवाद या कथोपकथन है।

जिस प्रकार पात्र के साथ कहानी का संबन्ध है उसी प्रकार संवाद योजना और चरित्र-चित्रण परस्पर पूरक है। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व नहीं है। कारण यह है कि कहानी एक शब्दबद्ध आख्यान है जो पात्रों के बिना कही नहीं जा सकता। कथावस्तु को आदि से लेकर अंत तक पहूँचाने में पात्रों का हाथ जिस तरह मुख्य है, उसी तरह पात्रों को चरम सीमा तक उसी लय के साथ कर्मरत बनाने में

संवाद का हाथ सबसे आगे हैं। क्योंकि कहानी की मूल संवेदना उसमें निहित लेखक के सफल उद्देश्य पर निर्भर है जो पात्रों के चरित्रोद्घाटन के साथ अनावृत होते हैं। कहानी की सफल अभिव्यक्ति के लिए कथावस्तु के साथ पात्रों के चरित्र-चित्रण और कथोपकथन का पारस्परिक संतुलन बनाए रखना परम आवश्यक है।

पात्रों के चरित्र-चित्रण को सार्थक बनाने में संवाद की भूमिका सर्वप्रथम ही है। चरित्र-चित्रण में विविधता लाने के उद्देश्य से कई शैलियाँ प्रचलित हैं। आत्मकथात्मक शैली मनोवैज्ञानिक शैली, संवादात्मक शैली, कथोपकथन शैली आदि शैलियाँ संवाद के साथ पात्र-तत्व का महत्व मुखरित करनेवाली हैं। इन सभी शैलियों में पात्रों के मानसिक भावों की सफल अभिव्यक्ति देने में या अमुक पात्र के चरित्र को उभारने में संवाद का महत्व निर्विवाद है।

पहले की कहानी का रस, चमत्कार में था तो आज की कहानी का रस चरित्र चित्रण, भावों के उतार-चढ़ाव और विचारों के विश्लेषण-विवेचन पर आधारित है। मतलब यह है कि आज कहानी केवल विवरणात्मक प्रसंग नहीं, बल्कि कथोपकथन के सहारे पात्रों के विभिन्न क्रिया-कलापों द्वारा कही जाती है। यहाँ कलात्मकता को व्यंजित करने का एक मात्र सहारा चरित्र-चित्रण है और इसी के ज़रिये विभिन्न भावों को कहानीकार पाठकों के सामने प्रकट करते हैं। कथावस्तु कितने भी सजीव और आकर्षक हो, उसकी सफल अभिव्यक्ति पात्रों के बिना आगे नहीं बढ़ती है। जिन कहानियों में इसकी कमी महसूस होती है, वहाँ रोचकता का बिलकुल अभाव दर्शनीय है।

वास्तव में संवाद-तत्व का एक मुख्य उद्देश्य, पात्रों का चारित्रिक विकास है। पात्रों की भावनाओं, अनुभवों, उद्देश्यों, और जिन घटना-प्रक्रियाओं में पात्र भाग ले रहे हैं, उसकी प्रतिक्रियाएं जानने तथा दूसरों पर उसका प्रभाव समझना आदि पात्रों के संपूर्ण क्रिया-कलापों का पता अगर पाठक तक पहूँचना है तो केवल संवाद के माध्यम से। इस विषय पर प्रकाश डालते हुए जगन्नाथ प्रसाद शर्माजी का कहना है कि, "चरित्र के चित्रण में मुख्यतः ध्यान देने की बात यह होती है कि चरित्र की विशेषताओं को क्रमशः घनीभूत और प्रभावमय बनाया गया है कि नहीं। चरित्र के विषय में कहानीकार का जो कथन हो उसे सब एक ही स्थल और समय में नहीं कह देना चाहिए। चरित्र-विकास की सारी दौड़ कहानी के कथानक के आद्यन्त फैली रहनी चाहिए, अन्यथा कहानी का सौन्दर्य-वाहक संतुलन बिगड जाएगा। पात्र की मूल वृत्ति और उससे संबद्ध विषय आनुषंगिक उतार-चढ़ाव की बातें अत्यन्त क्षिप्र पर क्रमगत रूप में उपस्थित की जानी चाहिए।"[1]

संवाद चरित्र-चित्रण को नाटकीयता प्रदान करता है। पात्रों के रहस्यमय अन्तर्द्वन्द्वों की स्पष्ट अभिव्यक्ति और उद्देश्य की गहरी संवेदना संवाद अपनी नाटकीयता के साथ पाठक तक पहुँचाते हैं। इतना भी नहीं, पात्रों के व्यक्तित्व को स्पष्ट करते हुए उनके चरित्र से संबन्धित गोपनीय तत्वों का रहस्योद्‌घाटन भी संवाद के ज़रिये संपन्न होता है। इसप्रकार पात्रों तथा उनके चरित्रों से संबन्धित पाठक की छिपी हुई जिज्ञासाओं को भी संवाद तृप्त करता है। ऐसे पाठक और चरित्र के बीच संवाद एक पुल का सा बन्धन स्थापित कर देता है जो स्वाभाविकता

---

1. डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा - कहानी का रचना विधान - पृ. 94

की वृद्धि करता है। संवाद-तत्व की आवश्यकता और चरित्र के साथ इसके संबंध को उजागर करते हुए डॉ. राजेन्द्र सिंह का कथन बड़ा सराहनीय है। इसके प्रयोजनों की ओर संकेत करते हुए उनका कहना है कि - "संवाद के तीन प्रयोजन हैं वह वस्तु की प्रगति, चरित्र के विकास और भावों के स्पष्टीकरण एवं उनको गंभीर बनाने में सहायक होता है।[1]

संवाद का प्रत्यक्ष संबंध पात्रों और उनकी भाषा एवं चरित्र विकास से होता है। इस अर्थ में देखने पर संवाद कहानी में सोद्देश्य ही है। क्योंकि चरित्र विकास की सारी दौड़ संवाद के ईर्द-गिर्द घूमता है। संवाद पात्रोचित तथा अवसरानुकूल होने के कारण पात्रों के हृदयगत भावों को पाठक भली भान्ति जान सकते हैं और चारित्रिक व्याख्या भी मिलती हैं। पात्रों के संवाद से, तथा प्रयुक्त भाषा से पाठक यह भी जान लेते हैं कि अमुक पात्र किस कोटि, वर्ग तथा देशकाल, संस्कारों और शिक्षा-दीक्षा का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार की जानकारी, चाहे विधा जो भी हो, प्रयुक्त संवाद-योजना से ही पाठक तक पहुँच सकते हैं।

संवाद की मार्मिकता, चरित्र चित्रण को सार्थक और स्वाभाविक बनाते हैं जिसके ज़रिये कहानी का महत्व बढ़ जाते हैं। जिस तरह कहानी की सफलता के लिए सुगठित कथावस्तु और पात्र-योजना अवश्यंभावी है, उसी तरह कथाप्रवाह को रुकावट के बिना तथा पात्रों को क्रियाशील बनाने योग्य संवाद भी ज़रूरी है, क्योंकि इसके बिना कहानी की कोई अर्थवत्ता नहीं है। चाहे स्वगत कथन हो, आकाशभाषित स्वगत कथन हो, या वार्तालाप हो, चरित्र-चित्रण में सार्थकता लाने के लिए संवाद

---

1. डॉ. राजेन्द्र सिंह गौड - हमारी नाट्य साधना - पृ. 155

से बढ़कर दूसरा कोई साधन नहीं है। संवाद रूपी बुनियाद पर पूरी कहानी मज़बूत होकर खड़ी है तो कहानी की सफलता और सार्थकता सौ गुणा बढ़ जाती हैं। कहानी के सारे तत्व परस्पर आश्रित है, विशेषकर चरित्र-चित्रण और संवाद। एक के बिना दूसरा अपने आप में अपूर्ण है। संवाद के माध्यम से पात्र खुद अपना पहचान आन्तरिक तथा बाह्य रूप से पाठकों को देता है। इसलिए स्वाभाविकता महसूस होती है।

संवाद के माध्यम से बोलने और सुनने वाले के अतिरिक्त तीसरे का भी व्यक्तित्व अनजाने ही पाठक समझ लेते हैं। यह वास्तव में संवाद की सबसे बड़ी खूबी है। समाज के एक अंश के कभी विशद या तो आंशिक चित्रण के साथ-साथ संवादों के ज़रिये कहानीकार पात्र के मन में उठनेवाले स्नेह, सहानुभूति, करुणा, उत्सर्ग क्रोध, ईर्ष्या आदि मानवीय भावों को भी बडी आसानी से सफलता के साथ प्रस्तुत करते हैं। कुल मिलाकर कहें तो संवाद ही यह बता सकते हैं कि अमुक पात्र कौन था, अब कौन है और भविष्य में क्या बनेगा। इस तत्व के बिना कोई भी पात्र गतिशील नही रहेगा। पात्र अगर गतिशील नहीं है तो कहानी में रोचकता, या प्रभावात्मकता का गुण नहीं आयेगा जो कहानी की सफलता की एक अवश्यक शर्त है।

जिस प्रकार पात्र भिन्न-भन्न वर्ग के, स्थितियों के और भूमिकाओं के होते हैं, उसी के अनुरूप संवाद में भी विभिन्नताएँ दृष्टिगोचर है। परिस्थिति और भाव बदलने के साथ-साथ पात्रों की वाणी अर्थात् संवाद में भी उतार-चढ़ाव संभव है। वर्णित विषय, समस्या, चित्रित पात्र-विशेष उद्देश्य आदि के अनुसार कहानियों के

भी अलग-अलग रूप-भाव है। इनमें चरित्र-प्रधान कहानियाँ भी है जिसमें चरित्र ही प्रमुख होता है। इस प्रकार की कहानियों में संवाद ही सबकुछ है। क्योंकि व्यक्ति-विशेष की व्यक्तित्व मुखरित होने वाली अभिरुचियों, प्रवृत्तियों तथा प्रत्येक विशेषताओं के अनुरूप संवाद में भी काफी हद तक कुछ अपनापन रहता है। यहाँ कभी-कभी संवाद आन्तरिक या बाह्य विषय के अनुरूप विचार प्रकट करते हैं और पाठकों की आकांक्षाओं तथा कुतूहलताओं को जगाने में पूरी तरह से सक्षम बनते हैं। पात्र के समग्र व्यक्तित्व और उसकी रसात्मक स्थिति विशेष, पूरी सहजता और गतिशीलता से प्रयुक्त कथनों, संवादों एवं स्वगत् भाषणों के ज़रिये प्रकट होते हैं। इस प्रकार पात्र तथा कहानी को गतिशील या सक्रिय बनाकर कहानीकार की सृजनात्मकता में पूरा सहयोग देने वाले संवाद तत्व किसी भी हालत में अन्य सभी तत्वों से प्रमुख स्थान आलंकृत करते हैं। वर्णित पात्रों तथा उनके क्रिया-कलापों की वाणी देकर पूरी कहानी की सफलता की कुंजी के रूप में वर्तमान संवाद तत्व का महत्व नकारा नहीं जा सकता है। वास्तव में यही संवाद को अगर पात्र तत्व की संज्ञा दे तो उसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी, क्योंकि संवाद का स्थान पात्र तथा उसके इर्द-गिर्द ही है।

1.4.3 संवाद-तत्व और देशकाल या वातावरण

कहानी-शिल्प का एक महत्वपूर्ण अंग उसका वर्षित देशकाल या वातावरण है। क्योंकि, कहानी की विश्वसनीयता और स्वाभाविकता बहुत कुछ इस तत्व पर अवलम्बित है। कहानी में वर्णित घटनाओं एवं प्रसंगों की सत्यता तथा विश्वास पाठक को दिलाने के लिए कहानीकार उस समय के वातावरण की सजीव छटा

कुशलता के साथ उपस्थित करते हैं। वास्तव में यही पाठक की रुचि बढ़ाते है। कहानी एक ऐसी साहित्यिक विधा है जिसमें तत्कालीन युग की चेतना को तथा आकांक्षाओं को वाणी मिलती है, साथ ही पाठक के मन जीतने वाली भी है। इस अर्थ में देखने पर विश्वसनीयता और स्वाभाविकता इसका प्राण होना चाहिए। इन दोनों की सफल अभिव्यक्ति अगर कहानी में करना है तो कहानीकार को संवाद का पूरा-पूरा आश्रय लेना पड़ता है। एक श्रव्य माध्यम होने के कारण कहानी में उपयुक्त वातावरण की छाप केवल वर्णित पात्रों के मुँह से निकलने वाले अवसरानुकूल संवाद से ही मिलता है। स्वाभाविक, अनुकूल तथा हास्यव्यंग्य युक्त संवाद उपर्युक्त वातावरण निर्माण में सहायक सिद्ध हुआ है। कहानी के आदि से लेकर अंत तक अनेक परिस्थितियों तथा वातावरण से होकर कहानी आगे निकलती है। इसका पता पाठक के मनोमन्दिर में बैठ जाने से ही वे भलीभान्ति अमुक रचना का आस्वादन कर सकते हैं। इसका ठीक अन्ताज़ा पाठक को मिलने का एकमात्र उपकरण संवाद-योजना है। किसी भी हालत में इसकी उपेक्षा कहानीकार नहीं कर सकते हैं। वातावरण की सफल अभिव्यक्ति के लिए जिस तरह संवाद ज़रूरी है, उसी तरह पात्र भी इसके लिए अवश्यंभावी है।

नाटक में तो वातावरण चित्रण के लिए नाटककार संकलन-त्रय का पूरा-पूरा आश्रय लेता है। साथ ही बाह्य परिस्थितियाँ, यानी रंगमंचीय वातावरण भी बहुत कुछ सहायता देते हैं। कहानी में भी संकलन-त्रय का निर्वाह होना विश्वसनीयता की पहली कसौटी हैं। यहाँ 'संकलन-त्रय' नाम बदलकर व्यापक अर्थ में 'देशकाल' या 'वातावरण' के रूप में अभिव्यक्त होते हैं। इस ओर प्रकाश डालते हुए डॉ.

गुलाब राय का कहना है कि "कहानी में उपन्यास की भान्ति वातावरण के चित्रण के लिए अधिक गुंजाइश नहीं होती है, फिर भी कहानी में देशकाल की स्पष्टता लाने के लिए तथा कार्य से परिस्थिति की अनुकूलता व्यंजित करने के अर्थ में इसका चित्रण आवश्यक हो जाता है। वातावरण भौतिक और मानसिक दोनों ही प्रकार का हो सकता है और भौतिक वातावरण में प्रायः ऐसा होता है कि जो पात्रों की स्थिति की व्याख्या में सहायक हो।"[1]

कहानी का सीधा संबन्ध वास्तविक जीवन जगत से होता है। इसलिए वास्तविकता इसका मूलमंत्र है। देशकाल और परिस्थिति के सामंजस्य से ही कहानी में वातावरण की सृष्टि होती है। 'वातावरण' और 'देशकाल' दोनों में अर्थ की दृष्टि से मिलता नहीं है। प्रायः दोनों एक ही अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। इस ओर दृष्टि डालते हुए श्री. रामप्रकाश दीक्षित ने अपना मत प्रकट किया है। उनका कहना है कि, "वातावरण के अर्थ में एक दूसरा शब्द 'देशकाल' भी व्यवहार में आता है। देश का अर्थ 'स्थान' है और काल का 'समय'। इसी देशकाल की सीमाओं में बँधकर परिस्थितियाँ वातावरण के सृजन में सहायक होती है।"[2]

कहानी का आकलन बौद्धिक स्तर पर होता है तो वातावरण का भावनाओं द्वारा होता है। कारण यह है कि वातावरण निश्चित स्थान और समय की भावनाओं द्वारा पात्र-योजना में सामंजस्य उपस्थित करता है। वातावरण प्रायः दो रूपों में आता है - साधन और साध्य बनकर। साधन रूप में वातावरण प्रतिपाद्य वस्तु का

---

1. डॉ. गुलाब राय - काव्य के रूप - पृ. 210
2. रामप्रकाश दीक्षित - नयी कहानी का शिल्प-सौंदर्य - पृ. 5

पूरक बनकर आता है तो साध्य रूप में स्वयं प्रतिपाद्य बनता है। दोनों रूपों में इसकी सफल अभिव्यक्ति के लिए संवाद एक सेतु का काम करता है। वातावरण अपने आप में अधूरा है। जब संवाद के माध्यम से पात्रों द्वारा उसकी अभिव्यक्ति पाठक को मिलता है तो वह पूर्णता प्राप्त करता है। हिन्दी कहानियों में ये साधन रूप से आरंभित होकर धीरे-धीरे प्रतिपाद्य विषय या साध्य बन जाता है।

संवादों के माध्यम से जब वातावरण निर्मित होता है तो उसका प्रभाव बढता है। पात्रों के मानसिक स्तर के उतार-चढ़ाव को दिखाने के लिए कहानीकार बाह्य वातावरण की सृष्टि करता है। इसकी पुष्टी भी संवाद द्वारा होता है। जयशंकर प्रसाद कृत 'पुरस्कार कहानी के प्रारंभ में जो प्रभावव्यंजक संवाद है, उपर्युक्त बात का स्पष्ट उदाहरण है।[1] आम पाठक भी वह संवाद पढ़ने से कहानी की पूरी गतिविधियों से तथा परिस्थितियों से तादात्म्य प्राप्त करते हैं। साथ ही इन परिस्थितियों की सीढ़ी पर चढ़कर अन्तिम परिणाम की ओर भी पाठक अन्ताज़ा लगा सकते हैं। यह तो सचमुच वातावरण के अनुकूल गठित संवाद-योजना का ही चमत्कार है। वर्णित विषय और पात्रों के अनुरूप वातावरण की सृष्टि करने के लिए कहानीकार को उचित संवाद, योजना उपस्थित करनी चाहिए। क्योंकि वातावरण और संवाद परस्पराश्रित दो तत्व है। संवाद और वातावरण साथ-साथ चलने वाले दो तत्व हैं जैसा वातावरण, उसी के अनुरूप संवाद योजना भी होनी चाहिए। अर्थात्, जब पुराणकालीन वातावरण में किसी पात्र बोल उठते हैं तो, उसमें अंग्रेज़ी शब्दों के प्रयोग या तो आधुनिक वैज्ञानिक सभ्यता से संबन्धित बातचीत आना बिलकुल

---

1. जयशंकर प्रसाद - आकाशदीप - पृ. 107

हास्यास्पद ही मानी जाती है। यहाँ देशकाल एवं वातावरण भ्रमोत्पादन का कारण बन सकता है। यहाँ अस्वाभाविकता का पुट आम पाठकों को भी मिलेगा। इसी भान्ति आधुनिक युगीन वातावरण में लिखी जाने वाली किसी कहानी में किसी पात्र के गायब होने या कोई शिला से आग निकलना या आवाज़ आना, इस प्रकार के क्रिया कलापों का दिखाना बिलकुल युक्ति के विपरीत या असंगत प्रतीत होगा।

आधुनिक कहानीकारों ने पारिस्थितिक सजगता को वातावरण तथ्य संवाद-योजना में विशेष ध्यान दिया है। प्रेमचंद, निर्मल वर्मा, अज्ञेय आदि कहानीकार इस के प्रति विशेष सजग दिखाई देते हैं। वे लोग अपने समय का बोध, परम्परा एवं सभ्यता के संतुलन बनाये रखने में सर्वथा सजग रहे थे। ऐसी कहानियाँ किसी विशेष वातावरण में रखकर हम आंकलित कर सकते हैं। साहित्य में हमेशा नवीनता लक्षित होती है। कहानियों में जब इस बात का समावेश होती है तो युगबोध एवं भावबोध यथार्थ परिवेश में अभिव्यंजित होती है। जिस परिवेश में कहानी सृष्टि होती है, उसी से कथानक का संबन्ध होता है। कथानक जिस देशकाल से संबन्धित है, उसी के अनुरूप पात्र तथा संवाद का होना बहुत ज़रूरी है। अर्थात् इन सभी तत्वों का सुनियोजित संबन्ध एक सजीव वातावरण की सृष्टि के लिए आवश्यक है। इससे वास्तव में कहानी की स्वाभाविकता की वृद्धि होती है।

कोई भी कहानी पढ़ लेने से यदि पाठक करुणा से तरलित हो उठता है, या कुतूहलता से ओतप्रोत हो उठते हैं, या तो प्रेमपरवश हो उठते हैं, तो मतलब यह है कि एक प्रकार से उस वातावरण से पाठक अनुभववेद्य हो गये है। इसका अर्थ यह है कि उचित संवाद-योजना से कहानीकार ने उपर्युक्त वातावरण को प्रभावव्यंजक

बनाया है। वातावरण का बोध बाह्य क्रिया नहीं, बल्कि मानसिक क्रिया है। वातावरण प्रधान कहानियों में तो वातावरण का कुछ विशेष महत्व है। बारीक से बारीक रूप में इन कहानियों में वातावरण सूक्ष्मता से उजागर होते हैं।

स्थानीय चरित्रों तथा उनके संवादों के ज़रिये जब कहानीकार सामाजिक वातावरण की सृष्टि करता है तो पात्रों की मानसिक परिवर्तनशीलता के स्पष्टीकरण के ज़रिये भौतिक वातावरण की सृष्टि करता है। चाहे वातावरण सामाजिक हो या भौतिक, कहानीकार को प्रयुक्त संवाद योजना पर विशेष ध्यान बहुत ज़रूरी है। क्योंकि उससे संबन्धित छोटी-छोटी बातचीत के विवरण से ही पाठक उक्त वातावरण समझ जाते हैं। जब कोई कहानीकार प्रकृति चित्रण को वातावरण बनाकर कहानी लिखते हैं तो पात्रों की बातचीत की प्रांजलता, विदग्धता, शब्द और पदावली से हमें (पाठक को) उक्त वातावरण अनुभववेद्य होना चाहिए, नहीं ये लक्षित प्रभाव उपस्थित कराने में वह असमर्थ रह जाएगा। जब उचित संवादों के ज़रिये उपर्युक्त वातावरण की सृष्टि की जाय तो अधिक संवेदनाजन्य बन पड़ेगा।

वातावरण के एकत्वविधायक प्रभाव पर ज़ोर देते हुए जगन्नाथप्रसाद शर्मा का यह कथन विशेष महत्व रखता है। उनका कहना है कि "इस प्रकार कथावस्तु की प्रत्यंचा से कसे हुए धनुष के दोनों छोरों के बीच के तनाव की तरह कहानी के सारे विस्तार में जीवन की उबास वातावरण बनकर छाई हुई है और भार-रूप जीवन की वेदना गहरी हो पडी है। कहानी पढ़ चुकने पर पाठक के चिल पर न तो किसी पात्र के व्यक्तित्व की छाप पड़ती है न किसी परिस्थिति अथवा घटना ही का प्रभाव दिखाई पड़ता, केवल विवश और निरीह जीवन की उदासी ऐसी गहरी होकर

छा उठती है कि उसका मन कुछ खोया-खोया सा और धूमिल हो जाता है - यही वातावरण का एकत्वविधायक प्रभाव है।"[1] इस प्रकार देखने से वातावरण का प्रभाव कहानी के संवाद को विश्वसनीयता प्रदान करने के साथ पाठकों के मन को उद्वेलित करने में भी सहायक सिद्ध होते हैं।

संवाद-युक्त कहानियाँ वातावरण निर्माण में अधिक खरा उतरती है तो संवाद-रहित कहानियाँ देशकाल या वातावरण को प्रतिबिम्बित करने में सर्वथा पिछडा या प्रभावहीन रह जाती है। इसी कारण स्वाभाविकता की बिलकुल कमी-महसूस होती है। वास्तव में संवाद पद्धति से ही कथाकाल का परिज्ञान पाठक को मिलता है। अभिवादन, अभिनन्दन, संबोधन आदि में भी यह झलक उत्पन्न होना स्वाभाविकता और विश्वसनीयता लाने के लिए बहुत ज़रूरी है। कहानी किस काल का प्रतिनिधित्व करती है उसी वातावरण के व्यवहार में आनेवाली पदावली का प्रयोग पात्रों के वार्तालाप में होनी चाहिए। नहीं तो स्थानीय वातावरण का आभास पाठक को नहीं मिलेगा।

इस प्रकार संवाद योजना देशकाल सापेक्षित होने के कारण काल-खंड का सम्यक ज्ञान पाठक को मिलता है। रचनात्मक दृष्टि से यही ज़्यादा उपादेय होता है। संवादों में स्थानीय वातावरण का समावेश करने से पूरी कहानी की सजीवता और यथार्थता सौ गुणा बढ़ता है। क्योंकि संवाद, देशकाल, पात्र, भाषा तथा वस्तु सापेक्ष्य होता है। उचित शब्द प्रयोग के अतिरिक्त मुहावरों तथा स्वराघातों का भी आश्रय कुशल कहानीकार उक्त वातावरण की सजीवता के लिए प्रयुक्त करते है।

---

1. डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा - कहानी का रचना विधान - पृ. 193-194

दुखपूर्ण वातावरण में हास्यमय संवाद की सृष्टि से कृत्रिमता का आभास पाठक को लगता है। मतलब यह है कि वातावरण, विषय तथा व्यक्ति परस्पर संबन्ध रखनेवाले तत्व है। इसलिए जैसा वातावरण, वैसा कथन होना चाहिए।

1.4.4 संवाद-तत्व और भाषा-शैली

कहानी शिल्प का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपकरण तथा अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम भाषा है। इसके ज़रिये लेखक अपने विचारों एवं उद्देश्य को पाठकों के समकक्ष रखता है और इसी माध्यम से पाठक, लेखक के विचारों तथा उद्देश्य को समझ लेते हैं। आस्वाद्यता इसका अनिवार्य गुण समझी जाती है। इसलिए कहानी की भाषा सरल, व्यावहारिक और सहज होना चाहिए। स्वाभाविकता को अपना पाथेय मानकर चलने वाली आधुनिक कहानी-शिल्प का अभिन्न अंग, पात्रानुकूल तथा अवसरानुकूल भाषा है। यही वह माध्यम है, जिसके ज़रिये अन्य सभी तत्वों का प्रस्तुतीकरण होता है।

इसीके माध्यम से कथावस्तु कही जाती है, पात्र बोल उठते हैं, वातावरण सजीव हो उठता है, तथा उद्देश्य की सफ़ल अभिव्यक्ति होती है - कथावस्तु का विकास, आदि से अन्त तक गतिशीलता से आगे होता है तो वस्तु निर्माण में भाषा की सशक्तता और प्रौढ़ता पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। प्रभाव व्यंजना के लिए भाषाई शैली बहुत आवश्यक है। क्योंकि भाषा की सबसे बड़ी खूबी इसकी प्रभावोत्पादकता ही है। भाषा के रूप को तन्मयता और रोचकता के साथ प्रवाहित करने की क्षमता प्रयुक्त शैली पर निर्भर है। इसलिए कहानीकार को उचित भाषा-शैली के प्रयोग पर सतर्क रहना नितान्त आवश्यक है।

कहानी के सीमित आकार में भाषा सौंदर्य का पूर्ण निर्वाह करने के लिए भावानुकूल, पात्रोचित संवाद की सृष्टि करना कुशल कहानीकार की सृजनात्मक प्रतिभा पर निर्भर है। जितना संवाद चुस्त तथा संक्षिप्तता से हो, उतनी भाषा प्रभावव्यंजक दीख पडेगा। भाषा चाहे ग्रामीण अंचल का हो या नगरीय बोध को लेकर हो, उसमें पात्रानुकूलता का ध्यान रखना बहुत ज़रूरी है। नहीं तो पात्र को उद्‌घाटित करने में सहायक नहीं रहेगा। नाटकीयता का गुण कहानी भाषा की अन्यतम विशेषता है।

संवादों की चाल या भाषाई निपुणता देखकर ही पाठक कोई विशे, कहानी की ओर आकर्षित होते हैं। इसलिए भाषा संवाद का अपना साथी है, इसके बिना अभिव्यक्ति नहीं होती। भाषा चाहे जिस रूप में हो, उसे प्रवाहित करने की क्षमता संवाद पर निर्भर है। इसलिए कहानीकार को विभिन्न शैलियों का प्रयोग प्रभावात्मकता बढ़ाने के लिए करना चाहिए। भाषा तो अभिव्यंजना का सशक्त माध्यम है। भाषा के ज़रिये, कहानी में आयोजित पात्रों के मनोभावों को व्यक्त करने के साथ-साथ अन्य तत्वों के प्रस्तुतीकरण के लिए भी संवाद एक मात्र साधन है। इसी प्रकार भाषा भी अन्य तत्वों के प्रस्तुतीकरण का एक माध्यम है। क्योंकि श्रव्य माध्यम होने के कारण संकेतों या कोई प्रदर्शनों के माध्यम से कहानी में भावाभिव्यंजना साध्य नहीं है। इसके लिए अभिव्यक्ति पक्ष पर भाषा शैली के महत्व को उजागर करना कहानीकार का दायित्व है। अभिव्यक्ति पक्ष को सजग बनाने के लिए स्पष्ट तथा सहज-सरल भाषा का प्रयोग ही अभीष्ट है। रोचक और अवसरानुकूल संवाद के प्रयोग से भाषा स्पष्ट तथा सरल बनती है। भावों की अभिव्यक्ति बहुत कुछ भाषा

पर निर्भर रहने के कारण कहानी की सफलता भी भाषा पर आधारित है। कहानी की भाषा जितनी सरल, बोधजन्य तथा प्रभावव्यंजक होती है रचना इतनी प्रभावशाली होती है। भाषा तो अपने आप कहीं नहीं जाती, बल्कि उसके लिए एक माध्यम होना बहुत ज़रूरी है। संवाद वह प्रभावशाली औजार है जिसके माध्यम से भाषा की अभिव्यक्ति होती है। प्रेमचंद इस बात को अच्छी तरह समझते थे। उनकी कहानियों की सफलता का रहस्य भी भाषाई निपुणता थी।

भाषा की एक प्रमुख विशेषता उसकी प्रवाहमयता तथा प्रेषणीयता है। कुशल कहानीकार के हाथ में आ जाने से भाषा ज़्यादा प्रेषणीय बन जाती है। वे संवाद के कुशल संयोजन से अपनी कहानी की भाषा को अर्थ गरिमा देकर समर्थ तथा सजीव बनाता है। भाषा अपने आप में पूर्ण है तो भी अवसरानुकूल तथा पात्रानुकूल संवाद के माध्यम से उसकी अभिव्यक्ति होने से अर्थवत्ता बढ़ता है, भाषा यथार्थ का अनुसरण करते नज़र आती है और स्वाभाविकता को अपना अन्तरंग मित्र बनाकर चलती है।

कुशल कहानीकार के हाथ में पड़कर भाषा संवाद की सफल अभिव्यक्ति का माध्यम बनती है। नये-नये अर्थतलों को अपनाकर परिवर्तित संदर्भों में नवीन व्यंजना शक्ति से पाठकों को आकर्षित करती है। यही वास्तविक भाषा की कसौटी है। जिस प्रकार कथोपकथन के माध्यम से पात्रों का चरित्र-चित्रण अधिक सम्यकता से संभव होता है उसी प्रकार संवाद के माध्यम से चित्रित करने से भाषा की अभिव्यंजना शक्ति की भी वृद्धि होती है।

संवादों के माध्यम से स्पष्ट तथा सरल भाषा का प्रयोग करने से कहानी की ओर पाठक का ध्यान अनजाने ही आकर्षित होता है। क्योंकि प्रसंगानुकूल संवाद में भाषा अधिक मुखरित होती है। मुहावरों, कहावतों, लोकोक्तियों से युक्त संवाद से कहानी की भाषा में एक अनोखी चमत्कार शक्ति के साथ आकर्षणीयता भी उत्पन्न होती हैं। वास्तव में संवाद से ही कहानीकार की भाषाई निपुणता का पता पाठक को मिलता है। भाषा के ज़रिये कहानीकार का आभिजात्य संस्कार का आभास भी पाठक को मिलते हैं। उनकी भाषा में जो बोलचाल की सहजता तथा सांकेतिकता है, उसीकी झलक भी प्रयुक्त संवाद से पाठक को भलीभान्ति मिलती है। लेखक के अनुभूत यथार्थ की मूर्तता, उसकी पूरी ताकत के साथ संवाद से अनावृत होती है। उनकी कल्पना शक्ति, विश्लेषण-विवेचन की क्षमता, चिन्तन-मनन का तरीका आदि का ठीक-ठीक अन्ताज़ा प्रयुक्त संवाद से पाठक आसानी से समझ सकते हैं। संवादों की भाषा में वातावरण-निर्माण की भी अद्‌भुत शक्ति विद्यमान है।

कहानियों में भिन्न-भिन्न शैलियों का प्रयोग होने के साथ, उसी के अनुरूप भाषा भी अपना रूप बदलती है। सामाजिक कहानियों में जिस तरह भावमूलक भाषा का प्रयोग होता है, उसी भाषा का प्रयोग ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक कहानियों में नहीं चलता है। काव्यमयी भाषा कहानी को अधिक भावाभिव्यंजक बना देते हैं जो वातावरण-निर्माण में भी प्रभावशाली है। एक मंजे हुए नाटककार एवं कवि होने के कारण जयशंकर प्रसाद की कहानियों की भाषा में उपर्युक्त सभी गुण विद्यमान है। जिस प्रकार उनके कथोपकथनों में नाटकीय सौंदर्य झलकता है

उसी प्रकार उनकी भाषा में भी प्रयुक्त शब्द चयन, वाक्य विन्यास आदि में भी भाषा सौष्ठव परिमार्जित तथा सार्थक रूप में परिलक्षित होता है। परिवेशगत सक्रियता लाने से भाषा में सहजता आ जाती हैं। इसके लिए मोहक शब्दावली के स्थान पर सपाट और स्वाभाविक भाषा का इस्तेमाल करके संवाद-योजना तैयार करना है। कहानी का संपूर्ण सौन्दर्य और आकर्षणीयता प्रयुक्त संवाद तथा भाषाशैली में छिपा रहता है। अभूतपूर्व भाषा शैली के निर्माण में संवाद-योजना उपयुक्त, समर्थ एवं सक्षम है। कथोपकथन में चमत्कार लाने के लिए भी वाक्य-योजना और पदावली में कहानीकार जागरूकता से काम करते हैं।

इस प्रकार विचार करने से पता चलता है कि संवाद और भाषा-शैली का संबन्ध अटूट है। एक के बिना दूसरे का अस्तित्व संभव ही नहीं है। संवाद, भाषा शैली को अप्रतिम बनाने के साथ-साथ कथावस्तु के क्रमिक विकास की ओर ले जाकर अभिव्यक्ति की गहराई तथा साहित्यिक भाषा सौष्ठव आदि से उपयुक्त बना देते हैं। देशकाल एवं वातावरण के वर्णन में सापेक्ष रहकर आगे बढ़ने वाली उपयुक्त संवादों की भाषा तो संयम और परिमार्जित रूप भंगिमा से कहानी को उदात्त बनाते हैं। कहानी में प्रयुक्त भाषा जितना प्रभावोत्पादक एवं प्रेषणीय रहेगा, उतना अभिव्यक्तिपक्ष सबल एवं सशक्त रहेगा। कारण यह है कि कहानी केवल घटनाएँ या समस्याओं का वर्णन मात्र नहीं, बल्कि भावों की प्रवाहमय अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम भी है। इस सशक्तता को कायम रखने में संवाद पूरी सहायता देते हैं।

1.4.5 संवाद-तत्व और उद्‌देश्य

कहानी का अन्तिम तत्व उद्‌देश्य या कहानीकार का जीवन-दर्शन है। उद्देश्य का अर्थ, किसी-न-किसी सत्य का उद्‌घाटन करना है। मानव जीवन मूल्यों की सहज अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम रूपी कहानी में उद्देश्य सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। यह एक विवाद रहित सत्य है कि कहानियाँ सोद्देश्य होते हैं। किसी-न-किसी उद्देश्य को नज़र-अन्दाज़ करते हुए ही कहानियाँ लिखी जाती है जिसकी अभिव्यक्ति संवादों के ज़रिये कहानीकार बड़ी होशियारी से करते हैं। उद्देश्य का क्षेत्र बडा व्यापक तथा सार्थक होता हैं। ये उद्देश्य कभी उपदेश के रूप में, परिवर्तन के रूप में, मनोरंजन के रूप में, हृदय विशालता के रूप में या कोई यथार्थ प्रामाणिक चिन्तन या विचार के रूप में पाठकों के सामने कहानीकार प्रस्तुत करते हैं। संक्षेप में कहें तो जिस मूल-प्रेरणा से कहानी लिखी जाती है, या इसकी मूल संवेदना को उसका उद्देश्य कहा जा सकता है जिसकी अभिव्यक्ति का माध्यम केवल पात्रगत संवाद है। वास्तव में अमुख कहानी के ज़रिये लेखक का अन्तिम लक्ष्य भी यही है।

कहानी के उद्देश्यों में कहानीकार के व्यक्तित्व की प्रतिष्ठापना ज़रूर होती है जो आधुनिक सोद्देश्य कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है। इसलिए किसी कहानियों में उद्देश्य स्पष्ट प्रतिबिंबित है तो किसी में उद्देश्य अन्तर्निहित सत्य रूप में पात्रों के संवादों से पाठक समझ लेते हैं। चाहे किसी भी रूप में हो ये उद्देश्य प्रतिफलित होते हैं। ये उद्देश्य के मूल में निश्चय रूप में मानवता और मानवमूल्यों की प्रतिष्ठा होती है। इसके बिना कहानी, कहानी न रहकर कुछ और रूप अपनाएगी। कहानीकार की अनुभूति और संवेदना जितनी परिपक्व, गहरी और महान होगी,

उसकी कहानी उतनी चिरस्थायी प्रभाव डालेगा। अर्थात जिस कहानी में मानवीय प्रवृत्ति और संबन्धों का स्पष्टीकरण नहीं होता है, उसे कहानी की संज्ञा नहीं दी जा सकती।

उद्देश्य का कहानी के देशकाल तथा वातावरण से सीधा संबन्ध होता है, क्योंकि जिन परिस्थितियों या वातावरण के परिवेश में कहानीकार अमुख कहानी लिखी जाती है, उससे उद्देश्य का भी सीधा संबन्ध कहानी में है। कारण यह है कि उद्देश्य हमेशा परिवेशजन्य होता है। इसके लिए संवाद काफी हद तक सहायक सिद्ध होते हैं। परिवेश की सहज अभिव्यक्ति संवाद के बिना संभव नहीं है। परिस्थितियों तथा वातावरण का प्रत्यक्ष प्रभाव जिस प्रकार वर्णित पात्रों के व्यक्तित्व से संबन्ध रखता है, ठीक उसी प्रकार जीवन-दर्शन या लेखक के उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति संवाद के ज़रिये ही अनुभववेद्य होते हैं। इसमें कोई दो पक्ष नहीं है। जयशंकर प्रसाद कृत 'मधुआ' कहानी के शराबी के जीवन में आये हुए परिवर्तन ही उस कहानी लेखक का उद्देश्य है। उसे दिखाने के लिए प्रसाद जी ने केवल एक संक्षिप्त चुस्त संवाद का सहारा लिया है जिसका प्रभाव सचमुच प्रभावव्यंजक था। इसप्रकार संवादों के माध्यम से प्रस्तुत करने से उद्देश्य की सहज अभिव्यक्ति पाठक को होती है।

मानवीय भावनाएँ, विचार विमर्श, महान उद्देश्य आदि से प्रेरित होकर कहानी लिखनेवाले कहानीकार, उसकी अभिव्यक्ति अपनी वर्णन कुशलता के ज़रिये कहानी में प्रस्तुत करते हैं तो वहाँ उद्देश्य अपना अस्तित्व जमाते हैं। यही जीवन दर्शन की कलात्मक अभिव्यक्ति है। जिस प्रकार कठपुतलियों के खेल में हम उसकी डोरों को नहीं देखते हैं, उसी प्रकार कहानी के पात्र, कथानक, संवाद, भाषा

शैली आदि को हम पहचान तो लेते हैं मगर उसी प्रकार उसके बीच छिपे जीवन दर्शन को हम सीधे नहीं पहचानते। उसे पहचानने के लिए पाठक को इन तत्वों के बीच मन लगाकर कूद डालना बहुत ज़रूरी है। जीवन-दर्शन की अभिव्यक्ति अन्त तक पर्दे के पीछे रहते हैं। अन्त में उसकी अभिव्यक्ति इस प्रकार चमत्कार पूर्ण तथा आकर्षक बन कर पाठक के सामने खुलते हैं जैसे कोई पर्दा खुलता है। इससे पाठक को सचमुच आनन्द का अनुभव मिलते हैं।

कहानीकार को उद्देश्य को सार्थकता और नैतिकता से युक्त करता बहुत ज़रूरी है, क्योंकि उद्देश्य का आधार ही वही है। जीवन-दर्शन की सबसे पहली कसौटी, उसकी सत्यता है। कहानी को भी इसी बुनियाद पर टिके रहना चाहिए। सत्यता का आधार केवल अच्छाइयाँ नही है। क्योंकि मानव जीवन न मात्र अच्छाईयों का भरमार है, उसमें अवश्य कुरूपताएं भी विद्यमान है। वह दोनों का संगम स्थान है। कहानीकार के जीवन-दर्शन में भी इस प्रकार दोनों का समन्वय होना चाहिए। इसके गुण-दोषों को दिखाकर अपने व्यक्तिपरक जीवन में सुधार लाने का मौन आह्वान वास्तव में कहानी के उद्देश्य से पाठक को संवादों के ज़रिये कहानीकार देता है।

कथोपकथन को उद्देश्यपूर्ण होना इसलिए नितान्त आवश्यक है कि, ये कहानी को नीरसता से बचाते हैं। कहानीगत बाकी तत्वों के सामने इसका महत्व कहीं ज़्यादा है। यह अन्य तत्वों को बढ़ावा देता है, विशेषकर चरित्र चित्रण को। किसी महान चरित्र के माध्यम से ही उद्देश्य की अभिव्यक्ति होती है। कहानी का मर्म वास्तव में कहानी में प्रयुक्त रोचक संवाद ही है। इसका मर्म जाननेवाले कुशल

कहानीकार किसी भी हालत में इस तत्व की उपेक्षा नहीं की जा सकता। संवाद-योजना अगर सोद्देश्य है तो उद्देश्य भी सफलता से अभिव्यक्त होगा। अर्थात् कहने का मतलब यह है कि अगर संवाद सोद्देश्य है तो, अमुक कहानी भी सोद्देश्य निकलेगा। भावुकता, उद्देश्य को सार्थकता प्रदान करते हैं तो भी अतिभावुकता सोद्देश्यता में बाधक होती है, जिन कहानियाँ उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति प्रदान करने में बेजोड़ है, उनमें संवाद-योजना भी उतनी सोद्देश्य एवं बेजोड़ है।

सच पूछे तो कहानी का वास्तविक उद्देश्य जीवन संबन्धी उन महान तथ्यों तथा मूल्यों की स्थापना करना है जो मानव जीवन को आगे का मार्ग प्रदर्शन करेगा। ये उद्देश्य लेखक सीधे नहीं कह देते, बल्कि पात्र के मुँह से, या अन्तिम वाक्य में सूक्ति के रूप में कहलवाते हैं या सूचना या संकेत देते हैं। कभी-कभी चमत्कृत उक्ति के रूप में कहलवाते हैं जिससे मनोरंजन या आस्वाद्यता होते हैं।

निष्कर्ष

कहानी, शिल्प और कथ्य दोनों की संश्लिष्ट परिणति का महान स्वरूप है। कहानी को रोचक, कलापूर्ण, तथा स्वाभाविक बनाने के लिए कलात्मक सभी उपकरणों में, एक आनुपातिक संतुलन एवं सामंजस्य उत्पन्न होना अपेक्षित है। इसलिए संवाद तत्व के सफल आयोजन में विशेष ध्यान देना चाहिए। क्योंकि संवाद रूपी बिजली की कान्ति से ही बाकी तत्वों को प्रकाश मिलते हैं। संक्षिप्त, सारगर्भित और पात्रानुकूल भाषा में प्रयुक्त संवाद-योजना कथा को अभीष्ट की ओर मोडने, पात्रों के हृदयगत भावों को उद्‌घाटित करने तथा वातावरण की सफल

अभिव्यक्ति देने में सर्वथा सहायक सिद्ध होते हैं। प्राचीन इतिवृत्त प्रधान तथा घटनाप्रधान हिन्दी कहानी को संवाद ने अपने चमत्कारिक प्रयोग से अलंकृत किया है और कहानी साहित्य को एक नया चेहरा प्रदान किया। वस्तुतः संवाद-सौंदर्य का निर्वाह, आज की हिन्दी कहानी की सबसे बड़ी उपलब्धि है।

दूसरा अध्याय

हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्त्व का क्रमिक विकास

सारांश – *हिन्दी कहानियों के बृहद् इतिहास को प्रेमचंद-पूर्व युग, प्रेमचंद युग और प्रेमचन्दोत्तर युग में विभाजित करके इन तीनों युगों में संवाद-तत्त्व में आई प्रगति को सप्रमाण इस अध्याय में रेखांकित किया गया है। पूर्व प्रेमचंद युग की अधिकतर कहानियाँ कल्पना प्रधान, वर्णनात्मक और आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई हैं। प्राचीन परम्परागत रूढ़ियों में बंधी रहने के कारण कहानी की रचनात्मक आवश्यकताओं का बोध इस समय की कहानीकारों में बहुत कम दिखाई पड़ता है। इसलिए संवाद तत्त्व के बहुआयामी प्रयोग की ओर कहानीकारों का ध्यान नहीं गया। जिन कहानियों में इधर-उधर संवादों का प्रयोग हुआ है, वे कथाप्रवाह में धुल मिल जाने से ज़्यादा निखर नहीं पाए। लेकिन इस युग के अंतिम चरण में आते ही संवाद तत्त्व के प्रयोग में प्रगति दिखाई देती है। प्रसादकृत 'ग्राम', चन्द्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा रचित 'उसने कहा था' कहानियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय कृतियाँ है।*

प्रेमचंद युगीन हिन्दी कहानियाँ कथ्य और शिल्पगत नवीनता के कारण पूर्ववर्ती युग से काफी भिन्न हैं। इस समय की कहानियों में वर्णनात्मकता के स्थान पर संवादात्मकता आ गई। इसी कारण कथानक से लेकर उद्देश्य तक के सभी तत्त्वों का निर्वाह संवादों के ज़रिये पुष्ट होने लगा। प्रेमचंद युगीन हिन्दी कहानियाँ लेखक के मुँह से नहीं, पात्रों के मुँह से रची जाने लगी। प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद के अलावा सुदर्शन, विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक, चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा आदि कहानीकारों की कहानियाँ इस का उत्तम उदाहरण है।

प्रेमचन्दोत्तर युग में आते ही जिस तरह कहानियों का ढाँचा परिवर्तित हुई, उसी तरह प्रयुक्त संवाद योजना में भी बदलाव आया। आज की कहानियों में मनोविज्ञान पर अधिक बल देने के कारण घटनाओं की अपेक्षा घटना हेतु का ज़्यादा महत्त्व है। इसी कारण इस युग की कहानियों में प्रयुक्त संवाद अति संक्षिप्त, सांकेतिक व चरित्र की मानसिक स्थिति सापेक्ष्य बन गए हैं। जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल, उपेन्द्रनाथ अश्क आदि की कहानियों में प्रयुक्त संवाद इस बात की सफल अभिव्यक्ति देती है।

दूसरा अध्याय
हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास

आज हिन्दी कहानी साहित्य एक सशक्त साहित्यिक विधा है जिसका उत्तरोत्तर विकास होता जा रहा है। कहानी के इस विकास-क्रम में आए विभिन्न परिवर्तनों के कारण समय-समय पर कहानी के रूप एवं शैली में काफी बदलाव आए हैं। आज की कहानी पहले की अपेक्षा अधिक परिमार्जित एवं परिनिष्ठित है। वास्तव में हिन्दी कहानियों की रचना-प्रक्रिया संबन्धी एक नई चेतना का उदय प्रेमचंद के साहित्य जगत में पदार्पण के साथ ही हुआ है। "एक कहानीकार के रूप में प्रेमचंद का आगमन हिन्दी कहानी साहित्य की एक महत्वपूर्ण घटना है।"[1]

प्रेमचंद युगीन कहानियाँ वस्तु और शिल्प की दृष्टि से अपने पूर्ववर्ती और परवर्ती युग से काफ़ी भिन्न ही है। इस दृष्टि से विचार करने पर कहानी-साहित्य के इतिहास को मुख्य रूप से तीन भागों में बाँट सकते हैं - (क) प्रेमचंद-पूर्व हिन्दी कहानी, (ख) प्रेमचंद-युगीन हिन्दी कहानी और (ग) प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कहानी।

हिन्दी कहानी साहित्य के इन तीन प्रमुख युगों की कहानियों में संवाद योजना के क्रमिक विकास को ढूँढना ही इस अध्याय में हमारा लक्ष्य है। अध्ययन क्रम में मैंने प्रेमचन्दोत्तर युग की समय सीमा को सन् 1960 तक ही सीमित रखा है। इसका कारण यह है कि संवाद-तत्व के विकास की दृष्टि से सन् 1960 तक

---

1. डॉ. हेतु भारद्वाज - हिन्दी कथा साहित्य का इतिहास - पृ. 21

की कहानियों का ही विशेष महत्व है। उसके बाद की कहानियाँ साहित्य के विभिन्न आन्दोलनों से जुडे रहने के कारण संवाद-योजना के सफल प्रयोग की दृष्टि से उतना महत्वपूर्ण नहीं है। इसलिए सन् 1960 के बाद की कहानियों का संक्षिप्त विवरण ही दिया गया है।

2.1 प्रेमचंद-पूर्व युगीन प्रतिनिधि हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास

हिन्दी कहानी-साहित्य को एक सुनिश्चित एवं परिमार्जित रूप प्रेमचंद की रचनाओं के ज़रिये ही प्राप्त हुआ है। फिर भी प्रेमचंद के पूर्व एक सशक्त परम्परा के रूप में कथा-साहित्य का निर्माण हो चुका था। इस युग को व्यापक अर्थ में प्रेमचंद-पूर्व युग की संज्ञा हम दे सकते हैं। इस युग के कहानीकारों ने जीवन के बाह्य पहलुओं को ही कहानी का विषय बनाया था। ऐतिहासिक, जासूसी, तिलस्मी, ऐयारी आदि अनेक प्रकार की कहानियाँ इस युग में सामने आई। लेकिन इन कहानियों का लक्ष्य केवल चमत्कार प्रदर्शन, स्थूल मनोरंजन और उपदेशात्मकता थी।[1] इसलिए तत्कालीन समाज का कोई यथार्थ रूप इन कहानियों में उभर नहीं आया। सन् 1900 ई. के पूर्व लिखी गयी प्रस्तुत कहानियाँ अधिकतर कल्पना-प्रधान या अप्रत्याशित घटनाओं का समूहमात्र है।[2] वास्तविक रचना प्रक्रिया से अनभिज्ञ इस समय के कहानीकारों की कहानियों में आधुनिक कहानी शिल्प का कोई सुदृढ़ रूप ढूँढना व्यर्थ की बात है। इसी कारण संवाद योजना की दृष्टि से भी ये कहानियाँ उतनी विकसित नहीं है।

---

1. डॉ. राधेश्याम गुप्त - प्रेमचन्दोत्तर कहानी-साहित्य - पृ. 33
2. गणपतीचन्द्र गुप्त - हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - पृ. 452

सन् 1803 में लिखी गयी इंशा अल्लाह खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' कुछ आलोचकों के अनुसार हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी मानी जाती है।[1] लेकिन आधुनिक कहानी के रूप-रंग की कोई विशेषता उसमें नहीं मिलती है। सन् 1900 ई. के पूर्व लिखी गयी अन्य कहानियों से भिन्न होकर प्रस्तुत कहानी में कहानीकार ने अपने को अलग कर पात्रों के मुँह से निकलनेवाली संवादों के ज़रिये नाटकीयता का निर्माण किया गया है। पात्रों से संबन्धित सारी स्थितियों का और चरित्रगत विशेषताओं का वर्णन कहानीकार ने पात्रों के ही मुँह से करवाया है।[2] कहानी का आरंभ यद्यपि प्राचीन पद्धति के अनुरूप है तो भी आवश्यक कलात्मक तत्वों का निर्वाह साफ दिखाई देता है। कल्पना-प्रधान वर्णनात्मक शैली में लिखी गयी इस कहानी में संवादों का प्रयोग होने के कारण रचना समकालीन लगता है। मगर ऐतिहासिक शब्दावली का प्रयोग होने के कारण संवादों की भाषा में प्रेषणीयता के गुण नहीं के बराबर है। इसमें भी अप्रत्याशित घटनाओं एवं कल्पना-तत्व का आधिक्य होने के कारण आधुनिक हिन्दी कहानी के मापदण्डों के निकष पर यह कहानी खरी नहीं उतरती है।

'रानी केतकी की कहानी' के बाद प्रकाशित शिवप्रसाद सितारे हिन्द कृत 'राजा भोज का सपना' कहानी भी कल्पना-प्रधान है। इसमें उपदेश देने के लिए कहानीकार स्वयं एक दार्शनिक की भान्ति पाठकों के सामने उपस्थित हो जाते थे। इसमें संवादों का प्रयोग नहीं के बराबर है। इसलिए संवाद-योजना की दृष्टि से प्रस्तुत कहानी शिथिल मानी जाती है।

---

1. डॉ. विद्यासागर दयाल - हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास - पृ. 163
2. डॉ. परमानंद श्रीवास्तव - हिन्दी कहानी की रचना-प्रक्रिया - पृ. 62

सन् 1900 ई. से लेकर 1915 ई. तक की समय परिधि को आधार मानकर प्रेमचंद-पूर्व हिन्दी कहानी साहित्य का विश्लेषण करने पर पता चलते हैं कि इस युग में बहुत कम कहानियाँ लिखी गई हैं। ये कहानियाँ भी अधिकतर कल्पना-प्रधान, वर्णनात्मक या आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई हैं। पाठकों का मनोरंजन तथा अपनी ही लोकप्रियता को लक्ष्य मानकर लिखी गई इन कहानियों में भी कलात्मकता का अभाव दर्शनीय है। इनमें किसी-किसी कहानियाँ संस्कृत कहानियों का अनुवाद या रूपान्तर है। इसीलिए शिल्प पक्ष का कोई स्वतन्त्र रूप इनमें दिखाई नहीं पड़ता है। फिर भी माना जाता है आधुनिक हिन्दी कहानी-साहित्य की शुरुआत इन्हीं कहानियों से हुआ।

हिन्दी की पहली मौलिक कहानी के विषय में विद्वानों के बीच मतभेद है। सन् 1900 ई. में 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित किशोरीलाल गोस्वामी कृत 'इन्दुमती' कहानी पर शेक्सपीयर के 'टेम्पेस्ट' नाटक का प्रभाव होने के कारण इसे प्रथम मौलिक कहानी नहीं कहा जा सकता।[1] यह भी नहीं, प्रस्तुत कहानी भी वर्णनात्मक शैली में लिखी गयी एक कल्पित कहानी है। इसमें यथार्थपरक दृष्टिकोण का बिलकुल अभाव है। संवाद-योजना की दृष्टि से परखने पर प्रस्तुत कहानी उतना महत्वपूर्ण नहीं है। क्योंकि, काल्पनिकता का आधिक्य होने के कारण संवाद इसमें नहीं के बराबर है। कहानी के बीच-बीच में लेखक आकर घटनाओं की व्याख्या देते हैं।

---

1. डॉ. हेतु भारद्वाज - हिन्दी कथा साहित्य का इतिहास - पृ. 20

सन् 1901 ई. में 'छत्तीसगढ़ मित्र' में प्रकाशित श्री. माधवराव सप्रे की 'एक टोकरी भर मिट्टी' कहानी का आरंभ वर्णन-प्रधान शैली में होते हुए भी बीच-बीच में संवादों का प्रयोग भी हुआ है। ये संवाद कथानक के विकास में और चरित्र चित्रण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। शोषण की प्रक्रिया तथा वर्ग संघर्ष के चित्रण करने में कहानीकार ने संवादों का सहारा लिया है। कहानी में विधवा स्त्री का संवाद इस बात की पुष्टि करता है।

"विधवा गिडगिडाकर बोली, "महाराज अब तो यह झोंपडी तुम्हारी ही हो गयी है। मैं उसे लेने नहीं आयी हूँ। महाराज क्षमा करें तो एक विनती है।"

ज़मीन्दार के स्वीकृति में सिर हिलाने पर उसने कहा; "जब से यह झोंपड़ी छूटी है तब से मेरे पोती ने खाना-पीना छोड़ दिया है। मैं ने बहुत कुछ समझाया, पर वह एक नहीं मानती। यही कहा करती है कि अपने घर चल। वहीं रोटी खाऊँगी। अब मैंने सोचा कि इस झोंपड़ी में से एक टोकरी भर मिट्टी लेकर उसी का चूल्हा बनाकर रोटी पकाऊँगी। उससे भरोसा है कि वह रोटी खाने लगेगी। महाराज क्षमा करके आज्ञा दीजिए तो इस टोकरी में मिट्टी ले जाऊँ।"

ज़मीन्दार ने आज्ञा दे दी।"[1]

प्रस्तुत संवाद से पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं की ओर संकेत मिलने के साथ-साथ कहानीगत वातावरण का पता भी मिलता है। अनावश्यक विस्तार के बिना पात्रानुकूल भाषा के ज़रिये संवाद का प्रयोग होने के कारण प्रभावोद्पादकता

---

1. माधव राव सप्रे, डॉ. देवेश ठाकुर (संपादक) कहानी संग्रह - एक टोकरी भर मिट्टी - पृ. 65-66

बढ़ गई है। इस दृष्टि से देखने पर कहानी के अंतिम संवाद सोद्देश्य ही है। इससे विधवा की गरीबी के आगे ज़मीन्दार की स्वार्थलिप्सा की पराजय और पश्चात्ताप को वाणी मिला है।

अन्त में ज़मीन्दार लज्जित होकर कहने लगे कि–

"नहीं, यह टोकरी हमसे न उठायी जायेगी।"

यह सुनगर विधवा ने कहा,

"महाराज नाराज़ न हो, आप से एक टोकरी भर मिट्टी न उठायी जाती और इस झोंपडी में तो हज़ारों टोकरियाँ मिट्टी पडी हैं। उसका भार आप जन्म-भर क्यों कर उठा सकेंगे? आप ही इस बात पर विचार कीजिए।"[1]

प्रस्तुत व्यंग्यात्मक संवाद में विधवा स्त्री का महान चरित्र उद्घाटित हो जाता है और साथ ही साथ ज़मीन्दार का दंभ तोडकर उसे असमर्थ साबित कर अपने सात्विक गुणों से उसे प्रभावित करने में विधवा कामयाब हो जाती है। वस्तु और शिल्प दोनों की दृष्टि से प्रस्तुत कहानी आधुनिक हिन्दी कहानियों के समकक्ष ठहरते हैं।

सन् 1902 में 'सरस्वती' में प्रकाशित एक घटना-प्रधान कहानी है मास्टर भगवानदास की 'प्लेग की चुडैल' जिसका उद्देश्य लोगों का मनोरंजन करना मात्र था। गद्य-पद्य मिश्रित शैली में लिखी गयी इस कहानी में संवादों का प्रयोग इधर-

---

1. डॉ. देवेश ठाकुर (संपादक) - कहानी संग्रह एक टोकरी भर मिट्टी - पृ. 66

उधर हुआ है तो भी कहानी को जीवन्त बनाने वाले तत्व के रूप में इसका सफल आयोजन प्रस्तुत कहानी में नहीं हुआ है। फिर भी कहीं-कहीं कथानक विकास में और चरित्र चित्रण की दृष्टि से संवादों का प्रयोग तो हुआ है।

सन् 1903 में 'सरस्वती' में प्रकाशित आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कृत 'ग्यारह वर्ष का समय' हिन्दी कहानी साहित्य के विकास में अपना अलग योगदान देने वाली एक कहानी है। डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल के मतानुसार यह हिन्दी की पहली मौलिक कहानी मानी जाती है। इस युग की अन्य कहानियों की तरह इसमें भी कल्पना-तत्व की प्रधानता है। वर्णनात्मक शैली में लिखी गयी इस कहानी में कहानीकार ने आत्मकथात्मक रीति को अपनाया है।[1] कहानी की समस्त घटनाएँ पात्रों के मुँह से वर्णित है। फिर भी बीच-बीच में कहानीकार ने संवादों का भी प्रयोग किया है। लेकिन संस्कृत निष्ठ पदावली से युक्त भाषा के प्रयोग के कारण ये संवाद उतना सफल नहीं निकला है। जो संवाद प्रयुक्त है, वह पात्रों के चरित्रगत विशेषताओं को उभारने में सहायक नहीं हुआ है अर्थात् इस कहानी में प्रयुक्त संवाद, कहानी को जीवन्त बनाने में सहायक नहीं है।

प्रेमचंद पूर्व युग की दूसरी एक महत्वपूर्ण कहानी 1907 ई. में 'सरस्वती' में प्रकाशित बंग महिला की 'दुलाईवाली' है। कुछ विद्वानों के मतानुसार यह हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी है।[2] इस युग की अन्य कहानियों से भिन्न होकर इसमें मानवीय संवेदना का चित्रण पायी जाती है। काल्पनिक तत्वों की प्रधानता होने हुए

---

1. डॉ. कुमारी नूरजहाँ - कहानीकार जैनेन्द्र - पृ. 15
2. डॉ. हेतु भारद्वाज - हिन्दी कथा साहित्य का इतिहास - पृ. 21

भी इस कहानी में संवादों का भी प्रयोग अधिक मात्रा में हुआ है। पात्रों की चारित्रिक व्याख्या देने के लिए भी कहानीकार ने संवादों का प्रयोग किया है। कहीं-कहीं ये संवाद स्वाभाविक तथा मार्मिक बन पड़े हैं। कहानी के अन्तिम संवाद प्रसंगानुकूल तथा प्रभावोत्पादक ही है-

"अरे तुम जानो क्या। इन लोगों की हँसी ऐसी ही होती है। हँसी में किसी के प्राण भी निकल जाएँ तो भी इन्हें दया न आने।"[1] यहाँ संवाद द्वारा पात्र की मनोदशा की ओर ध्यान आकर्षित किया है। पाठक के मन में संवेदनशीलता उत्पन्न करने में संवाद सर्वथा उपयुक्त हुआ है।

इस समय के कहानी लेखकों ने अपनी भाषा की विलक्षण शक्ति का प्रदर्शन कहानियों के माध्यम से किया था। इसके लिए बीच-बीच में चमत्कारपूर्ण उक्तियों के रूप में संवादों का प्रयोग करते थे। लेकिन इस प्रकार के संवादों से कहानी में शैल्पिक दृष्टि से कोई सजीवता उत्पन्न नहीं होती। 'दुलाईवाली' कहानी में भी इसप्रकार के संवादों की भरमार है। मगर कहानी के अन्य तत्वों में सामंजस्य उत्पन्न करके कहानी को जीवन्त बनाने में इसप्रकार के संवाद सक्षम नहीं है। प्रेमचंद-पूर्व कहानी युग में वस्तु और शिल्प की दृष्टि से कहानी साहित्य उतना विकसित नहीं था। इसलिए संवादों के बहु आयामी प्रयोग पर कहानीकारों का ध्यान नहीं रहा है। इस ओर प्रकाश डालते हुए एक आलोचक ने लिखा है कि, "ऐतिहासिक तथा पौराणिक कहानियाँ कुछ महत्वपूर्ण प्रसंगों को लेकर लिखी गई हैं। पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं की अपेक्षा घटनाओं को प्रधानता दी गई हैं। संवाद तत्व को

---

1. बंग महिला - दुलाईवाली सरस्वती पत्रिका - पृ. 181

विशेष महत्व नहीं दिया गया। इनकी शैली अधिकतया वर्णनात्मक है।[1] सचमुच इस समय की कहानियों से गुज़रने से उपर्युक्त कथन की अर्थवत्ता से हम परिचित हो जाते हैं। उन कहानियों में पात्र से बढ़कर कथा का महत्व ज़्यादा है।

सन् 1911 ई. में 'इन्दु' नामक पत्रिका में प्रकाशित जयशंकर प्रसाद कृत 'ग्राम' कहानी नाटकीयता से युक्त संवादों से लिखी गयी एक सफल कहानी मानी जाती है। इसमें देशकाल की अभिव्यक्ति तथा कथानक के विकास संवादों के माध्यम से किया है। 'जयशंकर प्रसाद की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता' नामक चतुर्थ अध्याय में इसकी विस्तृत व्याख्या की जाएगी।

सन् 1915 ई. में 'सरस्वती' में प्रकाशित श्री. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की अमर कहानी, 'उसने कहा था' सचमुच आधुनिक ढंग की कहानियों की श्रेणी में आनेवाली रचना है। इस कहानियों की रचना को आधुनिक ढ़ंग में लिखी गयी शुरुआत मानना ज़्यादा युक्तिसंगत है। बहुत कम लिखकर अधिक ख्याति प्राप्त करनेवाले गुलेरीजी की कहानी कला का सौन्दर्य इस कहानी में स्पष्ट परिलक्षित है। "हिन्दी कहानी के उस शैशव-काल में कहानी को इतनी समुचित और कलात्मक भाषा शैली और प्रवाह देना गुलेरीजी के कहानीकार व्यक्तित्व की अपूर्व क्षमता है।"[2] संवाद-योजना के विकास की दृष्टि से प्रस्तुत कहानी प्रेमचंद पूर्व युग की अन्य कहानियों के सामने बेजोड़ ही है। इस बात की ओर प्रकाश डालते हुए हिन्दी के प्रतिष्ठित कहानीकार राजेन्द्र यादव का कहना है कि "किशोरीलाल गोस्वामी की

---

1. डॉ. शेख मुहम्मद इकबाल - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी और तेलुगु कहानी - पृ. 43
2. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास - पृ. 314

'इन्दुमती' (1901) पर 'टेम्पेस्ट' की छाप है, रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903) और एक बंग महिला की 'दुलाईवाली' (1907) अपनी मौलिकता के बावजूद कहानी होने की माँग पूरी नहीं करती। यों इन दिनों कहानियाँ तो बहुत निकली होगी, लेकिन मैं समझता हूँ कि हिन्दी की मौलिक और कलापूर्ण कहानी चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' (1915) है और उससे ही यहाँ की आधुनिक कहानी का आरंभ मानना चाहिए।"[1] इन विचारकों के मन से सहमत होकर यों कह सकते हैं कि हिन्दी कहानी-साहित्य की वास्तविक प्रगति गुलेरेजी की 'उसने कहा था' से मानना ही ज़्यादा समीचीन है।

वस्तु और शिल्प दोनों की दृष्टि से परखने पर 'उसने कहा था' कहानी प्रेमचंद युगीन कहानियों के समकक्ष आने वाली रचना है। हिन्दी कहानी साहित्य में एक यथार्थवादी एवं जनवादी चेतना का उदय इस कहानी से हुआ है। संवादों के सफल प्रयोग के कारण यह कहानी अत्यन्त रोचक तथा स्वाभाविक दीख पड़ता है। इसका समर्थन करते हुए एक लेखक ने यों कहा है कि "कथोपकथन सर्वत्र पात्र, परिस्थिति और स्थान के अनुकूल हैं। इनके संवाद सजीव, नाटकीय तथा कथावस्तु का विकास करने एवं पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उपस्थित करने में सहायक हैं।[2] गुलेरीजी ने कहानी के शिल्प भंगिमा की ओर जो सतर्कता जताई है इसका स्पष्ट उदाहरण है 'उसने कहा था' कहानी के प्रत्योक संवाद। आज भी कहानी का नाम सुनते ही उसमें प्रयुक्त संवाद जबान में आ जाते हैं।

---

1. डॉ. राजेन्द्र यादव - कहानी : स्वरूप और संवेदना - पृ. 10-11
2. डॉ. शेख मुहम्मद इकबाल - स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी और तेलुगु कहानी - पृ. 120

कहानी का आरंभ वर्णनात्मक प्रसंगों से होता है तो भी बीच-बीच में पात्रानुकूल तथा परिस्थिति के अनुकूल सजीव संवादों की सुनहरा छटा देखने को मिलता है। बालक और बालिका के शुरू के संवाद में सक्षिप्तता तथा वातावरण की स्पष्ट झलक दर्शनीय है।

"तेरे घर कहाँ है?"

"मगरे में - और तेरे।"

"माझे में, यहाँ कहाँ रहती है?"

"अतरसिंह की बैठक में, वे मेरे मामा होते हैं।"

"मैं भी मामा के यहाँ आया हूँ उनका घर गुरूबज़ार में है।"

इतने में दूकानदार निबटा और उनका सौदा देने लगा। सौदा लेकर दोनों साथ-साथ चले। कुछ दूर जाकर लड़के ने मुसकुराकर पूछा-

"तेरी कुड़माई हो गयी?" इस पर लड़की कुछ आँखें चढ़ाकर 'धत्' कहकर दौड़ गयी ओर लड़का मुँह देखता रह गया।"[1]

बालक और बालिका के बीच के उपयुक्त संवाद में वह सब है जो कहानी को पाठक के मन में प्रतिष्ठित कराने में सहायक है। 'तेरी कुड़माई हो गयी?' - यह वाक्य सचमुच बालक के आन्तरिक मन को शब्दबद्ध करने के लिए पर्याप्त है। इस कहानी में घटना और कथोपकथन द्वारा ही कहानी की

---

1. शक्तिधर गुलेरी (संपादक) - गुलेरी की अमर कहानियाँ - पृ. 62

सारी भावाभिव्यक्ति होती है। सुबेदारनी और लहनासिंह के बीच होने वाले संवाद इस बात का स्पष्ट उदाहरण है।

सुबेदारनी रोने लगी - "अब दोनों जाते हैं। मेरे भाग। तुम्हें याद है, एक दिन टाँगे वाले का घोड़ा दहीवाले की दूकान के पास बिगड़ गया था। तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाये थे। आप घोड़े की लातों में चले गये थे। और मुझे उठाकर दूकान के तख्ते पर खड़ा कर दिया था। ऐसे ही इन दोनों को बचाना। यह मेरी भिक्षा है। तुम्हारे आगे मैं आँचल पसारती हूँ।"[1]

सुबेदारनी के इन शब्दों में लहनासिंह के प्रति उसका सुदृढ़ विश्वास, आत्मीयता तथा श्रद्धा भावना भरी हुई है। साथ ही दोनों का पावन चरित्र उद्‌घाटित होता है। कहानी के शीर्षक की सफल अभिव्यक्ति भी संवादों के ज़रिये उभर आया है। पात्रों की आन्तरिक तथा बाह्य परिस्थितियों का भी परिचय प्रत्यक्ष रूप से पाठक को संवादों के ज़रिये प्राप्त हुआ है। लड़ाई के मैदान में घायल सुबेदार और बोधासिंह की रक्षा करते हुए लहनासिंह और उनके बीच का संवाद इस बात की ओर संकेत करता है।

'लहना को छोड़कर सूबेदार जाते नहीं थे। यह देख लहना ने कहा - "तुम्हें बोधा की कसम है और सुबेदारनी की सौगन्द है जो इस गाड़ी में न चले जाओ।"

"और तुम?"

---

1. शक्तिधर गुलेरी (संपादक) - गुलेरी की अमर कहानियाँ - पृ. 76

मेरे लिए वहाँ पहूँचकर गाड़ी भेज देना और जर्मन मुरदों के लिए भी तो गाड़ियाँ आती होंगी। मेरा हाल बुरा नहीं। देखते नहीं, मैं खड़ा हूँ? वजीरासिंह मेरे पास है ही"

"अच्छा पर....."

"बोधा गाड़ी पर लेट गया? भला। आप भी चढ़ जाओ। सुनिए तो, सुबेदारनी होराँ को चिट्ठी लिखो तो मेरा मल्या टेकना लिख देना। और जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उन्होंने कहा था, वह मैंने कर दिया।"

गाड़ियाँ चल पड़ी थी। सूबेदार ने चढ़ते-चढ़ते लहना का हाथ पकड़कर कहा-

"तूने मेरे और बोधा के प्राण बचाये हैं। लिखना कैसा? साथ ही घर चलेंगे। अपनी सूबेदारनी से तू ही कह देना। उसने क्या कहा था?"

"अब आप गाड़ी पर चढ़ जाओ। मैंने जो कहा वह लिख देना और कह भी देना।"[1]

अपने आगे पति और पुत्र की रक्षा के लिए हाथ फैलाकर रोनेवाली बचपन की प्रेमिका को दिये गये वादे को निभाने के लिए प्राणों तक उत्सर्ग कर देने वाले लहनासिंह के प्रस्तुत संवाद में उसके उज्ज्वल चरित्र, कर्तव्य परायणता और निस्वार्थ प्रेम को वाणी मिली है। देशकाल तथा परिस्थितियों को प्रतिबिंबित करनेवाले इस संवाद को और उद्दीप्त करने के लिए कहानीकार ने अवसरानुकूल भाषा का

---

1. शक्तिधर शर्मा गुलेरी (संपादक) - गुलेरीजी की अमर कहानियाँ - पृ. 73-74

प्रयोग किया है। स्वाभाविकता और सहजता इसके संवादों का प्राण है। इस युग की पहले की कहानियों की अपेक्षा शिल्प पक्ष में नवीनता तथा पात्रानुकूल संवाद इस कहानी की खास विशेषताएँ हैं। इसके अधिकांश संवाद कथानक विकास तथा चरित्र चित्रण के लिए सहायक ही है।

प्रेमचंद-पूर्व युग की हिन्दी कहानियों का विश्लेषण करने पर पता चलते हैं कि वस्तु और शिल्प की दृष्टि से उस समय लिखी गयी अधिकांश कहानियाँ उतनी विकसित नहीं है। इसलिए संवाद तत्व के बहुआयामी प्रभाव की ओर कहानीकारों का ध्यान नहीं आया। कुछ कहानियों में चारित्रिक विशेषताओं की ओर कहानीकारों का ध्यान आया तो भी संवाद योजना की दृष्टि से सफल नहीं निकला है। कहीं कहीं संवादों का प्रयोग दिखाई देता है, मगर वहाँ वर्णनों की प्रधानता होने के कारण या तो कथा प्रवाह में धुल-मिल हो जाने के कारण उसकी व्यक्तिगत सत्ता नष्ट हो गई है। संवाद अधिक निखर नहीं पाए। कुछ कहानियों के संवाद तो नीरस, असंबद्ध या लम्बे हो गए हैं। जिन कहानियों में चरित्र चित्रण को स्थान दिया गया है, उनमें संवाद-योजना में भी प्रगति दिखाई देती है। पूर्व-प्रेमचंद युगीन कहानी साहित्य में व्यक्ति और समाज का चित्रण बहुत कम हुआ है। वहाँ केवल घटनाओं का महत्व था। वास्तविक जीवन जगत से कहानी- साहित्य काफी हद तक अलग रहा। इसलिए इस युग की अधिकतर कहानियाँ घटनाप्रधान और कल्पना प्रधान मात्र रह गयी हैं। कहानी-कला के तत्वों का पूर्ण निर्वाह इन कहानियों में पायी नहीं जाती है।

इस युग की पहले की कहानियों की अपेक्षा बाद की कहानियों में संवाद-योजना की दृष्टि से काफी प्रगति दिखाई देती है। युग के अंतिम चरण में आते-आते कहानियाँ का कलेवर छोटा होने लगा और वर्णनात्मक प्रसंगों के बीच कहानी को जीवन्त बनाने वाली सफल संवादों का प्रयोग होने लगा। प्रसाद कृत 'ग्राम' तथा गुलेरी कृत 'उसने कहा था' इस दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण कृतियाँ है। अतः हम कह सकते हैं कि जिस प्रकार कहानी साहित्य आगे बढ़ी उसी प्रकार संवाद योजना में भी क्रमिक विकास साफ नज़र आता है।

2.2 प्रेमचंद युगीन प्रतिनिधि हिन्दी कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास

हिन्दी कहानियों में रचना प्रक्रिया संबंधी एक सुदृढ़ चेतना का विकास सन् 1916 ई. में प्रेमचंद के हिन्दी कहानी जगत में पदार्पण के साथ ही हुआ है। इसलिए सन् 1916 ई. से सन् 1936 ई. तक की समय परिधि हम 'प्रेमचंद युग' नाम से पुकारते हैं। प्रेमचंद के उदय से हिन्दी कहानी, कल्पना-प्रधान जगत से हटकर यथार्थ बोध की ओर अग्रसर होती दिखाई देती है।[1] प्रेमचंद पूर्व युगीन कहानी का रस चमत्कारयुक्त उक्तियों में था तो प्रेमचंद युगीन कहानियों का रस उसमें प्रयुक्त बहु आयामी शिल्प वैविध्य के प्रभाव पर निर्भर है।

प्राचीन हिन्दी कहानी में जिन प्रवृत्तियों का विकास हुआ है, उनका परिष्कृत तथा परिमार्जित रूप सामने आने के साथ प्रेमचंद युग में कुछ नवीन प्रवृत्तियों का भी आविर्भाव हुआ है। इसके परिणामस्वरूप कहानी साहित्य, आम आदमी के

---

1. कुमारी नूरजहाँ - कहानीकार जैनेन्द्र - पृ. 16

यथार्थ जीवन तथा समाज के अधिक निकट आया है। इस युग की कहानियों का मुख्य लक्ष्य स्वस्थ मनोरंजन और यथार्थ जीवन बोध की सफल अभिव्यक्ति था।[1] इसी कारण युगीन यथार्थ की सफल अभिव्यक्ति पूरी तन्मयता के साथ इन कहानियों में चित्रित हुआ है। शुद्ध इतिवृत्तात्मकता के स्थान पर शिल्पगत प्रौढ़ता ने कहानी का रूप बदल लिया है। स्वयं प्रेमचंद की कहानियाँ इस बात का उत्तम उदाहरण है। प्रेमचंद युग की अन्य कहानीकारों ने भी इसका अनुसरण किया और कहानी साहित्य को एक नया चेहरा प्रदान की है। प्रेमचंद-पूर्व युग में जहाँ कथानक का ही सर्वाधिक महत्व था तो आज की कहानियों में चरित्र चित्रण भावों के उतार-चढ़ाव देशकाल की अभिव्यक्ति और विचारों के विश्लेषण अथवा समस्याओं के उद्‌घाटन एवं उनके सुझाव पर अधिक ध्यान होने लगा। इन सब की सफल अभिव्यक्ति के लिए कहानीकारों ने संवादों का आश्रय लिया। क्योंकि केवल वर्णनों के ज़रिये पात्रों के चरित्र-चित्रण, भावों के उतार-चढ़ाव और विचारों के विश्लेषण संभव नहीं होते। इसलिए प्रेमचंद युगीन कहानियाँ वर्णनात्मकता से बढ़कर पात्रानुकूल प्रसंगानुकूल तथा सारगर्भित संवादों के ज़रिये अभिव्यक्त होने लगा। डॉ. गुलाबराय ने भी इस बात का समर्थन किया है। उन्होंने अपने काव्य के रूप में यों कहा है कि, "अब कहानी में केवल विवरण की अपेक्षा कथोपकथन को भी अधिक आश्रय मिलता जा रहा है।"[2] अर्थात् प्रेमचंद युग की कहानीकारों ने कहानी-साहित्य को जन-सामान्य के निकट लाने के लिए कथोपकथन का ही प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है।

---

1. विचित्र भारती - प्रतिनिधि कहानियाँ -पृ. 12
2. डॉ. गुलाबराय - काव्य के रूप - पृ. 201

इसप्रकार देखने से पता चलते हैं कि प्रेमचंद युगीन कहानियों में कथानक से लेकर उद्देश्य तक के सभी तत्वों के सफल निर्वाह के लिए संवादों का प्रयोग होने लगा। पहले से भिन्न होकर आज की कहानियाँ सोद्देश्य ही है और इस उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति के लिए भी कहानीकारों ने पात्रों के मुँह से निकलने वाले प्रभावव्यंजक संवादों का इस्तेमाल किया है। संवाद के बहुआयामी प्रयोग के कारण कहानी की रोचकता एवं आस्वाद्यता में काफी वृद्धि आयी है। कथोपकथन के क्षेत्र में आए इस नवीन विकासशीलता के कारण प्रेमचंद युग में कहानियों का आपेक्षिक महत्व भी बढ़ गया है।

प्रेमचंद पूर्व युगीन ऐतिहासिक कहानियों से सर्वथा भिन्न होकर इस युग की यथार्थवादी कहानियों का संवाद सामान्य व्यवहार की भाषा में प्रयुक्त होने के कारण कहानी की स्वाभाविकता एवं प्रेषणीयता बढ़ गयी है। इसी वजह से कहानी की आकर्षणीयता में वृद्धि आई और एक लोकप्रिय विधा के रूप में इसका चेहरा बदल गया है। इस युग की कहानियों का मुख्य लक्ष्य मानव चरित्र और उसके अन्तरंग जीवन पर प्रकाश डालना है। इसीलिए संवादों में चमत्कारिकता की अपेक्षा नाटकीयता और भावात्मकता का अंश कहीं ज्यादा है। इस प्रकार कहानी-साहित्य को आगे बढ़ानेवाले कुछ प्रतिनिधि कहानीकारों की कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास देखने की कोशिश आगे हम करेंगे।

मुंशी प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद इस युग के सर्वश्रेष्ठ कहानीकार है। इनकी कहानियों में तो संवाद-योजना का अनुठा सौंदर्य दर्शनीय है। इसका विस्तृत विश्लेषण करना ही इस शोध कार्य का प्रमुख उद्देश्य है। क्रमशः शोध प्रबन्ध के

तीसरे और चौथे अध्याय में इसकी विशद व्याख्या हम प्रस्तुत करेंगे। इन्हें छोड़कर बाकी कहानीकारों की कहानियों का विश्लेषण यहाँ दी जा रही हैं।

प्रेमचंद युगीन कहानीकारों में जयशंकर प्रसाद और प्रेमचंद के बाद सुदर्शन का नाम आता है। इन्होंने छोटी-बड़ी अनेक कहानियों का सृजन किया है जिन्हें दस संग्रहों में संकलित किया गया है। अपनी कहानियों में उन्होंने मानव जीवन से संबन्धित विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण किया है। सुदर्शन जी की अधिकांश कहानियाँ पात्र-प्रधान होने के कारण संवाद-योजना कथा-विकास का अटूट अंग बन गया है। संवाद-लिखने में इनकी गणना हिन्दी के प्रमुख कहानीकारों में की जाती है। उनकी कहानियों में सर्वत्र पात्र और परिस्थिति के अनुरूप संवादों का प्रयोग हुआ है। संपूर्ण कहानी में सजीवता और स्वाभाविकता लाने में ये संवाद सहायक सिद्ध हुए है।

उनकी 'हार की जीत' कहानी के संवाद तो सुन्दर वाक्य विन्यास से युक्त एवं चरित्र के मनोभावों के अनुरूप ही है। खड्गसिंह और बावा भारती के संवाद इस दृष्टि से उल्लेखनीय ही है।

बाबा भारती ने पूछा - "क्या हाल है?" खड्गसिंह से सिर झुकाकर उत्तर दिया-

"आप की दया से अच्छा हूँ।"

"कहो, इधर कैसे आ निकले?"

"सुलतान की चाह खींच लाई।"

"अजीब जानवर है। देखोगे, तो खुश हो जाओगे।"

"मैंने भी बड़ी तारीफ़ सुनी है।"

"उसकी चाल तुम्हारा मन मोह लेगी।"

"कहते हैं, देखने में भी बड़ा देख लेता है, उसके हृदय पर उसकी छाप लग जाती है।"

"बहुत दिनों से अभिलाषा थी, आज हाज़िर हो गयी हूँ। ज़रा दिखाइए ना। हम भी देखें। कैसी चीज़ है, जिसकी लोग इतनी तारीफ़ करते हैं।"[1]

उपर्युक्त सरल तथा स्वाभाविक संवाद से कथानक का क्रमिक विकास होने के साथ आगे की कथा की ओर पाठक का ध्यान आकर्षित हो जाते हैं। कहानीगत वातावरण का स्पष्ट एहसास भी इससे पाठक को मिलते हैं। इस कहानी में बाबा भारती के महान चरित्र को उद्‌घाटित करने के लिए भी कहानीकार ने संवादों का सफल प्रयोग किया है। खड्‌गसिंह घोड़ा लेकर जाते समय बाबा भारती के मुँह से निकले संवाद इसका स्पष्टीकरण करता है।

"बाबा भारती ने जवाब दिया - "लोगों को अगर इस घटना का पता लग गया, तो वे किसी गरीब पर विश्वास न करेंगे। दुनिया से विश्वास उठ जाएगा।"[2]

कहानी के इस अंतिम संवाद के ज़रिये कहानीकार ने अपने उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति पाठकों को दी है। खड्‌गसिंह को अपनी गलती का एहसास देकर

---

1. सुदर्शन - तीर्थयात्रा, हार की जीत - पृ. 90
2. वही - पृ. 93

नैतिक मूल्यों की स्थापना करना ही कहानीकार का उद्देश्य था। कहानी के अन्त में बाबा भारती का यह कथन इसकी ओर संकेत देता है–

"अब कोई गरीबों की सहायता से मुँह न मोडेगा। अब दुनिया दुखियों पर अविश्वास न करेगी।"[1] उपर्युक्त कथन ही वास्तव में उस कहानी की आत्मा है। पाठकों के मन में संवेदनशीलता जगाने में भी प्रस्तुत संवाद सहायक रहा है।

सुदर्शन की अन्य कहानियाँ भी इस प्रकार के संवाद योजना से भरा हुआ है। वास्तव में संवाद सौन्दर्य उनकी कहानियों का सबसे बड़ा आकर्षण तथा सफलता की कुंजी है। कुछ कहानियों में तो चरित्र चित्रण को सफल तथा प्रभावशाली बनाने के लिए भी नाटकीय संवादों का प्रयोग किया है। वातावरण की प्रस्तुतीकरण के लिए भी उपयुक्त संवादों का आश्रय उन्होंने लिया है। 'कवि की स्त्री', 'पत्थरों का सौदागर' आदि कहानियाँ इसका उदाहरण है।

प्रेमचंदयुगीन हिन्दी कहानीकारों में कौशिकजी का स्थान अग्रगण्य ही है। तत्कालीन सुधारवादी विचारधारा से प्रभावित होने के कारण उनकी कहानियों में सुधारवाद और सामाजिकता का स्वर सबसे आगे हैं। कौशिकजी की लिखी गयी कहानियाँ 'चित्रशाला' (दो भाग), कल्लोल, मणिमाला आदि संग्रहों में संकलित किया गया है। उनकी कहानियों में शैलीगत विशिष्टताएँ पायी जाती है। उनकी अधिकांश कहानियाँ घटनाप्रधान होने के कारण उनमें परिस्थितियाँ पात्रों से अधिक महत्वपूर्ण दिखाई देता है। इन कहानियों में चरित्र चित्रण के लिए उन्होंने पात्रों के

---

1. सुदर्शन - तीर्थयात्रा, हार की जीत - पृ. 90

कार्य-कलापों तथा संवादों का बखूबी प्रयोग किया है। उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद, उनकी सरल विचारधारा, गहन अनुभूति एवं स्वाभाविक चित्रण शैली का परिचायक ही है। इस की ओर इशारा करते हुए एक आलोचक कहते हैं कि "कौशिकजी के संवाद स्वाभाविक तथा नाटकीय होते हैं। वे एक साथ ही दो कार्य करते हैं - कथानक का विकास और पात्रों का चरित्र-चित्रण। कौशिक की कहानियों में आनेवाले संवाद, लेखक की बुद्धि-क्षमता, सांसारिक ज्ञान तथा निरीक्षण-शक्ति के निदर्शक है।"[1] कौशिकजी की कहानियों की सैर करने से हमें पता चलते है कि उनमें प्रयुक्त संवाद-योजना कथानक को आगे बढ़ाने के साथ साथ पात्र को भी उद्‌घाटित करते हैं।

कौशिकजी की कुछ कहानियाँ तो संवादों के साथ ही शुरू होती हैं। इन कहानियों में पात्रों के पारस्परिक संबन्धों को दिखाने के लिए भी संवादों का प्रयोग किया है। 'रक्षाबंधन' कहानी में इस प्रकार की संवाद योजना देखने को मिलता है। कहानी का आरंभ तथा अन्त दोनों संवादों के ज़रिये संपन्न हुआ है। वास्तव में कहानीकार ने प्रस्तुत कहानी को वार्तालापों के माध्यम से ही आगे बढ़ाया है। इसमें बालिका और उसकी माता के बीच होने वाले संवाद से कथानक का विकास होने के साथ कहानीगत वातावरण की स्पष्ट अभिव्यक्ति भी पाठक को मिलते हैं।

"माँ, मैं भी राखी बाधूँगी।"

उत्तर में माता ने एक ठंडी साँस भरी और कहा–

---

1. डॉ. शेख मुहम्मद इकबाल - स्वतन्त्रता पूर्व हिन्दी और तेलुगु कहानी - पृ. 134

"किसके बाँधेगी बेटी - आज तेरा भाई होता, तो.....।"

माता आगे कुछ न कह सकी। उसका गला रंध गया और नेत्र अश्रुपूर्ण हो गये।

अबोध बालिका ने अठलाकर कहा–

"तो क्या भैया के राखी बाँधी जाती है और किसी के नहीं? भइया नहीं है तो अम्मा, मैं तुम्हारे ही राखी बाँधूँगी।"[1]

इसप्रकार के प्रसंगानुकूल तथा भावानुकूल संवादों के ज़रिये ही उन्होंने पूरी कहानी में सजीवता उत्पन्न की है। समाज के अलग-अलग स्तरों की मनोवृत्ति के अनुरूप कथोपकथन प्रस्तुत करके पात्रों के चरित्रोद्घाटन करने में कौशिकजी को अपार सफलता मिली है।

इस कहानी के शीर्षक संक्षिप्त तथ्य तथा कथा भाग के साथ सामंजसपूर्ण संबन्ध रखनेवाले हैं। इसमें भी परिस्थितियों का सर्वाधिक महत्व होती हैं। कथावस्तु का विकास पात्रों के मुँह से निकलनेवाली संवादों से ही बड़ी कुशलता से कौशिकजी ने किया है। अमरनाथ ओर धनश्याम के बीच लगातार होनेवाले संवाद इस बात का स्पष्ट उदाहरण है।

अमरनाथ : "कही धनश्याम, आज अकेले कैसे बैठे हो? कामपुर से कब लौटे?

धनश्याम : "कल आया था।"

---

1. रामकृष्णदास और वाचस्पति पाठक (संपादक) इक्कीस कहानियाँ, रक्षा बंधन - पृ. 66

अमरनाथ : "उन्नाव भी अवश्य ही उतरे होंगे?"

धनश्याम : (एक ठण्डी साँस भरकर) हाँ उतरा था; परन्तु व्यर्थ। वहाँ अब मेरा क्या रखा है?

अमरनाथ : "परन्तु करो क्या। हृदय नहीं मानता है क्यों? और सच पूछो तो बात ही ऐसी है। यदि तुम्हारे स्थान पर मैं होता, तो मैं भी ऐसा ही करता।"

धनश्याम : "क्या कहूँ मित्र मैं, तो हार गया। तुम तो जानते ही हो कि मुझे लखनऊ आकर रहे एक वर्ष हो गया और जब से यहाँ आया हूँ उन्हें ढूँढ़ने में कुछ भी कसर उठा नहीं रखी; परन्तु सब व्यर्थ।"

अमरनाथ : "उन्होंने उन्नाव न जाने क्यों छोड दिया और कब छोड़ा - इसका भी कोई पता नहीं चलता।"

धनश्याम : "इसका तो पता चल गया न, कि वे लोग मेरे चले जाने के एक वर्ष पश्चात् उन्नाव से चले गये; परन्तु कहाँ गये, यह नहीं मालूम।"

अमरनाथ : "यह किससे मालूम हुआ?"

धनश्याम : "उसी मकानवाले से, जिसके मकान में हम लोग रहते थे।"[1]

उपर्युक्त चुस्त प्रसंगानुकूल संवाद से कथानक का क्रमिक विकास होने के साथ साथ आगे की कथा की ओर भी इशारा मिलते हैं। आलोचकों के अनुसार कौशिकजी का जैसा सुन्दर, सार्थक और सुखद संवाद हिन्दी के किसी दूसरे कहानीकार में पाया नहीं जाता। कौशिकजी एक सफल व्यंग्यकार एवं हास्यरस के

---

1. रामकृष्णदास और वाचस्पति पाठक (संपादक) - इक्कीस कहानियाँ - पृ. 69-70

कहानीकार होने के कारण संवादों में तीखा, मार्मिक व्यंग्य का पुट भी देखने को मिलता है। मुहावरेदार सरल एवं सरस भाषा इन संवादों को और आकर्षक बनाते हैं।

श्री. भगवती प्रसाद वाजपेयी की अधिकांश कहानियाँ प्रेमचन्दोत्तर युग में प्रकाशित हुई है। फिर भी प्रेमचंद परम्परा का अनुसरण करनेवालों उनका विशिष्ट स्थान है। इसलिए प्रेमचंद युगीन कहानीकारों में उनका नाम भी लिया जाता है। 'खाली बोतल', 'मेरे सपने', 'हिलोर', 'रात के दो बजे' आदि वाजपेयी जी के महत्वपूर्ण कहानी संग्रह है। सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति के साथ मनोविश्लेषणात्मक तत्वों का समावेश इनकी कहानियों की खास विशेषताएँ है।[1] प्रेमचंद युगीन कहानियों में आए नवीन विकासशीलता की दृष्टि से वाजपेयीजी की कहानियाँ सबसे उच्चकोटी की मानी जाती है। 'हत्यारा', 'मिठाईवाला', 'निंदिया लागी' आदि कहानियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय कृतियाँ है। उनकी कहानी कला के संबन्ध में डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल का कहना है कि "प्रेमचंद की कहानी-कला की विकास युगीन धारा में आके चलकर हिन्दी के अनेक कहानीकार आये जिनकी कहानी कला मूलतः व्यक्तिगत, सामाजिक समस्या अथवा अवस्था विशेष, घटना विशेष मानसिक प्रवृत्ति विशेष आदि इकाइयों के धरातल पर निर्मित हुई। वाजपेयी जी की कहानी-कला इस दृष्टि से इन नये कहानीकारों में से सबसे उच्चकोटी की मानी जाती हैं।"[2] वाजपेयीजी की कहानियाँ कई अर्थों में प्रेमचंद्रीय कहानी कला का अनुसरण करते दिखाई देता है। विषय तथा पात्र-दोनों अर्थों में उनकी कहानियों में नवीनता दर्शनीय है।

---

1. डॉ. राजेन्द्रकुमार - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानियों में ग्राम्य जीवन और संस्कृति - पृ. 90
2. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - हिन्दी कहानी की शिल्प विधि का विकास - पृ. 50

वाजपेयीजी ने अपनी कहानियों में चरित्र चित्रण पर विशेषकर पात्रों के मन में होनेवाले घात प्रतिधातों तथा मानसिक अन्तर्द्वन्द्वों के मनोविश्लेषणात्मक प्रस्तुतीकरण पर अधिक बल दिया गया है। इसीलिए नाटकीय संवाद-योजना का सफल प्रयोग इनकी कहानियों में पाया जाता है। इनके द्वारा प्रयुक्त संवादों में रोचकता और पात्रानुकूलता का गुण सर्वप्रथम है। इसलिए ये संवाद, चरित्रोद्घाटन में जितना सहायक है उतना कथानक विकास के लिए सहायक नहीं है। कुछ कहानियों में तो संवादों से कथा शुरू होती हैं। 'मिठाईवाला' कहानी इसी कोटि में आती है। इसमें राय विजय बहादुर के बच्चे चुन्नू और मुन्नू खिलौने के आकर बोलने लगते हैं–

"मेला घोला कैछा छुन्दल ऐ।"

मुन्नुबोला, "ओल देथो, मेला आती कैछा

छुन्दल ऐ।"

दोनों अपने हाथी-घोड़े लेकर घर-भर में उछलने लगे। इन बच्चों की माँ रोहिणी कुछ देर तक खड़े-खड़े उनका खेल निरखती रही। अन्त में दोनों बच्चों को बुलाकर उसने उनसे पूछा–

"अरे ओ चुन्नू-मुन्नू; यह खिलौने तुमने कितने में लिए हैं?"

मुन्नू बोला, "दो पैछे में खिलौने बाला दे गए ऐ।"

रोहिणी सोचने लगी - इतने सस्ते कैसे दे गया?"[1]

---

1. भगवती प्रसाद वाजपेयी - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ. 145

उपर्युक्त संवाद की सबसे बडी विशेषता है पात्रानुकूलता। बच्चों तथा बडों के द्वारा प्रयुक्त संवाद में उनकी अपनी अपनी विशेषताएँ देखी जा सकती है। इसप्रकार संक्षिप्त मर्मस्पर्शी संवाद योजना वाजपेयीजी की कहानी कला की अपनी एक विशेषता है। लेकिन दार्शनिकता की अभिव्यक्ति करते समय कभी-कभी लम्बे, नीरस और अस्वाभाविक भी बन पडे हैं। 'निंदिया लागी' कहानी में इस तरह के संवाद देखने को मिलते हैं। इसमें बेनी बाबु के कथन में दार्शनिकता का समावेश पाया जाता है। मगर चरित्र चित्रण की दृष्टि से सफल भी है।[1]

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से वाजपेयी जी की कहानियाँ अद्वितीय है। इसके लिए भी उन्होंने संवादों का सफल प्रयोग किया है। 'मिठाईवाला' कहानी में मिठाईवाले के महान चरित्र के उद्‌घाटन के लिए भी उन्होंने संवादों का सहारा किया है। रोहिणी और मिठाईवाले के बीच होने वाले संवाद इसका उत्तम उदाहरण है।

रोहिणी ने दादी से कहा, "दादी, इससे पूछो, तुम इस शहर में और भी आए थे, या पहली बार आए हो; यहाँ के निवासी तो तुम हो नहं।"

दादी ने इस कथन को दुहराने की चेष्टा ही की थी कि मिठाईवाले ने उत्तर दिया, "पहली बार नहीं, और भी कई बार आ चुका है।"

रोहिणी चिक की आड़ से बोली, पहले यही मिठाई बेचते हुए आए थे, या कोई और चीज़ लेकर?"

मिठाईवाला हर्ष, संशय और विस्मयादी भावों में डूबकर बोला, "इससे पहले मुरली लेकर आया था और उससे पहले खिलौने लेकर।"

---

1. भगवती प्रसाद वाजपेयी - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ. 47

रोहिणी का अनुमान सही निकला। तब वह उससे कुछ और बातें पूछने के लिए अस्थिर हो उठी। बोली, "इस व्यवसाय में भला तुम्हें क्या मिलता होगा?"

वह बोला - "मिलता भला क्या है! यही, खाने-भर को मिल जाता है। कभी नहीं भी मिलता है। पर हाँ, सन्तोष, धीरज और कभी आसीम सुख ज़रूर मिलता है। और मैं यही चाहता भी हूँ।"[1]

मिठाईवाले के इन शब्दों में उनके जीवन का सजीव और रोचक चित्र पाठक के सामने अनावृत हो जाते हैं। संवाद संक्षिप्त तथा मर्मस्पर्शी भी है। अन्य कहानियाँ भी संवाद-योजना की दृष्टि से बेजोड ही है। प्रेमचन्द युग में भी बाल मनोविज्ञान का प्रयोग कहानियों में हुआ है - इसका स्पष्ट उदाहरण है वाजपेयी की कहानियाँ। इस प्रकार देखने से वाजपेयी जी की कहानियाँ संवाद-योजना की दृष्टि से सफल मानी जाती हैं।

प्रेमचंद युगीन यथार्थवादी लेखकों में श्री. पाण्डेय बेचन शर्मा, 'उग्र' का नाम विशेष उल्लेखनीय है। 'उग्र' तो उनका उपनाम है। अपने नाम के अनुरूप साहित्य के क्षेत्र में भी वह सचमुच उग्र था। समाज में प्रचलित सभी प्रकार की कुरीतियों के विरुद्ध उन्होंने अपनी रचनाओं द्वारा प्रतिक्रिया व्यक्त किया है। इसलिए उनकी कहानियों का मुख्य स्वर विद्रोही था। यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपनाकर उन्होंने व्यंग्यात्मक भाषा-शैली में सामाजिक रूढ़ियों का सुन्दर चित्रण अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया। 'उसकी माँ', 'मों को चुनरी की साध', 'चौडा छूरा', 'उरूज' आदि उग्रजी की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ हैं।

---

1. भगवतीप्रसाद वाजपेयी - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ. 148

उग्रजी की कहानियों में शिल्प-संबन्धी नवीन प्रयोग देखने को मिलता है। पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को अभिव्यक्त करनेवाले तथा कथावस्तु को गतिशील बनाने वाले संवादों को उन्होंने अपनी कहानियों में आयोजित किया है। 'खुदाराम', 'मों को चूनरी की साध', 'उरूज' आदि कहानियों में संवाद योजना की सुन्दर छटा हम देख सकते हैं। 'खुदाराम' कहानी में इनामत अली तथा शर्मा जी के बीच होने वाले संवाद में उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति होने के साथ-साथ चरित्र पर भी प्रकाश मिलता है–

"कहो मियाँ इनायत अली, आज इधर कैसे?"

"आप ही की सेवा में कुछ निवेदन करने आया हूँ।"

शर्मा जी ने चश्मा उतार लिया। उसे कुरते के कोने से साफ करने के बाद पुनः नाक पर चढ़ाते-चढ़ाते बोले–

"भाई इनायत बड़ी शुद्ध हिन्दी बोल लेते हो।"

"जी हाँ", शर्मा जी मैं बहुत शुद्ध हिन्दी बोल सकता हूँ। इसका कारण यही कि मेरी नसों में बहुत शुद्ध हिन्दू रक्त बह रहा है। समाज ने जबरदस्ती मेरे पिता को मुसलमान होने के लिए विवश किया नहीं तो आज मैं भी उतना ही हिन्दु होता जितने आप या कोई भी दूसरा हिन्दुत्व का अभिमानी। खैर, मुझे आपसे कुछ कहना है....."

"कहिए क्या आशा है?"

"मैं पुनः हिन्दु होना चाहता हूँ।"[1]

---

1. पाण्डेय वेचन शर्मा - 'उग्र', कथा भारती (कहानी संग्रह) - पृ. 37

पात्रानुकूल तथा स्वाभाविक भाषा में प्रयुक्त होने के कारण उपर्युक्त संवाद ज़्यादा भावव्यंजक बन गया है। सामाजिक रूढ़ियों पर प्रहार करने के लिए व्यंग्यात्मक संवादों का सफल प्रयोग उनकी कहानियों में देखा जा सकता है। इसके लिए उन्होंने लाक्षणिक भाषा का सुन्दर प्रयोग किया है जो अन्यत्र दुर्लभ है। 'उरूज़' कहानी में पूँजीवादियों पर प्रहार करने के लिए इस तरह के संवादों का इस्तेमाल किया है।

"मैं समझा नहीं, महाराज!" पुनः चापलूसी की घीसालाल ने, "मैंने तो गुरू-मन्त्र यही माना है कि फ़ायदे में आती हुई लक्ष्मी में, फिर वह लाभ चाहे जैसे होता हो, कोई भी पाप नहीं, ज़रा भी। यही रुपए अंग्रेज़ ले जाता तो पुण्य होता और आपकी जेब में गए तो पाप हो गया।"[1]

इस संवाद में संक्षिप्तता के साथ सरल शब्दों में कहानीकार ने सामाजिक विसंगतियों पर प्रहार किया है। इस प्रकार सामाजिक यथार्थ की सफल अभिव्यक्ति के लिए उग्रजी ने संवादों का व्यंग्यात्मक प्रयोग किया है। 'मों को चुनरी की साध' इस दृष्टि से एक सशक्त कहानी है। इसमें बाल विवाह एवं वैधव्य रूढ़ि के विरुद्ध उग्रजी ने तीखी आवाज़ उठायी है जिसका प्रतिफलन संवादों में देखा जा सकता है। कहानी में तुलसा की माता का यह कथन सचमुच किसी के भी हृदय को चुभने वाले तथा उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति करने वाले होते हैं।

"माता का हृदय हाहाकार कर उठा–

---

1. पाण्डेय बेचन शर्माउग्र - पोली इमारत - पृ. 3

"मेरी बेटी चार गज़ सूत की चूनरी के लिए मरी जा रही है। समाज और रिवाज़ उसे विधवा होने के कारण वह नहीं दे सकते। आग लगे इस समाज में। वज्र पड़े ऐसे रिवाज़ पर। मैं अपनी रानी की साध पूरी करूँगी। उसे चूनरी दूँगी।"[1]

उपर्युक्त संवाद से कहानीकार ने तत्कालीन समाज में प्रचलित बेमतलब रीतिरिवाज़ों के खोखलेपन को वाणी दी है। उनकी कहानियों के पात्र संघर्षों में हिम्मत न हारने वाले तथा जीवन्त शक्ति के प्रतीक होते हैं। वर्णन कुशलता इन संवादों को ज़्यादा प्रभावशाली बना देते हैं। उग्रजी के द्वारा प्रयुक्त संवादों की सजीव एवं रोचक भाषा पाठकों का ध्यान अनायास ही खींच लेते हैं।

श्री चतुरसेन शास्त्री प्रेमचंद युगीन हिन्दी कहानीकारों की पहली पीढ़ी में आनेवाले कहानीकार है। विषय की दृष्टि से इनकी कहानियों में अनेकरूपता पायी जाती है। ऐतिहासिक राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विषयों को लेकर उन्होंने कई कहानियाँ लिखी हैं। रोचकता और कुतूहलता उनकी कहानियों की सर्वप्रथम विशेषता है। 'बाहर भीतर', 'धरती और आसमान', 'दुखवा में कासे कहूँ' आदि उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं। उनकी अधिकांश कहानियाँ घटना-प्रधान हैं। उनकी छोटी कहानियाँ कलात्मकता का परिचायक ही है तो भी शास्त्रीजी की कहानी-कला का वास्तविक पहचान ऐतिहासिक कहानियों में देखने को मिलता है। इन कहानियों में उन्होंने नाटकीय परिस्थितियों संयोगों, संक्षिप्त संवादों एवं स्वाभाविक घटनाओं का अत्यन्त प्रभावशाली अंकन किया है।

---

1. पाण्डेय बेचन शर्माउग्र - पोली इमारत - पृ. 8

शास्त्रीजी की कहानियों के पात्र स्वाभाविक विकास के साथ आगे बढ़नेवाली तथा स्वतन्त्र व्यक्तित्व अपनानेवाले हैं। उनकी चरित्र प्रधान कहानियों में चरित्र-चित्रण के लिए संवादों का अत्यन्त रोचक तथा प्रभावशाली प्रयोग हुआ है। 'खूनी' नामक कहानी में गुप्त संस्था के नायक और 'मैं' पात्र के बीच होनेवाले संवाद इस का उत्तम उदाहरण है।

नायक ने खड़े होकर वैसे ही गंभीर स्वर में कहा, "तेरहवें प्रधान की कुर्सी हम तुम्हें देते हैं।"

मैंने कहा, "तेरहवें प्रधान की हैसियत से मैं पूछता हूँ कि उसका अपराध मुझे बताया जाय।"

नायक ने नम्रतापूर्वक जवाब दिया–

"यह हमारे हत्या संबन्धी षड्यन्त्रों का विरोधी था। हमें उस पर सरकारी मुखविर होने का सन्देह था।"

मैं कुछ कहने योग्य न रहा।

नायक ने वैसे ही गंभीरता से कहा,

"नवीन प्रधान की हैसियत से तुम यथेच्छ एक पुरस्कार माँग सकते हो।"

अब मैं रो उठा। मैंने कहा,

"मुझे मेरे वचन फेर दो, मुझे मेरी प्रतिज्ञाओं से मुक्त करो, मैं उसी के समुदाय का हूँ।"[1]

---

1. आचार्य चतुरसेन शास्त्री - सिंहवाहिनी, खूनी - पृ. 24

उपर्युक्त संवाद से कथानक गतिशील होने के साथ-साथ चरित्र संबन्धी गुप्त बातों का भी अनावरण आसानी से हो जाते हैं। चरित्रों के अन्तर्द्वन्द्वों तथा मानसिक गतिविधियों का भी उद्‌घाटन कहानी में आद्यन्त कहानीकार ने इस प्रकार संवादों से व्यक्त किया है।[1] भावुक पात्रों के चित्रण में भावुकतापूर्ण संवाद योजना का सफल प्रयोग भी शास्त्रीजी की कहानियों में पायी जाती है। शास्त्रीजी के द्वारा प्रयुक्त संवादों की भाषा व्यावहारिक तथा बोलचाल के शब्दों से युक्त होने के कारण प्रायः संवाद स्वाभाविक और प्रभावपूर्ण दीख पड़ते हैं। लेकिन कुछ कहानियों में संवाद संक्षिप्त चरित्रविधायक और नाटकीय होते हुए भी लम्बे समय तक चलने के कारण पाठक को नीरसता का अनुभव होते हैं। 'रूठी रानी' जैसी कहानियाँ इस कोटि में आती हैं।

शास्त्रीजी ने कथानक को गतिशील बनाने तथा चरित्रोद्‌घाटन की दृष्टि से भी अपनी कहानियों में संवादों का प्रयोग किया है। कहीं कहीं वर्णनों से कहानी का आरंभ होते हैं तो भी बीच-बीच में संवादों के द्वारा कथानक को आगे बढ़ाने से उन्हें अवश्य सफलता मिली है। 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी' कहानी के प्रसंगानुकूल संवाद इन विशेषताओं से पूर्ण है–

साकी द्वारा बेगम का मुँह चुभने देखकर बादशाह ने कहा - "तू कौन है? और यह क्या कर रही थी?"

साकी चुप खड़ी रही। बादशाह ने कहा – "जवाब दे!"

---

1. आचार्य चतुरसेन शास्त्री - सिंहवाहिनी, खूनी - पृ. 23

साकी ने धीमे स्वर में कहा – "जहांपनाह! कनीज़ अगर कुछ जवाब न दे, तो?

बादशाह सन्नाटे में आ गए – "बांदी की इतनी हिम्मत?"

उन्होंने फिर कहा – "मेरी बात का जवाब नहीं?"

अच्छा, तुझे नंगी करके कोड़े लगाए जाएँगे!"

साकी ने अकंपित स्वर में कहा – "मैं मर्द हूँ।"[1]

यहाँ संवाद द्वारा कथानक का क्रमिक विकास होने के साथ आगामी कथा की ओर पाठक अपने आप उत्सुक हो जाते हैं। कुतूहलता उपर्युक्त संवाद की सर्वप्रथम विशेषता है। कथा-प्रवाह को रुकावट के बिना आगे बढ़ाने में भी संवाद-योजना का सफल प्रयोग शास्त्रीजी ने किया है। छोटे-छोटे तथा संक्षिप्त नाटकीय संवादों के ज़रिये 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी' कहानी में उन्होंने कथा को आगे बढ़ाया है। बादशाह और सलमा के बीच का संवाद इसी दृष्टि से महत्वपूर्ण ही है।

उन्होंने कहा – "सच कहो, इस वक्त तुम खुदा की राह पर हो, यह जवान कौन था?

सलीमा ने अचकचाकर पूछा – "कौन जवान?"

बादशाह ने गुस्से से कहा – "जिसे तुमने साकी बनाकर पास रखा था।"

---

1. आचार्य चतुरसेन शास्त्री - सिंहवाहिनी, खूनी - पृ. 23

सलीमा ने घबराकर कहा – "हौं! क्या वह मर्द है?"

बादशाह – "तो क्या तुम सचमुच यह बात नहीं जानती?"

सलीमा के मुंह से निकला - "या खुदा!"[1]

यहाँ अनजान बातों के पर्दाफास के लिए भी संवादों का इस्तेमाल कहानीकार ने किया है। इस प्रकार देखने से पता चलते हैं कि शास्त्रीजी की कहानियाँ अभूतपूर्ण भाषा प्रवाह तथा उपयुक्त संवाद-योजना से भरपूर है। उनके द्वारा प्रयुक्त संवादों में सर्वत्र रोचकता, गतिशीलता एवं कौतूहलता विद्यमान है। कथावस्तु का क्रमिक विकास, पात्रों के चरित्रोद्घाटन आदि से लेकर उद्देश्य तक की सफल अभिव्यक्ति इन संवादों के ज़रिये संपन्न हुआ है।

प्रेमचंद युगीन कहानी साहित्य के अन्तिम चरण में ऐतिहासिक कहानियाँ लिखकर हिन्दी कहानी साहित्य में अपना स्थान प्रतिष्ठित करनेवाले कहानीकार है वृन्दावनलाल वर्मा। इसके अलावा सामाजिक और राष्ट्रीय कहानियों का सृजन भी उन्होंने सफलतापूर्वक किया है। 'राखीबन्द आई', 'दबे पाँव', 'शरणागत', 'कलाकार का दण्ड' आदि उनकी चर्चित कहानियाँ हैं। उनकी अधिकांश कहानियाँ बुन्देलखण्ड वासियों के जन जीवन तथा राष्ट्रीय भावना को मुखरित करने वाली है। इसीलिए उनकी ज्यादातर कहानियाँ चरित्र-प्रधान होते हैं। नाटकीय शैली में विरचित इन कहानियों में त्याग, बलिदान, देशप्रेम आदि मानवीय भावनाओं की सफल अभिव्यक्ति देखी जा सकती है।

---

1. आचार्य चतुरसेन शास्त्री - दुखवा मैं कासे कहूं मोरी सजनी - पृ. 14

वर्माजी ने पात्रों के चरित्र चित्रण में सजीवता तथा कौतूहलता को बनाये रखने के लिए नाटकीय संवाद शैली को अपनाया है। लेकिन अन्तर्द्वन्द्वों तथा घात-प्रतिघातों के चित्रण में उन्होंने मनोवैज्ञानिक शैली का इस्तेमाल किया है। 'शरणागत' कहानी में ठाकुर और रज्जब के बीच होने वाले नाटकीय संवाद से कथानक आगे बढ़ने के साथ-साथ दोनों पात्रों का चरित्र चित्रण भी किया है।

रज्जब बोला, "मैं दूर से आ रहा हूँ। बहुत थक गया हूँ। मेरी औरत को ज़ोर से बुखार आ गया है। जाड़े में बाहर रहने से न जाने इसकी क्या हालत हो जाएगी, इसलिए रातभर के लिए कहीं दो हाथ की जगह दे दी जाय।"

ठाकुर ने प्रश्न किया, "कौन लोग हो?"

"हूँ तो कसाई"। रज्जब ने सीधा उत्तर दिया। चेहरे पर उसके बहुत गिडगिडाहट थी।

ठाकुर की बड़ी आँखों में कठोरता छा गई। बोला-

"जानता हूँ, यह किसका घर है? यहाँ तक आने की हिम्मत कैसे की तूने?"

रज्जब ने आशा-भरे स्वर में कहा, "यह राजा का घर है, इसलिये शरण में आया हूँ।"

तुरन्त ठाकुर की आँखों से कठोरता गायब हो गई। ज़रा नरम स्वर में बोला, "किसी ने तुमको बेसरा नहीं दिया?"

"नहीं महाराज।" रज्जब ने उत्तर दिया, "बहुत कोशिश की परन्तु मेरे खोटे पेशे के कारण कोई सीधा नहीं हुआ।"[1]

इस पात्रानुकूल, स्वाभाविक संवाद से कहानी की रोचकता और तन्मयता में काफी वृद्धि हुई है। कहानी के अन्तिम संवाद भी सोद्देश्य ही है। बुन्देलखण्ड निवासियों के सामाजिक वातावरण की ओर इशारा करती हुए कहानीकार ने सचमुच कमाल किया है।

दाऊजू ने कहा, "न आना मैं अकेले ही बहुत कर गुजरता हूँ। परन्तु बुन्देला शरणागत के साथ घात नहीं करता, इस बात की गाँठ बांध लेना।"[2]

वास्तव में प्रस्तुत प्रभावपूर्ण संवाद से कहानीकार उद्देश्य तथा शीर्षक की सफल अभिव्यक्ति हुई है। इसप्रकार प्रसंगानुकूल तथा मन को चुभने वाले संवादों का प्रयोग वर्माजी की कई कहानियों मे देखने को मिला है। उनके संवाद कहानी की ओर पाठकों का ध्यान खींच लाने में सर्वथा सक्षम ही है। इस प्रकार पता चलते हैं कि वर्माजी की कहानियाँ संवाद योजना की दृष्टि से भी अद्वितीय ही है।

प्रेमचन्द युगीन हिन्दी कहानी साहित्य अपनी शिल्पगत वैविध्य के कारण पूर्ववर्ती युग से सर्वथा भिन्न ही है। वस्तु एवं शिल्प की दृष्टि से इस युग की कहानियाँ यथार्थवादी धरातल पर लिखी गयी हैं। ऐतिहासिक पात्रों के स्थान पर समाज के जीवित पात्रों को कहानियों में चित्रित करने लगा। प्रेमचंद ने यथार्थ

---

1. वृन्दावनलाल वर्मा - शरणागत - पृ. 2-3
2. वही - पृ. 9

चरित्रों को स्वाभाविकता के साथ कहानियों में प्रतिष्ठित करने के लिए नये कथा-शिल्प का निर्माण किया। इसके फलस्वरूप इस युग की कहानियों में कथानक पात्र एवं चरित्र, देशकाल-वातावरण और उद्देश्य का पारस्परिक संबंध स्थापित हो गया। इस अर्थ में विचार करने पर संवादों का आनुपातिक महत्व बढ़ गया। वास्तव में प्रेमचंद युगीन कहानियों की सफलता तथा लोकप्रियता का निदान ही उसमें प्रयुक्त चरित्र विधायक एवं कहानी को गतिशील बनाने वाली संवाद-योजना ही है। दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति करते समय कहीं-कहीं ये संवाद लम्बे हो गए हैं इसलिए पाठकों को रसास्वादन करने में कठिनाई का अनुभव हुआ। फिर भी उनमें प्रेषणीयता का गुण अवश्य विद्यमान है।

संक्षेप में कहें तो संवाद योजना के प्रति कहानीकारों का ध्यान बढ़ गया। इसी कारण उस युग की कहानियों में कहानी को जीवन्त बनाने वाले प्रमुख तत्व के रूप में संवादों का बखूबी प्रयोग हुआ। संवाद-योजना के इस व्यापक प्रभाव के पीछे प्रेमचंद के सृजनधर्मी प्रतिभा का हाथ सबसे बड़ा है। सुदर्शन, भगवती प्रसाद वाजपेयी, चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा आदि कहानीकारों की कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना के बहु-आयामी प्रभाव इसका सबल प्रमाण है। हिन्दी कहानी-साहित्य की विकास-यात्रा में प्रेमचंद युग का सर्वाधिक महत्व है।

2.3 प्रेमचन्दोत्तर युगीन प्रतिनिधि कहानियों में संवाद-तत्व का क्रमिक विकास (1960 तक)

प्रेमचन्दोत्तर काल में आकर हिन्दी कहानी साहित्य आदर्शात्मकता, भावमूलकता और यथार्थता से ऊपर उठकर एक नवीन रूप धारण किया है।

तत्कालीन सामाजिक जीवन में आए परिवर्तनों तथा बदलते जीवन मूल्यों का स्पष्ट प्रभाव उस समय की कहानियों में भी प्रतिफलित होने लगा। जो भी प्राचीन हो, उसे तोड़-फोड़कर नवीनता की ओर अग्रसर होने की जो क्रान्तिकारी प्रवृत्ति जन जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में ज़ोरों से उस समय हो रही थी, उसका सीधा प्रभाव हिन्दी कहानी साहित्य में भी दिखाई दिया। "आधुनिक कहानी का उद्देश्य, कथावस्तु, रचना-तन्त्र, शैली, ढंग सभी कुछ बदल चुका है।"[1] नवीनता के प्रति इस मोह ने कहानी साहित्य को एक नया चेहरा प्रदान किया। फिर भी अपने पूर्ववर्ती युग से प्रेरणा पाकर अनेक कहानीकारों ने प्रेमचंद युगीन कहानी की प्रवृत्तियों को आगे बढ़ाया। लेकिन स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद इस स्थिति में भी बदलाव आया। परिवर्तन की इस दौड ने हिन्दी कहानी साहित्य को कई आन्दोलनों में बाँध लिया।[2] इन सब के परिणाम कहानी के वस्तु एवं शिल्प पक्ष शिथिल होने लगा। इसलिए प्रेमचन्दोत्तर काल में लिखी हुई कहानियों में कहानी कला के तत्वों का पूर्ण निर्वाह नहीं हो पाया है। उसके संबंध में 'अज्ञेय का कथा-साहित्य' में लेखक कहते हैं कि, "कथानक में अत्यन्त संक्षिप्तता एवं वास्तविकता आ गई है। इसी कारण आधुनिक हिन्दी कहानियों संभवतः कथोपकथन भी प्राचीन कहानियों में प्रयुक्त रूप की भान्ति अप्राप्य ही है।"[3]

प्रेमचन्दोत्तर काल में कथानक अति संक्षिप्त होने की वजह से प्रयुक्त संवाद-योजना में भी संक्षिप्तता आ गई है। लेकिन अन्य सभी दृष्टियों से प्रेमचंद-

---

1. शिवदान सिंह चौहान - हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष - पृ. 173
2. कुमारी नूरजहाँ - कहानीकार जैनेन्द्र - पृ. 26
3. ओम प्रभाकर - अज्ञेय का कथा साहित्य - पृ. 105

युगीन प्रवृत्तियों का विकास उसकी चरम सीमा में देखने को मिलता है। इसके अलावा कुछ नवीन प्रवृत्तियों का भी आविर्भाव हुआ। युगीन समस्याओं की सफल अभिव्यक्ति देनेवाली इस काल की कहानियों में शिल्पगत नवीन प्रयोगों के साथ मनोविज्ञान, व्यक्तिवाद, मनोविश्लेषणवाद, बौद्धिकता की अभिव्यक्ति आदि विभिन्न विचारधाराओं को भी स्थान मिला। प्रेमचंद युगीन कहानी साहित्य समाज और व्यक्ति के जीवन यथार्थ को आधार बनाकर आगे बढ़ते थे तो प्रेमचन्दोत्तर युगीन कहानी साहित्य समाज और व्यक्तित्व दोनों को प्रमुखता देकर लिखी जाती थी। इस विकास में उर्दु तथा पाश्चात्य कथा साहित्य का योगदान महत्वपूर्ण है। इन परिवर्तनों की ओर संकेत करते हुए डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल कहते हैं कि "…..सब स्रोतों और महत्तर प्रेरणाओं तथा युगीन प्रवृत्तियों एवं कहानीकार की जागरूकता का परिणाम इस काल पर श्रेष्ठ रूप में पड़ा। कहानियों की सारी परिभाषा ही बदल गयी। कहानियाँ शिल्पवर्ती होती हुई भी विषय, भाव, चरित्र-प्रतिष्ठा और व्यक्तित्व विश्लेषण आदि तत्वों में बहुत आगे और गहरे पहूँच गयीं।"[1]

प्रेमचन्दोत्तर युग में आए इन नवीन शिल्पगत मान्यताओं के कारण संवाद योजना में भी काफी परिवर्तन दृष्टिगोचर है। प्रसाद-प्रेमचंद युग से संवाद तत्व के प्रभाव एवं प्रयोग में जो विकास लक्षित हुआ है, उस का एक नवीन दिशा में इस युग में परिवर्तन होने लगा। सभी नई कहानीकार संवादों के माध्यम से कथ्य का प्रतिपादन करते हैं। लेकिन आज कथोपकथन का रूप और भाव वैसा नहीं है। इस बात का समर्थन करते हुए श्री. ओम प्रभाकर का कहना है कि, "आज की कहानी

---

1. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - कथा-भारती (कहानी संग्रह) भूमिका - पृ. 18

के कथोपकथन अतिसंक्षिप्त तथा चरित्र की मानसिक स्थिति-सापेक्ष्य होते हैं। आधुनिक हिन्दी कहानी में पाश्चात्य साहित्य के संपर्क एवं स्वयं कहानीकारों की जागृत चेतना के कारण जो मनोविज्ञान का प्रयोग हुआ है उससी उसमें विवेकीकरण की प्रवृत्ति उत्पन्न हुई है।"[1]

पहले की कहानी से भिन्न होकर इस युग की कहानियों में देशकाल और उद्देश्य उतना महत्वपूर्ण नहीं है। कहानियों में घटनाओं से ज़्यादा घटना हेतु अधिक महत्वपूर्ण होने लगा। अर्थात् कथ्य किसी विशेष मनःस्थिति, अनुभूति या एक क्षण पर आधारित होने लगा। इसी कारण व्यक्ति का महत्व ज़्यादा है। पहले की कहानियों के बड़े कथानक के स्थान पर छोटे कथानक के सहारे संक्षिप्त शब्दों में पूरी प्रभाव व्यंजना के साथ कहानी कहने लगा। कहानियों का यह छोटा आकार उसमें प्रयुक्त नवीन संवाद योजना की देन है। इस युग की कहानियों में पात्रों के चरित्र-चित्रण पर अधिक बल देने के कारण संवाद-योजना भी चरित्रोद्घाटन पर केन्द्रित है। जिस प्रकार कहानी का आकार छोटा हो गया, उसी के अनुरूप संवादों में भी नाटकीयता का समावेश होने के कारण बहुत कम शब्दों में प्रयुक्त होने लगा। लघुता, प्रवाहमयता, चुस्ती एवं व्यावहारिक भाषा प्रयोग इन संवादों की खासियत है। वास्तव में ये संवाद पात्रों के मुँह से बंध हुए आते हैं। इस प्रकार के रचना विधान के साथ प्रेमचन्दोत्तर युग में कहानी लिखने वालों में जैनेन्द्र, अज्ञेय, उपेन्द्रनाथ अश्क, भगवतीचरण वर्मा, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार आदि का नाम उल्लेखनीय है। इन कहानीकारों की प्रतिनिधि कहानियों में संवाद योजना का विकास आगे हम देखेंगे।

---

1. ओम प्रभाकर - अज्ञेय का कथा साहित्य - पृ. 105

प्रेमचन्दोत्तर काल में कहानी साहित्य को शिल्पगत वैविध्य के साथ आगे बढ़ाने में जैनेन्द्र का स्थान सर्वप्रथम ही है। जैनेन्द्र ने प्रेमचंद युगीन भावमूलक और यथार्थवादी परम्परा से हटकर अपनी कहानियों में पात्रों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और जीवन-दर्शन को प्रमुखता दी है। मानवीय भावों की सफल अभिव्यक्ति उनकी कहानी कला की महत्वपूर्ण विशेषता है। प्रेमचंद के बाद जैनेन्द्र ने घटनाओं की स्थूलता को त्यागकर पात्रों की मानसिक उलझनों को कहानी का विषय बनाया। इसकी सफल अभिव्यक्ति उन्होंने संवादों के द्वारा किया है। इस की ओर प्रकाश डालते हुए शिवदान सिंह चौहान का कहना है कि "जैनेन्द्र ने बाह्य और आन्तरिक जीवन के उभय पक्ष को पूरी मनोवैज्ञानिक सच्चाई के साथ समन्वित करने की कोशिश की है और हिन्दी कहानी को एक नई अन्तर्दृष्टि, संवेदनशीलता और दार्शनिक गहराई प्रदान की है और इस प्रकार हिन्दी कहानी का बौद्धिक स्तर ऊँचा उठाया है।"[1]

जैनेन्द्र जी की कहानियों में पात्रों की मनस्थिति तथा आन्तरिक मन की अभिव्यक्ति के लिए मनोवैज्ञानिक विश्लेषण शैली का समुचित प्रयोग देखने को मिलता है। अपनी कहानियों द्वारा जैनेन्द्र ने तत्कालीन जीवन का यथार्थ चित्रण ही नहीं, उसके दार्शनिक एवं मनोवैज्ञानिक धरातल को भी खोजने का प्रयास किया है। उनकी कहानियाँ उसका सशक्त उदाहरण है। 'फाँसी', 'वातायन', 'पाजेब', 'नीलम देश की राज कन्या' आदि इनकी प्रमुख कहानी संग्रह हैं। प्रेमचन्दोत्तर युग में विषय वस्तु और शिल्प की दृष्टि से कहानी को एक नया मोड़ देने के अर्थ में जैनेन्द्र की

---

1. शिवदान सिंह चौहान - हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष - पृ. 187

कहानियों का विशेष महत्व है। पात्रों की क्रिया-प्रतिक्रियाओं का मनोविश्लेषणात्मक चित्रण जैनेन्द्र की कहानी-कला की सर्वप्रथम आकर्षणीयता है। इसके लिए भी जैनेन्द्र ने संवादों का इस्तेमाल किया है। 'पाजेब' कहानी में बाल मनोविज्ञान की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त संवाद उसका उत्तम उदाहरण है। पाजेब नहीं चुराने पर भी बालकोचित चंचलता और भय के कारण अपराध स्वीकार करनेवाले बच्चे और इसके लिए उसे मज़बूर बनानेवाले बड़ों के बीच का संवाद देखिए–

"अच्छा तुमने कहाँ से उठायी थी"

"पड़ी मिली थी।"

"और फिर नीचे जाकर वह तुमने छुन्नु को दिखायी।"

"हाँ।"

"फिर उसी ने कहा इसे बेचेंगे।"

"हाँ।"

"कहाँ बेचने को कहा?"

"कहा, मिठाई लायेंगे।"

"नहीं पतंग लायेंगे।"

"अच्छा पतंग को कहा।"

"हाँ।"

"सो पाजेब छुन्नू के पास रह गयी?"

"हाँ।"

"तो उसी के पास होनी चाहिए न। या पतंगवाले के पास होगी। जाओ बेटा, उससे ले आओ। कहना हमारे बाबूजी तुम्हें इनाम देंगे।"[1]

पात्रों की आपसी वार्तालाप द्वारा उनकी चारित्रिक विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला गया है। इस संवाद की भाषा शैली में भी नवीन प्रयोग दिखाई देता है। सांकेतिकता का गुण इस की एक ओर खूबी है। सहज तथा संक्षिप्त होने के कारण संवाद ज़्यादा रोचक बन गया है।

मनोवैज्ञानिक तत्वों का समावेश अधिक मात्रा में होने के कारण इनकी कहानियों में वातावरण या देशकाल की अभिव्यक्ति को उतना महत्वपूर्ण स्थान नहीं दिया गया है। इसलिए उनकी कहानियों में देशकाल को प्रतिबिंबित करने वाले संवादों का प्रयोग भी बहुत कम पाया जाता है। फिर भी 'जयसंधि' नामक ऐतिहासिक कहानी में वसन्ततिलका और यशोविजय के बीच होने वाले बातचीत में वातावरण चित्रण की स्पष्ट अभिव्यक्ति पाठक को मिलते हैं।

वसन्त - "सच बताओ, क्या यह सच है कि यशस्तिलका अपने पति को युद्ध के लिए उभार रही है?"

यशोविजय - "सुनता तो हूँ, पर जासूस मन तक तो नहीं पहूँच सकते।"

वसन्त - "तब क्या बहन यही न समझेगी कि मैं तुम्हारे पक्ष में जयवीर को झुकाने आयी हूँ?"

---

1. जैनेन्द्र - जैनेन्द्र की श्रेष्ठ कहानियाँ - पृ. 451-452

यशोविजय - "मेरे पक्ष में? भविष्य के पक्ष में कहो, वसन्त, तो इसमें अन्यथा क्या है?"

वसन्त - "बहन क्या चाहती है? हम में किसी का घर बर्बाद देखना चाहती है?"

यशोविजय - (गंभीर भाव से) "हाँ, शायद अपना ही घर बर्बाद देखना चाहती है।"[1]

उपर्युक्त संवाद में कहानीगत भावी घटनाओं की संभावनाओं की ओर भी संकेत है। कथानक को गतिशील बनाने के साथ-साथ वातावरण भी स्पष्ट हो जाते हैं। कुछ कहानियों में तो परिस्थिति के अनुकूल पात्र की विस्तृत व्यंजना न करके केवल संकेतों द्वारा कथावस्तु का विकास किया गया है। उनकी विचार-प्रधान कहानियों में इस प्रकार की संवाद योजना पायी जाती है। 'मृत्यु-दंड' शीर्षक कहानी के निम्नलिखित संवाद इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।

"मुल्जिम, आप जानती हैं?"

"जानती हूँ।"

"कब से जानती हैं?"

"चार वर्ष से।"

"मुल्जिम इकबाल कहता है कि उसने आपके पति को मारा है। इस बारे में आप कुछ रोशनी डाल सकती हैं?"

"जानती हूँ, वजह मैं हूँ।"

---

1. जैनेन्द्र - जैनेन्द्र : प्रतिनिधि कहानियाँ, जयसंधि - पृ. 222

"ईर्ष्या में खून किया गया?"

"नहीं।"

"प्रेम में?"

"हाँ, एक तरह।"[1]

यहाँ पात्रों के क्रिया कलापों की ओर संवाद द्वारा संकेत किया गया है। यहाँ चरित्र चित्रण की अपेक्षा कथानक का क्रमिक विकास करना ही लेखक का उद्देश्य था। संक्षिप्तता तो जैनेन्द्र की कहानियों में प्रयुक्त संवादों की सर्वप्रथम विशेषता है। इसी कारण कहानियों का आकार ही छोटा हो गया है। 'विच्छेद' कहानी में उपाध्याय जी और सविता के बीच होने वाले वार्तालाप में संक्षिप्त शब्दों में कहानीकार ने गहन विचारधाराओं की सफल अभिव्यक्ति की है।

"केशव में कुछ दोष है?"

सविता नीचे देखती चुप ही रही, बोली नहीं।

"लज्जा न करना, बेटा! सब उपाय हो सकता है।"

सविता ने अब ऊपर देखा। स्थिर वाणी में कहा,

"आप परिवार के हितैषी हैं, पूज्य हैं पर पत्नी के धर्म में पति का विचार नहीं है, धर्म का ही विचार है। धर्म परिवार से ऊपर होता है। माफ करें, साथ रहना न होगा। ....मैं जा सकती हूँ?"[2]

---

1. जैनेन्द्र - जैनेन्द्र की कहानियाँ (पूर्वोदय प्रकाशन द्वारा) - पृ. 70
2. वही - पृ. 70

उपर्युक्त संवाद के ज़रिये जैनेन्द्रजी ने पात्रों के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व को वाणी दी है। प्रयुक्त भाषा शैली के कारण संवाद अधिक प्रभावपूर्ण बन गए हैं। इस प्रकार देखने से जैनेन्द्र की कहानियों में आयोजित संवाद योजना, कहानी की प्रभविष्णुता बढ़ाने में सर्वथा उचित ही है। कहानी के सभी तत्वों के सफल नियोजन प्रसंगानुकूल संक्षिप्त संवादों के ज़रिये संपन्न हुआ है।

प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य के प्रतिनिधि कहानीकारों में अज्ञेय सर्वाधिक उल्लेखनीय है। कहानी-जगत में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति को अपनाकर उन्होंने क्रान्तिकारी परिवर्तन को जन्म दिया। मनोवैज्ञानिक तत्वों का समावेश होने के कारण उनकी कहानियों में एक आभिजात वर्ग की बौद्धिकता पायी जाती है। कथ्यगत वैविध्य के बावजूद इन कहानियों का अनुभव संसार निजी और सीमित है। अपनी कहानियों में उन्होंने वैयक्तिक अनुभूतियों को प्रधानता दी है। इसीलिए व्यक्ति के भीतर घटित होनेवाले संघर्षों की सफल अभिव्यक्ति उनकी कहानियों में पायी जाती है। उनकी संपूर्ण कहानियों को 'छोडा हुआ रास्ता' और 'लौटती पगडण्डियाँ' नामक दो भागों में प्रकाशित किया है।

अज्ञेय की कहानियाँ शिल्प योजना की दृष्टि से भी अत्यंत सफल हैं। कहानी के शिल्प विधान में उन्होंने सांकेतिकता, प्रतीकात्मकता आदि का सार्थक प्रयोग किया है जिसका चमत्कार उनके द्वारा प्रयुक्त संवादों में देखने को मिलता है। संक्षिप्तता उनकी कहानियों के संवादों की सर्वप्रथम विशेषता है। संवाद-योजना की दृष्टि से परखने पर उनकी कहानियाँ बेजोड़ ही है। इसकी ओर संकेत करते हुए श्री. ओम प्रभाकर कहते हैं कि "अज्ञेय की कहानियों के कथोपकथन आधुनिक

कथा-साहित्य के आदर्श कथोपकथन है। एक सफल मनोविश्लेषक, उत्कृष्ट शिल्पी और श्रेष्ठ भाषालेखक होने के कारण अज्ञेय की कहानियाँ के कथोपकथन निश्चित रूप से निर्दोष ही है।"[1]

उनकी कहानियों के पात्र समाज के विभिन्न क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करनेवाले हैं। पात्रों के चरित्र चित्रण को प्रभावशाली बनाने के लिए उन्होंने वार्तालाप का सहारा लिया है। उनकी संवाद योजना में कतिपय सारी विशेषताएँ मौजूद हैं। इसका समर्थन करते हुए श्री. राजनाथ शर्मा कहते हैं कि "कथोपकथन के क्षेत्र में भी उन्हें एक सिद्धहस्त कलाकार माना जा सकता है। उनके कथोपकथन मार्मिक, गंभीर, सारगर्भित, संक्षिप्त, चरित्र के उद्‌घाटक तथा नाटकीयता की सृष्टि करने वाले होते हैं।"[2]

इस दृष्टि से देखने पर अज्ञेय की सांकेतिक शैली में विरचित 'शिक्षा' कहानी के निम्नलिखित संवाद उपर्युक्त गुणों से पूर्ण ही है।

"क्या देखा?"

"गुरुदेव, मैंने एक बड़ा सुन्दर पक्षी देखा। ऐसा अद्वितीय सुन्दर।"

"फिर?"

"मेरा मन हुआ कि किसी प्रकार उसे पकड़कर पिंजड़े में बन्द कर लूँ कि वह सर्वदा मेरे निकट रहे और मैं उसे देखा करूँ।"

---

1. ओम प्रभाकर - अज्ञेय का कथा साहित्य - पृ. 144
2. राजनाथ शर्मा - हिन्दी के प्रमुख कहानीकार - पृ. 119

"चलो, कुछ तो देखा। पहले देखने से इस देखने में सत्य तो अधिक है।"

गुरु थोड़ी देर उसी खुली किन्तु रहस्यमय दृष्टि से शिष्य को देखते रहे।

"अधिक सच्चाई है, किन्तु ज्ञान अभी नहीं है। जाओ, फिर देखो, सुनो। जितना सको आनन्द ग्रहण करो।"[1]

उपर्युक्त संवाद में सांकेतिकता के साथ-साथ दार्शनिकता, संक्षिप्तता, रहस्यात्मकता और नाटकीयता का समावेश अवश्य हुआ है। मनोवैज्ञानिक स्थितियों के उद्‌घाटन के लिए भी उन्होंने संवादों का इस्तेमाल किया है। कई कहानियों में इसका उदाहरण देखने को मिलता है। उसमें एक है 'वसंत' कहानी के स्त्री और बालक के बीच के संवाद।

स्त्री : "हूँ नियम है। पतंग नहीं उडाया करते अच्छे लड़के।"

बालक : "क्यों, माँ? मुझे तो पतंग बहुत अच्छी लगती है....."

स्त्री : "न! उड़ जानेवाली चीज़ों को प्यार नहीं करना चाहिए। छोड़कर चली जाती है तो दुःख होता है।"

बालक : "वह उड़ थोड़े ही जाएगी? मैं फिर उतार लूँगा - मेरे पास ही तो रहेगी...."

स्त्री : "मैं पतंग होती तो उड़ जाती, दूर-दूर। फिर कभी वापस न आती।"

बालक : (आहत) "हमें छोड़ जाती माँ?"[2]

---

1. अज्ञेय - ये तेरे प्रतिरूप - पृ. 107
2. अज्ञेय - जयदोल वसंत - पृ. 47-48

इस संवाद में मनोवैज्ञानिक तरीके से माँ बालक के मन से पतंग की इच्छा को दूर करना चाहती है। वास्तव में चरित्र निर्माण, चरित्र विश्लेषण और चारित्रिक मनोविश्लेषण-ये तीनों अज्ञेय की कहानी-कला की विशेषताएँ ही है। अपनी कहानियों में इसकी सफल अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने संवादों का बखूबी प्रयोग किया है।

अज्ञेय की मनोवैज्ञानिक कहानियों में नाटकीय कथोपकथनों का बड़ी सशक्तता से उपयोग किया है। 'शरणदाता' कहानी का आरंभ ही नाटकीय है। यहाँ संवाद वाचिक अभिनय होने के कारण पात्रों के व्यक्तित्व को समझने में सहायक होते हैं। रफीकुद्दीन और देविंदरलाल के संवाद इस बात का उदाहरण है।[1]

मध्यवर्गीय परिवार की एकरसता, यन्त्रवत जीवन, घुटन और अकेलापन को सशक्त रूप से अभिव्यक्त कर देनेवाली एक प्रतीकात्मक कहानी है 'रोज़' (गैंग्रीन)। इसके केन्द्रीय पात्र मालती के नीरस, एकाकी जीवन को आपसी संवादों के ज़रिये कहानीकार ने स्वाभाविक रूप से चित्रित किया है।

मैंने पूछा, "नौकर कोई नहीं है?"

"कोई ठीक मिला नहीं, शायद दो-एक दिन में हो जाये।"

"बर्तन भी तुम्हीं माँजती हो?"

"और कौन?" कहकर मालती क्षण भर आँगन में जा कर लौट आयी।

मैंने पूछा, "कहाँ गयी थीं?"

---

1. अज्ञेय - ये तेरे प्रतिरूप (शरणदाता) - पृ. 52-53

"आज पानी ही नहीं है, बर्तन कैसे माँजेंगे?"

"क्यों, पानी को क्या हुआ?"

"रोज़ ही होता है - कभी वक्त पर तो आता नहीं। आज शाम को सात बजे आयेगा, तब बर्तन माँजेंगे।"[1]

मालती के जीवन में व्याप्त अकेलापन तथा उसके प्रति विद्रोह भी इन संवादों में देखने को मिलता है। भारतीय गृहस्थी के परिवेश में टूटती जाने वाली एकरसताग्रस्त नारी की मानसिकता को भी कहानीकार ने प्रस्तुत संवाद के माध्यम से वाणी दी है। पात्रों, घटनाओं और भावों के अनुरूप संक्षिप्त शीर्षक उनकी कहानियों की एक विशेषता है। 'रोज़' कहानी में बीच-बीच में उठनेवाले छोटे-छोटे, व्यावहारिक संवाद मालती के जीवन की सफल अभिव्यक्ति देने के साथ-साथ वातावरण की ओर भी संकेत देते हैं।

मैंने उत्तर दिया, "वाह! देर से खाने पर तो और भी अच्छा लगता है - भूख बढ़ी हुई होती है। पर शायद मालती बहिन को कष्ट होगा...."

मालती टोक कर बोली, "उहूँ; मेरे लिए तो यह नयी बात नहीं है - रोज़ ही ऐसा होता है...."[2]

यहाँ संवाद से शीर्षक की भी सफल अभिव्यक्ति हुई है। मालती के आन्तरिक जीवन में रोज़ घटित होने वाले स्वभाविक क्रिया कलापों की ओर

---

1. अज्ञेय - विपथगा, गैंग्रीन - पृ. 86
2. वही - पृ. 85

कहानीकार ने संवादों के ज़रिये प्रकाश डाला है। कभी-कभी वक्ता के स्वर में विद्यमान अनुगूँज को श्रोता समझ नहीं पाता। लेकिन संवादों के द्वारा वह मुखर हो उठता है। अज्ञेय की 'बदला' कहानी के संवाद इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।[1] इसी प्रकार पात्रों की भावुकता एवं संवेदनशीलता को भी कई कहानियों में उन्होंने संवादों के माध्यम से प्रकट किया है।

इसलिए कहा जा सकता है कि अज्ञेय की कहानियाँ कथोपकथनों के बहु आयामी प्रयोग से भरपूर हैं। शिल्प के स्तर पर उनकी कहानियाँ नये मानक गढ़ती है। सब कहीं उन्होंने अर्थपूर्ण, पात्रानुकूल, स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण संवाद योजना को अपनाया है। उनकी पूर्ववर्ती कहानियों की अपेक्षा परवर्ती कहानियों में बडी सशक्तता से संवादों का प्रयोग हुआ है। इसलिए कथोपकथनों के क्षेत्र में उन्हें एक सिद्धहस्त कलाकार मानना युक्तिसंगत ही है।

प्रेमचन्दोत्तर युग के मनोवैज्ञानिक कहानीकारों में इलाचंद जोशी का भी अपना स्थान है। मनुष्य के मनोवेगों और मानसिक कार्य-व्यापारों का सूक्ष्म और मनोविश्लेषणात्मक अंकन उनकी कहानियों की परम विशेषता है। मनोवैज्ञानिक धरातल पर लिखी गई उनकी कहानियाँ शिल्प विधान की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। 'धूप रेखा', 'दीवाली और होली', 'रोमाण्टिक छाया', 'आहुति', 'खण्डहर की आत्माएँ' आदि जोशी जी के उल्लेखनीय कहानी-संग्रह हैं। अपनी कहानियों में घटनाओं को गतिशील बनाने के लिए उन्होंने संवादों का बखूबी प्रयोग किया है। उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद पात्रों का चारित्रिक विकास कराने में भी काफी सहायता

---

1. अज्ञेय - ये तेरे प्रतिरूप बदला - पृ. 84

देते हैं। 'आहुति' कहानी में श्यामनाथ और मार्था के बीच का संवाद कथानक को गतिशील बनाने के साथ-साथ पात्रों के मानसिक विश्लेषण भी प्रस्तुत करते हैं।

मार्था के पूछने पर श्यामनाथ का कथन है – "तो सुनो! मैंने आज एक आदमी की गिरह काटी है, और यह पेशा मैं बहुत दिनों से करता आया हूँ। मार्था, मुझे क्षमा करो।"

".....इतने दिनों तक मेरे मन में इसी तरह का कुछ अस्पष्ट सन्देह था, फिर भी तुम्हारी मुँह से इस तरह की बात सुनने को मैं जैसे तैयार नहीं थी। जो भी हो, तुम्हारे सच्चाई की मैं तारीफ करती हूँ, पर एक बात मुझसे छिपी नहीं है कि तुम्हारे समान शिक्षित व्यक्ति समाज में कम मिलते हैं और तुम समझदार भी काफ़ी हो। तब इस प्रकार का हीन पेशा तुमने क्यों अख्तियार किया?"

"मैं इसका भी उत्तर देता हूँ", श्यामनाथ कहने लगा। ".....पैसे वाले सेठों और बड़ी-बड़ी तनख्वाहों वाले बाबुओं की जेब काटकर मुझे एक आश्चर्यजनक सुख प्राप्त होता है मार्था। केवल उसी सुख के लिए मैं गिरहें काटता रहता हूँ, अपनी गरीबी दूर करने के उद्देश्य से नहीं....."[1]

प्रस्तुत प्रसंगानुकूल एवं मार्मिक संवाद से पात्रों के चरित्र अनावृत होने के साथ-साथ कथानक का विकास भी होते हैं। 'बदला' नामक कहानी में तो वर्णनों के साथ संवादों का भी सफल प्रयोग करके जैन भैया के चरित्र पर प्रकाश डाला गया है। कहानी में 'मैं' पात्र और जैन भैया के बीच होने वाले संवाद इसका समर्थन करते हैं।

---

1. इलाचंद्र जोशी - मेरी प्रिय कहानियाँ, आहुति - पृ. 132

"उस हरामजादी ने मेरे साथ इतना बड़ा विश्वासघात किया! पर मैंने भी वह बदला चुकाया है कि वह जिन्दगी भर याद करेगी।"

"कैसे?" मैंने कौतूहलवश पूछा।

"जो राजरोग (अर्थात् सिफिलिस) मैं लड़ाई से लाया था, उसका विष उसके शरीर में भी फैल गया है। हा.... हा.... हा....।"[1]

शीर्षक के अनुरूप जोशीजी ने यहाँ संवाद के ज़रिये उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति की है। इसप्रकार कथानक का क्रमिक विकास, पात्रों के चारित्रिक विश्लेषण और वातावरण की अभिव्यक्ति के लिए भी उन्होंने संवादों का आयोजन अपनी कहानियों में किया है। 'कापालिक' जैसी कहानियाँ इसका उदाहरण है। कथोपकथनों के द्वारा मानव-वृत्तियाँ, उलझनों एवं विभिन्न क्रियाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण उनकी कहानी कला की खास विशेषताएँ हैं।

हिन्दी के प्रगतिशील कहानीकारों में यशपाल का नाम सर्वप्रथम आता है। मुख्यरूप से वह मध्यवर्ग के कलाकार थे। उनकी अधिकांश कहानियाँ में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का प्रतिफलन देख सकते हैं। आर्थिक, नैतिक एवं धार्मिक समस्याओं को उन्होंने अपनी कहानियों में प्रमुख स्थान दिया है। इसलिए वह कला को जीवन के लिए उपयोगी माननेवाले थे। अपनी कहानियों में इन समस्याओं का यथार्थ चित्रण कर उसके समाधान के लिए उन्होंने मार्क्सवादी दृष्टिकोण को अपनाया है।

---

1. इलाचंद्र जोशी - मेरी प्रिय कहानियाँ, आहुति - पृ. 89

कहानी कला की दृष्टि से परखने पर भी उनकी कहानियाँ अद्वितीय ही है। शिल्प-विधान में मनोवैज्ञानिक कहानीकारों की भान्ति उन्होंने विभिन्न प्रयोगों पर बल दिया है। कथानक, चरित्र-चित्रण और संवाद - इन तीनों तत्वों में एक कलात्मक संतुलन उनकी कहानियों की प्रमुख विशेषता है। इसलिए कलात्मकता की दृष्टि से उनकी कहानियाँ उच्चकोटी की मानी जाती हैं।

यशपाल का पहला कहानी संग्रह, 'पिंजरे की उड़ान' सन् 1939 में प्रकाशित हुआ। जेल में लिखी गयी इस संग्रह की अधिकांश कहानियाँ उस जेल जीवन से संबन्धित हैं। 'पिंजरा' वास्तव में जेल का ही प्रतीक है। 'वो दुनिया', 'ज्ञानदान', 'अभिशप्त', 'उत्तराधिकारी', 'चित्र का शीर्षक' आदि उनकी अन्य कहानी संग्रह है। यशपाल की कहानियों में संवाद-योजना परिस्थिति के अनुकूल तथा स्वाभाविक है। कथावस्तु का क्रमिक विकास, चरित्र-चित्रण और उद्देश्य की दृष्टि से ये संवाद अत्यन्त सहायक एवं प्रभावशाली दीख पड़ते हैं। 'निर्वासिता', 'उत्तराधिकारी' आदि कहानियों में इस प्रकार के संवादों का सफल प्रयोग हुआ है। 'उत्तराधिकारी' कहानी में कुशली और गनेरसिंह के बीच होने वाले संवाद सचमुच कथा प्रवाह को आगे की ओर खींच लाने योग्य ही है।

"अगले दिन गनेरसिंह ने अधिकार के स्वर में कहा - "अब तू दानपुर की बीहड़ पहाडियों में कहाँ जाएगी? मेरे घर चल। मेरी स्त्रेणी (घरवाली) पिछले साल डेढ़ बरस का लड़का छोड़कर मर गई है। उसे भी पालना है और अपने पेट को भी! ....मेरी पच्चीस नाली ज़मीन है, भैंस है, गाय है, बैल है। तू मुझे देवता ने दी है। चलकर मेरा घर बसा। ....मैं तुझे नहीं जाने दूँगा!"

कुशली रो पडी। परन्तु इस रोने में अभिमान और सुख था। फिर उदास होकर बोली –

"नहीं, मैं तो जाऊँगी। वो भला आदमी है। .....गम करेगा। उसने मेरी ढांटी के तीन सौ दिए हैं।"

गनेरसिंह नहीं माना - "वो क्या तेरा आदमी है? तेरा आदमी तो मैं हूँ। मुझे गम नहीं लगेगा? मैं तेरी ढांटी का हर्जाना भर दूँगा, चाहे जितनी ज़मीन बेच दूँ।" उसने कुशली को बाँहों में कस लिया और बोला– "बोल, मेरा घर उजाड़ेगी? ....मेरी नहीं है तू?"[1] यहाँ स्त्री परिस्थिति के वश में न पड़कर अपनी सहज कर्तव्यबोध पर स्थिर रहती है। स्त्री मन की दृढचित्तता की ओर भी संवाद संकेत करता है यहाँ संवाद घटनाक्रम को विकास देने के साथ पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला है।

मनोवैज्ञानिक कहानीकार होते हुए भी यशपाल ने अपनी कहानियों में चरित्र चित्रण की विभिन्न शैलियों का प्रयोग किया है। 'ज्ञानदान' 'अभिशप्त', 'जादू के चावल' आदि कहानियाँ इसके उदाहरण है। इन शैलियों के अनुरूप संवाद-योजना पर भी उन्होंने बल दिया है। डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल के मतानुसार "कहानियों की रचना-शैली में कथा वर्णन, कथोपकथन और चरित्र चित्रण मुखतः यही तीन तत्व है, लेकिन इन तीनों तत्वों के कलात्मक तादात्म्य में यशपाल अपूर्व हैं।"[2] इनकी कहानियों के विश्लेषण करने से पता चलते हैं कि इन तीनों तत्वों के कलात्मक संयोजन उनकी कहानियों को वास्तव में एक उर्वर दर्जा प्रदान करती है।

---

1. यशपाल - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ. 83
2. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास - पृ. 262

कहानीगत मूल समस्या, मानसिक अन्तर्द्वन्द्व आदि की सफल अभिव्यक्ति के लिए भी यशपाल ने प्रसंगानुकूल संवादों का आश्रय लिया है। व्यावहारिक तथा प्रवाहमयी भाषा के ज़रिये उन्होंने संवादों को और अधिक प्रभावपूर्ण बनाया है। इसलिए निस्संदेह कहा जा सकता है कि यशपाल की कहानियाँ संवाद-योजना की दृष्टि से भी सफल है।

हिन्दी साहित्य जगत में भगवतीचरण वर्मा का स्थान कवि, नाटककार, एकांकीकार, कहानीकार, संपादक आदि कई रूपों में प्रकट हुई तो भी, उनका कहानीकार व्यक्तित्व ही सर्वश्रेष्ठ है। प्रेमचन्दोत्तर युगीन कहानीकारों में उनका अपना एक विशिष्ट स्थान है। कहानी के क्षेत्र में दूसरों से भिन्न होकर उन्होंने व्यंग्य मिश्रित रोचक शैली को अपनाया है। इसीलिए उनकी कहानियाँ अधिक आकर्षक और मनोरंजक होती है। 'उत्तरदायित्व', 'प्रायश्चित', 'दो बाँके', 'पराजय अथवा मृत्यु' आदि उनकी महत्वपूर्ण कहानियाँ है। व्यापक शिल्प विधान के साथ लिखी गई वर्माजी की कहानियाँ चरित्र प्रधान और बौद्धिक विचारों और समस्याओं को लेकर बुनी गयी हैं वास्तव में उनकी कहानियों में वस्तु तथा उद्देश्य से भी अधिक महत्व शैली को दिया है। अधिकतर कहानियों में वर्णनात्मक शैली को अपनाया है।

वर्माजी की चरित्र-प्रधान कहानियों में पात्र विशिष्ट व्यक्तित्व तथा वर्ग के प्रतिनिधित्व करनेवाले हैं। पात्रों की चरित्रगत विशेषताओं को उद्‌घाटित करने के लिए उन्होंने घटनाओं के साथ संवादों का भी आश्रय लिया है। जिस तरह उनकी कहानियों के पात्र यथार्थ, सजीव और स्वाभाविक है, उसी तरह कहानी में प्रयुक्त संवाद भी सजीव, स्वाभाविक और सारगर्भित होते हैं। वर्माजी के संवादों की भाषा

हमेशा विषयवस्तु और पात्रों के चरित्र के अनुकूल होते हैं। वास्तव में यही उनके संवादों की सफलता का निदान है। मनोविज्ञान पर अधिक बल देने के कारण वातावरण तथा देशकाल के चित्रण को उनकी कहानियों में उतना स्थान नहीं दिया गया है। उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद सरल, अवसरानुकूल तथा सारगर्भित होते हैं। कथावस्तु को आगे बढ़ाने वाले या चारित्रिक विशेषताओं की अभिव्यक्ति देने वाले संवादों को ही उन्होंने अपनी कहानियों में प्रयुक्त किया है। अनावश्यक एवं नीरस संवादों से वे सर्वथा अपनी कहानियों को अलग रखा है। 'प्रायश्चित' नामक कहानी में पण्डित परमसुख के चरित्र चित्रण के लिए उन्होंने संवादों का सफल प्रयोग किया है-

किसनू की माँ ने कहा, "पण्ड़ितजी, बिल्ली की हत्या करने से कौन नरक मिलता है?"

पण्डित परमसुख ने पत्रा देखते हुए कहा,

"बिल्ली की हत्या अकेले से तो नरक का नाम नहीं बतलाया जा सकता, वह महूरत भी मालूम हो, जब बिल्ली की हत्या हुई, तब नरक का पता लग सकता है।"

"यही कोई सात बजे सुबह" मिसरानी ने कहा।

पण्डित परमसुख ने पत्र के पन्ने उल्टे, अक्षरों पर उंगलियाँ चलाई, मत्थे पर हाथ लगाया और कुछ सोचा। चेहरे पर घुंघलापन आया माथे पर बल पड़े, नाक कुछ सिकुड़ी और स्वर गंभीर हो गया,

"हरे कृष्ण! हरे कृष्ण! बड़ा बुरा हुआ, प्रातः काल ब्रह्म मुहूर्त में बिल्ली की हत्या! घोर कुम्भीपाक नरक का विधान है। रामू की माँ, यह तो बड़ा बुरा हुआ!"

रामू की माँ की आँखों में आँसू आ गए,

"तो फिर पण्डितजी, अब क्या होगा, आप ही बतलाएँ।"

पण्डित परमसुख मुस्कराए, "रामू की माँ, चिन्ता की कौन-सी बात है, हम पुरोहित फिर कौन दिन के लिए है? शास्त्रों में प्रायश्चित का विधान है, सो प्रायश्चित से सब कुछ ठीक हो जाएगा।"[1]

उपर्युक्त संवाद से चारित्रिक विशेषताएँ स्पष्ट होने के साथ कथा भी स्वाभाविक रूप से आगे बढ़ती है। दूसरी बात यह है कि शीर्षक की ओर भी संकेत मिलता है। तत्कालीन समाज में प्रचलित रूढ़िवादिता पर प्रस्तुत संवाद के माध्यम से वर्माजी ने खिल्ली उड़ाई है। उनके द्वारा प्रयुक्त व्यंग्य सब कहीं सोद्देश्य ही है।

कहानी-कला की कसौटी पर परखने पर उनकी सभी कहानियाँ स्तरीय ही हैं। उनकी कुछ कहानियों में सुदृढ़ कथानक पाया जाता है। उनमें संवादों के माध्यम से किस्सा कहने की पद्धति को अपनायी है। दो पात्रों के बीच होने वाले संवाद से ही कथा आगे बढायी गयी है। 'दो बाँके' कहानी में 'मैं' पात्र और इक्केवाले के बीच होनेवाले संवादों से ही पूरी कथा कही गयी है। निम्नलिखित संवाद इसका उत्तम उदाहरण है।

---

1. भगवतीचरण वर्मा - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ. 25-26

"मैं ने इक्केवाले से पूछा,

"क्यों म्यां, क्या मामला है?"

म्यां इक्केवाले ने एक तमाशाई से पूछकर बतलाया,

"हज़ूर आज दो बाँकों में लड़ाई होने वाली है, उसी लड़ाई को देखने के लिए यह भीड़ इकट्ठी है।"

मैं ने फिर पूछा, "वह क्यों?"

म्यां इक्केवाले ने जवाब दिया, - "हुज़ूर, पुल के इस पार के शोहदों का सरगना एक बाँका है और उस पार के शोहदों का सरगना दूसरा बाँका। कल पुल के इस पार के एक शोहदे से पुल के उस पार के दूसरे शोहदे का कुछ झगडा हो गया, और उस झगडे में कुछ मार-पीट हो गई। इस फिसाद पर दोनों बाँकों में कुछ कहा-सुनी हुई ओर उस कहा-सुनी में ही मैदान बद दिया गया।"

चुप होकर मैं उधर देखने लगा। एका एक मैंने पूछा,

"लेकिन ये चारपाइयों क्यों आयी हैं?"

"अरे हुज़ूर! इन बाँकों की लड़ाई कोई ऐसी-वैसी थोड़ी ही होगी; इसमें खून बहेगा, और लड़ाई तब तक खत्म न होगी, जब तक एक बाँका खत्म न हो जाए। आज तो एक - आध लाश गिरेगी। ये चारपाइयाँ उन बाँकों की लाशें उठाने के लिए आई हैं। दोनों बाँके अपनी बीवी-बच्चों से रुखसत लेकर और कर्बला के लिए तैयार होकर आए हैं।"[1]

---

1. भगवतीचरण वर्मा - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ. 31-32

यहाँ कथानक के प्रसार के लिए जिन संवादों का प्रयोग किया है, उसमें प्रवाहमयता के साथ यथार्थता का अच्छा चमत्कार दिखाई देता है। लखनऊ के बाँकों की झूठी शान पर कसकर व्यंग्य करना ही वास्तव में कहानीकार का उद्देश्य है। संवादों की भाषा-शैली भी बडी सधा हुआ और आकर्षक दीख पड़ता है। इसी वजह से कहानी के समग्र प्रभाव को पाठक पर डालने में संवाद सहायक बन गए हैं। अर्थात प्रेषणीयता का गुण इनके संवादों का प्राण है।

इस प्रकार देखने से हम कह सकते हैं कि वर्माजी की कहानियों में संवाद-योजना का सफल प्रयोग हुआ है। सामाजिक व्यंग्य की अभिव्यक्ति में तो उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद ज़्यादा प्रभावोद्पादक ही है। उनके संवाद सब कहीं शीर्षक और परिस्थिति के अनुकूल प्रयुक्त हुआ है। उनकी कहानियों में संवाद के विकास मनोवैज्ञानिक तत्वों के आधार पर होता है। इसलिए वातावरण चित्रण में ये संवाद अधिक सहायक नहीं है। लेकिन कथावस्तु को गतिशील बनाने तथा चरित्रोद्घाटन के लिए सर्वथा उपयुक्त ही है।

प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य में प्रेमचंद की यथार्थवादी परम्परा को सफलता से आगे बढ़ानेवाले एक प्रगतिशील कहानीकार है उपेन्द्रनाथ अश्क। प्रेमचंद के समान अश्कजी भी पहले उर्दु में लिखते थे। उसके बाद ही हिन्दी में आए थे। उनकी कहानियाँ प्रेमचंद की विकास कालीन कहानी कला से बहुत कुछ प्रभावित थे। शिल्प-विधान में भी अश्कजी विशुद्ध यथार्थवादी परम्परा का अनुसरण किया। वास्तव में अश्कजी की ख्याति एक नाटककार और उपन्यासकार के रूप में अधिक हुई है। लेकिन उनका कहानीकार व्यक्तित्व भी कम निराला नहीं है।

अश्कजी की कहानियों में व्यक्ति और समाज दोनों का चित्रण मिलते हैं तो भी व्यक्ति की किसी विशेष मनःस्थिति को ही उन्होंने कहानियों का मूल प्रेरणा स्रोत माना है। 'दो धारा', 'बैंगन का पौधा', 'पलंग', 'जुदाई की शाम का गीत' आदि उनकी कहानियों का संग्रह है। इनकी अधिकांश कहानियाँ विचार-प्रधान है। उन्होंने अपनी कहानियों की मूल संवेदना के स्वाभाविक विकास के अनुरूप कथानक का निर्माण किया है। इसलिए उनकी कहानियाँ पूर्ण परिष्कृत तथा स्पष्ट दीख पड़ते हैं। उनके पात्र साधारण मानवीय एवं स्वाभाविक है। उन्होंने चरित्र-चित्रण के लिए पात्रोचित, नाटकीय संवादों का सहारा लिया है। इसका समर्थन करते हुए एक लेखक कहते हैं कि, "अश्कजी के संवाद संक्षिप्त, प्रभावशाली एवं पात्रोचित होते हैं। संवादों के द्वारा कथानक का विकास कराने के साथ-साथ वे पात्रों के चरित्र का विकास भी कराते हैं।"[1] अश्कजी की संवाद योजना कई अर्थों में प्रेमचंद युगीन कहानियों के नज़दीक ठहरते हैं। संवादों का अवसरोचित एवं पात्रोचित प्रयोग से उनकी कहानियाँ प्रेषणीय बन गया है।

एक सफल नाटककार होने के कारण उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद में नाटकीयता के साथ संक्षिप्तता भी विद्यमान है। इसके कारण संवाद अधिक प्रभावोत्पादक बन गया है। उनकी कई कहानियों में इस प्रकार के संवाद देखने को मिलता है। 'चित्रकार की मौत' कहानी में इसका सफल आयोजन हुआ है।

'मैंने पूछा, "ये सब तुम्हारी कला का चमत्कार है राधा?"

---

1. डॉ. शेख मुहम्मद इकबाल - स्वतन्त्रता पूर्व हिन्दी और तेलुगु कहानी - पृ. 294

"सुनती तो हूँ।"

"अभी किस चीज़ में यों निमग्न थीं?"

"चित्र में।"

"मुझे दिखाओ।"

"प्रदर्शनी में देखना।"

"कौन-सी प्रदर्शनी?"

"विश्वविद्यालय की।"

"तो यूँ कहो, इस बार यूनिवर्सिटी की नुमायश में प्रथम रहने के इरादे हैं।"

"ऐसा भाग्य कहाँ?"

"मैं शर्त लगाता हूँ, तुम सर्वप्रथम रहोगी, तुमसे कोई न जीत सकेगा।"

"और लालचन्द?"

"उसकी तुम्हारे सामने क्या हस्ती है।"

"नहीं; – लालचन्द हुआ, तो उससे बाजी ले जाना टेढ़ी खीर है।"

"वह भाग ले भी सकेगा?"

"क्यों? उसके मार्ग में कौन सी बाधा है?"

"उसने व्यवसाय जो आरंभ कर दिया है।"[1]

---

1. उपेन्द्रनाथ अश्क - जुदाई की शाम का गीत - पृ. 163-164

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये कहानीकार ने कथानक को भी आगे बढाया, साथ ही साथ आगामी घटनाओं की ओर भी संकेत दिया है। राधा और जगत के चरित्र पर प्रकाश डालने के साथ तीसरे पात्र की ओर भी संवाद द्वारा इशारा किया है। यहाँ बाह्य रूप से संवाद कथानक से संबन्ध रखता है। तो भी इसका आन्तरिक संबन्ध पात्र विशेष से होता है।

संपूर्ण कहानी में कुतूहलता उत्पन्न करके कहानी की आकर्षणीयता बढ़ाना भी कथोपकथनों का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है। अश्कजी ने अपनी कहानियों में कुतूहलता की वृद्धि के लिए भी संवादों का सफल प्रयोग किया है। 'चैन का अभिलाषी' कहानी के निम्नलिखित संवाद इस का उत्तम उदाहरण है।

"'नींद नहीं आती' राजा ने आँखें मलते हुए कहा। परिचारिकाएँ तेजी से पंखे हिलाने लगी।

"क्या समय होगा?"

"तीन पहर रात बीत चुकी है, महाराज।"

"गर्मी बहुत है।"

"हाँ, महाराज।"

"पंखे बन्द कर दो।"

"आग बरस रही है महाराज।"

---

1. भगवतीचरण वर्मा - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ. 25-26

"कोई बात नहीं।"

"यही अशान्ति का मूल है?" उसने बड़बड़ाते हुए कहा,

"मेरे राज्य में विपन्नता न रहेगी, उसका नाश होगा।"

"जाओ मंत्री से कहो कल दरबार का प्रबन्ध करें।"

"जो आज्ञा महाराज।"[1]

यहाँ राजा के आन्तरिक द्वन्द्व तथा तनाव की स्थिति को संवादों के ज़रिये कहानीकार ने खोलकर दिखाया है। कुतूहलता तथा आकर्षणीयता से युक्त इस छोटे, रोचक संवाद मनोवैज्ञानिकता से पूर्ण ही है। कहानी के आद्यान्त इस प्रकार की संवाद योजना का कमाल देखने को मिलता है। कहानी में सजीव वातावरण की अर्थपूर्ण चित्र उपस्थित करने के लिए भी उन्होंने संवादों का आश्रय लिया है। 'डाची' कहानी में इसका उदाहरण हम देख सकते हैं।[2]

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि एक नाटककार होने के कारण अश्कजी की कहानियों में संवाद-योजना का सफल निर्वाह हुआ है। नाट्य साधना के कारण ये संवाद नाटकीय रोचकता से पूर्ण तथा स्वाभाविकता एवं सजीवता से युक्त है। कथावस्तु का विकास करना, पात्रों का चरित्र प्रस्तुत करना और कहानी को कुतूहलता के साथ गतिमय रूप में आगे बढ़ाना - ये तीनों कार्यों के सफल निर्वाह के लिए उन्होंने संवादों का सहारा लिया है। इसीलिए उनकी अधिकांश कहानियाँ सरल, सुबोध एवं सर्वग्राह्य है।

---

1. उपेन्द्रनाथ अश्क - काले साहब - पृ. 141
2. उपेन्द्रनाथ अश्क - अश्क की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ - पृ. 10

हिन्दी के एक सफल प्रभाववादी लेखक के रूप में श्री. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार का स्थान अद्वितीय है। सन् 1928 में विशाल भारत में उनकी पहली कहानी प्रकाशित हुई थी। विषय की अनेकरूपता उनकी कहानियों की एक विशेषता है। चन्द्रगुप्तजी जिस तरह एक सफल कहानी लेखक है, उसी तरह एक कहानी समालोचक है। पात्रों के चरित्र का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, समर्थ भाव-व्यंजना और सुगठित कहानी-विधान आदि चन्द्रगुप्तजी की कहानियों की खास विशेषताएँ हैं। उनकी कहानियों में व्यक्ति और समाज के जीवन संबन्धी अनेक समस्याएँ और परिस्थितियों का यथार्थवादी चित्रण मिलता है। इसलिए उनके अधिकांश पात्र व्यक्तिवादी होते हैं। पात्रों के परिचय देने में उन्होंने वर्णनों एवं घटनाओं के साथ संवादों का भी प्रयोग किया है। 'डाकू', 'क ख ग', 'तांगेवाला', 'चौबीस घंटे', 'हूक' आदि इनकी प्रसिद्ध कहानियाँ है। उन्होंने कहानी कला के चमत्कार या प्रदर्शन के लिए नहीं, बल्कि जीवन के लिए कहानियाँ लिखी गई है।

शिल्प योजना की दृष्टि से चन्द्रगुप्तजी की कहानियाँ अत्यन्त सफल मानी जाती है। चारित्रिक विशेषताओं को व्यक्त करने के लिए और कथानक विकास के लिए भी उन्होंने संवादों का प्रयोग किया है। अधिकांश संवाद नुकीले और संक्षिप्त होने के कारण भावाभिव्यक्ति में सफल निकला है। व्यावहारिक तथा मुहावरेदार भाषा प्रयोग के कारण प्रेषणीयता में वृद्धि हुई है। 'मचाकोस का शिकारी' कहानी में न्यायाधीश और वीरसिंह के बीच होनेवाले संवाद संक्षिप्त तथा कथा विकास को गति प्रदान करने योग्य है।

"अदालत ने आश्चर्य से पूछा, "अच्छा, तो तुमने इसे मारा क्यों?"

वीरसिंह ने कहा, "यदि मुझमें कुछ अधिक सामर्थ्य होती, तो मैं इसे और भी अधिक पीटता, इसने मेरे 'अजय' की टांग तोड़ डाली है।"

"अजय कौन है?"

"रजनी का बच्चा।"

"रजनी कौन है?"

"मेरी हिरणी।"[1]

उपर्युक्त संवाद से वीरसिंह के स्वभाव का पता चलता है। 'शराबी' कहानी में संवादों से ही कथा शुरू होती है। बनवारी और शराबी के बीच होनेवाले संवादों से ही चारित्रिक विशेषताओं का पर्दाफाश होते हैं। लेकिन कहीं-कहीं संवाद लम्बे हो गये हैं।

"मेरा नाम है बिहारी। मेरी उम्र इस समय 28 बरस की है। आज से सिर्फ तीन-चार बरस पहले मैं भी तुम्हारी ही तरह से खुदा और ईमान पर भरोसा रखने वाला था। उन दिनों मैं अहमदाबाद की एक बड़ी मिल में छः आना दैनिक लेकर काम किया करता था। मैं बचपन से अनाथ था। फिर भी किस्मत के ज़ोर से मेरा ब्याह हो ही गया। एक छोटी-सी फूँस की झोंपड़ी में मैं अपनी पत्नी और बच्चों के साथ रहता था।"[2]

---

1. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार - वापसी, मचाकोस का शिकारी - पृ. 112
2. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार - वापसी, शराबी - पृ. 162

शराबी के जीवन से संबन्धित सारी बातों को कहानीकार ने पात्र के ही मुँह से सीधे कह डाला है। कथावस्तु से संबन्धित एक ब्रहत घटना को कहानीकार ने संवाद के ज़रिये कम शब्दों में अभिव्यक्त किया है। इस प्रकार 'दुर्भाग्य' कहानी में यूथिका के माँ-बाप के बीच होनेवाले संक्षिप्त संवादों से कथानक का पर्दा हटने के साथ-साथ पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं की ओर भी स्पष्ट संकेत मिलता है।

"सुनो, एक भेद की बात मैं आज तुम्हें बताता हूँ। आज वह कहने का समय आ गया है।"

"वह क्या?"

"विनय को तुम जानती ही हो"

"कौन-सा विनय?"

"वही - शंकरलाल कायस्थ का बेटा।"

"वह तो विलायत गया हुआ था।"

"हाँ, वही विनय। पिछले दिन कैम्ब्रिज से डिग्री लेने वह विलायत गया था। मालूम होता है, यूथिका और वह एक दूसरे को चाहने लगे थे।"

"तुम्हें यह कैसे मालूम?"

"विलायत से प्रति सप्ताह वह एक चिट्ठी यूथिका के नाम भेजता रहा। पहले तो मैंने इस ओर ध्यान ही नहीं दिया। दोनों एक कॉलेज में पढ़ते रहे हैं, इससे उनका परिचय होने में कुछ बड़ी बात न थी। परन्तु पाँच-छः महीनों की बात है कि

सिर्फ कौतूहलवश मैं ने उसकी चिट्ठी खोलकर पढ़ ली। वह सौ फीसदी एक प्रेम-पत्र था।"[1]

इस संवाद से आगे की कथा की ओर पाठक का ध्यान आकर्षित हो जाते हैं। कौतूहलता और जिज्ञासा को बनाये रखने में ये संवाद सर्वथा उपयुक्त ही है।

शिल्प की दृष्टि से चन्द्रगुप्त विद्यालंकार की कहानियाँ अत्यन्त सफल हैं। इनके द्वारा प्रयुक्त संवाद योजना भावाभिव्यक्ति में पूर्णतया सफल ही है। वस्तु वैविध्य और शिल्प के स्तर पर उनकी कहानियाँ हिन्दी कहानी के विकास यात्रा में अपना विशेष महत्व रखती है। प्रेमचन्दोत्तर युग के कहानीकार होते हुए भी उन्होंने प्रेमचंद परम्परा का पूर्ण निर्वाह कर कहानियों का सृजन किया है।

प्रेमचन्दोत्तर युग के यथार्थवादी संवेदनशील कहानीकारों में विष्णु प्रभाकर का नाम गिने जाते हैं। उनकी कहानियों में मानव जीवन के बहुआयामी रूप देखने को मिलता है। इन सब के मूल में सामाजिक स्वर ही सर्वप्रमुख है। यथार्थ के धरातल पर लिखी गयी उनकी कहानियों में सामाजिक दायित्व, मानव-मूल्य एवं मर्यादाओं का निर्वाह सुन्दर ढंग से चित्रित किया है। 'धरती अब भी घूम रही है', 'संघर्ष के बाद', 'सफ़र के साथी' आदि उनकी प्रसिद्ध कहानी संग्रह है।

विष्णु प्रभाकर की कहानियों में संवादों का अत्यन्त नाटकीय एवं यथार्थपरक शैली में प्रयोग हुआ है। प्रवाहमयी और स्पष्ट भाषा शैली इन संवादों का प्राण है। पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डालने के लिए नाटकीय, संक्षिप्त एवं छोटे-छोटे संवादों

---

1. चन्द्रगुप्त विद्यालंकार - वापसी, दुर्भाग्य - पृ. 171-172

का सफल प्रयोग किया है। 'धरती अब भी घूम रही है' कहानी के संवाद इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। संवादों के माध्यम से इसमें उन्होंने मानवीय संवेदनाओं की सफल अभिव्यक्ति की है। इसकी तीव्रता कहानी के अन्त में दोनों बच्चे तथा छोटे न्यायमूर्ति के संवाद में देखने को मिलता है।

"नीना को जैसे करंट छू गई। एकबारगी दृढ़ कण्ठ से बोल उठी, "आपने हमारे पिताजी को जेल भेजा है। आप उन्हें छोड दें....।"

कमल ने उसी दृढ़ता से कहा, "हमारे पास पचास रुपये है। आपने तीन हज़ार लेकर एक डाकू को छोड़ा है....।"

नीना बोली, "लेकिन हमारे पिताजी डाकू नहीं है। महंगाई बढ़ गई थी। उन्होंने बस बीस रुपये की रिश्वत ली थी।"

कमल ने कहा, "रुपये थोड़े हों तो...."

नीना बोली, "तो मैं एक-दो दिन आपके पास रह सकती हूँ।"

कमल ने कहा, "मेरी जीजी खूबसूरत है और खूबसूरत लड़कियों को लेकर काम कर देते हैं....."[1]

विष्णु प्रभाकर की अधिकांश कहानियाँ इसी प्रकार संवेदनात्मकता को लिए चलती हैं। सामाजिक घोर यथार्थ की सफल अभिव्यक्ति के साथ-साथ प्रस्तुत संवाद के ज़रिये चारित्रिक विशेषताओं पर भी कहानीकार ने प्रकाश डाला है।

---

1. विष्णु प्रभाकर - धरती अब भी घूम रही है - पृ. 13

उनकी कहानियों के पात्र किसी एक व्यक्ति का नहीं, समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतिनिधित्व करनेवाले हैं। इस ओर संकेत करते हुए 'मेरी प्रिय कहानियाँ' की भूमिका में वे कहते हैं कि "मेरी अधिकतर कहानियाँ मनुष्य की हैं, व्यक्ति की नहीं। मनुष्य में ही मेरी अधिक रुचि रही है, उसके जीवन झूठ और पाखण्ड जो मैंने देखा सहा है, वही मेरी कहानियों में उभर आया है।"[1]

पात्रों के चरित्र चित्रण के लिए उन्होंने नाटकीय, संक्षिप्त एवं छोटे-छोटे संवादों का प्रयोग किया है। 'शरीर से परे' कहानी के रश्मि और पति के बीच का संवाद इन विशेषताओं से युक्त ही है।

'मैं जैसे ही ऊपर चढ़ी, वे बोले, "रश्मि।"

"जी"

"घूमने गयी थी?"

"जी"

"प्रदीप के साथ?"

"जी"

"फिर उसे छोड़ कहाँ आई?"

"वे अपने घर गए।"

"और तुम?"

---

1. विष्णु प्रभाकर - मेरी प्रिय कहानियाँ, भूमिका - पृ. 6-7

"मैं अपने घर आ गयी।"

"यह तुम्हारा घर है?"

"जी हाँ।"

वे सहसा तेज़ हो उठे,

"दुष्टा! दूर हो जा मेरी आँखों के सामने से। यह तेरा घर नहीं है। मैं तुझे अन्दर नहीं आने दूँगा।"[1]

कम शब्दों में यथार्थपरक और नाटकीय शैली में कहानीकार ने चरित्र पर प्रकाश डाला है। प्रवाहमयी भाषा संवाद को और उद्दीप्त किया है।

इसप्रकार संवाद योजना की दृष्टि से भी विष्णु प्रभाकर की कहानियाँ रोचक एवं प्रभावशाली है। संवादों में प्रयुक्त भाषा शैली भी आकर्षक एवं सधा हुआ है। उत्तरोत्तर नये-नये शैलियों के प्रयोगों से उन्होंने हिन्दी कथा साहित्य को समृद्ध किया है। प्रेमचंद युगीन यथार्थवादी परम्परा के विकास में अपना सक्रिय योगदान दिया और अपना एक अलग स्थान बनाया है।

प्रेमचन्दोत्तर युगीन हिन्दी साहित्य अपने पूर्ववर्ती युग से काफी भिन्न है। प्रेमचंद युगीन कहानियों के जैसे समस्याओं का यथार्थ चित्रण और उसके लिए कोई न कोई आदर्श प्रस्तुत करना इस युग की कहानियों का ध्येय नहीं था। सामाजिक यथार्थ को उसके तीखे रूप में प्रस्तुत करना इन कहानीकारों का सर्वप्रथम लक्ष्य

---

1. विष्णु प्रभाकर - शरीर से परे - धरती अब भी घूम रही है, - पृ. 164

था। वास्तव में, अपने समसामयिक जीवन का विश्लेषण उसकी पूरी विकृतियों के साथ कहानियों में उभर कर आया है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् कहानी के क्षेत्र में एक नया मोड आया। सन् 1950 के बाद लिखी गयी कहानियाँ विभिन्न कथा आन्दोलनों के रूप में विकसित होने के कारण उसमें एकरूपता की सर्वथा कमी दिखाई देती है। कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से इस समय की कहानियों में अनेकरूपता पायी जाती है। यथार्थवाद से अधिक प्रभावित होने के कारण इस दौर की कहानियों की भाषा भी सरलता की ओर अग्रसर होती दिखाई देता है। पहले कहानियों में व्यक्तित्व और समाज दोनों को स्थान मिलते थे तो नई कहानी में खंडित व्यक्तित्व के अंशों तथा उसके आदर्शों को ही स्थान मिला है। क्योंकि स्वतन्त्रता के पश्चात् लोगों के मन में व्याप्त निराशा, असन्तोष, कुण्ठा आदि का सच्चा प्रतिफलन उस समय की कहानियों में भी स्पष्ट दर्शनीय है। डॉ. सुरेश सिन्हा के अनुसार, "नई कहानी पूर्वग्रहों पर बल नहीं देती वह जीवन के यथार्थबोध का विराटता से अंकन करने की प्रक्रिया है।"[1]

नई कहानी, कहानी-कला के तत्वों के आधार पर नहीं, बल्कि परिवेश को लेकर बुनी जाती है। कारण यह है कि नई कहानी में आई हुई जटिल संवेदनाओं और मनःस्थितियों को पूर्ववर्ती शिल्प के द्वारा व्यक्त करना काफी मुश्किल ही है।[2] नये-नये मूल्यों की खोज एवं संवेदनाओं की टकराहट का खुला-सा चित्रण नई कहानियों में दिखाई देता है। पात्रों की किसी विशेष मनःस्थिति को लेकर उसके

---

1. डॉ. सुरेश सिन्हा - हिन्दी कहानी : उद्‌भव और विकास - पृ. 552
2. डॉ. राजेन्द्र कुमार - स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी में ग्राम्य जीवन और संस्कृति - पृ. 76

चरित्रगत विसंगतियों के उद्‌घाटन में नई कहानीकार ने कहीं-कहीं संवादों का प्रयोग किया है। संवादों द्वारा मानव मन के विभिन्न स्तरों के सूक्ष्म चित्रण पर भी किसी किसी कहानीकारों ने ध्यान दिया है।

नई कहानी कलावादी नहीं होने के कारण शिल्प के स्तर पर इसमें कोई नयापन दिखाई नहीं देता है। कहानी कला संबन्धी कोई सुदृढ़ रूप इस समय की कहानियों में ढूँढता व्यर्थ की बात है। अतः कथानक, चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, आदि की सीमाओं में नई कहानी को बाँधना संभव नहीं है। अर्थात् स्वातन्त्र्योत्तर कहानीकार ने कहानी को घटना, देशकाल, पात्र, संवाद आदि की सीमाओं से मुक्त किया।[1] इसलिए शिल्प-योजना की दृष्टि से स्वातन्त्र्योत्तर कहानी सरल तथा सपाट हो गया। इसी कारण संवाद-तत्व की दृष्टि से इस काल की कहानियाँ उतना महत्वपूर्ण नहीं है। जो संवाद प्रयुक्त हुआ है, उसका उद्देश्य भी बदल गया। बदलते मानवीय रिश्तों तथा उससे उत्पन्न तनाव पूर्ण स्थितियों को अभिव्यक्त करने के लिए ही इन संवादों का प्रयोग हुआ है। इस प्रकार की संवाद योजना के साथ कहानी को आगे बढ़ाने वालों में अमृतलाल नागर, रांगेय राघव, मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव आदि का नाम उल्लेखनीय है।

प्रेमचन्दोत्तर युग में कहानी के क्षेत्र में पदार्पण करने पर भी अमृतलाल नागर की कहानीकार व्यक्तित्व सन् 1950 के बाद ही विकसित हो पाया है। उन्होंने अपने समय के मानव जीवन को मनोवैज्ञानिक धरातल पर कहानियों में अंकित किया है। सामाजिक यथार्थ की सफल अभिव्यक्ति उनकी कहानियों की सर्वप्रथम

---

1. डॉ. राजेन्द्र कुमार - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में ग्राम्य जीवन और संस्कृति - पृ. 73

विशेषता है। 'वाटिका', 'एटम बम', 'तुलाराम शास्त्री', 'एक दिल हज़ार दास्तान' आदि उनके प्रसिद्ध कहानी-संग्रह है। नागरजी की कहानियों के पात्र प्रायः निम्न-मध्य वर्ग के प्रतिनिधित्व करनेवाले होते हैं। अमृतलाल नागर की कहानियों में प्रयुक्त संवादों की भाषा लाक्षणिक शब्दों से युक्त चुटीली एवं प्रभावशाली है। उनकी कहानियों में व्याप्त बतरस का तत्व संवादों की भाषा में अनेक अर्थ छवियों के साथ देखने को मिलता है।

सामाजिक यथार्थ की घोर अभिव्यक्ति देनेवाली उनकी कहानी है 'एटम बम' जिसमें हिरोशिमा में हुए एटम बम दुर्घटना के दुष्परिणामों की ओर संकेत किया गया है। इसमें अस्पताल के डाक्टर और नर्स के बीच के वार्तालाप से उस समय के सामाजिक वातावरण और तनावपूर्ण मानसिकता की अभिव्यक्ति मिलते हैं।

नर्स आई, उसने कहा, "डाक्टर ! सेंटर से खबर आई हैं, और नये मरीज़ भेजे जा रहे हैं।"

डाक्टर सुजुकी के थके चेहरे पर सनक-भरी सूखी हँसी दिखाई दी। उन्होंने जवाब दिया :

"इन नये मुर्दा मरीजों के लिए नई ज़िन्दगी कहाँ से लाऊँगा, नर्स? विनाश-लोलुप स्वार्थी मनुष्य शक्ति का प्रयोग भी जीवन नष्ट करने के लिए ही कर रहा है, फिर निर्माण का दूसरा ज़रिया ही क्या रहा? फेंक दो उन ज़िन्दा लाशों को, हिरोशिमा की वीरान धरती पर ! या उन्हें ज़हर दे दो। अस्पताल और डाक्टरों का अब दुनिया में कोई काम नहीं रहा।"[1]

---

1. अमृतलाल नागर - मेरी प्रिय कहानियाँ, एटम बम - पृ. 55

उपर्युक्त संवाद से हिरोषिमा में हुए एटम बम विस्फोट के दुष्परिणाम की ओर संकेत मिलने के साथ-साथ मानव जीवन की मूल्यहीनता का एहसास भी मिलते हैं। यहाँ कहानीकार ने पात्रों की मानसिक भूमिका के अनुरूप उसके संवाद को भी रूपायित किया है। नाटकीय संवादों का भी प्रयोग नागरजी की कहानियों में देखने को मिलता है। 'शकीला की माँ' कहानी में इसका उदाहरण देख सकते हैं।

'जमीलन ने पानदान को अपनी ओर खिसकाकर उसका ढक्कन खोलते हुए पूछा, "गई कहाँ थी?"

"कानपुर".... चारपाई के एक कोने का सहारा लेकर पायताने की डोरी पर हाथ फेरते हुए सिर झुकाए उसने उत्तर दिया।

"किसके साथ गई थी?"

"मुन्ना के साथ।"

"कौन मुन्ना?"

"रामलाल का लड़का।"

"रामलाल कौन? सराफे वाले?"

इस बार माँ की आँखों से आँखें मिलाकर शकीला ने उत्तर दिया,

"वह नहीं। अरे वही सुनार, सब्जी मंडी वाला।"[1]

---

1. अमृतलाल नागर - मेरी प्रिय कहानियाँ, शकीला की माँ - पृ. 14-15

यहाँ संवाद पात्र तथा परिस्थिति के सर्वथा अनुकूल ही है। कहानीकार ने संवाद द्वारा पात्र के चरित्र की ओर भी संकेत किया है। अमृतलाल नागर की कहानियाँ सभी अर्थों में यथार्थवादी है। स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय जनजीवन का यथार्थ चित्रण इन कहानियों के माध्यम से चित्रित किया है। इसकी सफल अभिव्यक्ति के लिए कहीं कहीं संवादों का भी सहारा उन्होंने लिया है। स्वातन्त्र्योत्तर कहानियों के लीक से हटकर कहानी कला के तत्वों पर भी उन्होंने अपनी कहानियों में ध्यान दिया है।

प्रेमचन्दोत्तर युग के मार्क्सवादी विचारधाराओं से प्रभावित कहानीकारों में रांगेय राघव का नाम सर्वप्रथम आता है।[1] साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में उन्होंने सफलता से अपनी लेखनी चलाई है तो भी उनका कहानीकार व्यक्तित्व सबसे निराला है। कथ्य, शिल्प एवं रचना-तन्त्र की दृष्टि से उनकी सभी कहानियाँ विशेष महत्व रखती हैं। मानव-समाज से संबन्धित विविध पहलुओं को उन्होंने अपनी कहानियों में कलात्मक सौन्दर्य के साथ अभिव्यक्त किया है। जीवन के प्रति उनकी प्रगाढ़ आस्था इन कहानियों में झलकती है। 'भय', 'इन्सान पैदा हुआ', 'गदल', 'यह ग्वालियर है' आदि उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

अपनी कहानियों में उन्होंने पात्रों के क्रिया-कलापों, आपसी बातचीत और दूसरे पात्रों के कथनों से चरित्र चित्रण पर बल दिया है। स्वाभाविकता से युक्त इनकी संवाद योजना सर्वथा पात्र तथा परिस्थिति के अनुकूल दीख पड़ता है।

---

1. डॉ. राजेन्द्र कुमार - स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी में ग्राम्य जीवन और संस्कृति - पृ. 92

लेकिन दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति में कहीं-कहीं संवाद लम्बे हो गए है। उनकी कहानियों की आकर्षणीयता वास्तव में प्रयुक्त संवाद-योजना पर निर्भर है। इस ओर प्रकाश डालते हुए एक विचारक का कहना है कि "रांगेय राघव की अधिकांश कहानियाँ कथोपकथन प्रधान हैं। संवादों के सफल प्रयोग के कारण उनकी कहानियाँ आकर्षक और प्रवाहपूर्ण बन पड़ी है। कथोपकथनों के माध्यम से वे अधिकतर कथावस्तु का विकास करते हैं। चरित्र-चित्रण के लिए संवादों का उपयोग प्रायः कम करते हैं, कहानी में कौतूहल भी वे रोचक संवादों के माध्यम से बनायी रहते हैं, कई बार पूर्व तथ्यों का उद्‌घाटन वर्णन द्वारा न कर कथोपकथन द्वारा ही करते हैं। इसी कारण उनकी कहानियों में प्रभविष्णुता और संवेदनशीलता दोनों ही विशेषताएँ बनी रहती हैं।"[1]

उनकी कई कहानियों में संवाद कथा-विकास को गति प्रदान करते हैं। जिज्ञासा तथा कौतूहल निरन्तर उत्पन्न करने के लिए भी वे कथोपकथनों का सहारा लिया है। 'दरवाज़ा' कहानी में इस प्रकार के संवाद दर्शनीय है।

"तो बताते क्यों नहीं?" लच्छमी ने ताना जैसा मारा।

"गोरधन जाऊँगा।"

"क्यों?"

"परकम्मा करने।"

---

1. डॉ. उमा त्रिपाठी - रांगेय राघव का कथा साहित्य - पृ. 125

"सहर होता तो मैं भी जाती। जब पढ़ती थी, तब जाने क्या-क्या सोचती थी। तुम जाओ मैं क्या रोकती हूँ।"[1]

यहाँ पात्रों के अनुरूप संवादों का प्रयोग कर कथा प्रवाह को स्वाभाविकता से आगे बढाया। उन्होंने छोटे तथा गठित संवादों का ही प्रयोग प्रायः किया है। इसप्रकार 'आवारा' कहानी में तो उन्होंने पात्रानुकूल भाषा के ज़रिये संवाद प्रभावपूर्ण बनाया है।

"अबे, तो आज मेरे मुँह से खुसबू क्यों नी आरी है यार? कहीं उझक के चक्के - फक्के तो नहीं झाँस गया?"

"मर गए!" बोला वह कालू, "यह देख मेरी जेब में क्या है?"

"तो दिल से सटाके रखे हुवे हो?"

"और नहीं? ओर बे रफीक, तू कैसे भिनक रिया है आज दिन? किस्सा-फिस्सा तो नहीं कर दीना?"

"और भाई तू क्या जाने? लो साँड-सा डोलै है, न आगी, न पीछू; जहाँ मरे वहीं गढ़ गए।"[2]

यहाँ वार्तालाप करने वाले पात्र उपेक्षित वर्ग के होने के कारण, कहानीकार ने उन्हीं के अनुरूप भाषा का प्रयोग किया है। इसीलिए संवाद स्वाभाविक तथा आकर्षक बना है।

---

1. रांगेय राघव - 'एक छोड', 'एक दरवाजा' - पृ. 42
2. रांगेय राघव - 'एक छोड एक', 'आवारा' - पृ. 80-81

इसप्रकार देखने से रांगेय राघव की कहानियों में भी संवादों का प्रयोग दर्शनीय है जो मुख्य रूप से कथा - विकास को गति प्रदान करने के लिए प्रयुक्त हुआ है। संवादों में उन्होंने स्वाभाविकता तथा रोचकता को मुख्य स्थान दिया है। कथावस्तु, पात्र और संवाद ये तीनों के समुचित सामंजस्य से रांगेयजी की कहानियाँ बड़ा ही आकर्षक तथा रोचक है।

प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कहानी के विकास में अमृतराय का विशेष स्थान है। उन्होंने अपनी कहानियों के माध्यम से सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति मनोवैज्ञानिक धरातल पर किया है। सामाजिक समस्याओं एवं शोषण के विरुद्ध बौद्धिक विश्लेषण उनकी कहानियों में पाया जाता है। शिल्प की दृष्टि से भी नये-नये प्रयोग उन्होंने किया है। उनकी कहानियाँ किसी आन्दोलन के दायरे में सीमित नहीं है। अधिकांश कहानियाँ सामाजिक विसंगतियों के बीच विकसित होती है। 'सती का शाप', 'गीली मिट्टी', 'कठघरे', 'सांवली लड़की' आदि इनकी श्रेष्ठ कहानियाँ हैं।

अमृतराय ने अपनी कहानियों में संवाद सौन्दर्य पर पूरा-पूरा ध्यान दिया है। कथानक को गति प्रदान करने के लिए उन्होंने संवादों का सफल प्रयोग किया है। 'आह्वान' कहानी में पात्रों के बातचीत के द्वारा घटनाओं को गति प्रदान किया है।

ललिता : "मैं यहाँ से चली जाना चाहती हूँ।"

शिरीष : "क्यों?"

ललिता : "मैंने तुमसे पहले ही कहा था कि मैं तुम्हारे और तुम्हारी माँ के बीच अभिशाप की एक छाया बनकर नहीं आना चाहती।"

शिरीष : "तुम व्यर्थ यह बात सोच-सोचकर अपना जी दुखाती हो।"

ललिता : "नहीं शिरीष, मैं ठीक कहती हूँ। मैं जिस बात से डरती थी वही सामने आ रही है।"

शिरीष : "मगर इसमें इतना विचलित होने की क्या बात है, यह तो ज़िन्दगी का नियम है।"

ललिता : "ऐसा कैसा नियम, कितना भयानक! भूलो मत शिरीष, कि मैं ने तब तक शादी के लिए हामी नहीं भरी थी जब तक माँजी की रज़ामंदी नहीं मिल गयी।"

शिरीष : "वह ललिता, ऊपर-ऊपर की चीज़ थी।"

ललिता : "हाँ अब तो ऐसा ही लगता है, मगर पहले मैं यह न जानती थी।"

शिरीष : "वह बात तो अब गयी - आगे क्या हो, इसके बारे में कुछ सोचा है?"

ललिता : "मैं तुम्हारे बिना रह सकती हूँ। मैं यहाँ से चली जाऊँगी।"

शिरीष : "पागलपन की बात मत करो ललिता, तुम भी जानती हो कि यह कोई रास्ता नहीं है।"

ललिता : "मुझे तो और कोई रास्ता नहीं सूझता।"[1]

ललिता और शिरीष के बीच होने वाले इस संवाद से उनके चरित्र की जानकारी मिलने के साथ आगे की कथा की ओर भी सूचना मिलते हैं। स्वाभाविकता और कुतूहलता इस संवाद को और प्रभावोत्पादक बना देते हैं।

---

1. अमृतराय - 'सरगम', 'आह्वान' - पृ. 120-121

अमृतराय ने अपनी कहानियों में विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए संवादों का प्रयोग किया है। मानसिक ऊहापोह द्वारा विश्लेषण करके पात्रों को चरित्र का स्पष्टीकरण करना जो आधुनिक कथा-शिल्प का एक अंग है, इसका प्रयोग भी उनकी कहानियों में दर्शनीय है। 'सांवली लड़की' कहानी के निम्नलिखित संवाद इसका उदाहरण है।

"लज्जा का वह आटोप.... बन्दरमुँहा कंटोप.... कितना बीभत्स था.... यहाँ मत जाओ, वहाँ मत जाओ, इससे मत बोलो, उससे मत बोलो.... यह किताब मत पढ़ो, वह तस्वीर मत देखो.... सिर पर आँचल रखकर चलो, ओढ़नी का ख्याल रखो... कहीं कोई तुम्हारी पिंडली न देख ले.... कहीं तुम्हारी देह का उभार न झलक जाय। ....क्यों नहीं, मैं पूछती हूँ? सूम के धन की तरह अपना यह शरीर बचाकर मैं ने क्या किया? किस काम आया मेरे? रखा तो मैं ने इसे सात तालों जकड़ कर पर क्या मिला मुझे! आज कोई इसका ग्राहक नहीं हैं।"[1]

उपर्युक्त संवाद से पात्र के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व तथा तनाव पूर्ण स्थिति का पता पाठकों को मिलते हैं। आधुनिक नारी की जीवन विडम्बनाओं की ओर भी कहानीकार ने संवाद द्वारा प्रकाश डाला है। प्रसंगानुकूल प्रवाहमयी भाषा प्रयोग संवाद को प्रभावपूर्ण बनाया है।

इसप्रकार उन्होंने अपनी कहानियों में संवादों के सफल प्रयोग पर बल दिया है। नई कहानी के शिल्प-विधान का अनुसरण करते हुए कहानियों में कथानक को गति प्रदान करने तथा पात्रों के आन्तरिक संघर्ष को अभिव्यक्त करने के लिए

---

1. अमृतराय - सरगम, एक साँवली लड़की - पृ. 315

उन्होंने संवाद योजना का सहारा लिया है। उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद भावानुकूल तथा प्रभावपूर्ण ही है।

प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कहानी जगत में मोहन राकेश की ख्याति एक सामाजिक कहानीकार के रूप में अधिक हुई है। उनकी कहानियों में प्रतिपादित कथ्य युगीन समस्याओं से संबन्धित होने के कारण विषयवस्तु अपेक्षाकृत विस्तृत होती है। उनकी कहानियों में विभिन्न शैलियों का सफल प्रयोग हुआ है। 'काला रोजगार', 'जानवर और जानवर', 'मिसपाल', 'मलबे का मालिक', 'अपरिचित' आदि राकेशजी की चर्चित कहानियाँ है। राकेशजी की सन् 1950 ई के पूर्व लिखी गई कहानियों को 'इंसान के खण्डहर' नाम से संकलित किया गया है। वास्तव में कहानी-कला की दृष्टि से देखने पर इन कहानियों का ही विशेष महत्व है। उसके बाद की कहानियों को वे समाज और व्यक्ति की यन्त्रणाओं का आईना मानते हैं।

राकेशजी की नाटकीय शैली में विरचित 'काला रोजगार' कहानी में पात्रों के चरित्र को दूसरे पात्रों द्वारा कहे गए कथोपकथनों से स्पष्ट किया है। इस में कथोपकथन का प्रयोग सांकेतिक रूप से हुआ है।

'कॉमन रूम में कानाफूसी होने लगी।

"कौन है वह?"

"उसकी बहन है।"

"उस हरामी की.....?"

"उसकी बडी बहन है।"

"सगी बहन?"

"सुना यही है कि सगी बहन है।"

"और माँ-बाप?"

"माँ-बाप का पता नहीं। यह बहन ही यहाँ आती है।"

"यह कहाँ रहती है?"

"यह भी पता नहीं। ....सुना है टैक्सी है...." कुछ ओंठों पर रसात्मक मुस्कराहटें फैल गई। आवाज़ें और धीमी हो गई।

"यूँ तो काफी दुबली-सी है।"

"पर कट अच्छा है।"

"और उम्र भी ज़्यादा नहीं है। बाईस-तेईस की होगी।"[1]

यहाँ छोटे-छोटे वाक्यांशों द्वारा एक साथ ही दो पात्रों के चरित्र की ओर संकेत किया है। यहाँ कहानीकार ने संवादों द्वारा ही चरित्र पर प्रकाश डाला है। लम्बे वर्णनों के बदले संक्षिप्त रूप से संवादों के माध्यम से कहानीकार ने कहानी में कौतूहल एवं जिज्ञासा को बनाये रखा है। एक सफल नाटककार होने के कारण राकेशजी की कहानियों में संवाद योजना का सफलतम रूप दर्शनीय है। 'चौगान' कहानी के साहब और काशीराम के बीच के संवाद पात्र तथा परिस्थिति के अनुकूल प्रयुक्त हुआ है।

---

1. मोहन राकेश - काला रोज़गार - जानवर और जानवर - पृ. 13-14

"अब तुम रोना बन्द करोगी या नहीं?"

वह सिर हिलाती और उठ खड़ी होती।

"जाकर कपड़े बदलोगी या नहीं?"

"बदलूँगी।"

"सिर में आज तेल डाला था?"

"नहीं"

"दान्त साफ किए थे?"

"नहीं"

"क्यों?"

"अब जाकर कर लेती हूँ।"

"तुम्हें मैं तुम्हारी माँ के पास भेज दूँ?"

वह फिर झल्ला उठता। सन्तो डरकर सिर हिलाती,

"नहीं"

"तुम्हारी ये गन्दी आदतें कभी छूटेंगी भी?"

वह सिर हिलाती, "क्यों नहीं छूटेंगी?"

"कब छूटेंगी?"

"कल से छूट जाएँगी।"[1]

---

1. मोहन राकेश - चौगान, पहचान - पृ. 96-97

प्रस्तुत संवाद से काशीराम की चरित्रगत विशेषताएँ साफ़ नज़र आता है। पात्र के अनुकूल भाषा में प्रयुक्त होने के कारण संवाद की अर्थवत्ता भी बढ़ गई है। इस प्रकार देखने से मोहन राकेश की कहानियाँ, वस्तु एवं शिल्प दोनों की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। कहानीगत विभिन्न शैलियों का भी सुन्दर प्रयोग उनकी कहानियों में देखने को मिलता है। उनके अधिकांश संवाद छोटे होते हैं। संवादों द्वारा उन्होंने विभिन्न घटनाओं, स्थितियों एवं मनोवृत्तियों का अंकन स्वाभाविकता से किया है। संवादों में पात्रानुरूपता का पूर्ण ध्यान दिया गया है।[1]

प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य को एक नया मोड़ देने में कमलेश्वर का महत्वपूर्ण स्थान है। आधुनिकता बोध की अभिव्यक्ति उनकी कहानियों की खासियत है। जिन्दगी के विविध संदर्भों को ये कहानियाँ उद्‌घाटित करती हैं। 'ऊपर उठता हुआ मकान', 'मांस का दरिया', 'नीली झील', 'भटकते हुए लोग', 'पराया शहर' आदि उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। मध्यवर्गीय सामाजिक जीवन, वर्तमान समाज में व्याप्त अस्थिरता आदि को अपनी कहानियों द्वारा उन्होंने अभिव्यक्ति दी है। रूढ़ियों के प्रति विद्रोह प्रकट करने के साथ-साथ नये-नये मूल्यों की खोज भी इन कहानियों में सशक्त रूप से दिखाई देता है।

कमलेश्वर की कहानियों का आरंभ प्रायः किसी मनःस्थिति, घटना या वातावरण के चित्रण से होता है। बदलते हुए मनुष्य तथा उसके परिवेश को चित्रित करना ही उनका प्रधान लक्ष्य है। शिल्प योजना के स्तर पर सांकेतिकता, बिम्बविधान एवं प्रतीक योजना जो नई कहानी की विशेषताएँ हैं, उनकी कहानियों में भी

---

1. मोहन राकेश - एक ओर जिन्दगी - वारिस तथा अन्य कहानियाँ - पृ. 98

दृष्टिगोचर है। 'तलाश' कहानी में भी इस प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग दर्शनीय है। मगर इसके लिए उन्होंने संवादों का सहारा लिया है। कहानी में कुछ ऐसे शब्द और वाक्य है जो अपनी सहजता और स्वाभाविकता में ही प्रतीकों का काम करते हैं। सुमी और माँ के बीच के संवाद इस बात की पुष्टी करता है।

"मुझे आज बहुत काम करना है", सुमी ने धीरे से कहा था।

"कुछ मैं करवा दूँ?" ममी ने सहारा पकडा था....

"हमारे यहाँ एक और एक्सचेंज खुल रहा है....

"कोड मैसेजेज़" केलिए। उसकी क्लासेज़ शुरू हुई हैं, उन्हीं लेसन्ज़ को दुहराना है," सुमी ने सब समझा दिया था।

"तो तू अपना काम कर.... खाना मैं बना लेती हूँ।"

"सूप बना लो, ममी ज़्यादा भूख भी नहीं है। स्लाइसेज़ तल लेंगे बस हो जाएगा।"

"अच्छा"। कहकर वह उठ गई थी।

फिर खामोशी छा गई थी।"[1]

यहाँ कहानी को गति पहुँचाने या पात्रों को उद्‌घाटित करने के लिए नहीं, बल्कि अपने युग के बदलते मानसिक संघटन और जीवन-पद्धति को उभारना ही कहानीकार का लक्ष्य था। साथ ही माँ-बेटी के बदलते संबन्धों की तलाश भी है।

---

1. कमलेश्वर - तलाश (मेरी प्रिय कहानियाँ) - पृ. 133

कहानीगत समस्याओं के उद्‌घाटन के लिए भी कमलेश्वर ने संवादों का प्रयोग किया है। साथ ही पात्र की विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला है। 'नीली झील' कहानी के महेसा तथा पारबती के बीच का संवाद इसका एक उदाहरण है।

पारबती ने पूछा, "मन्दिर के लिए मिस्त्री से बात हुई?"

"मिस्त्री तो नहीं मिले, पर एक नई बात सुनने में आई है।"

"क्या?" पारबती से उत्सुकता से जानना चाहा।

"अपनी बस्ती में बिजली लग रही है; चुंगीवाले बड़ी कोशिश में हैं, पर पैसा पास नहीं है चुंगी के।"

"तो बिजली का लगेगी?"

"सुना, चुंगी अपनी कुछ ज़मीनें बेचने की बात सोच रही है, ऐसी ज़मीनें जो उसके लिए बेकार हैं।"

महेसा ने कहा तो पारबती एकदम बोली,

"चुंगी अगर बेचे तो अपने चबूतरे के पासवाला कूड़ाखाना हम खरीद लें! ...चबूतरे पर मन्दिर हो जाएगा और उधर मुसाफिरों के लिए छोटी-सी धरमसाला। तुम जरा सच्ची बात पता लगाओ!"

"बात तो सच्ची है। हाफिज़जी का रोज़ चुंगी में आना-जाना लगा रहता है, गलत खबर नहीं लाएँगे, वो ही बता रहे थे", महेसा ने जैसे उसे इतमीनान दिलाया,

"मौका लगा तो खरीद लेंगे।"[1]

---

1. कमलेश्वर - मेरी प्रिय कहानियाँ, नीली झील - पृ. 101

यहाँ पात्रानुकूल भाषा के ज़रिये चरित्र की विचारधाराओं का प्रतिपादन किया है। नई कहानीकार होते हुए भी उन्होंने अपनी कहानियों में संवाद-तत्व पर बल दिया है। कस्बाती परिवेश का चित्रण करने वाली इस कहानी के संवाद आंचलिकता को लिए हुए हैं।

इस प्रकार देखने से कमलेश्वर की कहानियों में भी बदलते परिवेश के अनुरूप संवादों का प्रयोग हुआ है। लेकिन पहले युग के अनुसार व्यापक अर्थ में नहीं है। बदलते हुए मनुष्य का और उसके परिवेश का अंकन करना ही उनकी कहानी कला का प्रधान लक्ष्य था। उसी के अनुकूल शिल्प-पक्ष को उन्होंने परिवर्तित किया है। उनकी कहानियाँ आधुनिक भावबोध और कला की सहज परिष्कृति की कृतियाँ है। मूल्य विघटन के साथ ही नये मूल्यों के निर्माण भी इनकी रचनाओं में एक साथ देखने को मिलता है। संक्षेप में कहें तो नई कहानी के 'स्टाइल' को विकासोन्मुख बनाने का श्रेय निस्सन्देह ही कमलेश्वर जी को दिया जा सकता है।

मध्यवर्गीय जीवन के कहानीकार के रूप में राजेन्द्र यादव का स्थान अद्वितीय है। नई कहानी के प्रमुख हस्ताक्षरों में उनका नाम भी सम्मिलित है। सामाजिक चेतना की अभिव्यक्ति उनकी कहानियों का प्रमुख स्वर है। 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', 'किनारे से किनारे तक', 'एक दुनिया समानान्तर' आदि इनके प्रमुख कहानी संग्रह है। उनकी कहानियों में यथार्थ-बोध के चित्रण के साथ-साथ शिल्प-संबन्धी नवीन प्रयोग भी देखने को मिलता है। 'पास फेल', 'टूटना', 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', 'बिरादरी-बाहर' आदि उनकी उल्लेखनीय कहानियाँ हैं। ये कहानियाँ एक सीमित अर्थ में ही अपने समय को परिभाषित कर देनेवाली हैं। स्त्री-पुरुष

संबन्धों में आए विभिन्न परिवर्तनों की सफल अभिव्यक्ति उनकी कई कहानियों में दर्शनीय है।

राजेन्द्र यादव की अधिकांश कहानियाँ मनोविज्ञान के परिपार्श्व में ही आन्तरिक यथार्थ की अभिव्यक्ति देनेवाली है। 'टूटना' कहानी में किशोर ने अपनी अपराध भावना को संवादों के ज़रिये व्यक्त किया है।

"कभी-कभी मैं सोचता हूँ लीना', तीन दिनों से घुमड़ती बात को किशोर शब्द देने की कोशिश कर रहा था : "कहीं हम लोगों से कुछ गलत तो नहीं हो गया...."[1]

उपर्युक्त संवाद के माध्यम से कहानीकार ने किशोर के आन्तरिक संघर्ष को शब्दबद्ध किया है। चरित्रगत विसंगतियों के प्रतिपादन के लिए ही कहानीकार ने संवाद का प्रयोग किया है।

नई कहानी में संबन्धों में आए टकराहट एवं बिखराव की अभिव्यक्ति ज़्यादा हुई है। इसको वाणी देने के लिए भी कहानीकार ने संवादों का आश्रय लिया है। 'टूटना' कहानी में किशोर के दुविधाग्रस्त मानसिकता को संवादों के ज़रिये यों आवाज़ दिया है।

लीना का यह बहाव किशोर को किनोर पर अन-भीगा खड़े छोड जाता है : "और तुम आयी भी हो तो एक ऐसे आदमी के साथ, जिसने खुद कभी ज़िन्दगी में नहीं जाना कि इच्छाएँ पूरी होना किसे कहते हैं ! भैया को अस्सी-सौ रुपये मिलते

---

1. राजेन्द्र यादव - टूटना - पृ. 156

हैं। बच्चे हैं, बे-पढ़ी भाभी हैं - जिन्होंने मुझे माँ की तरह पाला है। माँ-बाप का प्यार मैंने तो सिर्फ भैया में ही पाया है। इसलिए कभी-कभी सोचता हूँ कि दोस्ती तक हम लोगों के संबन्ध ठीक थे, लेकिन आगे....."[1]

यहाँ किशोर की चरित्रमत असंगतियों की ओर कहानीकार ने संकेत किया है। व्यक्तिमन में व्याप्त असन्तोष, निराशा, कुण्ठा आदि को दिखाने का सफल प्रयास किया गया है जो नई कहानी के शिल्प का अंग है। साथ ही पति-पत्नी के बीच का अजनबीपन और टूटते पारस्परिक संबन्धों को भी दर्शाया गया है।[2]

स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी साहित्य को वस्तु एवं शिल्प की दृष्टि से आगे बढ़ाने में राजेन्द्र यादव का भी अपना विशेष योगदान रहा है। शिल्पगत चमत्कारों के प्रति वह विशेष जागरूक थे। जागरूक थे। पात्रों के किसी विशेष मनःस्थिति के अंकन में वह सचमुच सिद्धहस्त थे।

स्वतन्त्रता के पश्चात की कथाओं की दुनिया सचमुच एक नयी दुनिया है। अपने अस्तित्व को कायम रखने के लिए संघर्षरत मानव के जीवन संघर्षों को स्वातन्त्र्योत्तर कहानीकार ने अपनी कहानियों में उभारा है। इसलिए इस काल की कहानियों में परिवेश का महत्व पात्रों से कहीं ज़्यादा है। व्यक्ति को उसके परिवेश के साथ जोड़कर देखने-परखने का प्रयास इस काल की ज़्यादातर कहानियों में हुई है। मानव के बनते-बिगडते रिश्तों, मूल्यों एवं संवेदनाओं को कहानियों में अभिव्यक्त करने लगा। इसीलिए शिल्प तथा भाषा की दृष्टि से कहानी का रूप बदल गया।

---

1. राजेन्द्र यादव - टूटना - पृ. 157
2. वही - पृ. 157

शिल्प संबन्धी जितने विविध रूप इस काल की कहानियों में मिलते हैं, उतने पहले कभी नहीं थे। नई कहानी तक आते-आते परम्परागत कथा-तत्वों का ह्रास हुआ है। कला संबन्धी कोई निश्चित रूप इस काल में स्थापित नहीं किया जा सकता।

संवाद-योजना की दृष्टि से परखने पर भी कोई सुनिश्चित रूप सामने नहीं आता है। संवाद जो पात्र-तत्व के अन्तर्गत आने के कारण इसका सीधा संबन्ध पात्र विशेष से होता है। नई कहानी में पात्र नहीं, पात्र की चरित्रगत विसंगतियाँ ही प्रधान रहते हैं। इसके लिए कहीं कहीं कहानीकार ने संवादों का प्रयोग किया है। लेकिन नई कहानी में एक सुनिश्चित कथावस्तु नहीं होने के कारण कथानक के विकास हेतु संवादों का प्रयोग नहीं हुआ। फिर भी स्वातन्त्र्योत्तर युग के आरंभिक काल के कुछ कहानीकारों की कहानियों में संवाद योजना का प्रभाव देखने को मिलता है। अमृतलाल नागर, रांगेय राघव आदि की कहानियाँ इसका उदाहरण हैं। आगे की कहानियों में इसका स्वरूप बदल गया है। अर्थात स्वातन्त्र्योत्तर काल में आकर जिसप्रकार शिल्प पक्ष शिथिल हो गया है, उसी के अनुसार संवाद-तत्व का भी ह्रास दृष्टिगोचर हैं।

सन् 1960 के बाद लिखी गई हिन्दी कहानियाँ अपने पूर्ववर्ती युग से काफी भिन्न ही है। इस दशक में आते ही कहानी साहित्य विभिन्न आन्दोलनों के रूप में विकसित होती दिखाई देता है। आधुनिक जीवन में व्याप्त कुण्ठा, अकेलापन, आशंका और तनाव की स्थिति इस समय की अधिकांश कहानियों में देखने को मिलता है। वस्तु और शिल्प की दृष्टि से कहानी का नाम रूप और रंग बदला है। नई कहानी के बाद 'अकहानी' के नाम से हिन्दी कहानी साहित्य का नया रूप

सामने आया। जगदीश चतुर्वेदी इसके प्रवर्तक थे। अकहानीकार जीवन यथार्थ के रु-ब-रु चित्रण को प्रमुखता देते थे। इसलिए वर्तमान जीवन की भयावह वास्तविकताओं को कहानी के माध्यम से अभिव्यक्त होने लगा। इसी कारण कहानी कला के तत्वों का निर्वाह इन कहानियों में बिलकुल नहीं हुआ है। अकहानी में कोई 'प्लोट' या सुनिश्चित उद्देश्य नहीं है। इस दृष्टि से परखने पर इस दौर की कहानियों में संवाद-तत्व का कोई प्रभाव दिखाई नहीं देता है।

'नई कहानी' आन्दोलन की ही प्रतिक्रिया एवं प्रतिद्वन्द्विता के रूप में 'सचेतन कहानी' की शुरुआद हुई।[1] इसके पीछे परिवेश और यथार्थ के प्रति एक नई जीवन-दृष्टि दर्शनीय है। महीपसिंह और उनके द्वारा संपादित 'संचेतना' पत्रिका के ज़रिये इस आन्दोलन का विकास हुआ। इस कहानियाँ में भी कलात्मकता का अभाव दर्शनीय है। इसलिए संवाद-तत्व के बहुआयामी प्रभाव की ओर कहानीकार का ध्यान नहीं आया है।

सचेतन कहानी के बाद 'समान्तर कहानी' आन्दोलन पनपने लगा जिसका प्रवर्तन कमलेश्वर द्वारा संपन्न हुआ। आम आदमी के जीवन के जलते प्रश्नों का यथार्थमूलक समाधान ढूँढने का सफल प्रयास इन कहानीकारों का लक्ष्य था। इसलिए इन कहानियों में भी कलात्मकता का बिलकुल अभाव दर्शनीय है। आगे चलकर राकेश वत्स ने 'मंच' पत्रिका के द्वारा 'सक्रिय कहानी' आन्दोलन को बढ़ावा दिया। आम आदमी के सक्रिय चेहरे को उभारने का प्रयास इन कहानियों में हुआ है। लेकिन थोड़े ही दिनों में इसका प्रभाव नष्ट हो गया। इन कहानियों में भी

---

1. गणपति चन्द्र गुप्त - हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास (द्वितीय खण्ड) - पृ. 461

कलात्मकता का नितान्त अभाव दृष्टिगोचर है। अतः संवाद-तत्व की दृष्टि से कोई विशेष प्रगति दिखाई नहीं देता।

पुरानी कहानी की अपेक्षा आज की कहानी में जीवन की जटिलता को अधिक संवेदना के साथ चित्रित होने के कारण शिल्पगत मान्यताओं की ओर कहानीकारों ने ध्यान नहीं दिया है। इसका समर्थन करते हुए 'प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य' नामक पुस्तक में यों लिखा है कि "प्रेमचन्दोत्तर युग में आए जीवन की सूक्ष्म एवं गहन अनुभूति, विचारों की प्रभावान्विति तथा जीवन संघर्ष की अभिव्यक्ति के लिए पुराने शिल्पगत मान्यताएँ अपर्याप्त ही है।"[1]

कहानी की इस बदली हुई संरचना में शिल्पगत मान्यताओं का कोई विशेष महत्व नहीं है। जीवन की व्यापकता और गतिमयता का आज की कहानियों में कोई स्थान नहीं रहा है। उसके स्थान पर जीवन के किसी विशेष क्षण, या मनःस्थिति को लेकर कहानियों की सृजन होती है इसलिए पुरानी कहानियों के जैसे उद्देश्य-प्रधान और कथा एवं चरित्र को प्रकाशित करने वाले संवादों का आज कहानी में कोई स्थान नहीं रहा है। पात्रों की संख्या भी आज सीमित होने के कारण संवाद का प्रयोग भी उस सीमित दायरे में होने लगा है। इसलिए पहले की अपेक्षा संवाद कम प्रयुक्त होते हैं या जो है, वह पात्र के मानसिक स्थिति-सापेक्ष्य होते हैं। क्योंकि इस दशक की कहानी का मूल उद्देश्य, कहानी कहने की अपेक्षा बदलते रिश्तों तथा संबन्धों की अभिव्यक्ति करना है। इसलिए पात्र से अधिक आज की कहानियों में परिवेश ज़्यादा महत्वपूर्ण है।

---

1. डॉ. राधेश्याम - प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य - पृ. 40

प्रत्येक युग के अनुरूप साहित्य में भी नये-नये साधन ग्रहण किये जाते हैं। पुराने ज़माने से लेकर आज तक के साहित्य में यह प्रवृत्ति दृष्टिगोचर है। इसकी ओर दृष्टि डालते हुए डॉ. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय का कहना है कि "प्रेमचंद और जैनेन्द्र जब कहानी साहित्य की रचना कर रहे थे तो उन्होंने भी युगानुकूल उपादान और साधन ग्रहण किए थे। अतः आज की नई पीढ़ी के कहानी-लेखकों की रचनाओं में भी विषयगत और शैलीगत नाविन्य मिलता है जो किसी को कोई विवाद नहीं उठाना चाहिए।"[1] कहने का मतलब यह है कि प्रेमचंद युगीन कहानियों में जिस तरह संवाद-तत्व के बहुआयामी प्रभाव एवं विकास पर कहानीकारों का ध्यान आया, उसी तरह का प्रभाव एवं विकास परवर्ती युग में दिखाई नहीं देता है। कथ्य ओर शिल्प दोनों की दृष्टि से आज कहानी साहित्य परिवर्तित हुआ है।

निष्कर्ष

प्रेमचंद-पूर्व युगीन हिन्दी कहानियों के विश्लेषण करने से पता चलते हैं कि वस्तु और शिल्प की दृष्टि से उस समय की कहानियाँ उतनी विकसित नहीं थी। अधिकतर कहानियाँ घटनाप्रधान या कल्पना प्रधान होने की वजह से कहानी कला के सभी तत्वों का पूर्ण निर्वाह नहीं हो पाया है। किसी-किसी कहानियों में संवादों का प्रयोग हुआ है तो भी कथा प्रवाह में घुल-मिल जाने के कारण या वर्णनों की प्रधानता होने के कारण उसकी व्यक्तिगत सत्ता नष्ट हो गई। लेकिन इस युग के अन्तिम चरण में आते-आते संवाद-योजना में काफ़ी प्रगति दिखाई देता है। जयशंकर

---

1. डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय - आधुनिक कहानी का परिपार्श्व - पृ. 87

प्रसाद कृत 'ग्राम' तथा चन्द्रधर शर्मा गुलेरी कृत 'उसने कहा था' इस दृष्टि से उल्लेखनीय कृतियाँ हैं।

प्रेमचंद युगीन हिन्दी कहानी-साहित्य अपनी शिल्पगत नवीनता के कारण पूर्ववर्ती युग से काफी भिन्न ही है। इस युग की कहानियाँ यथार्थवादी धरातल पर लिखी गई हैं। कथानक को गतिशील बनाने तथा चरित्र-चित्रण की सफलता के लिए संवादों का बखूबी प्रयोग होने लगा। कहानी में उपयुक्त वातावरण उपस्थित करके सजीवता लाने की दृष्टि से भी संवादों का महत्व बढ गया। स्वयं प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद का कहानी-साहित्य इसका उत्तम उदाहरण है। अर्थात् संवाद-योजना की बहुआयामी प्रभाव की दृष्टि से प्रेमचंद युगीन कहानियाँ बेजोड़ ही है। उस समय के कई कहानीकारों ने इसका सफल प्रयोग अपनी कहानियों में किया है।

प्रेमचन्दोत्तर युग में आते ही कहानियों का ढाँचा और भी बदल गया। मनोवैज्ञानिक चरित्र-चित्रण पर इस समय के कहानीकार अधिक जागरूक दिखाई पड़ते हैं। इसलिए कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना में भी मनोवैज्ञानिक तत्वों का समावेश हो गए हैं जिसके कारण संवाद अधिक संक्षिप्त, नाटकीय एवं मनोविश्लेषणात्मक बन गये हैं।

सन् 1950 के बाद लिखी गई कहानियों के रूप में फिर भी बदलाव दर्शनीय है उस समय पात्रों से ज़्यादा परिवेश का महत्व बढने के कारण परम्परागत कथा-तत्वों का ह्रास हुआ। कला-संबन्धी कोई निश्चित रूप सामने नहीं आया। इसीलिए संवाद-योजना के प्रयोग में भी पहले की अपेक्षा रूप परिवर्तन नज़र आता

है। फिर भी अमृतलाल नागर, रांगेय राघव, अमृतराय आदि की कहानियों में संवाद-योजना का स्पष्ट प्रभाव मौजूद है। समकालीन कहानियों में आते ही पात्रों की संख्या सीमित होने के कारण संवाद-योजना भी उस सीमित दायरे में प्रयुक्त होने लगा और जो भी संवाद प्रयुक्त हैं, वे भी अति संक्षिप्त, सांकेतिक और पात्रों के मानसिक-स्थिति-सापेक्ष्य बन गए हैं।

तीसरा अध्याय

प्रेमचंद की कहानियों में संवादात्मकता

सारांश - *प्रस्तुत अध्याय में 'मानसरोवर' के आठ भाग तथा 'कफ़न' संग्रह से पचास प्रतिनिधि कहानियाँ चुनकर उनमें प्रयुक्त संवादात्मकता के विभिन्न आयामों का विस्तृत विश्लेषण किया गया है। ये प्रतिनिधि कहानियाँ संवाद तत्त्व के बहुआयामी प्रभाव एवं प्रयोग की दृष्टि से रेखांकित कृतियाँ हैं। इन कहानियों में उन्होंने कथावस्तु के सम्यक् निर्वाह तथा पात्रों की चारित्रिक स्थितियों के अनुसार संवादों की रचना की है। उनके संवादों की भाषा विचारों एवं भावों को रूप देने में सर्वथा उचित ही है। उन्होंने अपनी कहानियों में मानव जीवन की सहज, स्वाभाविक एवं सार्थक अभिव्यक्ति केलिए सरल, सार्थक, संक्षिप्त एवं नाटकीय संवादों के अवसरोचित प्रयोग पर बल दिया है। प्रेमचंद की कहानियों में संवाद योजना द्वारा ही आगामी घटनाओं की सूचना, कथावस्तु की सुसंबद्धता, पात्रोचित चरित्र चित्रण, और उद्देश्य की स्पष्ट जानकारी मिलती है। प्रेमचंदीय संवाद योजना उनकी कलात्मक गरिमा की वास्तविक पहचान है। जहाँ प्रेमचंद के आगमन से पूर्व हिन्दी कहानी साहित्य एक अविकसित एवं गन्धविहीन वाटिका के समान थी तो कहानी जगत में उनके पदार्पण के बाद उनकी पावन कला के पुनीत स्पर्श से वह जाग उठा, खिल उठा और मुस्कुराकर आसपास में अपनी खुशबू बिखेरने लगी। प्रेमचंद की कहानियों की सफलता का रहस्य, आकाश में बिखरे नक्षत्रों की भाँति कहानी के कोने-कोने को प्रकाशित करने वाले उनके उत्कृष्ट संवाद-योजना ही है।*

तीसरा अध्याय
प्रेमचंद की कहानियों में संवादात्मकता

3.1 प्रेमचंद की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

पूर्व प्रेमचंद युग, प्रेमचंद युग और प्रेमचन्दोत्तर युग की हिन्दी कहानियों में प्रयुक्त संवाद-तत्व के क्रमिक विकास की ओर नज़र डालने से पता चलता है कि हिन्दी कहानियों की वास्तविक प्रगति प्रेमचद युग में ही संभव हुआ है। प्रेमचंदयुगीन कहानी साहित्य को कथ्य और शिल्प दोनों प्रकार से विकसित करने वाले दो अमर रचनाकार हैं - प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद। इन दो महान लेखकों की लेखनी से कहानी साहित्य उत्तरोत्तर विकसित हुआ। इसका सीधा प्रभाव तत्कालीन अन्य कहानीकारों में भी दर्शनीय है।

विकास युगीन हिन्दी कहानियों की विभिन्न प्रवृत्तियों का उदाहरण प्रसाद और प्रेमचंद दोनों की कहानी कला के अभिन्न अंग है तो भी एक सफल कहानीकार के रूप में प्रेमचंद का स्थान प्रसाद से कहीं आगे हैं। इसका समर्थन करते हुए एक विद्वान का कहना है कि "कहानीकार के रूप में प्रेमचंद प्रसाद से श्रेष्ठतर है, क्योंकि एक तो उनका परिमाण अत्यधिक है, दूसरे वे जीवन से अधिक परिचित है।"[1] कहने का मतलब यह है कि प्रेमचंद हिन्दी कहानी सम्राट के रूप में ख्याति प्राप्त रचनाकार है। व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनों दृष्टियों से प्रेमचंद वास्तविक जीवन जगत के अत्यधिक परिचित थे। उनकी कहानियाँ अपने समय के संघर्ष को

---

1. डॉ. रामप्रसाद मिश्र - प्रसाद : एक आलोचनात्मक सर्वेक्षण - पृ. 211-212

मुखरित करने वाली है। उनके विशाल कहानी-साहित्य का विवेचन करते हुए 'हिन्दी कहानियों में शिल्पविधि का विकास' नामक पुस्तक में लेखक कहते हैं कि "प्रेमचंद का कहानी साहित्य इतना विशाल और विस्तृत है कि उसमें समूचा युग समा गया है..... एक तरह से वे अपने में स्वयं एक कहानी युग थे, जिसमें हिन्दी कहानियों के सच्चे तत्व अंकुरित हुए व विकसित हुए। प्रेमचंद ने प्राचीन भारतीय चेतना से लेकर प्रायः समस्त आधुनिक पश्चिमी भावधाराओं का अपनी लेखनी में सफल प्रयोग किया है। इनके परवर्ती किसी भी एक कहानीकार में ये सभी विशेषताएँ पायी नहीं जाती।"[1] आलोचकों के इन मतों से यह ज्ञात होता है कि प्रेमचंद कहानी कला के आचार्य थे। कहानी लेखन के काल क्रम के अनुसार प्रसाद का नाम सबसे पहले आता है तो भी कलात्मक श्रेष्ठता की दृष्टि से विचार करने से प्रेमचंद ही सर्वोपरि है।

प्रेमचंद हिन्दी तथा उर्दु दोनों भाषाओं में समान रूप से लगातार कहानियाँ लिखते रहे उनकी हिन्दी में लिखी गई कहानियों को 'मानसरोवर' के आठ-भागों तथा 'कफ़न और शेष रचनाएँ' नामक पुस्तक में संकलित किया गया है। प्रेमचंद की कुछ हिन्दी और उर्दु कहानियों को 'गुप्तधन' के दो भागों में भी संकलित किया गया है। अमृतराय के अनुसार हिन्दी में लिखी गई उनकी कहानियों की कुल संख्या 266 है। प्रेमचंद की पहली कहानी सन् 1907 में 'ज़माना' में प्रकाशित 'संसार का सबसे अनमोल रत्न' है तो भी हिन्दी में प्रकाशित पहली कहानी 'सौत' (1915) है।[2] लेकिन इस बात का खण्डन करते हुए डॉ. गणपति चन्द्रगुप्त जी कहते हैं कि

---

1. डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल - हिन्दी कहानियों में शिल्पविधि का विकास - पृ. 85
2. शंभुनाथ - प्रेमचंद का पुनर्मूल्यांकन - पृ. 162

"सन् 1916 में उनकी हिन्दी में रचित प्रथम कहानी - 'पंच परमेश्वर' प्रकाशित हुई।"[1] इसप्रकार, प्रेमचंद की हिन्दी में लिखी पहली कहानी के विषय में विद्वानों के बीच काफी मतभेद है। प्रस्तुत, अध्याय में प्रेमचंद की 'मानसरोवर' के आठ भागों तथा 'कफ़न ओर शेष रचनाएँ' नामक पुस्तक से प्रतिनिधि कहानियों को चुनकर उनमें प्रयुक्त संवादात्मक के विविध आयामों पर विचार किया गया है।

संवाद या वार्तालाप का कथा साहित्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। पात्र जब अपने भावों और विचारों की अभिव्यक्ति करता है, या किसी घटना या प्रसंग विशेष का वर्णन करता है, तब कथोपकथन या संवाद का आविर्भाव होता है। एक कुशल कहानीकार के हाथ का तेज़ औजार है वास्तव में संवाद योजना। प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य में मानव जीवन की सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति के निमित्त संवादों की विशेषता को स्वीकार किया है। इसका सफल उदाहरण उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना में देखने को मिलता है। इसकी पुष्टि देते हुए 'कहानीकार प्रेमचंद' में लेखिका बताती हैं कि "प्रेमचंद के कहानी-साहित्य में संवाद-तत्व की आयोजना न केवल सफलता पूर्वक हुई, वरन् यह उनकी कहानी कला का एक विशिष्ट आधार है।"[2] कथा साहित्य की गतिशीलता तथा जीवन्तता बहुत कुछ संवादों की स्थिति पर ही निर्भर है। लेकिन प्रत्येक कथाकार में संवादों के प्रभाव एवं प्रयोग की दृष्टि से भिन्नताएँ मौजूद है। क्योंकि शिल्पगत योजना काफी हद तक कहानीकारों के सृजनधर्मी व्यक्तित्व पर आधारित है। इस दृष्टि से

---

1. डॉ. गणपति चन्द्रगुप्त - हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास - पृ. 456
2. कुमारी नूरजहाँ - कहानीकार प्रेमचंद - पृ. 34

भी प्रेमचन्दीय कहानियाँ बेजोड ही है। प्रेमचंद के कथा-साहित्य में संवादों की स्थिति पर अपना विचार व्यक्त करते हुए एक समीक्षक कहते हैं कि "प्रेमचंद के संवादों में एक ओजस्विता है जो समस्याओं और संघर्षों को पाठकों के समकक्ष रखने में सफल होती है। संवाद ही पात्र की क्रिया-कलापों को अभिव्यक्त करते हैं।"[1] आगे कहने की आवश्यकता नहीं है कि प्रेमचंद की कहानियाँ संवाद योजना के अनूठे-सौंदर्य से परिपूर्ण है। उन्होंने अपने कथा साहित्य के अभिन्न अंग के रूप संवादों की प्रभावशाली प्रयोग पर बल दिया है। आगे का अध्ययन इस बात के विस्तृत विश्लेषण पर केन्द्रित है।

3.2 मानसरोवर - भाग-1 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

मानसरोवर भाग-1 में 27 कहानियों को संकलित किया गया है। ये कहानियाँ कालक्रम के अनुसार संकलित नहीं है। इनमें से संवादपरक अध्ययन के लिए सात कहानियों को चुना गया है। वे हैं, ईदगाह, बेटों वाली विधवा, नशा, ठाकुर का कुआँ, घर जमाई, पूस की रात और गुल्ली - डंडा। कारण यह है कि ये कहानियाँ संवाद-तत्व के बहुआयामी प्रभाव तथा लोकप्रियता की दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

ईदगाह - आम आदमी के जीवन को उसकी कटु वास्तविकताओं सहित कहानियों में उभारने में जनता के कथाकार प्रेमचंद अद्वितीय है। 'ईदगाह' कहानी में इस बात की सफल अभिव्यक्ति मिलती है। एक मनोवैज्ञानिक सत्य पर आधारित प्रस्तुत कहानी में हामिद और उसके जीवन का एक मात्र सहारा बूढी दादी अमीना

---

1. कृष्णलाल शर्मा-मेरठ विश्वविद्यालय हिन्दी परिषद शोध पत्रिका (मार्च 1981) - पृ. 177

के जीवन के छोटे-मोटे सुख-दुखों को प्रेमचंद ने बड़ी तल्लीनता के साथ संवादों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। ईदगाह जाने वाले बच्चों की खुशी के वर्णनों के साथ कहानी शुरू होती है। उसके बीच रास्ते में देखे दृश्यों के बारे में बच्चों के मन में उठनेवाले तरह-तरह के विचारों को वाणी देने के लिए छोटे-छोटे संवादों का आश्रय लिया है।[1] ईदगाह से वापस आते वक्त बाकी सारे बच्चों ने मिठाईयाँ और खिलौने खरीदे तो हामिद ने अपने तीन पैसे से बूढी दादी के लिए चिमटा खरीद लिया। हामिद के हाथ में चिमटा देखकर उसकी खिल्ली उठाते हुए साथियों के बीच होने वाले संवाद सचमुच कहानी में आए सबसे मनोरंजक पहलू है। बच्चे अपने द्वारा खरीदे हुए खिलौने और हामिद के चिमटे को लेकर तर्क-वितर्क करने लगे-

"मोहसिन ने हँस कर कहा - यह चिमटा क्यों लाया पगले, इसे क्या करेगा? हामिद ने चिमटे को ज़मीन पर पटक कर कहा - "जरा अपना भिश्ती ज़मीन पर गिरा दो। सारी पसलियाँ चूर-चूर हो जायँ बचा को! महमूद बोला - तो यह चिमटा मोई खिलौना है? हामिद - खिलौना क्यों नहीं है? अभी कंधे पर रखा, बंदूक हो गयी। हाथ में ले लिया, फकीरों का चिमटा हो गया, चाहूँ तो इससे मजीरे का काम ले सकता हूँ। एक चिमटा जमा दूँ, तो तुम लोगों के सारे खिलौनों की जान निकल जाय। तुम्हारे खिलौने कितना ही ज़ोर लगायें, मेरे चिमटे का बाल भी बाँका नहीं कर सकते। मेरा बहादुर शेर है - चिमटा।

सम्मी ने खँजरी ली थी। प्रभावित होकर बोला - "मेरी खँजरी से बदलोगे? दो आने की है। हामिद ने खँजरी की ओर उपेक्षा से देखा - मेरा चिमटा चाहे तो

---

1. प्रेमचंद - ईदगाह - मानसरोवर भाग-1 - 37-38

तुम्हारी खँजरी का पेट फाड़ डाले। बस एक चमड़े की झिल्ली लगा दी, ढब-ढब बोलने लगी। ज़रा-सा पानी लग जाय तो खतम हो जाय। मेरा बहादुर चिमटा आग में, पानी में, आँधी में, तूफ़ान में बराबर डटा खड़ा रहेगा।"[1]

प्रस्तुत संवाद द्वारा प्रेमचंद ने हामिद के जीवन यथार्थ को खोलकर दिखाया है। वास्तव में 'चिमटा' हामिद के ठोस जीवन यथार्थ के प्रतीक बन कर हमारे सामने खड़ा है। क्योंकि यह गरीबी की सबसे निचली रेखा है। संवाद के ज़रिये बालक हामिद की वाक्पटुता तथा यथार्थ को आत्मसात करने की प्रवृत्ति दोनों की सफल अभिव्यक्त पाठकों को मिलते हैं। साथ ही हामिद के चरित्र चित्रण पर भी बल दिया है।

कथा प्रवाह को गतिशील बनाने के लिए भी प्रेमचंद ने संवादों का ही प्रयोग किया है। मोहसिन के साथ हुए संवाद में हामिद का बहादुर चरित्र तथा कथा प्रवाह दोनों की ओर इशारा किया गया है।

मोहसिन को एक नयी चोट सूझ गयी–

"तुम्हारे चमटे का मुँह रोज़ आग में जलेगा। उसने समझा था कि हामिद लाजवाब हो जाएगा; लेकिन यह बात न हुई। हामिद ने तुरंत जवाब दिया–

"आग में बहादुर ही कूदते हैं जनाब, तुम्हारे यह वकील, सिपाही और भिश्ती लेडियों की तरह घर में घुस जायेंगे। आग में कूदना वह काम है, जो यह रुस्तमे - हिंद ही कर सकता है।[2]

---

1. प्रेमचंद - ईदगाह - मानसरोवर भाग-1 - पृ. 43-44
2. वही - पृ. 45

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने खिलौने के सहारे पात्रों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। इस कहानी में पात्रों के मुँह से निकलने वाले संवादों द्वारा ही उनकी मानसिक स्थिति विशेष का उद्‌घाटन किया गया है। बचपन की खुशी और उल्लास को पूरा करने के बजाय अपनी बूढ़ी दादी की सहायता करनेवाले हामिद के वीरता पूर्ण चरित्र की ओर संकेत करने के लिए भी कहानी में आगे अवसरोचित एवं पात्रोचित संवादों का बखूबी प्रयोग किया है। अनजाने ही प्रेमचंद ने हामिद के प्रगतिशील चेतना की ओर भी इशारा किया है। दादी के साथ हुए संवाद इसका सफल उदाहरण है।

'अमीना ने छाती पीट ली।' यह कैसा बेसमझ लड़का है कि दोपहर हुआ, कुछ खाया न पीया। लाया क्या, चिमटा। सारे मेले में तुझे और कोई चीज़ न मिली, जो यह लोहे का चिमटा उठा लाया? हामिद ने अपराधी - भाव से कहा - "तुम्हारी उँगलियाँ तवे से जल जाती थी, इसलिए मैंने उसे लिया।"[1]

प्रस्तुत संक्षिप्त तथा मर्मस्पर्शी संवाद में हामिद का दादी के प्रति स्नेह और आदर भाव दर्शनीय है। हामिद के वीर चरित्र को चित्रित करने के लिए प्रेमचंद ने सब कहीं अवसरानुकूल एवं संक्षिप्त संवादों का ही प्रयोग किया है। चरित्र-प्रधान कहानी होने के कारण कथानक उतना महत्वपूर्ण नहीं हैं, क्योंकि कहानीकार का उद्देश्य पात्र पर ही केन्द्रित है। बच्चों में त्याग, सद्‌भाव, बूढ़ों के प्रति प्यार एवं आदर और आपसी हेल-मेल आदि भावनाएँ जागाने की दृष्टि से कहानी के हर संवाद सारपूर्ण एवं सोद्देश्य है।

---

1. प्रेमचंद - ईदगाह - मानसरोवर भाग-1 - पृ. 45

बेटों वाली विधवा

भारतीय गाँवों के जीवन का वास्तविक चित्रण प्रेमचंद की कहानियों में देखने को मिलता है। शहरी पाठक भी इन कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना के ज़रिये गाँव तथा अंचल विशेष को जानते हैं। संवादों का वैसा प्रभावशाली एवं प्रसंगानुकूल चित्रण अन्यत्र दुर्लभ ही है। 'बेटों वाली विधवा' प्रेमचंद की यथार्थपरक कहानियों में से एक है। इसमें भी मनोवैज्ञानिक सत्य के उद्‌घाटन पर बल दिया है। पति के गुज़र जाने के बाद फूलमती अपने ही घर में परायेपन महसूस करने लगी। इसी यथार्थ के पीछे कहानी के हरेक संवाद एक-एक कडियाँ जोडती हैं। उसकी सफल अभिव्यक्ति शुरू के संवाद में भी मुखरित है।

"वह झमक कर उठी और बड़ी बहू के पास जा कर कठोर स्वर में बोली - "तिजोरी क्यों खोलती हो बहू, मैंने तो खोलने को नहीं कहा?"

बड़ी बहु ने निस्संकोच भाव से उत्तर दिया–

"बाज़ार से सामान आया है, तो दाम न दिया जायगा?"

"कौन चीज़ किस भाव से आयी है, और कितनी आयी है, यह मुझे कुछ नहीं मालूम! जब तक हिसाब-किताब न हो जाय, रुपये कैसे दिये जायँ?"

"हिसाब-किताब सब हो गया है।"

"किसने किया?"

"अब मैं क्या जानूँ किसने किया? जा कर मरदों से पूछो। मुझे हुक्म मिला, रुपये लाकर दे दो, रुपये लिये जाती हूँ।"[1]

प्रस्तुत सहज संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने वैधव्य तथा बुढ़ापे पर होने वाले तिरस्कार मनोभाव को शब्दबद्ध किया है। इसके साथ ही कहानीगत वातावरण में परिवर्तन लाकर कथा को आगे की ओर खींच लाने की दृष्टि से भी संवाद सोद्देश्य निकला है। प्रस्तुत संवाद की दूसरी विशेषता यह है कि प्रेमचंद ने इसमें हिन्दुस्थानी भाषा के सुन्दर प्रयोग पर बल दिया है। अपना जेब भरने की लालसा में रिश्तों का परवाह किए बिना आगे की ओर मोडने वाले स्वार्थी एवं मौके की फायदा उठाने वाले लोगों का सच्चा चित्र प्रेमचंद ने संवादों में उभारा है। इसके लिए घरेलू जीवन में आनेवाली साधारण सी बातों को भी बडे मर्मस्पर्शी रूप में प्रस्तुत किया है। कहानी में कामतानाथ और दयानाथ के बीच होने वाले संवाद इसका सच्चा नमूना है।

कामतानाथ ने निष्टा - भाव से कहा–

"अच्छा घर दहेज देने ही से नहीं मिलता भैया। जैसा तुम्हारी भाभी ने कहा, यह गरीबों का खेल है। मैं तो चाहता हूँ कि मुरारीलाल को जवाब दे दिया जाय और कोई ऐसा घर खोज जाय जो थोड़े में राज़ी हो जाय। इस विवाह में मैं एक हज़ार से ज़्यादा नहीं खर्च कर सकता। पंड़ित दीनदयाल कैसे हैं?"

उमा ने प्रसन्न होकर कहा - "बहुत अच्छे। एम.ए., बी.ए. न सही, यजमानों से अच्छी आमदनी है।

---

1. प्रेमचंद - बेटों वाली विधवा - मानसरोवर भाग-1 - पृ. 71

दयानाथ ने आपत्ति की - "अम्माँ से भी तो पूछ लेना चाहिए।" कामतानाथ को इसकी कोई ज़रूरत न मालूम हुई। बोले - 'उनकी तो जैसे बुद्धि ही भ्रष्ट हो गयी। वही पुराने युग की बातें। मुरारीलाल के नाम पर उधार खाये बैठी हैं। यह नहीं समझती कि वह ज़माना नहीं रहा। उनको तो बस, कुमुद मुरारी पंडित के घर जाय, चाहे हम लोग तबाह हो जाएँ।"[1]

प्रस्तुत भावानुकूल संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने कामतानाथ के निम्न चरित्र को स्वाभाविक रूप में ही वाणी दिया है जिसके सहारे कथानक भी गतिशील हुआ है। प्रेमचंदीय चरित्र चित्रण की सबसे बडी विशेषता यह है कि वह चरित्र चित्रण के लिए घटनाओं या दूसरों की सम्मति का सहारा नहीं लेते बल्कि उनके पात्रों के संवाद खुद उनके चरित्र को अच्छी तरह प्रकट करते हैं। यहाँ उनकी भाषा भावों की अनुगामिनी बनकर साथ देती है। भारतीय समाज में एक विधवा औरत की दर्दनाक स्थिति को समझने के लिए प्रस्तुत संवाद काफी है। कहानी के सारे संवाद चरित्र विधायक एवं सोद्देश्य ही है जिसके जरिये कहानी में गतिशीलता बनाये रखने में प्रेमचंद सफल हुए। बुढ़िया विधवा फूलमती के माध्यम से भारतीय समाज में प्रचलित रूढि बद्धता और अधिकार-चिन्ता दोनों की सफल अभिव्यक्ति प्रेमचंद ने अपने पाठकों को दिया है। संवादों की स्थितियों ने कहानी को सोद्देश्य बनाने में और पात्रों को वाणी देने में सहायक निकला है। उमा का यह कथन इस ओर संकेत देता है–

---

1. प्रेमचंद - बेटों वाली विधवा - मानसरोवर भाग-1 - पृ. 76-77

फूलमती ने संयमित स्वर में कहा–

"अच्छा क्या कानून है, ज़रा मैं भी सुनूँ?

उमा ने निरीह भाव से कहा – कानून यही है कि बाप के मरने के बाद जायदाद बेटों की हो जाती है। माँ का हक केवल रोटी कपड़े का है।"[1]

यहाँ प्रेमचंद ने बदलते पारिवारिक संबन्धों की ओर संवाद द्वारा पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है। साथ ही शीर्षक की ओर भी स्पष्ट संकेत किया गया है। संवादों द्वारा चरित्र के शील और स्वभाव पर प्रकाश डालना प्रेमचंदीय संवाद योजना का कमाल ही है। संवादों के बहुआयामी प्रभाव यहाँ दर्शनीय है। एक कुशल शिल्पी के समान उन्होंने कहानी का अंत भी संवादों की सहायता से ही पाठकों के सामने चित्रित किया है।

लहरों में समा जाने वाली फूलमती को देखकर वहाँ इकट्ठे हुए लोगों के बीच होने वाले संवाद लेखकीय उद्देश्य को साकार बनाया है।

एक ने पूछा – "यह कौन बुढ़िया थी?"

"अरे, वही पंडित आयोध्यानाथ की विधवा है।"

"अयोध्यानाथ तो बड़े आदमी थे?"

"हाँ थे तो; पर इसके भाग्य में ठोकर खाना लिखा था।"

---

1. प्रेमचंद - बेटों वाली विधवा - मानसरोवर भाग-1 - पृ. 72

"उनके तो कई लड़के बड़े-बड़े है और सब कमाते हैं?"

"हाँ, सब हैं भाई, मगर भाग्य भी तो कोई वस्तु है।"[1]

प्रस्तुत संवाद कहानी में लेखकीय उद्देश्य को भली भान्ति प्रकट करने में सर्वथा उचित निकला है। भारतीय पारिवारिक व्यवस्था में आए परिवर्तनों की ओर कहानी के हरेक संवाद संकेत करते हैं। धनलोभ से प्रेरित होकर रिश्तों को ठुकराकर आगे बढ़ने की प्रवृत्ति भारतीय सामाजिक व्यवस्था का अभिन्न अंग बन गया है। इस सत्य की ओर भी कहानी हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं। कहानी के एक भी संवाद अनावश्यक या नीरस नहीं निकला, वरन् पात्रानुकूल एवं अवसरानुकूल बन पडा है।

नशा

भारतीय गाँवों का जीता-जागता चित्रण प्रेमचंद की कहानियों की मूल संवेदना है। किसान-मज़दूर के बीच का संघर्ष तथा उससे उत्पन्न जीवन विसंगतियाँ सामाजिक जीवन में गहरा प्रभाव डालती है। इस बात की सफल अभिव्यक्ति देने वाली एक कहानी है 'नशा'। प्रेमचंद ने 'ईश्वरी' नामक पात्र के माध्यम से ज़मीन्दार वर्ग को समाज में मिलने वाले ऐश एवं सम्मान का सच्चा चित्रण किया है। अपने ज़मीन्दार दोस्त की वजह से मिले क्षणिक सम्मान का दुरुपयोग करने वाले एक व्यक्ति के शील एवं स्वभाव को प्रेमचंद ने वर्णनों एवं संवादों के माध्यम से बडी कुशलता से चित्रित किया है।

---

1. प्रेमचंद - बेटों वाली विधवा - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 88

ज़मीन्दार का लड़का होते हुए भी ईश्वरी के ईमानदार एवं महान चरित्र को आपसी संवादों द्वारा प्रेमचंद ने वाणी दी है।

जब रियासत अली ने ईश्वरी से पूछा–

"यह बाबू साहब क्या आपके साथ पढ़ते हैं?"

ईश्वरी ने जवाब दिया – "हाँ, साथ पढ़ते भी है, और साथ रहते भी हैं। यों कहिए कि आप ही की बदौलत मैं इलाहाबाद पड़ा हुआ हूँ, नहीं कब का लखनऊ चला आया होता। अबकी मैं इन्हें घसीट लाया। इनके घर से कई तार आ चुके थे; मगर मैं ने इनकारी-जवाब दिलवा दिए। आखिरी तार तो अर्जेंट था, जिसकी फीस चार आने प्रति शब्द है, पर यहाँ से उसका भी जवाब इनकारी ही गया।"[1]

उपर्युक्त संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने ईश्वरी के महान चरित्र को वाणी देने के साथ-साथ दोनों मित्रों के बीच की गाढ मैत्री को भी उजागरित किया है। दूसरों के सामने अपने दोस्त के इज्जत को कायम रखने वाले ईश्वरी के चरित्र की महानता को स्थापित करना ही यहाँ प्रेमचंदीय उद्देश्य था। पात्र एवं चरित्र पर केन्द्रित इस कहानी में 'मैं' पात्र के निम्न चरित्र को दिखाने के लिए भी संवादों का ही इस्तेमाल किया है।

एक दिन ईश्वरी के अभाव में लैम्प न जलाने के सिलसिले में 'मैं' पात्र द्वारा रियासत अली पर गुस्सा करते हुए जो संवाद है, वह सचमुच उसकी ज़मीन्दारी नशे को खोलकर दिखाते हैं।

---

1. प्रेमचंद - नशा - मासरोवर - भाग- - पृ. 116

"तुम लोगों को इतनी फ़िक्र भी नही कि लैम्प तो जलवा दो! मालूम नही, ऐसे कामचोर आदमियों का यहाँ कैसे गुज़र होता है मेरे यहाँ घंटे-भर निर्वाह न हो।"[1]

मुफ़्त में मिली इज़्ज़त के नशे में पड़कर स्वयं को भूलने वाले 'मैं' पात्र की चरित्रहीनता की ओर प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने संकेत किया है। यहाँ संवाद संक्षिप्त तथा प्रसंगानुकूल भाषा में प्रयुक्त होने के कारण सोद्देश्य निकला है। प्रेमचंदीय भाषा भावों की अनुगामिनी बनकर उनके कहानीगत उद्देश्य को साकार बनाने में हमेशा सफल ही है। कहानी के अन्त में 'मैं' पात्र के ज़मीन्दारी नशे का तीव्र रूप आपसी संवाद योजना द्वारा ही चित्रित किया है। गाड़ी में गट्ठर बाँधकर आए आदमी पर बिना कोई कारण तमाचे मारने वाले 'मैं' पात्र और यात्रियों के बीच के संवाद में उसकी चरित्रहीनता साफ़ नज़र आती है।

उसने आँखें निकाल कर कहा - "क्यों मारते हो बाबूजी, हमने भी किराया दिया है।" मैंने उठ कर दो-तीन तमाचे और जड़ दिये। गाड़ी में तूफ़ान आ गया। चारों ओर से मुझपर बौछार पड़ने लगी।

अगर इतने नाजुक मिजाज हो, तो अव्वल दर्जे में क्यों नहीं बैठे?

"कोई बड़ा आदमी होगा तो अपने घर का होगा। मुझे इस तरह मारते तो दिखा देना।"

---

1. प्रेमचंद - नशा - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 119

'क्या कसूर किया था बेचारे ने! गाड़ी में साँस लेने की जगह नहीं, खिड़की पर ज़रा साँस लेने खड़ा हो गया तो उस पर इतना क्रोध! अमीर होकर क्या आदमी अपनी इन्सानियत बिलकुल खो देता है?

"यह भी अँगरेजी राज है, जिसका आप बखान कर रहे थे।"

एक ग्रामीण बोला–

"दफ्तरू माँ घुस पावत नहीं, उस पै इत्ता मिज़ाज।"[1]

लेखकीय उद्देश्य की पूर्ण अभिव्यक्ति यहाँ पाठकों को मिलती है। पूरी कहानी पात्र के मनोभावों पर आधारित होती है। कहानी के अन्य तत्वों के स्पष्टीकरण के लिए भी प्रेमचंद ने संवादों के अवसरानुकूल एवं सटीक प्रयोग पर बल दिया है जिसके कारण कहानी की प्रभावोन्नति बढ़ गई है।

ठाकुर का कुआँ

प्रेमचंद की घोर यथार्थपरक कहानियों में एक है 'ठाकुर का कुआँ' कहानी। भारतीय गाँवों की दर्दनाक स्थिति और उस गरीबी के बीच छुआछूत, धार्मिक पाखण्ड आदि को झेलने के लिए विवश, अनपढ और बेचारे लोगों की ज़िन्दगी की ओर प्रेमचंद ने इस कहानी के माध्यम से प्रकाश डाला है। श्री. सनतकुमार ने इस कहानी का नाट्य रूपान्तर प्रेमचंद के जन्म शताब्दी वर्ष, 1980 में किया था। घोषणा और अत्याचार पर आधारित सामाजिक व्यवस्था का भयावह

---

1. प्रेमचंद - नशा - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 121

रूप दर्शाने वाली प्रस्तुत कहानी के हरेक संवाद उसकी ओर संकेत देने वाली हैं। जीने के लिए परम आवश्यक पानी के लिए तरसने वाले बीमार जोखू तथा उसकी निस्सहाय पत्नी गंगी के वार्तालाप से ही कहानी शुरू होती है। वास्तव में कहानीगत उद्देश्य की ओर भी यहाँ स्पष्ट संकेत पाठकों को मिलता है। पात्र से ज़्यादा कथानक पर बल देने के कारण संवादों द्वारा कथावस्तु तथा तत्कालीन वातावरण की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है।

"जोखू ने लोटा मुँह से लगाया तो पानी में सख्त बदबू आयी। गंगा से बोला - "यह कैसा पानी है? मारे बास के पिया नहीं जाता। गला सूखा जा रहा है और तू सड़ा पानी पिलाये देती है।"[1]

यहाँ जोखू उन तमाम वर्ग वैषम्य से पीडित दलित लोगों की प्रतिनिधि बनकर पूछ रहा है। ये सवाल गंगा के माध्यम से वह सामाजिक व्यवस्था के ठेकेदारों से करता है जो इसके ज़िम्मेदार है। वर्ग तथा जाति के आधार पर मनुष्य-मनुष्य में दीवार खड़ा करने वाले व्यवस्थाजन्य विसंगतियों के खिलाफ़ प्रस्तुत संवाद द्वारा प्रेमचंद आवाज़ उठाते हैं। कहानी की मूलभूत समस्या-पीने योग्य पानी की कमी है जिसकी सफल अभिव्यक्ति यहाँ हुई है। इसके उपरान्त प्रेमचंद उन लोगों की ओर संकेत करते है जो आम जनता तथा उनकी ज़िन्दगी को पैरों के नीचे दबा कर रखते हैं। मानवीय हक से वंचित ऐसे लोगों के पक्षधर बनकर वह पाठकों को इस अन्याय के खिलाफ लडने की प्रेरणा देता है।

---

1. प्रेमचंद - ठाकुर का कुआँ - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 139

गंगा बोली - यह पानी कैसे पियोगी? न जाने कौन जानवर मरा है। कुएँ से मैं दूसरा पानी लाये देती हूँ।

जोखू ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा–

"दूसरा पानी कहाँ से लायेगी?"

"ठाकुर और साहू के दो कुएँ तो हैं। क्या एक लोटा पानी न भरने देंगे?"

"हाथ-पाँव तुड़वा आयेगी और कुछ न होगा। बैठ चुपके से। ब्राह्मण-देवता आशीर्वाद देंगे, ठाकुर लाठी मारेंगे, साहूजी एक के पाँच लेंगे। गरीबों का दर्द कौन समझता है। हम तो मर भी जाते हैं, तो कोई दुआर पर झाँकने नहीं आता कंधा देना तो बडी बात है। ऐसे लोग कुएँ से पानी भरने देंगे?"[1]

पानी की समस्या तथा गरीबों पर दया न दिखाने वाले ठाकुर तथा साहू के चरित्र के ओर भी प्रेमचंद ने प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रकाश डाला गया है। दो व्यक्तियों के आपसी संवाद द्वारा तीसरे आदमी या अन्य बातों की ओर संकेत देना वास्तव में प्रेमचंदीय संवाद योजना की एक खास विशेषता है। जोखू और गंगा के बीच के वार्तालाप द्वारा ही साहू और ठाकुर के अन्यायों की ओर संकेत किया गया है। दोनों पति-पत्नी के शब्दों में वर्ग-भेद से उत्पन्न दयनीय जीवन यथार्थ की अभिव्यक्ति प्रतिबिम्बित है। प्रेमचंदीय उद्देश्य की पूर्ती प्रस्तुत संवाद में देखने को मिलता है। एक युग-द्रष्टा साहित्यकार होने के कारण उनकी दृष्टि हमेशा अपने युगीन सामाजिक परिस्थितियों की ओर केन्द्रित रहती थी प्रस्तुत कहानी इस बात का सच्चा उदाहरण है।

---

1. प्रेमचंद - ठाकुर का कुआँ - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 139

घर जमाई

यह प्रेमचंद की पारिवारिक समस्या पर केन्द्रित एक यथार्थपरक कहानी है जिसमें ग्रामीण व्यवस्थाजन्य कुछ बेमेल परिस्थितियों की ओर प्रकाश डाला गया है। इसमें चरित्र तथा कथानक दोनों का समान महत्व है। इसलिए संवादों में कथानक तथा पात्र दोनों के विकास की सूचनाएँ स्पष्ट परिलक्षित है। कहानी के आरंभ में ही, पत्नी तथा उसके घरवालों के लिए सारी संपत्ति बरबाद करने के बावजूद भी पराया जीवन जीने के लिए आभिशप्त हरिधन की दयनीय ज़िन्दगी की ओर संवादों द्वारा ध्यान आकर्षित किया गया है। उसी के साथ कथानक के विकास की सूचनाएँ भी पाठकों को मिलते हैं। खेत में दिन भर जी तोड मेहनत करके थक्के हारे घर पहूँचे तो भूख मिटाने का सौभाग्य भी उसके नसीब में नहीं लिखा था। सबके पेट भरने के बाद भी उसे खाने के लिए बुलाया नहीं गया। इन सब बातों की ओर सास तथा हरिधन के बीच होने वाले संवाद से संकेत किया गया है।

उसकी सास आकर बोली – "यहाँ तुम्हारे नखरे सहने का किसी में बूता नहीं है। जो देने हो वह मत देना और क्या करोगे! तुमसे बेटी ब्याही है, कुछ तुम्हारी ज़िन्दगी का ठीक नहीं लिया है।"

हरिधन ने मर्माहत होकर कहा - "हाँ अम्माँ, मेरी भूल थी कि मैं यही समझ रहा था। अब मेरे पास क्या है कि तुम मेरी ज़िन्दगी का ढीका लोगी। जब मेरे पास भी धन था तब सब कुछ आता था। अब दरिद्र हूँ, तुम क्यों बात पूछोगी।"[1]

---

1. प्रेमचंद - घर जमाई - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 144

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये हरिधन और सास के चरित्र उद्‌घाटित होने के साथ पूर्व कथा की ओर भी स्पष्ट इशारा किया गया है। इससे कहानीगत वातावरण की जानकारी पाठकों को मिलता है। हरिधन के प्रति जो घृणा भाव पत्नी तथा घरवालों के मन में है, प्रस्तुत संवाद के हरेक शब्द में उसका प्रतिफलन दिखाई देता है। कहानी को आगे की ओर खींच लाने की क्षमता भी इस संवाद में निहित है। हरिधन के साले लोगों के बीच होने वाले संवाद इस दृष्टि से उल्लेखनीय है।

बड़े साले ने कहा - "हम लोगों की बराबरी करते हैं। यह नहीं समझते कि किसी ने उनकी ज़िन्दगी भर का बीड़ा थोड़े ही लिया है। दस साल हो गए। इतने दिनों में क्या - दो तीन हज़ार न हड़प गये होंगे?"

छोटे साले बोलो - "मजूर हो तो आदमी घुड़के भी, डाँटे भी, अब इनसे कोई क्या कहे। न जाने इनसे कभी पिंड छूटेगा भी या नहीं। अपने दिल में समझते होंगे, मैं ने दो हज़ार रुपये नहीं दिये हैं? यह नहीं समझते कि उनके दो हज़ार कब के उड़ चुके। सवा सेर तो एक जून को चाहिए।

सास ने गंभीर भाव से कहा - बड़ी भारी खोराक है।

गुमानी माता के सिर से जूँ निकाल रही थी। सुलगते हुए हृदय से बोली - निकम्मे आदमी को खाने के सिवा और काम ही क्या रहता है।

बड़े - "खाने की कोई बात नहीं है।"

जिसकी जितनी भूख हो उतना खाय लेकिन कुछ पैदा भी करना चाहिए। यह नहीं समझते कि पहनाई में किसी के दिन कटे हैं।

छोटे - मैं तो एक दिन कह दूँगा, अब आप अपनी राह लीजिए, आपका करजा नहीं खाया है।"[1]

उपर्युक्त संवाद के ज़रिये प्रेमचंद कहानी को अभीष्ट की ओर मोड़ने में सफल हुए है। इस प्रकार के संवाद कहानी को जीवन्त बनाने में तथा कथावस्तु की सफल अभिव्यक्ति के लिए बहुत उपयोगी है। कहानी में आद्यन्त हरिधन की दयनीय स्थिति को उद्घाटित करने के लिए प्रेमचंद ने संवादों का ही बखूबी प्रयोग किया है। पत्नी और उसके घरवालों के अत्याचार सहते-सहते एक दिन वह अपना प्रतिशोध तीखे स्वर में व्यक्त किया है। 'हरिधन ने देखा, इन दोनों के कदम उखड़ गये हैं, तो एक धक्का और देने की प्रबल इच्छा को रोक न सका। उसी ढंग से बोला - "मेरी भी आँखें हैं, अंधा नहीं हूँ, न बहरा ही हूँ। छाती फाड कर काम करूँ और उस पर भी कुत्ता समझा जाऊँ; ऐसे गधे कहीं और होंगे।"[2]

यहाँ हरिधन के शब्दों में उसके प्रति परिवार के अन्य सदस्यों का भाव स्पष्ट दिखाई देता है। हरिधन का मानसिक अन्तर्द्वन्द्व एवं आक्रोश को संवाद के ज़रिए कहानीकार प्रेमचंद ने बाहरी अभिव्यक्ति दी।

कहानी के अन्त में हरिधन की बदली मानसिकता की ओर भी संवाद द्वारा ही संकेत किया गया है। जब गुमानी के दूसरे विवाह की बात काकी ने हरिधन को सुनाया तो वह यों जवाब देता है–

---

1. प्रेमचंद - घर जमाई - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 146-147
2. वही - पृ. 148

"नहीं काकी, बहुत अच्छा हुआ। ला, महबीर जी को लड्डू चढ़ा आऊँ। मैं तो डर रहा था, कही मेरे गले न आ पड़े। भगवान ने मेरी सुन ली। मैं वहाँ से यही ठान कर चला था, अब उसका मुँह न देखूँगा।"[1]

इस छोटे और स्वाभाविक संवाद वास्तव में हरिधन के जीवन को एक नयी राह से आगे बढ़ने की सूचना देता है। यह कहानी को शुभ परिणति की ओर ले जाने में सर्वथा उपयुक्त रहा है। कहानी की आकर्षणीयता बढ़ाने की दृष्टि से भी प्रस्तुत नाटकीय संवाद सहायक हुआ है।

पूस की रात

'पूस की रात' प्रेमचंद की लोकप्रिय कहानियों में से सबसे प्रभावशाली कहानी है। कहानी के शिल्प सौंदर्य को एक कदम आगे बढ़ाने में संवाद की महत्वपूर्ण इकाई को द्योतित करनेवाली प्रस्तुत कहानी आद्यन्त संवादों के इर्दगिर्द घूमती रहती है। प्रयुक्त संवादों के प्रभाव के कारण कहानी की लोकप्रियता एवं प्रासंगिकता आज भी वैसा का तैसा ही है।

कहानी के पाठकों के जबान में आज भी इसके संवाद चक्कर काटती रहती है।

छोटे-छोटे शब्दों से युक्त संक्षिप्त से संवाद कहानी की प्रेषणीयता बढाने में भी सहायक रहा है। कहानी का आदि और अन्त, हल्कू और पत्नी के वार्तालाप से ही संपन्न हुआ है। कहानी की शुरुआत, वर्णित मुख्य समस्या के पर्दाफाश से होता है।

---

1. प्रेमचंद - घर जमाई - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 154

हल्कू और पत्नी के आपसी वार्तालाप इसकी ओर संकेत देता है।

हल्कू ने आकर स्त्री से कहा–

"सहना आया है, लाओ, जो रुपये रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे।"

मुन्नी झाड़ू लगा रही थी। पीछे फिर कर बोली–

"तीन ही तो रुपये हैं; दे दोगे तो कम्बल कहाँ से आवेगा? माघ-पूस की रात हार में कैसे कटेगी। उससे कह दो फसल पर दे देंगे। अभी नहीं।"[1]

प्रस्तुत आरंभिक संवाद से ही प्रेमचंद ने कथावस्तु को संक्षिप्त रूप से पाठकों के मन में बिठाया। परस्पर गुंथे हुए इस संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने चरित्र संबन्धी जानकारी पाठकों को दिया है। हल्कू के शब्दों में उसकी आर्थिक मज़बूरी तथा सत्यनिष्ठा का परिचय पाठकों को मिलता है। यहाँ हल्कू और मुन्नी के कथन द्वारा प्रेमचंद ने भारतीय अभाव ग्रस्त किसानों की दयनीय स्थिति की ओर ध्यान आकर्षित किया है। इस कहानी में पात्रों की मानसिक स्थिति या संघर्ष को दिखाने के लिए भी कहानीकार ने संवादों का बखूबी प्रयोग किया है। मुन्नी के कथन में उसकी सफल अभिव्यक्ति दर्शनीय है।

"मैं कहती हूँ, तुम क्यों नही खेती छोड देते? मर-मर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई। बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जनम हुआ है। पेट के लिए मज़ूरी करो। ऐसी खेती से बाज आये। मैं रुपये न दूँगी - न दूँगी।"[2]

---

1. प्रेमचंद - पूस की रात - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 154
2. वही - पृ. 155

यहाँ मुन्नी के संवाद द्वारा उसके चरित्र संबन्धी व्याख्या प्रस्तुत करने के साथ प्रेमचंद ने बडी नाटकीयता से उसके मानसिक हलचलों एवं अन्तर्द्वन्द्वों की ओर भी संकेत किया है। छोटे-छोटे - शब्दों से युक्त होने के कारण संवाद बडा मर्मस्पर्शी एवं स्वाभाविक बन पड़ा है। पात्रों के मुँह से निकलनेवाले शब्दों से ही प्रेमचंद ने उनके चरित्र संबन्धी व्याख्या पाठकों को दी है।

हल्कू का चरित्र कहानी के आद्यन्त, भारतीय अभावग्रस्त किसान का प्रतिनिधि बनकर मुँह खोलते हैं। जीवन पर्यन्त मानवीय सुख-सुविधाओं से वंचित भारतीय किसान की मुक्ति की लड़ाई प्रेमचंद का लेखकीय उद्देश्य बनकर कहानी का रूप ले लिया है।

जाडे से ठिठुरते समय हल्कू जबरा को संकेत करते हुए कहते हैं कि–

"....किसी तरह रात तो कटे! आठ चिलम तो पी चुका। यह खेती का मज़ा है। और एक-एक भगवान ऐसे पडे हैं; जिनके पास जाड़ा जाय तो गरमी से घबड़ा कर भागे। मोटे-मोटे गद्दे, लिहाफ़ कम्बल। मजाल है, जाडे का गुजर हो जाय। तकदीर की खूबी है। मजूरी हम करें, मजा दूसरे लूटें!"[1]

यहाँ भी हल्कू की आवाज़ उन तमाम निस्सहाय, दरिद्रनारायणों के मन की आवाज़ बन जाती। हल्कू के अभिशप्त किसानी जीवन की गूँज संवाद मुखरित करता है। कहानी के अंत में नीलगायों द्वारा सारे खेत का रौंदा पड़ा होना, जबरा का मडैया के नीचे चित लेटा पडा होना और मुन्नी के मुख पर उदासी का घिरना

---

1. प्रेमचंद - पूस की रात - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 156

आदि प्रतिकूल परिस्थितियों को भी प्रेमचंद ने दोनों पति-पत्नी के आपसी संवादों द्वारा शब्दबद्ध किया है। किसान की दारुण आर्थिक स्थिति जो उसे मजूरी में सुख पाने को विवश करती है, इस की ओर भी मुन्नी के माध्यम से आवाज़ उठाई गई।

अब मजूरी करके मालगुजारी भरनी पडेगी।

हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा - "रात को ठंड में यहाँ सोना तो न पडेगा।"[1]

कहानी का मर्म प्रस्तुत संवाद में छिपी रहती है। वास्तव में इस अंतिम कथन में कहानी की जान है जो लेखकीय उद्देश्य की ओर ध्यान खींच लेता है। किसान से मज़दूर बनने की मनोवैज्ञानिक यात्रा को प्रेमचंद ने प्रस्तुत हृदयस्पर्शी एवं मार्मिक संवाद के ज़रिये चित्रित किया है। यहाँ मुन्नी के उद्‌गार में भविष्य की आकुलता सहज एवं स्वाभाविक रूप से दर्शनीय है। कहानी के अन्त में प्रेमचंद जान बूझकर नीलगायों को भगाता नहीं, क्योंकि उनका वास्तविक उद्देश्य, भारतीय किसान की मज़बूरी को खोलकर दिखाना था। कहानी के हरेक संवाद पात्रोचित एवं सोद्देश्य ही था। परस्पर संबन्ध रखनेवाले संवादों के उपयुक्त प्रयोग कहानी की प्रेषणीयता बढ़ाने में काफी हद तक सहायक रहा है। इस के बारे में 'प्रेमचंद और उनका युग' नामक पुस्तक में लेखक बताते हैं कि – "पात्र को उसकी पृष्ठभूमि के साथ थोडे-से शब्दों में आँख देने की यह खूबी प्रेमचंद की कला की सफलता का रहस्य है।"[2]

---

1. प्रेमचंद - पूस की रात - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 160
2. डॉ. रामविलास शर्मा - प्रेमचंद और उनका युग - पृ. 113

प्रस्तुत मत सचमुच सारगर्भित ही है। इस प्रकार की संवाद-योजना कहानी को सजीव तथा परसंवेद्य बनाने में सहायक है। आदर्श के स्थान पर एक प्रकार से तार्किकता आ जाने से कहानी शिल्प में नवीनता दिखाई देता है।

गुल्ली-डंडा

यह प्रेमचंद के रचना काल के शुरुआती दौर में लिखी गई एक कहानी है जिसमें ग्रामीण अंचल की जीवन चर्चा को मनोवैज्ञानिक धरातल पर चित्रित किया गया है। एक तरह से देखने पर, एक वाक्य का दूसरे वाक्य की पृष्ठभूमि बन जाना, और कथोपकथन से कथोपकथन निकालना, इस समय की कहानियों के संवादों की एक खास विशेषता है। जिसका सीधा प्रभाव इस कहानी में भी पायी जाती है। विवरण से शुरू होकर भी बीच-बीच में संवादों का अवसरानुकूल प्रयोग कहानी की रोचकता बढाती है। ये संवाद कथा वस्तु को आगे बढ़ाने में सर्वथा उचित हुआ है। दोनों दोस्तों के आपसी वार्तालाप, उनके बचपन और बाल मन की ओर संकेत देता है।

"हाँ! मेरा दाँव दिये बिना कहीं नहीं जा सकते।"

"मैं तुम्हारा गुलाम हूँ?"

"हाँ, मेरे गुलाम हो।"

"मैं घर जाता हूँ, देखूँ मेरा क्या कर लेते हो।"

"घर कैसे जाओगे, कोई दिल्लगी है, दाँव दिया है, दाँव लेंगे।"

"अच्छा कल मैंने अमरूद खिलाया था। वह लौटा दो।"

"वह तो पेट में चला गया।"

"निकालो पेट से, तुमने क्यों खाया मेरा अमरुद?"

"अमरुद तुमने दिया, तब मैं ने खाया, मैं तुमसे माँगने न गया था।"

"जब तक मेरा अमरूद न दोगे, मैं दाँव न दूँगा।"[1]

प्रस्तुत संवाद में दोनों मित्रों की चारित्रिक विशेषताएँ प्रकट होने के साथ गाँव की जीवन परिस्थितियों और ग्रामीण खेल-कूदों के बारे में जानकारी भी प्रतिबिम्बित है। बाद में, जब दोनों मित्र आपस में मिलते हैं तो उन्हीं के मुँह से निकलते शब्दों के सहारे कथावस्तु में आए परिवर्तन की सूचना पाठकों को देता है।

गया ने झुककर सलाम किया – हाँ मालिक, भला पहचानूँगा क्यों नहीं! आप मज़े में रहे? बहुत मज़े-में! तुम अपनी कहो?

"डिप्टी साहब का साईस हूँ।"

मतई, मोहन, दुर्गा सब कहाँ? कुछ खबर है?

"मतई तो मर गया, दुर्गा और मोहन दोनों डाकिये हो गये हैं। आप?"

"मैं तो जिले का इंजीनियर हूँ।"

"सरकार तो पहले ही बड़े ज़हीन थे।"[2]

---

1. प्रेमचंद - गुल्ली - डंडा - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 170
2. वही - पृ. 172

यहाँ आगामी घटनाओं की ओर स्पष्ट संकेत मिलने के साथ पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं की ओर भी इशारा किया गया है। कहानी के हरेक संवाद चरित्रांकन की दृष्टि से सफल एवं सहज है।

"मैं ने कुछ उदास होकर कहा - "लेकिन मुझे तो बराबर तुम्हारी याद आती थी। तुम्हारा वह डंडा, जो तुमने तान कर जमाया था, याद है न। गया ने पछताते हुए कहा - वह लड़कपन था सरकार उसकी याद न दिलाओ। वाह। वह मेरे बाल-जीवन की सबसे रसीली याद है। तुम्हारे उस डंडे में जो रस था, वह तो अब न आदर-सम्मान में पाता हूँ न धन में। कुछ ऐसी मिठास थी उसमें कि आज तक उससे मन मीठा होता रहता है।"[1]

उपर्युक्त संवाद चरित्रांकन की दृष्टि से सफल है। उसी के साथ ग्रामीण संस्कृति तथा उसकी मिठास को भी प्रेमचंद ने जीवन्त बनाया है। बचपन की मीठी यादों को जीवन में सबसे अनमोल स्थापित करने की एक कोशिश प्रस्तुत संवाद में छिपी रहती है। प्रेमचंद ने सचमुच उसे अनोखा स्थापित किया है। कहानी की प्रेषणीयता बढ़ाने की दृष्टि से संवाद उत्तम कोटि का बन गया है।

कहानी के अन्त में, 'मैं' पात्र के मुँह से स्वकथन द्वारा प्रेमचंद ने उस मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्‌घाटन किया है कि मनुष्य की चारित्रिक रवैया पद या आदर - सम्मान पर आधारित नहीं है, बल्कि मानसिक शक्ति एवं बल पर आधारित है।

"वह बड़ा हो गया है, मैं छोटा हो गया हूँ।"[2]

---

1. प्रेमचंद - गुल्ली - डंडा - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 173
2. वही - पृ. 177

इसप्रकार पूरी कहानी में, अवसरोचित एवं संक्षिप्त संवाद योजना द्वारा प्रेमचंद ने सजीवता और रोचकता लाया है। कथावस्तु से लेकर उद्देश्य तक उसकी सफल अभिव्यक्ति दर्शनीय है। ग्रामीण जन जीवन को उन्होंने इस छोटी कहानी में प्रयुक्त संवादों के माध्यम से श्रेष्ठ तथा मूल्यवान घोषित किया है।

3.3 मानसरोवर - भाग-2 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

मानसरोवर के दूसरे भाग में छब्बीस (26) कहानियाँ संकलित है। उनमें से प्रतिनिधि कहानियों के रूप में खुदाई फौजदार, चमत्कार, मिस पद्मा, दो बैलों की कथा, दूध का दाम, और जादु कहानियों को चुना गया है। इन कहानियों में प्रयुक्त संवादात्मकता के विभिन्न आयामों के विश्लेषणात्मक अध्ययन आगे किया जा रहा है।

खुदाई फौजदार

प्रेमचंद की विचार-प्रधान कहानियों में से एक है 'खुदाई फौजदार' जिसमें यथार्थ और आदर्श दोनों अभिव्यक्त हुआ है। सेठजी और सेठानी के वार्तालाप से ही कथावस्तु का क्रमिक विकास होता है। अधर्म के रास्ते से इकट्ठे किये गये संपत्ति के नष्ट होने की व्याकुलता एवं उनके मानसिक उथल-पुथल को भी कहानीकार प्रेमचंद ने पति-पत्नी के आपसी संवादों के ज़रिये प्रकट किया है।

सेठजी को दिलासा देते हुए बोले – "तुम नाहक इतना डरती हो केसर, आखिर वे सब भी तो आदमी है, अपनी जान का मोह उन्हें भी है, नहीं तो यह कुकर्म ही क्यों करते? मैं खिड़की की आड से दस बीस आदमियों को गिरा

सकता हूँ। पुलिस को इत्तला देने भी जा रहा हूँ। पुलिस का कर्तव्य है कि हमारी रक्षा करे। हम दस हज़ार सालाना टैक्स देते हैं, किस लिए? मैं अभी दारोगाजी के पास जाता हूँ। जब सरकार हमसे टैक्स लेती है, तो हमारी मदद करना उनका धर्म हो जाता है।"[1]

कथावस्तु का क्रमिक विकास होने के साथ पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं की ओर भी प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने इशारा किया है। सेठ जी के शब्दों में संपत्ति के नष्ट होने का भय और आकांक्षा गूंजती है। आगे कथा के दूसरे मोड की जानकारी भी संवाद योजना के अनूठे कमाल से ही प्राप्त होता है।

"हमें तो ऐसे रास्ते चलना है कि साँप मरे और लाठी न टूटे। इसलिए दारोगाजी ने आपसे यह अर्ज करने को कहा कि आपके पास जोखिम की जो चीज़ें हो, उन्हें लाकर सरकारी खजाने में जमा कर दीजिए। आपको उसकी रसीद दे दी जायगी। ताला और मुहर आप ही की रहेगी। जब यह हंगामा ठण्डा हो जाय तो मँगवा लीजिएगा..."[2]

उपर्युक्त संवाद योजना द्वारा कथा प्रवाह को एक नयी गति प्राप्त हुई है। साथ ही आगामी घटनाओं की ओर स्पष्ट संकेत भी मिलता है। कहानी के बीच-बीच में सेठ जी की विह्वलता और परेशान मन को व्यक्त करने के लिए छोटे-छोटे संवादों का बखूबी प्रयोग हुआ है जिसके ज़रिये कहानी की प्रेषणीयता बढ़ गयी है।

---

1. प्रेमचंद - खुदाई फौजदार - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 28
2. वही - पृ. 31

सेठजी के मन में एक सन्देह उठा। पूछा – "खजाने की कुंजी तो मेरे ही पास रहेगी?"

"और क्या, यह तो मैं पहले ही अर्ज कर चुका, मगर यह सवाल आपके दिल में क्यों पैदा हुआ?"

यों ही पूछा था - "सेठजी लज्जित हो गए।"[1]

सेठजी के लालच एवं संपत्ति के नष्ट होने का भय दोनों की अभिव्यक्ति यहाँ संवाद मुखरित करता है। इस प्रकार की संदेह भरी कई संवादों का प्रयोग कहानी में इधर-उधर बिखरी पडी है जिससे कहानी गतिशील होती रहती है। सेठजी के चरित्र चित्रण की झाँकी पाठकों को आपसी संवाद योजना के सहारे ही मिलते हैं।

'आपके कोई औलाद हुई ही नहीं।' भाग्य में न थी खाँ साहब और क्या कहूँ! जिनके घर में भूनी भाँग नहीं है, उनके यहाँ घासफूस की तरह बच्चे ही बच्चे देख लो; जिन्हें भगवान ने खाने को दिया है, वे सन्तान के कान मुँह देखने को तरसते हैं।

आप बिलकुल ठीक कहते हैं, सेठजी! जिन्दगी का मज़ा सन्तान से है। जिसके आगे अंधेरा है, उसके लिए धन-दौलत किस काम का?"[2]

हेड के प्रस्तुत कथन द्वारा प्रेमचंद ने कहानीगत उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति पाठकों को दिया है। कहानी से संबन्धित सारे तत्वों की अभिव्यक्ति के लिए प्रेमचंद

---

1. प्रेमचंद - खुदाई फौजदार - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 33
2. वही - पृ. 34

ने सारगर्भित, अवसरोचित संवाद योजना का ही सहारा लिया है। धन दौलत के पीछे पागल होकर भागने वाली आधुनिक पीढ़ी के नव जवानों को ज़िन्दगी का असली मज़ा सिखाना ही प्रेमचंद का वास्तविक उद्देश्य था जिसकी ओर प्रयुक्त संवाद योजना द्वारा उन्होंने स्पष्ट संकेत दिया है। कहानी सभी दृष्टियों से नवीन एवं प्रासंगिक प्रतीत होती है।

चमत्कार

यह प्रेमचंद की आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहानियों में प्रमुख कहानी है। कहानी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पूरी कहानी सरल, संक्षिप्त, सारपूर्ण और प्रभावशाली संवादों से ही आगे बढ़ती है। कहानी में प्रकाश नामक पात्र जो कहानी का नायक है, उसके चारों ओर सारी घटनाएँ घटित होती है। प्रकाश की चारित्रिक विशेषताओं को उद्‌घाटित करने के लिए पात्रोचित संवाद योजना के अवसरोचित प्रयोग पर बल दिया है। कहानी में वर्णित कथावस्तु का विकास वीरेन्द्र की माँ और प्रकाश के साथ के संवाद से शुरू होता है। साथ ही आपसी संबन्धों की जानकारी भी पाठकों को मिलते हैं। उसे भीतर ले जाकर रमा देवी ने कहा - "तुम्हारी क्या सलाह है, बीरन का ब्याह कर दूँ? एक बहुत अच्छे घर से सन्देसा आया है।

प्रकाश ने मुस्करा कर कहा - "यह तो बीरू बाबा से पूछिए।"

नहीं मैं तुमसे पूछती हूँ।

प्रकाश ने असमंजस में पड़कर कहा - मैं इस विषय में क्या सलाह दे सकता हूँ? उनका बीसवाँ साल तो है; लेकिन यह समझ लीजिए कि पढ़ना हो चुका।

"तो अभी न करूँ, यही सलाह है?"

"जैसा आप उचित समझें। मैं ने तो दोनों बातें कह दी।"

"तो कर डालूँ? मुझे यही डर लगता है कि लड़का कही बहक न जाय।"

"मेरे रहते इसकी तो आप चिन्ता न करें।"

"हाँ इच्छा हो, तो कर डालिए। कोई हरज भी नहीं है।"

"सब तैयारियाँ तुम्हीं को करनी पडेगी - यह समझ लो।"

"तो मैं इनकार कब करता हूँ।"[1]

उपर्युक्त संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने वीरेन्द्र के पारिवारिक मामलों में प्रकाश के मान-सम्मान को संक्षिप्त रूप में व्यक्त किया है। इस प्रकार के संवाद, वास्तव में वह कड़ी है जो पाठक और कहानी को एक माला में गूँथती है।

प्रकाश और चम्पा के बीच जेवर की खरीदी को लेकर हुए संवाद से वातावरण की ओर इशारा करने के साथ चरित्र चित्रण पर भी बल दिया गया है।

घर आकर चम्पा से बोला - "हम तो कहाँ रोटियों के मोहताज है और दुनिया में ऐसे-ऐसे आदमी पडे हुए हैं, जो हज़ारों लाखों रुपयों के जेवर बनवा

---

1. प्रेमचंद - चमत्कार - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 55

डालते हैं। ठाकुर साहब ने आज बहु के लिए पाँच हज़ार के जेवर खरीदे। ऐसी-ऐसी चीज़ें कि देखकर आँखें ठण्डी हो जायँ। सच कहता हूँ, बाज चीज़ों पर तो आँख नहीं ठहरती थी।

चम्पा ईर्ष्या जनित विराग से बोली–

"उँह, हमें क्या करना है? जिन्हें ईश्वर ने दिया है, वे पहने। यहाँ तो रो-रोकर मरने के लिए ही पैदा हुए हैं।

चन्द्रप्रकाश :- "इन्हीं लोगों की मौज है। न कमाना, न धमाना। बाप-दादा छोड गए हैं, मजे से खाते और चैन करते हैं इसी से कहता हूँ, ईश्वर बड़ा अन्यायी है।[1]

उपर्युक्त संवाद दोनों पात्रों के चरित्र खोल कर दिखाते हैं। साथ ही घटना-विकास में सहायक होते हैं। प्रेमचंदीय संवाद योजना की एक खास विशेषता यह है कि वह घटना क्रम में संवाद द्वारा परिवर्तन लाने में सिद्ध हस्त रचनाकार है। प्रकाश के घर की आर्थिक परिस्थिति और उसी बीच उसके भविष्य की कामनाओं को व्यक्त करने के लिए भी अवसरोचित संवाद योजना का सहारा लिया है।

प्रकाश ने तसल्ली दी - "साड़ी तुम्हारे लिए अवश्य लाऊँगा। अब क्या इतना भी न कर सकूँगा? मुसीबत के ये दिन क्या सदा बने रहेंगे? जिन्दा, रह तो एक दिन तुम सिर से पाँव तक जेवरों से लदी रहेगी।"[2]

प्रकाश के मन का दृढ़ संकल्प, भविष्य की उज्ज्वल कामना और दयनीय आर्थिक स्थिति को भी संवाद पाठकों के सामने मुखरित करते हैं। पात्रों के चरित्र

---

1. प्रेमचंद - चमत्कार - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 55
2. प्रेमचंद - चमत्कार मानसरोवर - भाग-2 - भाग-2 - पृ. 56

में आने वाले परिवर्तनों की ओर ये संवाद सीधा प्रकाश डालते है। बाद में घटित घटनाओं की जानकारी भी संवाद के जरिए पाठक गण जान लेते हैं। चोरी का पता चम्पा के शब्दों में अनावृत होते हैं। उससे उत्पन्न प्रकाश की मानसिक विह्वलता, भय आदि को भी दोनों के आपसी संवाद द्वारा शब्दबद्ध किया है। कहानी के अंत में, वीरेन्द्र के मुँह से ही चोरी के माल वापस मिलने की जानकारी प्रेमचंद ने अपने पाठकों को दिया है। वास्तव में प्रेमचंदीय संवाद शिल्प बहुआयामी प्रभावशाली है जिसके उपयुक्त प्रयोग से प्रेमचंद ने अपनी कहानियों को जीवन्त बनाया है। वीरेन्द्र के मुँह से निकले कथन से इस की पुष्टि होती है।

वीरेन्द्र उसे देखते ही खुश होकर कहा - "बाबूजी, कल आपके यहाँ की दावत बडी मुबारके थी। जो गहने चोरी गए थे, सब मिल गए।

ठाकुर साहब भी आ गए और बोले–

"बडी मुबारक दावत थी तुम्हारी पूरा संदूक का संदूक मिल गया। एक चीज़ भी नहीं धुई। जैसे केवल रखने के लिए ले गया हो।"[1]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने अपने आदर्शवाद का बड़ा ही मनोरंजक चित्रण संवादों के ज़रिये सफलतापूर्वक किया। कहानी का अंत भी इसका समर्थन करता है।

"मुझे इतना आनंद हो रहा है कि लाखों खर्च करने पर भी अरमान पूरा न होगा।"

---

1. प्रेमचंद - चमत्कार - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 65

प्रकाश की आँसू आँखों से भी निकल आए।[1]

इस अंतिम वाक्य में प्रेमचंदीय आदर्श की सफलता पूर्वक स्थापना हुई। कहानी के आद्यन्त संवादों के मायाजाल से ही उन्होंने पूरी कथा को अपने उद्देश्य तक पहुँचाया। यही उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद योजना का कमाल है जो उनकी कहानियों को अव्वल दर्जा प्रदान करती है।

मिस पद्मा

'मिस पद्मा' प्रेमचंद की यथार्थपरक कहानियों में एक है जिसमें वैवाहिक जीवन तथा उससे उत्पन्न तनावपूर्ण स्थिति से जूझने वाली नारी की समस्या को उजागर किया गया है। समाज में स्त्री की दोयम दर्जा तथा प्रेम के क्षेत्र में उसका जो दुरुपयोग हो रहा है। उसका खुलासा प्रेमचंद ने इसमें किया है। कहानी मिस पद्मा के जीवन के चारों ओर घूमती रहती है।

पद्मा द्वारा अपने बँगले में आकर रहने के प्रस्ताव पर उसे नकारती हुई प्रसाद का कथन वास्तव में उसके चरित्र को उभारने में सहायक सिद्ध होते हैं।

"मैं अपनी स्वतन्त्रता न खोना चाहूँगा, तुम अपनी स्वतन्त्रता न खोना चाहोगी। तुम्हारे पास तुम्हारे आशिक आएँगे, मुझे जलन होगी। मेरे पास मेरी प्रेमिकाएँ आएँगी, तुम्हें जलन मनमुटाव होगा, फिर वैमनस्य होगा और तुम मुझे घर से निकाल दोगी। घर तुम्हारा है ही। मुझे बुरा लगेगा ही, फिर यह मैत्री निभाएगी?"[2]

---

1. प्रेमचंद - चमत्कार - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 66
2. प्रेमचंद - मिस पद्मा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 82

उपर्युक्त संवाद दोनों पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उद्‌घाटित करने के साथ कहानीगत मुख्य समस्या की ओर भी पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हैं। इस प्रकार कहानी के आगे भी मिस पद्‌मा के तनावपूर्ण जिन्दगी से जुडी सारे क्रिया कलापों की ओर प्रेमचंद ने पात्रोचित संवादों के ज़रिये इशारा किया है। इन संवादों को प्रभावशाली बनाने के लिए उन्होंने छोटे-छोटे शब्दों या वाक्यांशों का प्रयोग किया है जिसके ज़रिये कहानी को अभीष्ट की ओर आसानी से मोड दिया। कहानी में स्वाभाविकता और यथार्थता का समावेश इस प्रकार के संवादों द्वारा होता है।

"तुम यह प्रतिज्ञा करोगे?"

"पहले तुम बताओ।"

"मैं करूँगी।"

"तो मैं भी करूँगा।"

"मगर इस बात के सिवा मैं और सभी बातों में स्वतन्त्र रहूँगी।"

"और मैं भी इस एक बात के सिवा हर बात में स्वतन्त्र रहूँगा।"

"मंज़ूर।"

"तो कब से?"

"जब से तुम कहो।"

"मैं तो कहती हूँ कल ही से।"

"तय है; लेकिन अगर तुमने इसके विरुद्ध आचरण किया तो?"

"अगर तुम किया तो?"

"तुम मुझे घर से निकाल सकती हो; लेकिन मैं तुम्हें क्या सजा दूँगा?"

"तुम मुझे त्याग देना, और क्या करोगे?"

"जी नहीं, तब इतने से चित्त को शान्ति न मिलेगी। तब मैं चाहूँगा तुम्हें जलील करना, बल्कि तुम्हारी हत्या करना।"

"तुम बड़े निर्दयी हो प्रसाद।"[1]

इस नाटकीय एवं भावात्मक संवाद से कहानी में गतिशीलता एवं प्रवाहशीलता आ गई है। कथावस्तु का ढाँचा बदलकर कथा को आगे की ओर खींच लाने तथा पाठकों में कुतूहलता जगाने की दृष्टि से भी संवाद उपयुक्त ही है।

घर में स्वामी बनने के लिए आए प्रसाद को पद्मा ने अपने जीवन का स्वामी बनाया और दासी सदृश्य सेवा करने लगी। मगर थोडे ही दिनों में रिश्तों में दरार इतना बढ़ गया है कि पद्मा उसे असुन्दरता की मूर्ति प्रतीत होने लगी। इसकी ओर भी प्रेमचंद ने संवादों के ज़रिये प्रकाश डाला।

"मैंने तुम्हारे हाथ अपने को बेचा नहीं है। अगर तुम्हारा जी मुझसे भर गया हो तो मैं आज जाने को तैयार हूँ।"

"तुम जाने की क्या धमकी देते हो? यहाँ तुमने आकर कोई बड़ा त्याग नहीं किया है।"

---

1. प्रेमचंद - मिस पद्मा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 82-83

"मैंने त्याग नहीं किया है? तुम यह कहने का साहस कर रही हो। मैं देखता हूँ, तुम्हारा मिज़ाज़ बिगड रहा है। तुम समझती हो, मैं ने इसे अपंग कर दिया। मगर मैं इसी वक्त तुम्हें ठोकर मारने को तैयार हूँ। इसी वक्त।"[1]

प्रस्तुत संवाद दोनों की बदली हुई मानसिकता को खोलकर दिखाता है। पारिवारिक संबन्धों में आए दरार को इतने सशक्त रूप में अभिव्यक्त करना केवल प्रेमचंद के वश की बात है। सब कहीं उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद कहानी तथा पात्रों को नक्षत्रों की भान्ति प्रकाशित करते हैं।

दो बैलों की कथा

यह प्रेमचंद की आदर्शपरक कहानियों में एक है जिसके माध्यम से किसानों और पशुओं के आपसी भावात्मक संबन्धों का जीवन्त एवं स्वाभाविक चित्रण किया गया है। हीरा और मोती के माध्यम से प्रेमचंद 'स्वतन्त्रता सभी का जन्मसिद्ध अधिकार है' - इस लोक सत्य की ओर ज़ोर दिया है। कहानी के आरंभिक संवाद से प्रेमचंद ने हीरा और मोती के पारस्परिक संबन्ध और उनके प्रति झुरी के मनोभावों का चित्रण किया है। इसके लिए उन्होंने दूसरों के वार्तालाप का सहारा लिया है।

एक बालक ने कहा – "ऐसे बैल किसी के पास न होंगे।"

दूसरे ने समर्थन किया - "इतनी दूर से दोनों अकेले चले आये।"

---

1. प्रेमचंद - मिस पद्मा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 85

तीसरा बोला – "बैल नहीं है वे, उस जनम के आदमी है।" इसका प्रतिवाद करने का किसी को साहस न हुआ।"[1]

वहाँ उपस्थित बालकों के बीच के ये वार्तालाप से हीरा एवं मोती की समझदारी और सद्‌भाव की ओर प्रेमचंद ने पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है। आगे के संवाद द्वारा झूरी की चारित्रिक विशेषताओं की ओर इशारा किया। साथ ही झूरी की पत्नी के मनोभावों को भी चित्रित किया।

'झूरी की स्त्री ने बैलों को द्वार पर देखा, तो जल उठी। बोली - "कैसे नमक हराम बैल हैं कि एक दिन वहाँ काम न किया; भाग खड़े हुए।"

झुरी अपने बैलों पर यह आक्षेप न सुन सका –

नमक हराम क्यों है? चारा-दाना न दिया होगा, तो क्या करते?

स्त्री ने रोब के साथ कहा बस तुम्हीं तो बैलों को खिलाना जानते हो, और तो सभी पानी पिला-पिलाकर रखते हैं।

झुरी ने चिढ़ाया – "चारा मिलता तो क्यों भागते?"

स्त्री चिढ़ी - भागे इसलिए कि वे लोग तुम जैसे बुद्धुओं की तरह बैलों को सहलाते नहीं। खिलाते हैं, तो रगड़कर जोतते भी हैं। ये दोनों ठहरे कामचोर, भाग निकले। अब देखूँ, कहाँ से खली और चोकर मिलता है। सूखे भूसे के सिवा कुछ न दूँगी, खाएँ चाहे मरे।"[2]

---

1. प्रेमचंद - दो बैलों की कथा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 131
2. वही - पृ. 131

उपर्युक्त संवाद कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। इसके ज़रिये कथावस्तु का विकास, चरित्र-चित्रण तथा कहानीगत वातावरण में आए परिवर्तन की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है। इस प्रकार की संवाद योजना प्रेमचंद के सृजनधर्मी कहानीकार व्यक्तित्व की पहचान है।

हीरा और मोती प्यार के बन्धन में बँधे होते हुए भी दोनों के स्वभाव में काफी अन्तर विद्यमान है। इस बात की ओर भी संवाद योजना द्वारा इशारा किया गया है।

'लाठियाँ लेकर आए आदमियों को देखकर मोती बोला - कहो तो दिखा दूँ कुछ मज़ा में भी? लाठी लेकर आ रहा है।

हीरा ने समझाया - नहीं भाई! खड़े हो जाओ।

"मुझे मारेगा, तो मैं भी एक-दो को गिरा दूँगा?"

"नहीं। हमारी जाति का यह धर्म नहीं है।"[1]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये हीरा की समझचारी चरित्र एवं मोती का झगडालू प्रकृति दोनों का परिचय पाठकों को मिलता है। गया के घर में जो छोटी लड़की है, उसकी दया और प्यार से दोनों बैल बहुत अधिक प्रभावित थे। गया पर सींग से हमला करने का मोती के प्रस्ताव को हीरा तिरस्कार करता है। कहानी में बाए विकासों की ओर भी प्रेमचंद ने आपसी संवाद योजना द्वारा प्रकाश डाला।

---

1. प्रेमचंद - दो बैलों की कथा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 132

एक दिन मोती ने मूक भाषा में कहा – "अब तो नहीं सहा जाता, हीरा।"

"क्या करना चाहते हो?"

"एकाध को सीगों पर उठाकर फेंक दूँगा।"

"लेकिन जानते हो, वह प्यारी लड़की, जो हमें रोटियाँ खिलाती है, उसी की लड़की है, जो इस घर का मालिक है, वह बेचारी अनाथ न हो जाएगी?"

"तो मालकिन को न फेंक दूँ? वही तो उस लड़की को मारती है।"

"लेकिन औरत जात पर सींग चलाना मना है, यह भूले जाते हो।"

"तुम तो किसी तरह निकलने ही नहीं देते।"

"तो बताओ, आज रस्सी तुड़ाकर भाग चलें?"

"हाँ, यह मैं स्वीकार करता हूँ; लेकिन इतनी मोटी रस्सी टूटेगी कैसे?"

"इसका एक उपाय है। पहले रस्सी को थोड़ा-सा चबा लो। फिर एक झटके में जाती है।"[1]

यहाँ संवाद योजना एक साथ कई बातों का स्पष्टीकरण देते हैं। एक तो कथावस्तु में परिवर्तन की सूचना मिलते हैं, दूसरा चरित्र पर बल दिया और तीसरा गया के घर में दुख भोगने वाली उस छोटी लड़की की दयनीय स्थिति का वर्णन इन तीनों संवादों में मुखरित है। इस कहानी में आगामी घटनाओं की सूचना देकर कथानक को गतिशील बनाने के लिए प्रेमचंद ने संवादों का बखूबी प्रयोग किया है।

---

1. प्रेमचंद - दौ बैलों की कथा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 133

"औरत जात पर सींग चलाना मना है, यह भूल जाते हो।" इस कथन द्वारा प्रेमचंद ने तत्कालीन समाज में गिरते नैतिक मूल्यों को पुनरुज्जीवित करने का सफल प्रयास किया है। स्त्री-समाज में सम्मान के पात्र है अपनी इस विचारधारा को प्रेमचंद ने यहाँ उजागर किया है। हीरे का चरित्र दरअसल प्रमचंदीय विचारधारा की ओर संकेत देता है।

'हडबड़ाकर भागते समय दोनों बैल रास्ता भूल गए।"

हीरा ने कहा - "मालूम होता है, राह भूल गए।

"तुम भी बेहताश भागे। नहीं उसे मार गिरना था।"

"उसे मार गिराते तो दुनिया क्या कहती?"

वह अपना धर्म छोड़ रे, लेकिन हम अपना धर्म क्यों छोडें?.....[1]

तत्कालीन धर्मनिरपेक्ष समाज को धर्म की आवश्यकता समझाने के लिए प्रेमचंद ने हीरा-मोती की कहानी द्वारा इस कहानी में कई नीति विषयक बात छोड दी है। जब साँड पर बार करने मोती आगे बढ़ता है तो हीरा ने उन्हें यों समझाया -

"गिरे हुए बैरी पर सींग न चलाना चाहिए।"[2]

तत्कालीन समाज में होने वाले मूल्य शोषण के विरुद्ध प्रेमचंद इसप्रकार अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते थे। आम आदमी ये सब के बीच जीने के लिए संघर्ष कर रहे थे। उसकी ओर भी हीरा-मोती के ही क्रियकलापों, व वार्तालाप का सहारा

---

1. प्रेमचंद - दौ बैलों की कथा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 134
2. वही - पृ. 135

लिया है। काँजीहौस से भाग निकलने का उपाय सोचते हुए दोनों बैलों का संवाद इस ओर प्रकाश डालते हैं।

मोती ने पड़े-पड़े कहा - "आखिर मार खाई, क्या मिला?"

अपने बूते भर ज़ोर से मार लिया।

"ऐसा ज़ोर मारना किस काम का कि और बंधन में पड़ गए।"

"ज़ोर तो मारता ही जाऊँगा, चाहे कितने ही बंधन पड़ते जाएँ।"

"जान से हाथ गोना पड़ेगा।"

"कुछ परवाह नहीं, यों भी तो मरना ही है।

"सोचो, दीवार खुद जाती, तो कितनी जाने बच जाती। इतने भाई यहाँ बन्द हैं। किसी की देह में जान नहीं है। दो-चार दिन और यही हाल रहा तो सब मर जाएँगे।"

"हाँ, यह बात तो है। अच्छा, तो फिर मैं भी ज़ोर लगाता हूँ।"[1]

प्रस्तुत संवाद द्वारा प्रेमचंद ने हार न मानने वाले जनता के संघर्ष चेतना एवं साहस की ओर संकेत किया है। निस्वार्थ भाव से, संगठित मुक्ति की ओर यहाँ प्रेमचंद प्रकाश डालते हैं। इसीलिए तो प्रेमचंद ने गधों को सींग मार-मारकर बाहर निकालने की चेष्टा करती है। सहजीवी के प्रति स्नेह, दया, भाईचारा आदि सदभावों को जमाने की दृष्टि से भी संवाद सफल निकला है।

---

1. प्रेमचंद - दौ बैलों की कथा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 136

कहानी के डाल में अपने उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति देने के लिए भी उचित संवाद योजना का ही इस्तेमाल किया गया है। आपसी प्यार तथा भाईचारे का महत्व और स्वामी भक्ति दोनों का सुंदर संयोजन करके प्रेमचंद ने कहानी को सोद्देश्य बनाया है।

हीरा ने कहा - "मैं डर रहा था कि कहीं तुम गुस्से में आकर मार न बैठो।"

"अगर वह मुझे पकडता, तो मैं वे मारे न छोड़ता।"

"अब न आएगा।"

"आएगा तो दूर ही से खबर लूँगा। देखूँ, कैसे ले जाता है।"

"जो गोली मरवा दो?"

"मर जाऊँगा, पर उसके काम तो न आऊँगा।"

"हमारी जान को कोई जान ही नहीं समझता।"

"इसलिए कि हम इतने सीधे होते हैं।"[1]

दोनों बैलों के दृढ़ संकल्प और अपने मालिक के प्रति विश्वास एवं पशुओं के विशेषकर बैलों से प्रति लोगों के मन में जो हीन भावना है, उस ओर भी प्रेमचंद ने प्रस्तुत संवाद द्वारा इशारा किया है। दोनों बैलों के वार्तालाप से प्रेमचंद ने कृषकों की जिजीविषा और मुक्ति की लालसा को शब्दबद्ध किया है।

---

1. प्रेमचंद - दौ बैलों की कथा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 139

साथ ही वह यह भी बताना चाहते हैं कि पशु-पक्षी संवेदनशील एवं मानवीय करुणा के पात्र हैं। भूख से बेहाल रहते समय भी स्वतन्त्रता के लिए परिवर्तन के लिए उनमें अपार ताकत छिपी रहती है। यह कहानी उस ताकत का खुलासा कर देती है।

दूध का दाम

दलित जीवन की सार्थक अभिव्यक्ति देने वाली एक सशक्त कहानी है - "दूध का दाम।" जीवन पर्यन्त समाज के ताकतवर उच्च वर्ग के नफरत और शोषण के शिकार बनकर अभिशप्त जीवन बिताने वाले दलितों की दयनीय ज़िन्दगी का एक संवेदनात्मक चित्र कहानी पाठकों के सामने उपस्थित करते हैं। शोषण का रूप इतना कठोर हो गया है कि अपनी मीठी-मीठी बातों से दलित माँ के दूध से बच्चे को पालने वाले महाजन, उस माँ के बच्चे को झूठे भोजन देने से इनकार भी करते हैं। आपसी संवाद द्वारा ही इसकी सफल अभिव्यक्ति पाठकों को दिया है।

मालकिन कहती - "भूँगी, हमारे बच्चे को पाल दे, फिर जब तक तू जिए, बैठी खाती रहना। पाँच बीधे माफी दिलवा दूँगी। नाता - पोते तक चैन करेंगे।

और भूँगी कहती - 'बहूजी, मूँडन में चूड़े लूँगी, कहे देती हूँ।

बहूजी उत्तर देती - "हाँ-हाँ, चूडे लेना भाई, धमकाती क्यों है? चाँदी के लेगी या सोने के?

वाह बहूजी। चाँदी के चूड़े पहन के किसे मुँह दिखाऊँगी और किसकी हँसी होगी?"

अच्छा, सोने के लेना भाई, कह तो दिया।"

"और ब्याह में कण्ठा लूँगी और चौधरी (गूदड़) के लिए हाथों के तोड़े।"

"वह भी लेना, भगवान् वह दिन तो दिखाए।"[1]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने समाज में दलितों के वास्तविक जीवन का नंगा चित्र पाठकों के सामने उपस्थित किया है। समाज चाहे जितने भी बदल जाए, मगर दलितों की मुक्ति टेढ़ी खीर हैं। प्रेमचंद ने इस सच्चाई को महेशनाथ के कथन के ज़रिये खुलासा किया है।

"दुनिया में ओर चाहे जो कुछ हो जाय, भँगी - भँगी ही रहेंगे।

इन्हें आदमी बनाना कठिन है।"[2]

समाज की मुख्य धारा से कटे हुए पददलित होकर हरदम शोषण का चक्की में पिसने वाले भँगी-चमारों के जीवन की मुक्ति दूर दराज़ की चीज़ है। इस कटु सामाजिक यथार्थ की ओर प्रेमचंद ने संकेत किया है। फिर भी उनमें परिवर्तन की माँग करनेवाले युवा पीढ़ी के उदय की सूचना प्रेमचंद आगे के संवादों में दे रहे हैं। भँगी के पुत्र मंगल के मन की उद्विग्नता, एवं प्रतिरोध की भावना को प्रेमचंद ने वामी दिया है। मंगलबाबू साहब के लड़के सुरेश को घोड़ा बनकर ढ़ोने से इन्कार कर देता है। खेल में बराबर का हिस्सा माँगते हुए वह कहता है–

---

1. प्रेमचंद - दूध का दाम - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 172
2. वही - पृ. 172

"मैं कब कहता हूँ कि मैं भंगी नहीं हूँ, लेकिन तुम्हें मेरी ही माँ ने दूध पिलाकर पाला है। जब तक मुझे भी सवारी करने को न मिलेगी, मैं घोड़ा न बनूँगा। तुम लोग बड़े चघड़ हो। आप तो मज़े से सवारी करेंगे और मैं घोडा ही बना रहूँगा।"[1]

समाज की उच्च वर्गीय मानसिकता और उसके विरुद्ध सजग होने वाले दलित युवा पीढ़ी, दोनों की सफल अभिव्यक्ति प्रस्तुत संवाद उजागर करती है। वास्तव में दलित मानसिकता में अंकुरित होने वाले मौन प्रतिशोध का स्वर यहाँ मंगल के शब्दों में गूँज उठती है। वह मानवीय समभावना से जीना चाहता है। समाज के संपन्न उच्च वर्ग से लेकर नौकर तक दलितों का मुँह देखना अशुभ मानते हैं।

"नौकरों में बातचीत हो रही थी। एक ने कहा - आज मंगलवा नहीं दिखाई देता। मालकिन ने डाँटा था, इससे भागा है साइन।"

दूसरे ने जवाब दिया - "अच्छा हुआ, निकाल दिया गया। सबेरे-सबेरे भंगी का मुँह देखना पड़ता था।"[2]

प्रेमचंद ने प्रस्तुत संवाद द्वारा, दलितों के प्रति तत्कालीन सामाजिक दृष्टिकोण की ओर इशारा किया गया है। व्यवस्था में आमूल परिवर्तन की माँग अनजाने ही इस संवाद के पीछे छिपी रहती है। कहानी के अंत में प्रेमचंद ने यह घोषित किया है कि "भूख से बढ़कर और कोई बडा दुख नहीं है" इसकी सार्थक

---

1. प्रेमचंद - दूध का दाम - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 175
2. वही - पृ. 178

अभिव्यक्ति के निमित्त उन्होंने मंगल के वार्तालाप का आयोजन किया है। साथ तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था की विद्रुपताओं की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है।

भूख से पीड़ित एवं निस्सहाय होकर मंगल अपने एक मात्र सहारा टामी कुत्ते के साथ कहार से मिली थाली का जूठन पेड के नीचे बैठकर खाने लगा।

मंगल ने एक हाथ से टामी का सिर सहलाकर कहा - "देखा, पेट की आग ऐसी होती है। यह लात की मारी हुई रोटियाँ भी न मिलती, तो क्या करते?"

टामी ने दुम हिला दी।

'सुरेश को अम्मा ने पाला था।'

टामी ने फिर दुम हिलाई।

"लोग कहते हैं, दूध का दाम कोई नहीं चुका सकता और मुझे दूध का यह दाम मिल रहा है।"

टामी ने फिर दुम हिलाई।"[1]

मंगल के इस कथन द्वारा प्रेमचंद ने दलित जीवन की वास्तविक स्थिति को खुलकर चित्रित किया है। प्रस्तुत संवेदनात्मक चित्रण यथार्थ एवं स्वाभाविक होने के साथ शीर्षक की सफल अभिव्यक्ति देती है। दूध का दाम चुका नहीं जा सकता। भूख की आग के सामने मंगल सचमुच हार जाता है। मानव का मानव बने

---

1. प्रेमचंद - दूध का दाम - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 179

रहना उसकी जीत है। इस अर्थ में भी यहाँ मंगल हार जाता है। टामी कुत्ते का दुम हिलाना भी एक अर्थ में, परिवर्तन हीन, प्रतिशोध विहीन, सामाजिक व्यवस्था की कुरूपताओं को खोल कर दिखाता है।

इस प्रकार सारगर्भित, मार्मिक एवं सोद्देश्य संवाद योजना के ज़रिये प्रेमचंद ने इस कहानी को परसंवेद्य बनाया है। यहाँ प्रेमचंदीय संवाद भाषा के कमाल से कहानी ज़्यादा प्रभावशाली बन गयी है।

जादू

प्रेमचंद की कहानियों में तृतीय चरण (1930-36) में लिखी गई कहानियाँ कथोपकथनों पर ही अवस्थित है। इसकी कहानियाँ पहले की अपेक्षा नाटकीय बन गई है। 'जादू' कहानी इस मायने में खरा उतरती है। इस कहानी में घटना के माध्यम से नहीं, केवल पात्रों के वार्तालाप से पूरी कहानी का ढाँचा निर्मित किया है। कहानी का प्रारंभ, मध्य और अन्त सार्थक संवादों से ही पूर्ण अभिव्यक्ति पाती है।

दो नारी पात्र आपस के वार्तालाप से कथा का संकेत देती है। कथा-विकास एवं कार्य व्यापारों की ओर भी उन्हीं के संवाद द्वारा प्रकाश डाला गया है। कहानी के अन्य सभी तत्वों के विकास एवं बाहरी अभिव्यक्ति भी संवादों के ज़रिये ही हुआ है। दोनों पात्रों के संवाद के बिना दूसरा कोई भी शब्द इस कहानी में नहीं है। कहानी कला का यह अद्‌भुत नमूना प्रेमचंद में ही पायी जाती है। कहानी का आरंभिक संवाद ही इसका समर्थन करता है।

"नीला - तुमने उसे क्यों पत्र लिखा? मीना - किसको?

"उसी को"

"मैं नहीं समझी।"

"खूब समझती हो। जिस आदमी ने मेरा अपमान किया, गली-गली मेरा नाम बेचता फिरा, उसे तुम मुँह लगाती हो, क्या यह उचित हो?"

"तुम गलत कहती हो।"

"तुम उसे खत नहीं लिखा?"

"कभी नहीं"

"तो मेरी गलती थी, क्षमा करो, तुम मेरी बहिन न होती, तो मैं तुमसे यह सवाल भी न पूछती।"[1]

उपर्युक्त संवाद में कहानीकार का मन्तव्य स्पष्ट है। नाटकीय, एवं छोटे-छोटे शब्दों से युक्त इस संक्षिप्त संवाद कहानी में रोचकता, उत्सुकता एवं प्रभावोत्पादकता लाने की दृष्टि से सफल एवं सार्थक है। कहानी में वर्णित परिस्थिति की तीव्रता को बनाये रखने की दृष्टि से भी संवाद का महत्व है। प्रेमचंदीय संवाद-शिल्प एक साथ कई बातों की पुष्टि करती है। कहानी को गतिशील बनाने के साथ पात्रों की मानसिक स्थितियों का भी उद्‌घाटन संवाद द्वारा संपन्न होता है।

"लो कहती हूँ, मैं ने उन्हें पत्र लिखा, फिर तुमसे मतलब? तुम कौन होती हो, मुझसे जवाब-तलब करने वाली?"

---

1. प्रेमचंद - जादू - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 264

"अच्छा किया लिखा, सचमुच मेरी बेवकूफी थी कि मैं ने तुमसे पूछा।"

"हमारी खुशी, हम जिसको चाहेंगे, खत लिखेंगे। जिससे चाहेंगे, बोलेंगे। तुम कौन होती हो रोकने वाली? तुमसे तो मैं नहीं पूछने जाती; हालाँकि रोज़ तुम्हें पुलिन्दों को पत्र लिखने देखती हूँ।"

"जब तुमने शर्म ही भून खायी, तो जो चाहे करो अख्तियार है।"[1]

प्रस्तुत संवाद सचमुच पात्रों के मनोभावों तथा चरित्र को स्पष्ट करते हैं। स्वाभाविकता और सांकेतिकता से युक्त यह संवाद कहानी को प्रेषणीय बनाने में सहायक निकला है। इस प्रकार के संवाद शिल्प द्वारा कहानी में गतिशीलता आती है। संवादों में पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व भी मुखरित है।

"यहाँ तक नौबत पहुँच गई। और तू कह रही थी, मैं ने उसे पत्र नहीं लिखा और कसमें खा रही थी?"

"क्यों अपने दिल का हाल बतलाऊँ?"

"मैं तो तुमसे पूछती न थी; मगर तू आप ही आप बक चली।"

"तुम मुस्करायी क्यों?"

इसलिए कि वह शैतान तुम्हारे साथ भी वही दगा करेगा, जो उसने मेरे साथ किया और फिर तुम्हारे विषय में भी वैसी ही बातें कहता फिरेगा। और फिर तुम मेरी तरह उसके नाम को रोओगी।"

---

1. प्रेमचंद - जादू - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 265

"तुमसे उन्हें प्रेम नहीं था।"

"मुझसे? मेरे पैरों पर सिर रखकर रोता था, और कहता था कि मैं मर जाऊँगा और ज़हर खा लूँगा।"

"सच कहती हो?"

"बिलकुल सच।"

"यही तो मुझसे भी कहते हैं।"

'सच?"

"तुम्हारे सिर की कसम।"

"और मैं, समझ रही थी, अभी वही दाने बिखेर रहा है।"

"क्या वह सचमुच.....?"

"पक्का शिकारी है।"

"मीना सिर पर हाथ रखकर चिन्ता में डूब जाती है।"[1]

प्रस्तुत स्वाभाविक एवं नाटकीय संवाद द्वारा सचमुच कहानी का मर्म उद्‌घाटित हुआ है। अभिनयात्मक ढंग से प्रस्तुत प्रभावशाली संवाद के जरिये प्रेमचंद ने पात्रों के शील और स्वभाव पर प्रकाश डाला। कहानी के संवाद एक तीसरे अनुपस्थित पात्र की चारित्रिक विशेषताओं को खोलकर दिखाता है। यहाँ संवाद द्वारा ही कहानीगत सभी तत्वों का पर्दाफाश होते हैं। अर्थात, संवादों के इर्द-

---

1. प्रेमचंद - जादू - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 266

गिर्द ही कहानी का ढाँचा बनाया गया है। कहीं भी कोई अनावश्यक शब्द प्रयुक्त नहीं है। संक्षिप्तता एवं नाटकीय अभिनयात्मक पद्धति के ज़रिये पात्रों के आपसी संवाद योजना द्वारा पूरी कथा कही गई है।

3.4 मानसरोवर - भाग-3 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

मानसरोवर भाग-3 में 32 कहानियाँ संकलित हैं। उनमें से संवाद-तत्व की दृष्टि से कहानियाँ चुनकर उनमें प्रयुक्त संवादात्मकता के विविध आयामों को ढूँढने का प्रयास यहाँ किया गया है।

कौशल

पारिवारिक जीवन पर आधारित इस यथार्थपरक कहानी में नारी सुलभ लालसा की ओर प्रकाश डाला गया है। शीर्षक की सार्थक अभिव्यक्ति देने वाली इस कहानी में प्रयुक्त सभी संवाद सार्थक एवं प्रभावशाली है। कहानी की दूसरी एक विशेषता यह है कि कहानी में घटित सारी घटनाओं की जानकारी माया के मुँह से निकलने वाले संवादों से ही अनावृत होती है। कथावस्तु का पर्दाफाश दोनों पति-पत्नी के आपसी वार्तालाप से ही होता है।

पूछा - यह हार किसका है?

माया बोली - पड़ोस में जो बाबूजी रहते हैं, उन्हीं की स्त्री का है। आज उनसे मिलने गई थी, यह हार देखा बहुत पसंद आया। तुम्हें दिखाने के लिए पहन कर चली आयी। बस ऐसा ही एक हार मुझे बनवा दो।

पंडित - दूसरे की चीज़ नाहक माँग लायी।

कहीं चोरी हो जाय तो हार हो जाय तो हार तो बलवाना ही पड़े, ऊपर से बदनामी भी हो।

माया मैं तो ऐसा ही हार लूँगी। 20 तोले का है। पंडित - फिर वही जिद।

माया - जब सभी पहनती है, तो मैं क्यों न पहनूँ?

पंडित - सब कुएँ में गिर पडे, तो तुम भी कुएँ में गिर पड़ोगी।[1]

यहाँ कथावस्तु की ओर संकेत करने के साथ संवाद द्वारा दोनों पात्रों के चरित्र की ओर भी इशारा किया गया है। शुरुआत में ही माया की नारी सुलभ वासनाओं की ओर प्रकाश डालकर आगामी घटनाओं की स्पष्ट सूचना दी है। नाटकीय वातावरण की सृष्टि कहानी को अभीष्ट की ओर मोडने में सहायक निकला है। रात को अपने कौशल से हार की चोरी हो जाने की बात माया के मुँह से ही बड़े स्वाभाविक ढंग से कह डाली है।

रात को एकाएक माया ने शोर मचाकर कहा - चोर ! चोर ! हाय, घर में चोर !

मुझे घसीटे लिये जाते हैं।

पंडित जी हकबकाकर उठे और बोले - कहाँ, कहाँ?

दौडो, दौडो !

माया - मेरी कोठरी में गया है। मैं ने उसकी परछाई देखी।

---

1. प्रेमचंद - कौशल - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 63

पंडित - लालटेन लाओ, ज़रा मेरी लकड़ी उठा लेना।

माया - मुझसे तो मारे डर के उठा नहीं जाता।[1]

उपर्युक्त संवाद के ज़रिये कथानक गतिशील होने के साथ आगामी घटनाओं की सूचना भी मिलती हैं। माया के कौशल की ओर स्पष्ट संकेत उन्हीं के शब्दों में मुखरित है। पंडितजी के ईमानदार चरित्र को उभारने के लिए भी दोनों के बीच के वार्तालाप का ही सहारा लिया है।

माया के दिखावे का प्रलाप सुनकर

पंडित - अब पछताने और अपने को कोसने से क्या फायदा? चुप होके बैठो। पडोसिन से कह देना, घबराओं नहीं, तुम्हारी चीज़ जब तक लौटा न देंगे, तब तक हमें चैन न आएगी।[2]

पंडितजी के सत्यवान चरित्र की सफल अभिव्यक्ति प्रस्तुत संवाद के ज़रिये पाठकों को मिलती है। प्रेमचंद के द्वारा प्रयुक्त संवाद सब कहीं उनके पात्र के चरित्र को उभारने में सहायक रहता है। कहानी को सोद्देश्य बनाने के लिए भी अवसरोचित, एवं नाटकीय संवाद योजना का कमाल दिखाया है जिससे कहानी का अन्त बड़ा प्रभावी बन गया है।

उसने कातर नेत्रों से देखकर पूछा –

"खुश होकर दे रहे हो या नाराज़ होकर?

---

1. प्रेमचंद - कौशल - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 63
2. वही - पृ. 64

पंडित - इससे क्या मतलब? ऋण तो चुकाना ही पडेगा, चाहे खुशी से हो या नाखुशी से।

माया - यह ऋण नहीं।

पंडित - और क्या है?

माया - बदला भी नहीं है।

पंडित - फिर क्या है?

माया - तुम्हारी..... निशानी।

पंडित - तो क्या ऋण के लिए दूसरा हार बतवाना पडेगा?

माया - नहीं - नहीं, वह हार चोरी नहीं गया था। मैं ने झूठ-मूठ शोर मचाया था।

पंडित - सच?

माया - हाँ, सच कहती हूँ।

पंडित - मेरी कसम?

माया - तुम्हारे चरण छूकर कहती हूँ।

पंडित - तो तुमने मुझसे कौशल किया था?

माया - हाँ।

पंडित - तुम्हें मालूम है, तुम्हारे कौशल का मुझे क्या मूल्य देना पड़ा?

माया - 600 रु. से ऊपर?

पंडित - बहुत ऊपर! इसके लिए मुझे अपने आत्म स्वातन्त्र्य का बलिदान करना पड़ा।[1]

कहानी का वास्तविक उद्देश्य, माया के कौशल को खोलकर दिखाना मात्र नहीं था, बल्कि नारी सुलभ लालसा के दुष्परिणाम की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करना भी था। दोनों दृष्टियों से प्रस्तुत अंतिम संवाद सफल निकला है। पंडित जी का अंतिम कथन सचमुच प्रेमचंदीय आवाज़ है जो कहानी का मर्म ही है। इस कहानी में संवादों का प्रयोग सब कहीं अवसरोचित, एवं सोद्देश्य ही है।

निर्वासन

यह प्रेमचंद की संवाद शैली पर ही आधृत एक सफल कहानी है। इसमें दो पात्रों के बीच के संवाद द्वारा ही पूरी कहानी कही गई है। कहानी आद्यान्त संवादों से ही आगे बढ़ती है। परशुराम और मर्यादा के बीच के वार्तालाप से कहानी अपनी यात्रा शुरू करती है। कहानीगत वातावरण, पूर्व घटित घटना और कथावस्तु मर आरंभिक संवाद से ही प्रेमचंद ने प्रकाश डाला है।

परशुराम - वहीं-वहीं, वहीं दालान में ठहरो।

मर्यादा - क्यों, क्या मुझ में कुछ छूत लग गई?

परशुराम - पहले यह बताओ कि तुम इतने दिनों कहाँ रही, किसके साथ रही, किस तरह रही और फिर यहाँ किसके साथ आयी? तब, तब विचार..... देखी जाएगी।

---

1. प्रेमचंद - कौशल - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 65

मर्यादा - क्या इन बातों के पूछने का यही वक्त है; फिर अवसर न मिलेगा?

परशुराम - हाँ, यही वक्त है। तुम स्नान करके नदी से तो मेरे साथ ही निकली थी। मेरे पीछे-पीछे कुछ देर तक आयी भीं; मैं पीछे फिर - फिरकर तुम्हें देखता जाता था, फिर एकाएक तुम कहाँ गायब हो गई?[1]

कहानीगत वातावरण की ओर स्पष्ट संकेत मिलने के साथ दोनों पात्रों के चरित्र की ओर भी प्रस्तुत संवाद इशारा करता है। परशुराम के शब्दों में उसके संशयालु मानसिकता का पर्दाफाश होता है। साथ ही कथानक के भावी विकास की सूचनाएँ भी मिलती है। कहीं भी कोई अनावश्यक विवरण नहीं है। मर्यादा के पतिभक्ति के प्रति शंका उसके शब्दों में बार-बार अभिव्यक्त होते हैं।

परशुराम - खैर, रात को तुम वहीं रही। युवक बार-बार भीतर आते-जाते रहे होंगे?

मर्यादा - केवल एक बार एक सेवक भोजन के लिए पूछने आया था, जब हम सबों ने इनकार कर दिया, तो वह चला गया और फिर से कोई न आया। मैं रात भर जागती रही।

परशुराम - यह मैं कभी न मानूँगा कि इतने युवक वहाँ थे और कोई अन्दर न गया होगा। समिति के युवक आकाश के देवता नहीं होते। खैर वह दाढ़ीवाला अध्यक्ष तो ज़रूर ही देख-भाल करने गया होगा?[2]

---

1. प्रेमचंद - निर्वासन - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 45
2. वही - पृ. 46-47

प्रस्तुत संवाद सचमुच परशुराम के शकी मानसिकता का तथा निम्न चरित्र का खुलासा करता है। चरित्रोन्मुख होने के कारण पात्र के मानसिक स्थिति विशेष को शीशे की तरह संवाद प्रतिफलित करता है। कहानी की आगामी घटनाओं की ओर संवाद सूचना देनी जाती है। पति-पत्नी के संबन्धों में आए दरार को आगे के संवाद अनावृत करते हैं।

मर्यादा - मैं अपने पुत्र का मुँह न देखूँ अगर किसी ने मुझे स्पर्श भी किया हो।

परशुराम - तुम्हारा किसी अन्य पुरुष के साथ क्षण-भर भी एकान्त में रहना तुम्हारे पातिव्रत को नष्ट करने के लिए बहुत है। यह विचित्र बन्धन है, रहे तो जन्म-जन्मान्तर तक रहे, टूटे तो क्षण-भर में टूट जाय।"[1]

यहाँ संवाद चरित्र पर बल देने के साथ भारतीय नारी की मन शुद्धि को मूल्यवान स्थापित करने की सफल कोशिश भी करता है। जन्म-जन्मान्तर तक पुष्पित रहने वाले पारिवारिक बन्धन की पवित्रता एवं श्रेष्ठता यहाँ संवाद उजागर करता है। इस प्रकार अपने पात्रों के मुँह से निकलने वाले संवादों के ज़रिये प्रेमचंद ने सामाजिक नैतिक मान्यताओं को वाणी दिया है जो तत्कालीन जीवन-क्रम से अलग हो रहे थे। आज भी स्थिति वैसी ही है। प्रेमचंदीय कहानी कला की प्रासंगिकता इसी अर्थ में परखने पर नित नवीन ही है।

कहानी का अन्त भी संवादों से ही होता है जिससे शीर्षक की सफल अभिव्यक्ति पाठकों को मिलती है।

---

1. प्रेमचंद - निर्वासन - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 49

परशुराम - अपनी इच्छा से नहीं, तुम्हारी इच्छा हो तो दूर से देख सकती हो।

मर्यादा - तो जाने दो, न देखूँगी। समझ लूँगी कि विधवा भी है और बाँझ भी। चलो मन। अब इस घर में तुम्हारा निर्वाह नहीं। चलो। जहाँ भाग्य से जाए।"[1]

प्रस्तुत अंतिम संवाद के ज़रिये शीर्षक शब्दबद्ध होने के साथ पारिवारिक बन्धन में आए अलगाव को भी शब्दबद्ध किया है। पुरुष वर्चस्व समाज में स्त्री अस्वतन्त्र एवं अबला बनकर अपनी अस्मिता को बनाए रखने के लिए तडपती रहती है। इस लोक सत्य की ओर भी कहानी संकेत करता है। एक छोटी घटना को आधार बनाकर लिखी गई इस कहानी के संवाद सार्थक, संक्षिप्त एवं सारगर्भित है।

धिक्कार

प्रेमचंद की देशप्रेम की भावनाओं को द्योतित करने वाली यह कहानी मानव जीवन में ईश्वरीय कृपा-कटाक्ष की आवश्यकता पर बल देती है। कहानी के आरंभ के संवाद से ही कथानक की ओर संकेत मिलता है। मन्दिर की पूजारिन के पास देश के स्त्री-पुरुष सवाल करने आते हैं तो वह यो उत्तर देती है।

पूजारिन ने कहा – देवताओं की असीम कृपा भी देश को द्रोही के हाथ से नहीं बचा सकती। इस देश में अवश्य कोई-न-कोई, द्रोही है। जब तक उसका वध न किया जाएगा, देश के सिर से यह संकट न टलेगा।

"देवी, वह, द्रोही कौन है?"

---

1. प्रेमचंद - निर्वासन - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 50

जिस घर से रात को गाने की ध्वनि आती हो, जिस घर से दिन को सुगन्ध की लपटे आती हो, जिस पुरुष की आँखों में मद की लाली झलकती हो, वही देश का द्रोही है।[1]

प्रस्तुत तीखे संवाद से कथावस्तु का पर्दा हटने के साथ आगामी घटनाओं की सूचना भी पाठकों को मिलती है।

कहानीगत वातावरण की ओर भी यहाँ स्पष्ट संकेत है। कुतूहला प्रस्तुत संवाद की खासियत है।

देवी द्वारा बतायी गई देश द्रोही का पता चला तो बूढ़े यूनानी के मुँह से निकले शब्द वास्तव में देशप्रेम की भावनाओं को सबसे महान स्थापित करता है।

बूढ़े यूनानी चिल्लाकर कहा - "यही देशद्रोही है, यही देशद्रोही है। मन्दिर के दीवारों ने दुहराया - द्रोही है। बगीचे की तरफ आवाज़ आयी - द्रोही है। मन्दिर की पुजारिन ने घर में से सिर निकालकर कहा - हाँ, द्रोही है।"[2]

प्रस्तुत कथन उन तमाम देशस्नेहियों की आवाज़ बनकर प्रतिध्वनित होते हैं, जो देश को आज़ादी देने के लिए मर मिटते हैं। उस समय के भारतीय जन जीवन को ही प्रेमचंद ने यहाँ कहानी का रूप दिया है। देशद्रोही का पता लगने के बाद उसे सज़ा देने की बात को लेकर वहाँ उपस्थित लोगों के प्रस्ताव से देशप्रेम की तीव्रता का आभास पाठकों को मिलता है।

"सुअर के हाथ पकड़कर बाहर खींच लो।"

---

1. प्रेमचंद - धिक्कार - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 125
2. वही - पृ. 125

"ऐसे देशद्रोही का वध करने के लिए देवी हमें क्षमा कर देगी।"

"देवी, आप उसे क्यों नहीं निगल जाती?"

"पत्थरों से मारो, पत्थरों से आप निकलकर भागेगा।"

निकलता क्यों नहीं रे कायर। वहाँ क्या मुँह में कालिख लगाकर बैठा हुआ है?"[1]

इसप्रकार के व्यंग्य बाणों द्वारा प्रेमचंद ने भारतीय जनमानस में स्वतन्त्रता के खिलाफ़ लड़ने वाले ताकतों के प्रति नफ़रत को खोलकर दिखाया है। कहानी की मूल संवेदना की ओर भी यहाँ स्पष्ट संकेत है।

पासोनियस नामक देशद्रोही के चरित्र को वाणी देने के लिए प्रेमचंद ने उन्हीं के शब्दों का सहारा लिया है।

"कौन कहता है कि इसे छोड देना चाहिए। नहीं मुझे मन छोड़ना, वरना पछताओगे। मैं स्वार्थी हूँ, विषय भोगी हूँ, मुझ पर भूलकर भी विश्वास न करना आह, मेरे कारण तुम लोगों को क्या-क्या झेलना पड़ा इसे सोचकर मेरा जी चाहता है कि अपनी इन्द्रियों को जलाकर भस्म कर दूँ। मैं आग सौ बार जन्म लेकर इस पाप का प्रायश्चित करूँ तो भी मेरा उद्धार न होगा। तुम भूलकर भी मेरा विश्वास न करो।"[2]

यहाँ पासोनियस के चरित्र उद्‌घाटित होने के साथ कथा-प्रवाह में परिवर्तन का संकेत भी मिलता है। प्रस्तुत चरित्रोचित संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने अपने

---

1. प्रेमचंद - धिक्कार - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 128
2. वही - पृ. 129

कुटिल स्वार्थ के लिए देश को गर्दन में गुलामी की बेड़ियाँ डालने वाले युवावर्ग को चेतावनी देता है जो तात्कालीन युग-सापेक्ष्य है। उस समय की स्थिति ही कुछ ऐसी थी कि देश के द्रोही, देश के स्वजनों के साथ मिलकर देश को लूट रहे थे।

पासोनियस के देशद्रोह के खिलाफ जन मानस को उत्तेजित कर उसे उचित सज़ा दिलवाने की माँग करने वाले उसकी माँ का कथन सचमुच कहानी को एक नया मोड देता है। यहाँ भी देशस्नेह की महिमा को ऊँचा दिखाने की कोशिश दर्शनीय है।

सहसा एक वृद्धा स्त्री किसी तरह से दौड़ती हुई आयी और मन्दिर के सबसे ऊँचे जीने पर खड़ी होकर बोली–

"तुम लोगों को क्या हो गया है। यूनान के बेटे आज इतने ज्ञानशून्य हो गए हैं कि झूठे और सच्चे में विवेक नहीं कर सकते? तुम पासोनियस पर विश्वास करते हो? जिस पासोनियस ने सैकड़ों स्त्रियों और बालकों को अथाय कर दिया, सैकड़ों घरों में कोई दिया जलाने वाला न छोड़ा, हमारे देवताओं का, हमारे पुरुषों का घोर अपमान किया, उसकी दो-चार चिकनी-चुपड़ी बातों पर तुम इतने फूले उठे। याद रखो अब की पासोनियस बाहर निकला, तो फिर तुम्हारी कुशल नहीं। .....अगर तुम्हें अपना देश प्यारा है, अपने पुरुषों का नाम प्यारा है, अपनी माताओं और बहिनों की आबरू प्यारी है, तो मन्दिर के द्वार को चून दो, जिसमें देशद्रोही को फिर बाहर निकलने और तुम लोगों को बहकाने का मौका न मिले। यह देखो, पहला पत्थर मैं अपने हाथों से रखती हूँ।"[1]

---

1. प्रेमचंद - धिक्कार - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 131

यहाँ संवाद कुछ लम्बे हो गए तो भी पासोनियस का चरित्र उसकी संपूर्णता में पाठकों को सामने चित्रित करने में ये संवाद सफल निकले हैं। संवाद काफी लम्बे हो गए तो भी प्रभावोन्नति की दृष्टि से सफल एवं सार्थक ही है क्योंकि इसमें कोई भी अनावश्यक शब्द नहीं है जिससे पाठकों के मन में अरुचि पैदा हो सके। एक माँ के उज्ज्वल चरित्र को भी यहाँ संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने वाणी दी है जो देशभक्ति को माँ की ममता से भी ऊँचा स्थापित किया है। कहानी का वास्तविक मर्म संवाद में दर्शनीय है। अंत में लेखकीय उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति भी संवादों द्वारा ही संपन्न होती है। प्रेमचंदीय आदर्श अंत में यों शब्दबद्ध हुआ है–

"वीर माता, तुम्हें धन्य है। ऐसी ही माताओं के देश का मुख उज्ज्वल होता है, जो देशहित के सामने मातृ-स्नेह की धूल बराबर भी परवाह नहीं करती। उनके पुत्र देश के लिए होते हैं, देश पुत्र के लिए नहीं होता।"[1]

यहीं वास्तव में देशप्रेम की सही पहचान है। इसे अपने पाठकों तक पहुँचाने में इस अंतिम सोद्देश्य एवं सारपूर्ण संवाद-योजना द्वारा प्रेमचंद को सफलता मिली है। कहानी को पूरी तरह से सार्थक एवं प्रभावशाली बनाने में प्रयुक्त संवाद योजना सक्षम है।

मुक्तिधन

सांप्रदायिकता के विरुद्ध मानवीय संवेदना जगाने वाली प्रस्तुत कहानी प्रेमचंद की आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहानियों में से एक है। सांप्रदायिक भेद-भावों

---

1. प्रेमचंद - धिक्कार - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 131

के ऊपर उठकर मानवीय भावनाओं को परिपोषित कर विश्व मानव की परिकल्पना पर कहानी बल देती है। कहानी एक साथ घटना एवं चरित्र-प्रधान है।

आद्यान्त संवादों के प्रभावशाली प्रयोग से कहानी आगे बढ़ती है। वर्णनात्मक शैली में शुरू होकर संवादों और घटनाओं द्वारा कहानी नया मोड लेती है।

मुसलमान और दाऊदयाल के बीच के संवाद द्वारा चरित्र संबन्धी जानकारी मिलती है और कथानक का पर्दा हटता है।

पूछा - क्योंजी, यह गऊ बेचते हो? क्या नाम है तुम्हारा?

मुसलमान ने दाऊदयाल को देखा, तो प्रसन्न, मुख उनके समीप जाकर बोला - "हाँ हुज़ूर बेचता हूँ।"

दाऊ - कहाँ से लाये हो? तुम्हारा नाम क्या है?

मुस - नाम तो है रहमान। पचौली में रहता हूँ।

दाऊ - दूध देती है?

मुस - हाँ हुज़ूर, एक बेला में तीन सेर दुह लीजिए। अभी दूसरा ही तो बेत है। इतनी सीधी है कि बच्चा भी दुह ले। बच्चे पैर के पास खेलते रहते हैं पर क्या मजाल कि सिर भी हिलावे।"[1]

गाय बेचने आए रहमान के शब्दों में उसके अभावग्रस्त एवं दयनीय किसानी मन को प्रेमचंद ने अभिव्यक्त किया है। साथ ही कहानीगत वातावरण की

---

1. प्रेमचंद - मुक्तिधन - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 149

ओर भी प्रकाश डाला है। यहाँ भाषा बिलकुल पात्रोचित हैं। इसलिए संवादों की शैली में भी भिन्नता है। आगे रहमान की मानसिक विचारधाराओं को भी संवाद द्वारा ही वाणी दी है।

तो दाऊदयाल से बोला - "हुजूर आप हिन्दू है, इसे लेकर आप पालेंगे, इसकी सेवा करेंगे। ये सब कसाई हैं, इनके हाथ में 50 रु. को भी कभी न बेचता। आप बड़े - मौके से आ गए, नहीं तो ये सब जबरदस्ती सऊ को छीन ले जाते। बड़ी विपत्त में पड़ गया हूँ सरकार, तब यह गाय बेचने निकला हूँ, नहीं तो इस घर की लक्ष्मी को कभी न बेचता। इसे अपने हाथों से पाला-पोसा है। कसाइयों के हाथ कैसे बेच देता? .....हुज़ूर से एक अरज और है, अपने चरवाहे को डाँट दीजिएगा कि उसे मारे-पीटे नहीं।"[1]

घर की दयनीय आर्थिक स्थिति के कारण रहमान, लक्ष्मी जैसे पाले गाय को बेचने के लिए मज़बूर हो जाता है। मगर वह किसी कसाई के हाथ में उसे बेचना नहीं चाहता है। वह बहुत निष्ठावान एवं सद्चरित्र वाले आदमी है। संवाद इन सब की ओर स्पष्ट संकेत देता है। स्वाभाविकता से प्रयुक्त इस संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने मानवीय करुणा एवं प्यार की आवश्यकता पर बल दिया है। ऋणभोगी भारतीय, धर्मभीरू किसान की वास्तविक स्थिति की ओर संवाद द्वारा पाठकों का ध्यान आकर्षित किया गया है। कहानी में आगे रहमान के चरित्र की उदारता, एवं धर्मभीरू मानसिकता को भी संवादों द्वारा अभिव्यक्त किया है।

---

1. प्रेमचंद - मुक्तिधन - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 149

अपनी बूढ़ी माँ की धार्मिक इच्छा की पूर्ति के लिए उसे पुनः ऋणभोगी बनना पड़ता है। आर्थिक मज़बूरी के बीच में भी अपना धार्मिक संस्कार वह खोना नहीं चाहता है। नेकी का बदला वह खुदा की मर्जी पर छोड़ देता है। अंत में ऋण चुकाने में वह असफल हो जाता है। इस समय दाऊदयाल और रहमान के बीच के संवाद से महाजनी क्रूरता का शिकार बनकर जीने वाले अभागों किसान वर्ग को प्रेमचंद ने शब्दबद्ध किया है।

निर्दयी महाजन की हैसियत से कठोर स्वर में दाऊदयाल बोले - "क्या अभी दो साल नहीं पूरे हुए। लाओ, रुपये कहाँ है?"

रहमान ने बड़े दीन भाव से कहा - "हुज़ूर, बडी गर्दिश में हूँ। अम्माँ जब से हज करके आयी हूँ, तभी से बीमार पडी हुई हूँ। रात-दिन उन्हीं की दवा-दारू में दौडते गुजरता हूँ। जब तक जीती है, हुजूर सेवा कर लूँ, पेट का धन्धा तो ज़िन्दगी-भर लगा रहेगा। अब की कुछ फसल नहीं हुई हुज़ूर। ऊख पानी बिना सूख गया। सन खेत में पड़े-पड़े सूख गया। ढोने की मुहलत न मिली। रबी के लिए खेत जोत न सका, परती पड़े हुए है। अल्लाह ही जानता है, किस मुसीबत से दिन कट रहे हैं। हुजूर के रुपये कौड़ी-कौड़ी अदा करूँगा, साल भर की और मुहलत दीजिए। अम्माँ अच्छी हुई और मेरे सिरे से बला टली।"[1]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने भारतीय, अभागे, दीन-दलित किसानी-वर्ग को वाणी दी है। उसके शब्दों में मातृ-भक्ति, धर्मभीरुता एवं सत्यनिष्ठा गूँज

---

1. प्रेमचंद - मुक्तिधन - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 151

उठती है। इसी कारण वह पुनः कर्तव्य पालन के नाते दाऊदयाल के पास उधार माँगने जाता है।

दाऊदयाल - "तीन सौ तो हो गए। दो सौ फिर माँगते हो। दो साल में कोई सात सौ रुपये हो जाएँगे। इसकी खबर है या नहीं।

रहमान - गरीब परवर। अल्लाह दे, तो दो वीधे ऊख में पाँच सौ आ सकते हैं। अल्लाह ने चाहा, तो मियाद के अन्दर आपकी कौडी-कौड़ी अदा कर दूँगा।"[1]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने सत्यवादी, सीधे-सादे, गरीब भारतीय किसान वर्ग का सच्चा चित्र पाठकों के सामने खुलासा किया है। उनकी तमाम कहानियों के पात्र इसी प्रकार के हैं जिनके लिए प्रेमचंद ने जीवन पर्यंत वकालत की है। रहमान के मुँह से निकलने वाले एक-एक शब्द उसके चरित्र को स्पष्ट करके चले जाते हैं। कहानी यथार्थ के साथ आदर्श को भी अपने में समेट हुए है। रहमान के कर्जदार किसानी जीवन को अभिव्यक्ति देने के साथ प्रेमचंद ने महाजन दाऊदयाल के हृदय में छिपी मानवीय करुण एवं संवेदनशील नज़रिये को भी संवादों द्वारा व्यक्त किया है।

जब दाऊदयाल ने रहमान के रुपये अदा होने की बात कहीं तो रहमान को लगा कि उसके सामने कोई फरिश्ता बैठा हुआ है।

---

1. प्रेमचंद - मुक्तिधन - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 153

बड़ी मुश्किल से आँसुओं को रोककर बोला - हुज़ूर को इस नेकी का बदला खुदा देगा। मैं तो आज से अपने को आपका गुलाम ही समझूँगा।

दाऊ - नहीं जी, तुम मेरे दोस्त हो।

रहमान - नहीं, हुज़ूर, गुलाम।

दाऊ - गुलाम छुटकारा पाने के लिए जो रुपए देता है, उसे मुक्तिधन कहते हैं।

तुम बहुत पहले 'मुक्तिधन' अदा कर चुके। अब भूलकर भी यह शब्द मुँह से न निकालना।[1]

कहानी के इस अंतिम कथन द्वारा शीर्षक की सफल अभिव्यक्ति प्रेमचंद ने अपने पाठकों को दिया है। कहानी के आरंभिक संवादों में दाऊदयाल की धूर्ती, लोभी एवं वर्गीय चेतना के पक्षधर रूप को ही दिखाया गया है। लेकिन कहानी के अंत में, उससे बिलकुल भिन्न होकर, मानवीय संवेदनशीलता, सहृदयता एवं उदारता के प्रतिरूप में उसका चरित्र पाठकों के सामने दिखाई देता है। वह, ऋणभोगी रहमान को ऋणमुक्त कर देता है। संवाद इसका साक्षी है। यहाँ कथानक से बढ़कर पात्र एवं उसके चरित्र महत्वपूर्ण है। प्रेमचंदीय आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की सफल अभिव्यक्ति संवादों में मुखरित है।

डिक्री के रुपये

यह प्रेमचंद के अपने मत में उनकी सर्वश्रेष्ठ कहानियों में एक है। दो मित्रों की आपसी मित्रता और उसके कारण उत्पन्न कुछ समस्याओं का उल्लेख इस

---

1. प्रेमचंद - मुक्तिधन - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 156

कहानी का प्रतिपाद्य है। आदर्शवादी ढंग से लिखी गई प्रस्तुत कहानी की सारी घटनाओं व्यक्तिमन के आन्तरिक नियमों से परिचालित होती है। संवादात्मक शैली में लिखी गई प्रस्तुत कहानी में प्रगतिशील विचारधारा को अपनायी गयी है। वर्णनों की बहुलता होने पर भी घटनाचक्र की सूचना देने के लिए ओजस्वी व चटुल संवादों का अवसरोचित प्रयोग किया है।

कुँवर साहब की माता और नईम के बीच के संवाद द्वारा प्रेमचंद ने कथ्य प्रवाह को एक नया मोड दिया है।

रानी उसकी ओर वात्सल्यपूर्ण लोचनों से देखती हुई बोली - हुजूर मेरे बेटे का जीवन आपके हाथ में है। आप ही उसके भाग्य विधाता है। आपको उसी की सौगन्ध है, जिसके आप सुयोग्य पुत्र हैं, मेरे लाल की रक्षा कीजिएगा। मैं तन, मन, धन आपके चरणों पर अर्पण करती हूँ।[1]

प्रस्तुत संवाद कथावस्तु को गतिशील बनाने के साथ आगामी घटनाओं की ओर संकेत भी देता है। दो पात्रों के आपसी बातचीत के द्वारा कहानी के अन्य पात्रों के क्रियाकलापों की जानकारी पाठकों को मिलते हैं। कहानी में कैलास और नईम के बीच के आपसी संवादों से ही कुँवर साहब की माँ के 20 हज़ार रुपये की सिफारिश की बात कैलास के कानों तक पहूँच जाती है। इस मामले में कैलास के विचार को भी उन्हीं के मुँह से निकलनेवाले संवाद से प्रेमचंद ने व्यक्त किया है।

कैलास ने कहा - "मेरे विचार में पाप सदैव पाप है, चाहे वह किसी आवरण में मंडित है।"[2]

---

1. प्रेमचंद - डिक्री के रुपये - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 214
2. वही - पृ. 215

कैलास के चरित्रोद्घाटन की दृष्टि से प्रस्तुत संवाद सचमुच सारगर्भित ही है। आगे नाईम के चरित्र की ओर भी परोक्ष रूप से संवाद द्वारा संकेत किया गया है।

कैलास ने पूछा - अगर कही बात खुल गई तो?

नाईम - तो यह मेरी समझ का फेर, मेरे अनुसंधान का दोष, मानव प्रकृति के एक अटल नियम का उज्ज्वल उदाहरण होगा। मैं कोई सर्वज्ञ तो हूँ नहीं। मेरी नियत पर आँच न आने पाएगी। मुझ पर रिश्वत लेने का सन्देह न हो सकेगा। आप इसके व्यावहारिक कोण पर न जाइए, केवल इसके नैतिक कोण पर निगाह देखिए। यह कार्य नीति के अनुकूल है या नहीं? आध्यात्मिक सिद्धान्तों को न खींच लाइएगा, केवल नीति के सिद्धान्तों से इसकी विवेचना कीजिए।[1]

दोनों मित्रों के विचारों में जो अन्तर है, उसकी ओर प्रस्तुत संवाद प्रकाश डालते हैं। कैलाश कर्तव्यशील एवं विचार के पक्के हैं तो नईम नैतिकता को जीवन में सर्वप्रथम स्थान देने वाले हैं। तात्कालीन सामाजिक अवस्था और राजनैतिक वातावरण की ओर भी यहाँ संकेत मिलते हैं। अंत में दोनों मित्रों के आपसी समझौते की ओर भी संवाद द्वारा ध्यान आकर्षित किया गया है।

नईम - नहीं, मैं सिर्फ एक चीज़ चाहता हूँ, सिर्फ एक चीज़।

उसने पूछा - क्या चीज़?

नईम - मिसेज कैलास से एक मिनट तक एकान्त में बातचीत करने की आज्ञा।

---

1. प्रेमचंद - डिक्री के रुपये - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 216

कैलास ने नईम के सिर पर चपन जमाकर कहा - फिर वही शरारत। सैकड़ों बार तो देख चुके हो, ऐसी कौनसी इन्द्र की अप्सरा है।

नईम - वह कुछ भी हो, मामला करते तो करो; मगर याद रखना, एकान्त की शर्त है।

कैलास - मंजूर है। फिर जो डिक्री के रुपये माँग गए, तो नोच ही खाऊँगा।

नईम - हाँ मंजूर है।[1]

प्रस्तुत संवाद दोनों मित्रों की दोस्ती की गहराई और आगामी घटना की ओर इशारा करते हैं। अंत में डिक्री के रुपये वसूल किये जाने की बात को वही आयामी से वह सुलझा लेता है।

कैलास मुसकराते हुए कमरे में आये और बोले - "अच्छा, अब निकलिए बाहर। यहाँ भी अपनी शैतानी से बाज न आये?"

नईम - रुपयों की रसीद तो लिख दूँ? उमा तुमने रुपये दे दिये? कहाँ मिले?

कैलास - फिर कभी बदला दूँगा। उठिए हजरत।

उमा - बताते क्यों नहीं, कहाँ मिले? मिरजाजी से कौन परदा है?

कैलास - नईम, तुम उमा के सामने मेरी तौहीन करना चाहते हो?

नईम - तुमने सारी दुनिया के सामने मेरी तौहीन नहीं की?

कैलास - तुमारी तौहीन की, तो उसके लिए 20 हज़ार रुपये नहीं देने पड़े?

---

1. प्रेमचंद - डिक्री के रुपये - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 224

नईम - मैं भी उसी हकसाल के रुपये दे दूँगा। उमा, मैं रुपये पा गया। इन बेचारे का परदा ढका रहने दो।[1]

वास्तव में कहानी का आदर्श यहाँ संवाद का रूप ले लिया है। जीवन में मित्रता के महत्व को प्रस्तुत संवाद उजागर करता है। मानव मन में परिवर्तन लाकर नैतिक मूल्यों की स्थापना करना ही इस कहानी में लेखकीय उद्देश्य है। कहानी के प्रति पाठकों की रुचि बढ़ाने में प्रयुक्त संवाद योजना द्वारा प्रेमचंद को सफलता मिली है।

शतरंज के खिलाडी

प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ कहानियों में से एक है शतरंज के खिलाड़ी। कहानी कला के तत्वों के सफल आयोजन की दृष्टि से शतरंज के खिलाडी प्रेमचंद की अद्वितीय रचना मानी जाती है। सामंतवाद के खोखलेपन का पर्दाफाश करने वाली प्रस्तुत कहानी के माध्यम से प्रेमचंद ने एक संपूर्ण युग की उसकी कटु वास्तविकताओं सहित बाहरी अभिव्यक्ति दी है। भारतीय गुलामी तथा सुखलोलुप राजाओं के विलासी जीवन का कच्चा चिट्ठा अत्यंत संवेदनशील भाषा में संवादों के ज़रिये उन्होंने प्रस्तुत किया है। इस कहानी में न केवल घटनाओं का महत्व है, बल्कि, पात्र एवं चरित्र चित्रण, वातावरण और उद्देश्य का भी समान महत्व दिया गया है। कहानी में प्रयुक्त संवाद, कहानीगत सभी तत्वों को एक साथ पिरोकर आगे बढ़ती है।

---

1. प्रेमचंद - डिक्री के रुपये - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 225

नवाब वाजिद डाली शाह की राजत्वकालीन विलासिता के कारण देश में उपजी अराजक परिवेश की संपूर्ण झाँकी उसकी सारी विकृतियों सहित मिर्जा और मीर साहब के बीच की क्रियाकलापों एवं बातचीत के ज़रिये चित्रित किया है। प्रयुक्त संवाद योजना के प्रभाव के कारण प्रेमचंद की यह कहानी पाठकों के हृदय का खेल नहीं था, बल्कि सामन्ती विलासिता का वह प्रतीक था जो चाहने पर भी घूट न नहीं चाहते थे। दोनों मित्रगण बडे मज़े से शतरंज खेलते समय मिरजाजी की बेगम के लिए दवा लाने का बुलावा आया।

मीर - अरे, तो जाकर सुन ही आइए न! औरतें नाजुक - मिजाज होते ही हैं।

मिरजा - जी हाँ, चला क्यों न जाऊँ। दो किस्तों में आपको मात होती है।

मीर - जवाब, इस भरोसे न रहिएगा, वह चाल सोची है कि आपके मुहरे घरे रहें और मान हो जाए। पर जाइए, सुन आइए। क्यों खामख्वाह उनका दिल दुखाइएगा?

मिरजा - इसी बात पर मात ही करके जाऊँगा।

मीर - मैं खेलूँगा ही नहीं। आप जाकर सुन आइए।

मिरजा - अरे यार, जाना पडेगा हकीम के यहाँ। सिर - दर्द खाक नहीं हैं, मुझे परेशान करने का बहाना है।

मीर - कुछ भी हो, उनकी खातिर तो करनी ही पडेगी।[1]

---

1. प्रेमचंद - शतरंज के खिलाडी - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 227

दोनों मित्रों के आपसी संवाद के ज़रिये कहानीकार ने शतरंज के नशे की और तात्कालीन विलासिता पूर्ण वातावररण में गिरते नैतीक मूल्यों की ओर स्पष्ट संकेत दिया है। कहानी में शतरंज के खेल को विलासिता का प्रतीक माना है। उस समय के सामाजिक वातावरण को मूर्त करने वाले प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने कथावस्तु का पर्दाफाश भी किया है।

जिस प्रकार देश भर में अराजकता बढ़ते चली जा रही थी, उसी तरह देश की रक्षा की माँग चार और गूँज उठती थी। इस बात की ओर संकेत करने के लिए भी प्रेमचंद ने वार्तालाप का ही सहारा लिया है।

बादशाही फौजी अफसर मीर साहब को ढूँढकर घर पहूँचे तो वह नौकरों से बोले - कह दो, घर में नहीं हैं।

सवार - घर में नहीं, तो कहाँ है?

नौकर - काम मुझे क्या बताऊँगा? हुज़ूर में तलबी है। शायद फौज के लिए कुछ सिपाही माँगे गए हैं। जागीरदार हैं कि दिल्लगी। मोरचे पर जाना पडेगा, तो आटे-दाल का भाव मालूम हो जाएगा।

नौकर - अच्छा, तो जाइए, कह दिया जाएगा।

सवार - कहने की बात नहीं है। मैं कल खुद आऊँगा, साथ ले जाने का हुक्म हुआ है।"[1]

---

1. प्रेमचंद - शतरंज के खिलाडी - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 230-231

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने देश और जनता के बीच की खाई की ओर संकेत दिया है जो सामन्ती विलासिता की उपज है। तात्कालीन राजनैतिक अधः पतन की चरम सीमा को भी मिरजा और मीर के आपसी संवाद, द्वारा ही वाणी दी है। प्रेमचंद की कहानियों में शिल्पगत संवादात्मकता द्वारा वातावरण की सजीवता या परिस्थिति की अनुकूलता व प्रतिकूलता की झलक देखने को मिलता है। मिरजा और मीर की वाणी में उनके दिल की कठोरता, निर्ममता, स्वार्थता आदि मुखरित है।

"मीर - क्या! घास आपके अब्बाजान छीलते होंगे। यहाँ तो पीढ़ियों से शतरंज खेलते चले आ रहे हैं।

मिरजा - अजी, जाइए भी, गाजीउदीन हैदर के यहाँ बावरची का काम करते-करते उम्र गुजर गई, आज रईस चले है। रईस बनना कुछ दिल्लगी नहीं है।

मीर - अपने बुजुर्गों के मुँह में कालिख लगाते हो - वे ही बावरची का काम करते होंगे। यहाँ तो हमेशा बादशाह के दस्तरख्वान पर खाना खाते चले आये हैं।"[1]

यहाँ संवाद स्वाभाविक रूप से पतनशील, सामन्तीय एवं अभिजात्य परिवार की मनोवृत्तियों एवं धारणाओं की ओर संकेत करती है। प्रेमचंद, कला को जीवन के लिए उपयोगी मानते हैं। तात्कालीन समाज में शतरंज के खिलाड़ी के लिए देशहित से बढ़कर व्यक्तिगत सुख ही सब कुछ है। उस परिस्थिति को संवाद

---

1. प्रेमचंद - शतरंज के खिलाडी - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 234

मुखरित करता है। कहानी के अंत में दोनों दोस्तों के आपसी लड़ाई के ज़रिये प्रेमचंद यह बताना चाहते हैं कि विलासिता के नशे में लोग किस हद तक पहुँच जाते हैं और उसका परिणाम क्या है। मीर और मिरजा के संवाद कहानी के आद्यन्त चारित्रिक विशेषताओं की ओर प्रकाश डालने के साथ उस समय के सामाजिक व राजनीतिक वातावरण की ओर स्पष्ट संकेत देता है। विवेकपूर्ण दायित्व निष्ठा के अभाव में हमारी आज़ादी खतरे में हैं। क्योंकि जनता के अकर्मण्य जीवन, देश को पराधीनता की ओर ले जाएगा। चरित्र संकट तथा राजनीतिक पतन से देश को बचाने का एक परोक्ष पुकार कहानी के संवादों में गूँज उठता है।

3.5 मानसरोवर- भाग-4 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

मानसरोवर भाग-4 में 21 कहानियाँ संकलित हैं। उनमें से प्रतिनिधि कहानियों में प्रयुक्त संवादात्मकता के विविध पहलुओं को परखने का प्रयास यहाँ किया जा रहा है।

सद्‌गति

'सद्‌गति' प्रेमचंद की प्रखर यथार्थवादी कहानियों में से एक है। दलित जीवन को उसकी वास्तविकताओं सहित इसमें प्रेमचंद ने चित्रित किया है। कहानी के हरेक संवाद संक्षिप्त, नाटकीय, सारगर्भित एवं मन को छूने वाले हैं जिसके कारण कहानी की संवेदनशीलता तथा सोद्देश्यता बढ़ गई है। दलितों पर होने वाले सामन्ती अत्याचार को उसकी तीव्रता में अभिव्यक्ति देने में संवाद योजना सफल हुई है। आरंभिक संवाद के ज़रिये ही कथावस्तु की ओर संकेत दिया है।

चमारिन ने कहा - तो जाके पंडित बावा से कह आओ न? ऐसा न हो कही चले जाएँ।

दुखी - हाँ जाता हूँ, लेकिन यह तो सोच, बैठेंगे किस चीज़ पर?

झूरिया - कही से खटिया न मिल जाएगी? ठकुराने से माँग लाना।

दुखी - तू तो कभी-कभी ऐसी बात कह देती है कि देह जल जाती है।

ठकुराने वाले मुझे खटिया देंगे। आग तक तो घर से निकलती नहीं, खटिया होंगे। कँथाने में जाकर एक लोटा पानी माँगूँ तो न मिले खटिया कौन देगा।

हमारे उपले सेंठे, भूसा, लकड़ी - थोडे ही हैं कि जो चाहें उठा ले जाएँ। ला अपनी खटोली धोकर रख दें। गरमी के दिन तो हैं। उनके आते-आते सूख जाएगी।

खटोली पर बैठेंगे नहीं। देखते नहीं, कितने नेम-धरम से रहते हैं।[1]

तात्कालीन समाज में चमारिन जात पर होने वाले शोषण की ओर प्रस्तुत संवाद द्वारा प्रेमचंद ने प्रकाश डाला है। दलितों को मानवीय हक से जीने का अधिकार ज़मीन्दारी वर्ग नहीं देते थे जिसके कारण उनकी ज़िन्दगी दयनीय बन गई। वातावरण तथा कथावस्तु को वाणी देने में संवाद सफल निकला है।

दो पात्रों के आपसी वार्तालाप द्वारा तीसरे पात्र के चरित्र की ओर इशारा करना प्रेमचंदीय संवाद योजना की एक विशेषता है। दुखी चमार और पत्नी के

---

1. प्रेमचंद - सद्‌गति - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 19

बीच के संवाद द्वारा पंडित बाबा के क्रोधी चरित्र की ओर संकेत किया गया है। साथ ही आगामी घटनाओं की ओर भी सूचना दी गयी है। जीने के लिए ज़मींदार की खुशामद करने वाले चमारिन के निस्सहाय जीवन की ओर भी जीवन्त संवादों द्वारा ध्यान आकर्षित किया गया है।

दुखी को देखकर श्रीमुख से बोले - "आज कैसे चला रे दुखिया?"

दुखी ने सिर झुकाकर कहा-

बिटिया की सगाई कर रहा हूँ महाराज। कुछ साइन-सगुन विचारना है। कब मर्जी होगी?

घासी - आज मुझे छुट्टी नहीं। हाँ साँझ तक आ जाऊँगा।

दुखी - नहीं महाराज जल्दी मर्जी हो जाय।

सब समान ठीक कर आया हूँ। यह घास कहाँ रख दूँ।

घासी - इस गाय के सामने डाल दे और ज़रा झाड़ू लेकर द्वार तो साफ़ कर दे। यह बैठक भी कई दिन से लीपी नहीं गई। उसे भी गोपर से लीप दे। तब तक मैं भोजन कर लूँ। फिर जरा आराम करके चलूँगा। हाँ, यह लकड़ी भी चीर देना। खलिहान में चार खाँची भूसा पड़ा है। उसे भी उठा लाना और मसौल में रख देना।"[1]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने दुखिया चमारिन की अतिशय विनम्रता एवं समाज भीरुता और ज़मीन्दारी अधिकार लिप्सा एवं शोषण का नग्न चित्र उपस्थित किया है।

---

1. प्रेमचंद - सद्‌गति - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 20

दुखिया के चरित्र द्वारा प्रेमचंद ने सचमुच तत्कालीन समाज में शोषण की चक्की में निरन्तर पिसने वाले प्रतिक्रिया विहीन, मानवीय हक से वंचित उन तमाम दलितों को आवाज़ दी है।

अपनी बेटी की सगाई के लिए सगुन तय करने के लिए आए दुखिया पर अधिकार थोपने वाले घासीराम के शब्दों में ज़मीन्दारी रौब तथा जातीय चेतना दर्शनीय है।

आगे गोंड और दुखी के बीच का संवाद तात्कालीन वर्ग चेतना की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हैं।

गोंड - कुछ खाने को मिला कि काम ही करना जानते हैं। जाके माँगते क्यों नहीं?

दुखी - कैसी बात करते हो चिखुरी, ब्राह्मण की रोटी हमको पचेगी।"[1]

उच्चवर्ग तथा निम्नवर्ग के बीच की खाई जो आदमी-आदमी का मूल्य नहीं देखते हैं, उसी सत्य की ओर यहाँ इशारा किया गया है। थोडे ही शब्दों में उस सच्चाई को प्रेमचंद ने खोलकर दिखाया है।

दुखी के मरण के बाद पंडिताइन और पंडित के आपसी वार्तालाप द्वारा चमारिन जाति की दयनीय आर्थिक स्थिति निराशा भरा जीवन, वर्ग-वैषम्य आदि की स्थितियों को प्रेमचंद ने वाणी दी है।

---

1. प्रेमचंद - सद्‌गति - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 23

पंडिताइन - चमार का रोना मनहूस है।

पंडित - हाँ, बहुत मनहूस।

पंडिताइन - अभी से दुर्गन्ध उठने लगी।

पंडित - चमार था ससुरा कि नहीं।

खाद्य-अखाद्य किसी का विचार है इन सबों को?

पंडिताइन - इन सबों को धिन भी नहीं लगती।

पंडित - भ्रष्ट हैं सब।[1]

पंडित और पंडिताइन की संकुचित मानसिकता, अमानवीय, रूढ़िबद्ध विचारधाराएँ आदि को उपर्युक्त संवाद द्वारा वाणी दी गयी है। दुखी चमार को मृत्यु के बाद भी मानवीय हक नहीं दिया जाता है। उस लाश को भी उच्च वर्ग, वर्गीय चेतना के नाम पर भ्रष्ट स्थापित करते हैं। तत्कालीन समाज में फैली अमानवीय एवं क्रूर रीति रिवाज़ों को कहानी के पात्रों के संवादों द्वारा प्रेमचंद ने खोलकर दिखाया है। लेखकीय उद्देश्य की ओर पाठकों का ध्यान खींच लाने की दृष्टि से प्रत्येक शब्द सार्थक ही है। सभी संवाद समय और स्थिति के अनुकूल ही प्रयुक्त है। जीवन पर्यन्त जमीन्दार तथा पंडित के लिए मर मिटकर काम किये दुखिया की लाश को अंत में हठवादी पंडित को गाँव के बाहर घसीट कर ले जाना पड़ा। वास्तव में दलितों के मौन प्रतिशोध का स्वर अनजाने की यहाँ गूँज पड़ती है।

---

1. प्रेमचंद - सद्‌गति - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 25

तगादा

तगादा प्रेमचंद की चरित्र प्रधान कहानियों में से एक है। सठे चेतराम के कंजूसी चरित्र एवं धर्मभीरुता को कहानी शब्दबद्ध करते हैं। इक्केवाले और सेठजी के बीच के संवादों से कथावस्तु का पर्दाफाश होता है। वर्णनों से कहानी शुरू होती है तो भी कथावस्तु की ओर संकेत देने तथा पात्रों के चरित्र चित्रण को सार्थक बनाने के लिए संवादों का ही सहारा लिया है। सेठजी के कंजूस चरित्र की ओर दोनों पति-पत्नी के आपसी वार्तालाप संकेत देता है।

सेठानी ने पूछा - भोजन?

सेठजी ने गरजकर कहा - नहीं।

'साँझ का?'

'आने पर देखी जाएगी।'[1]

इस संक्षिप्त संवाद योजना द्वारा प्रेमचंद ने सेठजी के चरित्र को स्पष्ट किया है। कहानी को आगे बढ़ाने के लिए भी संवादों का ही सहारा लिया है। सेठजी और इक्केवाले के बीच के संवादों से कथावस्तु का क्रमिक विकास होता है।

सेठजी ने पहला वार किया–

"कहाँ घर है मियाँ साहब?

घर कहाँ है हुज़ूर, जहाँ पड़ा रहूँ, वहीं पर घर है। जब घर था तब था। अब तो बेघर; बेदर हूँ; और सबसे बड़ी बात यह है कि बेघर हूँ, तकदीर ने भी काट

1. प्रेमचंद - तगादा - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 27

लिए। लँडूरा बनाकर छोड दिया। मेरे दादा नवाबी में चकलेदार थे, हुजूर सात जिले के मालिक, जिसे चाहें, तोप-दम कर दें, फाँसी पर लटका दें।

सूरज निकलने से पहले लाखों की थैलियाँ नज़र चढ़ जाती थी हुजूर। नवाब साहब भाई की तरह मानते थे। एक दिन वह थे, एक दिन यह है कि हम आप लोगों की गुलामी कर रहे हैं। दिनों का फेर हैं।[1]

इस लम्बे संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने कहानी के पूर्व वातावरण की ओर प्रकाश डालकर इक्केवाले का चरित्र चित्रण किया है। कहानी के आगे सुन्दरी के चरित्र को खोलकर दिखाने तथा कहानीगत वातावरण में बदलाव डालने के लिए संवादों का अवसरोचित प्रयोग किया है।

तुम्हें कष्ट हो रहा है, लाओ मैं झल लूँ। यह कैसी बात है लालाजी। आप हमारे दरवाज़े पर आए हैं। क्या इतनी खातिर भी न करने दीजिएगा? और हम किस लायक है? .....

सुन्दरी ने प्रसन्न होकर कहा तो फिर आज यही रहिएगा। साँझ को फिर कहाँ जाइएगा? एक दिन घर के बाहर की हवा भी खाइए। फिर न - जाने कब मुलाकात होगी।[2]

सेठजी को अपने इरादे की ओर ले जाने वाली सुन्दरी की आवाज़ में उसकी प्रेमपरवशता तथा निम्न चरित्र को हम देख सकते हैं। लेकिन जब सुन्दरी ने

---

1. प्रेमचंद - तगादा - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 28
2. वही - पृ. 32

पान खिलाने की बात कही है तो सेठजी के धार्मिक विचार जाग उठता है। चरित्रहीन होते हुए भी वह परिस्थिति के वश में पड़कर धार्मिक भावना को ठुकराता नहीं है।

सेठ जी ने लज्जित होकर कहा – "नहीं-नहीं, यह बात नहीं। तुम मुसलमान हो न?"[1]

तात्कालीन समाज में प्रचलित जाति वैषम्यों की ओर यहाँ सूचना मिलती है। स्त्री के आकर्षण में पड़कर वह अपने धार्मिक भेदभाव को दुतकारता नहीं है। यहाँ चरित्र पर धर्म की जीत को प्रेमचंद ने उजागर किया है। उन्हीं के शब्दों में इस बात की सफल अभिव्यक्ति पाठकों को मिलती हैं।

वह हँसकर बोले – "देखो, इस तरह किसी का धर्म नहीं लिया जाता। हम लोग तुम्हारा छुआ पानी पी लें, तो धर्म भ्रष्ट हो जाए।"[2]

यहाँ तत्कालीन वातावरण की ओर स्पष्ट इशारा मिलता है। स्वार्थी होते हुए भी सेठजी अपना धर्म नहीं छोडता है। कहानी चरित्रप्रधान होते हुए भी कथ्यप्रधान है। सोद्देश्यता की दृष्टि से भी प्रत्येक संवाद सार्थक एवं सफल है।

खुचड

यह पारिवारिक जीवन की अभिव्यक्ति देने वाली एक सफल कहानी है। संबन्धों में आने वाले दरार को प्रेमचंद ने पारिवारिक जीवन की शिथिलता का

---

1. प्रेमचंद - तगादा - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 33
2. वही - पृ. 33

मूलभूत कारण बताया है। उनकी नारीवादी चेतना यहाँ संवादों में मुखरित है। पति-पत्नी के आपसी संवाद उनके चरित्र सापेक्ष्य ही है।

आपने कहा – आज तो तुमने ज़रा-सा साग लेने में पूरे आध घंटे लगा दिए। इतनी देर में हज़ार पाँच सौ का सौदा हो जाता। जरा-जरा से साग के लिए इतनी ठाँय-ठाँय करते तुम्हारा सिर भी नहीं दुखता?

रामेश्वरी ने कुछ लज्जित होकर कहा - पैसे मुफ्त में नहीं आते।

"यह ठीक है; समय का भी कुछ मूल्य है। इतनी देर में तुमने बड़ी मुश्किल से एक धेले की बचत की। कुंजडिन ने दिल में कहा होगा, कहाँ की गँवारिन है। अब शायद भूलकर भी इधर न आये।"[1]

पात्र को उसकी सारी विकृतियों सहित उभारने में प्रेमचंदीय संवाद योजना सक्षम ही है। कुन्दनलाल के कथन में हमेशा सदुपदेश की आवाज़ सुनाई देता है।

कुन्दनलाल लेटे-लेटे अखबार पढ़ रहे थे।

बोले - और जो मर जाती?

रामेश्वरी ने ढिठाई के साथ कहा – "तो मेरा दूध क्यों पी गई?"

"उसे मारने से दूध मिल तो नहीं गया?"

"जब कोई नुकसान कर देता है, तो उस पर क्रोध आता ही है।"

"न आना चाहिए। पशु के साथ आदमी भी क्यों पशु हो जाए? आदमी और पशु में इसके सिवा और क्या अंतर है?"[2]

---

1. प्रेमचंद - खुचड़ - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 87
2. वही - पृ. 88

कुन्दनलाल अपनी पत्नी को बात-बात पर विवेक और शान्ति की शिक्षा देते रहते हैं। मगर किस मनुष्यता की बातें उसके मुँह से निकलते हैं, उसी को वह अपने वैयक्तिक जीवन में लागू नहीं करते हैं। इस चरित्रहीनता की ओर भी उन्हीं के संवाद द्वारा वाणी दी गई है। सारा दिन रसोई के चार दीवारों में दम घुटने वाली रामेश्वरी, पति द्वारा तिरस्कार एवं चोट खाकर एक दिन अपनी मौन प्रतिक्रिया व्यक्त करती है।

बाबू साहब ने आँखें फाड़कर कहा–

क्या खा लूँ, यह खाना है या बैलों की सानी!

रामेश्वरी के सिर से पाँव तक आग लग गई। सारा दिन चूल्हे के सामने जली, उसका यह पुरस्कार।

बोली - मुझसे जैसा हो सका, बनाया। जो बात अपने बस की नहीं है, उसके लिए क्या करती?

"पुडियाँ सब सेवड़ी है।"

"होंगी।"

"कचौड़ी में इतना नमक था कि किसी ने छुआ तक नहीं।"

"होगा।"

"हलुआ अच्छी तरह भुना नहीं – कचाईध आ रही थी।"

"आती होगी।"

"शोरबा, इतना पतला था, जैसे चाय।"

"होगा"

स्त्री का पहला धर्म यह है कि वह रसोई के काम में चतुर हो।"[1]

प्रस्तुत व्यंग्य तथा व्यंग्यात्मक संवाद द्वारा प्रेमचंद ने रामेश्वरी के आन्तरिक मन की प्रतिक्रिया व्यक्त की है। पात्रों की बदली मानसिकता तथा कहानीगत वातावरण को अभिव्यक्त करने में प्रेमचंदीय संवाद अद्वितीय है। कुन्दनलाल और रामेश्वरी के बीच के संवाद में इस ओर संकेत मिलता है।

कुन्दनलाल ने पत्नी की ओर कठोर नेत्रों से देखकर कहा – "तुम क्यों उसकी वकालत कर रही हो? यह मोटी सी बात है और इसे एक बच्चा भी समझता है कि जो नुकसान करता है, उसे उसका दण्ड भोगना पड़ता है। मैं क्यों पाँच रुपये का नुकसान उठाऊँ? कोई वजह? क्यों नहीं इसने मटके को संभालकर पकड़ा, क्यों इतनी जल्दबाजी की, क्यों बुलाकर मदद नहीं ली? यह साफ़ इसकी लापरवाही है।"[2]

पत्नी को सदुपदेश देने वाले कुन्दनलाल के चरित्र में आए बदलाव यहाँ स्पष्ट दर्शनीय है। लेकिन रामेश्वरी में परिस्थिति वश परिवर्तन आया है। अपनी मौन प्रतिक्रिया द्वारा वह कुन्दनलाल को सही रास्ते की ओर ले आने में सफल हुई है। प्रेमचंद की नारी वादी चेतना यहाँ शब्दबद्ध हो गया है। समाज में अपमानित

---

1. प्रेमचंद - खुचड़ - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 89-90
2. वही - पृ. 92

होकर व्यक्तित्वविहीन जीवन बिताने वाले भारतीय नारियों को प्रेमचंद ने रामेश्वरी के चरित्र चित्रण द्वारा वाणी दी है। कहानी के अंत में अपने कठोर एवं स्वार्थी पति को वह अपने वश में कर दिया है।

रामेश्वरी को जगाकर बोले - कितना सोती हो तुम?

रामेश्वरी - मजूरों को अच्छी नींद आती है।

कुन्दन - चिढ़ाओ मत, महरी से रुपये न वसूल करना।

रामेश्वरी - वह तो लिये खड़ी है शायद।

कुन्दन - उसे मालूम हो जाएगा, तो काम करने आएगी।

रामेश्वरी - अच्छी बात है, कहला भेजूँगी।

कुन्दन - आज से मैं कान पकडता हूँ, तुम्हारे बीच में न बोलूँगा।

रामेश्वरी - और जो मैं घर लुटा दूँ, तो?

कुन्दन - लुटा दो, चाहे मिटा दो, मगर रूठो मत। अगर तुम किसी बात में मेरी सलाह पूछोगी, तो दे दूँगा, वरना मुँह न खोलूँगा।

रामेश्वरी - मैं अपमान न सह सकती।

कुन्दन - इस भूल को क्षमा करना।

रामेश्वरी - सच्चे दिल से कहते हो न?

कुन्दन - सच्चे दिल से![1]

---

1. प्रेमचंद - खुचड़ - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 95

कहानी के अंत में प्रयुक्त इस नाटकीय संवाद द्वारा प्रेमचंद ने अपने उद्देश्य की स्पष्ट अभिव्यक्ति पाठकों को दी है। प्रेमचंदीय उद्देश्य को सार्थक बनाने में संवाद पूरा पूरा सहयोग दिया है। यहाँ भी स्त्री को समाज में एक स्वतन्त्र व्यक्तित्व प्रदान करने की उनकी लालसा देखने को मिलती है। चरित्रोन्मुखता प्रयुक्त प्रत्येक संवाद में दर्शनीय है।

सवा सेर गेहूँ

यह ग्रामीण लोक कथा के परिप्रेक्ष्य में लिखी गई प्रेमचंद की एक श्रेष्ठ कहानी है। कहानी में प्रयुक्त शैली ग्रामीण जनजीवन के लिए उपयुक्त है। कर्ज चुकाने के लिए गुलामी करनेवाले शंकर की करुण कथा को जीवन्त एवं संवेदनशील संवादों के ज़रिये प्रेमचंद ने शब्दबद्ध किया है। कहानी आरंभ से लेकर संवादों के द्वारा ही आगे बढ़ती है। कथावस्तु का पर्दाफाश भी संवादों के ज़रिये होता है।

राह में विप्रजी ने टोककर कहा – शंकर, कल आके अपने बीज बेंग का हिसाब कर ले। तेरे यहाँ साढ़े पाँच मन गेहूँ कब से बाकी पड़े हुए हैं और तू देने का नाम नहीं लेता, क्या हजम करने का मन है क्या?

शंकर ने चकित होकर कहा – मैंने तुमसे कब गेहूँ लिये थे, जो साढ़े पाँच मन हो गए? तुम भूलते हो मेरे यहाँ किसी का छटाक भर अनाज है, न एक पैसा उधार।

विप्र - इसी नियत का तो यह फल भोग रहे हो कि खाने को नहीं जुडता।[1]

---

1. प्रेमचंद - सवा सेर गेहूँ - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 160

सामंती व्यवस्था की कूटनीति के शिकार बनने वाले शंकर तथा उस पर अन्याय करने वाले विप्र महाजन दोनों के चरित्र भी यहाँ संवाद द्वारा उद्‌घाटित होते हैं। महाजनी लूट के कारण बेचारे शंकर को किसान से खेत मजूर होना पड़ा। इस विडम्बना को भी संवाद द्वारा बाहरी अभिव्यक्ति दी है।

विप्र - लेखा जौ जौ बखशीस सौ सौ।

तुमने जो कुछ दिया होगा, उसका कोई हिसाब नहीं, चाहे एक की जगह चार पंसेरी दे दो।

तुम्हारे नाम बही में साढ़े पाँच मन लिखा हुआ है, जिससे चाहे हिसाब लगवा लो। दे दो तो तुम्हारा नाम छेक दूँ नहीं तो और भी बढ़ता रहेगा।

शंकर - पाँडे, क्यों एक गरीब को सताते हो, मेरे खाने का ठिकाना नहीं, इतना गेहूँ किसके घर से लाऊँगा?

विप्र - जिसके घर से चाहे लाओ, मैं छटाँक भर भी न छोड़ूँगा। यहाँ न दोगे, भगवान के घर तो दोगे?[1]

अपनी कहानियों के कलेवर में प्रेमचंद ने तात्कालीन सामाजिक जीवन को उसकी कटु वास्तविकताओं सहित अंकित किया है, आर्थिक शोषण की चक्की में पिसने वाले शंकर के जीवन यथार्थ को कहानी में अंकित करके प्रेमचंद ने अपने सामाजिक दायित्वबोध को निभाया है। शंकर के कथन में उसकी निस्सहायता,

---

1. प्रेमचंद - सवा सेर गेहूँ - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 161

विवशता एवं मज़बूरी साफ नज़र आता है। साल भर की कठिन तपस्या एवं आधा पेट काटकर साठ रुपये इकट्ठा किया तो भी महाजन ने उसे उरिन न किया।

शंकर - महाराज, इतनी दया करो, अब साँझ की रोटियों का भी ठिकाना नहीं है, गाँव में हूँ तो कभी दे ही दूँगा।

विप्र - मैं यह रोग नहीं पालता, न बहुत बातें करना जानता हूँ। अगर मेरे पूरे रुपये न मिलेंगे, तो आज साढ़े तीन रु. सेकडे का ब्याज लगेगा। अपने रुपये चाहे अपने घर में रक्खो, चाहे मेरे यहाँ छोड़ जाओ।[1]

यहाँ विप्र महाजन के स्वार्थी एवं अन्यायी चरित्र की ओर स्पष्ट संकेत मिलता है। महाजनी लूट के पिंजडे में बंद शंकर को आजीवन कर्जदार बंधुआ मज़दूर बन जाना पड़ा। संवाद द्वारा ही प्रेमचंद ने उसी ओर प्रकाश डाला है।

शंकर - कुछ देर तक गहरी चिन्ता में पड़े रहने के बाद कहा - महाराज, यह तो जन्म भर की गुलामी हुई!

विप्र - गुलामी समझो, चाहे मज़दूरी समझो, मैं अपने रुपये भराए बिना तुमको कभी न छोडूँगा। तुम भागोगे तो तुम्हारा लड़का भरेगा। हाँ, जब कोई न रहेगा तब की बात दूसरी है।[2]

प्रस्तुत संवाद द्वारा प्रेमचंद बताना चाहते हैं कि महाजनी लूट पीढ़ी-दर-पीढ़ी किसान मज़दूर का पीछा करता है। ऋणमुक्ति के लिए शंकर के बाद उसके

---

1. प्रेमचंद - सवा सेर गेहूँ - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 161
2. वही - पृ. 164

पुत्र को बन्धुआ मज़दूर बनना पड़ा। महाजन की आवाज़ में उसके क्रूर, दयाहीन चरित्र को वाणी दी गयी है।

प्रेमचंद की यथार्थवादी चेतना कहानी की प्रेषणीयता बढ़ाने में सहायक रहा है।

3.6 मानसरोवर-5 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

मानसरोवर - भाग-5 में संकलित कहानियों में चार प्रतिनिधि कहानियों में प्रयुक्त संवादात्मकता के विविध पहलुओं को परखने का प्रयास यहाँ किया जा रहा है।

हिंसा परमो धर्मः

प्रेमचंद की चरित्र प्रधान कहानियों में से एक है 'हिंसा परमो धर्मः' जिसमें उन्होंने धर्म के मानवीय पक्ष को उजागर किया है। तात्कालीन सामाजिक वातावरण का यथार्थ चित्रण पात्रों के संवादों द्वारा प्रेमचंद ने इसमें किया है। कहानी के संवाद सब कहीं चरित्र प्रधान और सोद्देश्य ही है। कहानी के आरंभ में जामिद के चरित्र को उभारने के लिए दूसरे लोगों के बीच के वार्तालाप को ही माध्यम बनाया है।

आखिर लोगों ने बहुत धिक्कारा –

"क्यों अपना जीवन नष्ट कर रहे हो? तुम दूसरों के लिए मरते हो, कोई तुम्हारा भी पूछनेवाला है? अगर एक दिन बीमार पड़ जाओ, तो कोई चुल्लू भर पानी न दे; जब तक दूसरों की सेवा करते हो, लोग खैरात समझकर खाने को दे देते हैं, जिस दिन आ पडेगी, कोई सीधे मुँह बात भी न करेगा।[1]

---

1. प्रेमचंद - हिंसा परमो धर्मः - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 75

जामिद की चारित्रिक विशेषताओं का उपर्युक्त संवाद खुलासा करता है। साथ ही कहानी में कथानक का विकास भी होता है। नगर में पहुँचे जामिद मन्दिर के चबूतरे को दामन से साफ करते देख वहाँ इकट्ठे भक्तों के बीच होनेवाले संवाद से चरित्र तथा कहानी आगे बढ़ती है।

"हैं तो मुसलमान!"

"मेहतर होगा।"

"नहीं मेहतर अपने दामन से सफाई नहीं करता। कोई पागल मालूम होता है।"

"उधर का भेदिया न हो।"

"नहीं, चेहरे से बड़ा गरीब मालूम होता है। हसन निजामी का कोई मुरीद होगा।"

"अजी, गोबर के लालच से सफाई कर रहा है कोई भठियारा होगा। (जामिद से) गोबर न ले जाना बे समझा? कहाँ रहता है?"

"परदेशी मुसाफिर हूँ, साहब। मुझे गोबर लेकर क्या करना है। ठाकुरजी का मन्दिर देखा, तो आकर बैठ गया। कूड़ा पड़ा हुआ था। मैं ने सोचा, धर्मात्मा लोग आते होंगे, सफाई करने लगा।"

"तुम तो मुसलमान हो न?"

"ठाकुरजी तो सबके ठाकुरजी हैं - क्या हिन्दु क्या मुसलमान।"[1]

---

1. प्रेमचंद - हिंसा परमो धर्मः - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 76

तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों की ओर प्रेमचंद ने प्रस्तुत संवाद द्वारा प्रकाश डाला गया है। धर्म के नाम पर लड़ने वाले हिन्दु-मुस्लिम को जातीय भेदभाव से ऊपर उठकर मानवतावाद के पक्षधर होकर जीवन बिताने का मौन सन्देश प्रेमचंद ने जामिद के कथन द्वारा दिया है। कहानी में आद्यन्त जामिद के कथन में प्रेमचंदीय आवाज़ की सफल अभिव्यक्ति मिलती है।

इस कहानी में भी एक कुशल रचनाकार के रूप में प्रेमचंद ने घटनाओं के ज़रिये कहानी को सोद्देश्य बनाया है। सड़क पर एक बलिष्ठ युवक द्वारा एक बूढ़े दुर्बल मनुष्य को मारते देख जामिद का रक्त खौल उठा। वह युवक के सामने आकर बोला–

"बूड्ढे को क्यों मारते हो, भाई? तुम्हें इस पर जरा भी दया नहीं आती?"

युवक - मैं मारते-मारते इसकी हड्डियों तोड़ दूँगा।.....

बुड्ढा - खुराबद मैं तो उसे बराबर खाँचे में ढाँके रहता हूँ। आज नफलत हो गई। कहता हूँ, महाराज, कुसूर माफ़ करो; मगर नहीं मानते। हुज़ूर मारते मारते अधमरा कर दिया।

युवक - अभी नहीं मारा है, अब मारूँगा – खोदकर गाड़ दूँगा।

जामिद - खोदकर गाड़ दोगे भाई साहब, तो तुम भी यों न खड़े रहोगे। समझ गए? अगर फिर हाथ उठाया, तो अच्छा न होगा।[1]

---

1. प्रेमचंद - हिंसा परमो धर्मः - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 77-78

सामाजिक जीवन की विसंगतियों तथा अमानवीय प्रवृत्तियों की ओर उपर्युक्त संवाद पाठकों का ध्यान आकर्षित करता है। धर्म के मूल में मानवतावादी दृष्टि को ही प्रमुखता देने की प्रवृत्ति यहाँ दर्शनीय है। यहाँ जामिद के संवेदनशील चरित्र उसकी सफल अभिव्यक्ति देती है।

जातीवाद तथा धार्मिक पाखण्ड के नारे लगाकर मनुष्य-मनुष्य में खाई बढ़ानेवाले तत्कालीन वर्ग चेतना को भी प्रेमचंद ने संवादों द्वारा वाणी दी है। वहाँ जमे हुए लोगों के शब्दों में इसकी ओर संकेत मिलता है।

"धत् तेरी जात की! कभी म्लेच्छों से भलाई की आशा न रखनी चाहिए। कौआ कौओं ही के साथ मिलेगा। कमीना जब करेगा, कमीनापन। इसे कोई पूछता न था, मन्दिर में झाड़ू लगा रहा था। देह पर कपड़े का तार भी न था, हमने इसका सम्मान किया, पशु से आदमी बना दिया, फिर भी अपना न हुआ।"

"इनके धर्म का तो मूल ही यही है।"[1]

हिन्दु धर्म के पोषकों के सामने जामिद की कमी यह था कि वह मुसलमान जाती के थे। हिन्दु सोचकर उसकी सज्जनता का बखान करने वाले ही उसे मुसलमान समझकर घोर अपमानित करते हैं। तात्कालीन समाज सापेक्ष्य इस प्रकार के धर्मांध नीतियों की ओर संवाद सीधा प्रहार करते हैं। इसी प्रकार जब बुड्ढा काजी जोरावर हुसैन के संवाद तो मुसलमान समझकर उसको मिलने वाले आदम सम्मान की ओर संकेत करते हैं।[2]

---

1. प्रेमचंद - हिंसा परमो धर्मः - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 78
2. वही - पृ. 79

धार्मिक खोखलेपन तथा सामाजिक वातावरण की अभिव्यक्ति देने वाले इसप्रकार के संवाद द्वारा प्रेमचंद में कहानी को एक यथार्थवादी स्वर पैदा किया है मानव मूल्यों को नकारकर कोई भी धर्म खड़ा नहीं रह सकता - इस लोक सत्य की ओर प्रकाश डालने हेतु प्रेमचंद ने इस कहानी में संवादों का अवसरोचित प्रयोग किया है।

धर्म के ठेकेदारों द्वारा मौके का फायदा उठाकर औरत पर बलात्कार करते समय जामिद को मानवतावाद के सच्चे प्रेमी के रूप में प्रेमचंद ने वाणी दी है। धार्मिक पाखण्ड के बदले भाईचारे एवं विश्वबन्धुत्व की भावनाओं को यहाँ उन्होंने वाणी दी है।

"जामिद - आपका घर किस मुहल्ले में है?

और - अहियागंज में।

जामिद - चलिए, मैं आपको पहुँचा आऊँ।

औरत - इसके बड़ी क्या मेहरबानी होगी। मैं आपकी इस नेकी को कभी न भूलूँगी। आपने आज मेरी आबरू बचा ली, वही तो मैं कहीं की न रहती। मुझे अब मालूम हुआ कि अच्छे और बुरे सब जगह होते हैं। मेरे शौहर का नाम पंडित राजकुमार है।"[1]

स्त्री के प्रति प्रेमचंदीय दृष्टिकोण यहाँ जामिद की वाणी में सुनाई देती है। जातीय झूठे प्रतिमानों के बदले सच्ची मानवतावादी चेतना यहाँ दिखाई देती है। यही

---

1. प्रेमचंद - हिंसा परमो धर्मः - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 82

वास्तव में कहानी का आदर्श भी है। यथार्थ के बदली जामिद का चरित्र आदर्श का प्रतिरूप बन गया है जिसके माध्यम से धर्म के ठेकेदारों की आँख खुली है। उस ओर भी जामिद के कथन द्वारा इशारा किया गया है।

"पंडित - मैं आपकी इस नैकी का क्या बदला दे सकता हूँ।

जामिद - इसका बदला यही है कि इस शरारत का बदला किसी गरीब मुसलमान से न लीजिएगा, मेरी आपसे यही दरख्वास्त है।[1]

कहानी के इस अंतिम संवाद संक्षिप्त तथा सारगर्भित ही है जिसके ज़रिये आदर्श की स्थापना हुई है। इस प्रकार की कहानियों द्वारा प्रेमचंद दिशा भ्रमित तात्कालीन जन मानस को सही रास्ते की ओर ले गये हैं। चरित्र चित्रण तथा उद्देश्य की दृष्टि से प्रत्येक संवाद सफल ही है।

कजाकी

'कजाकी' प्रेमचंद की चरित्रप्रधान कहानियों में एक है। कहानी गतिशीलता, घटनाक्रम का विकास तथा चरित्र चित्रण संबन्धी सभी बातों की ओर आपसी संवाद-योजना द्वारा ही प्रकाश डाला गया है। कहानी के आरंभ में कजाकी और मैं पात्र के बीच के आत्मीय संबन्ध को दिखाने के लिए दोनों के बीच के वार्तालाप को ही माध्यम बनाया है।

"मैं उसे मारने लगा, फिर रूठ करके अलग खड़ा हो गया।

---

1. प्रेमचंद - हिंसा परमो धर्मः - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 82

कजाकी ने हँसकर कहा - मारोगे, तो मैं एक चीज़ लाया हूँ, वह न दूँगा।

मैं ने साहस करके कहा - "जाओ, मत देना, मैं लूँगा भी नहीं।"

कज़ाकी - अभी दिखा दूँ, तो दौड़कर गोद में उठा लोगे।

मैं ने पिघलकर कहा - अच्छा, दिखा दो।

कजाकी - तो आकर मेरे कंधे पर बैठ जाओ, भाग चलूँ। आज बहुत देर हो गई है। बाबूजी बिगड रहे होंगे। मैं ने अकडकर कहा - पहले दिखा।[1]

प्रस्तुत संवाद, दोनों के बीच की आत्मीयता को दर्शाने में सफल हुए हैं। आगे घटनाओं की ओर संकेत देकर कथाप्रवाह को गतिशील बनाने के लिए भी प्रेमचंद ने सारगर्भित एवं उचित संवाद-योजना का ही सहारा लिया है।

"बाबूजी बिगड़कर बोले - आज इतनी देर कहाँ लगाई? अब थैला लेकर आया है, उसे लेकर क्या करूँ? एक तो चली गई। बता, तूने इतनी देर कहाँ लगाई? कजाकी के मुँह से आवाज़ न निकली।

बाबूजी ने कहा – तुझे शायद अब नौकरी नहीं करनी है। नीच है न, पेट भरा तो मोटा हो गया। जब भूखों मरने लगेगा, तो आँखें खुलेंगी।

कजाकी ने रुआँसे होकर कहा – सरकार अब कभी देर न होगी।[2]

यहाँ कजाकी तथा बाबुजी दोनों की चारित्रिक विशेषताओं की ओर प्रकाश डाला गया है। कजाकी का रोना तथा चुपचाप खड़ा होना ही उसके निस्सहाय चरित्र

---

1. प्रेमचंद - कजाकी - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 128
2. वही - पृ. 129

को अभिव्यक्ति देती है। बाबुजी की आवाज़ में उसकी दयाहीनता तथा दृढनिश्चयी व्यक्तित्व दोनों सजग होते हैं।

मैं पात्र के मन में कजाकी के प्रति होनेवाली संवेदनशीलता की ओर भी वार्तालाप द्वारा ध्यान खींच लिया गया है।

कजाकी बोला – "यह आटा कैसा है भैया? मैंने सकुचाते हुए कहा – तुम्हारे ही लिए तो लाया हूँ। तुम भूखे होंगे, आज क्या खाया होगा।"[1]

कजाकी के प्रति उसके प्यार एवं ममता को प्रस्तुत संवाद खोलकर दिखाते हैं। कज़ाकी का गायब हो जाना तथा उसकी औरत का घर में आने से कथाप्रवाह में परिवर्तन आता है। उसी ओर भी आपसी संवाद द्वारा इशारा किया गया है। "मैं ने उसके पास जाकर उसका मुँह देखते हुए कहा – तुम कौन हो, क्या बेचती हो? औरत - कुछ बेचती नहीं हूँ, तुम्हारे लिए ये कमल गट्ट लायी हूँ, भैया तुम्हें तो कमल गट्टे बहुत अच्छे लगते हैं न? मैं ने उसके हाथों से लटकती हुई पोटली को उत्सुक नेत्रों से देखकर पूछा - कहाँ से लायी हो? देखें।

औरत - तुम्हारे हरकारे ने भेजा है भैया! मैं ने उछलकर पूछा - कज़ाकी ने? औरत ने सिर हिलाकर 'हाँ' कहा....."[2]

कथानक को उद्देश्य की ओर आसानी से ले चलने की दृष्टि से प्रस्तुत संवाद का विशेष महत्व है। मैं पात्र की उत्सुकता एवं मानसिक उथल-पुथल को भी

---

1. प्रेमचंद - कजाकी - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 131-132
2. वही - पृ. 133

यहाँ वाणी दी गयी है। गायब हो जाने के बाद कजाकी के जीवन में आई सारी बातों की ओर औरत और मैं पात्र के आपसी वार्तालाप द्वारा जानकारी दी गई।

"अम्माँ - आजकल कजाकी क्या करता है? औरत ने रोकर कहा – बहुजी जिस दिन आपके पास से आटा लेकर गये हैं, उसी दिन से बीमार पडे हैं। बस, भैया-भैया किया करते है। भैया ही में उनका मन बसा रहता है। चौंक-चौंककर 'भैया! भैया!' कहते हुए द्वार की ओर दौड़ते हैं।....."[1]

कजाकी के मन में 'मैं' पात्र के प्रति जो आत्मीयता है, उसको पूरी गहराई के साथ प्रस्तुत संवाद अनावृत करते हैं। मार्मिकता एवं स्वाभिकता से युक्त होने के कारण संवाद प्रभावशाली बन गए है। दो पात्रों के बीच के संवाद द्वारा तीसरे पात्र के चरित्र-संबन्धी जानकारी देकर कहानी को गतिशीलता के साथ आगे बढ़ाना प्रेमचंद के संवादों की एक खूबी है।

कहानी के अंत में, बाबुजी के मानसिक परिवर्तन, जो कहानी का वास्तविक उद्देश्य है, उसी ओर भी संवाद-योजना का कमाल ही दिखाया है।

"बाबूजी तौलिये से हाथ - मुँह पोंछते हुए बोले – और यह भी कह देना कि साहब ने तुमको बहाल कर दिया है। जल्दी जाओ, नहीं तो कोई दूसरा आदमी रख लिया जेएगा।"[2]

उपर्युक्त अंतिम संवाद द्वारा प्रेमचंद के अपने आदर्शवाद को शब्दबद्ध किया है। मनुष्य के हृदय परिवर्तन को सभी समस्याओं के उन्मूलन के रूप में

---

1. प्रेमचंद - कजाकी - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 136
2. वही - पृ. 136

प्रेमचंद ने उजागर किया है। कहानी के सभी संवाद पात्रोचित तथा सोद्देश्य ही है। सब कहीं; चाहे घटना हो, चरित्र-चित्रण हो वह तटस्थ होकर कलम नहीं चलाते थे। प्रेमचंद द्वारा प्रयुक्त प्रत्येक संवाद जीवन के सहज प्रवाह से निकले हुए प्रतीत होती है। यही उनकी संवाद योजना की विशेषता है।

सुजान भगत

'सुजान भगत' कहानी शीर्षक की सफल अभिव्यक्ति देनेवाली एक चरित्र प्रधान कहानी है जिसमें प्रेमचंद ने सुजान महतो के मेहनती तथा आदर्श चरित्र को उपयुक्त संवादों द्वारा उजगर किया है। साथ ही घटनाओं तथा पात्रोचित क्रियाकलापों द्वारा कहानी को सोद्देश्य बनाया है। फिर भी पात्र को ही प्रथम स्थान दिया गया है।

सुजान के मन में गया करने की जो इच्छा पैदा हुई है, उसकी ओर बुलाकी और सुजान के बीच के संवाद द्वारा इशारा किया गया है।

"उसकी स्त्री बुलाकी ने कहा – अभी रहने दो, अगले साल चलेंगे।

सुजान ने गंभीर भाव से कहा - अगले साल क्या होगा, कौन जानता है।

धर्म के काम में मीन-मेष निकालना अच्छा नहीं। जिन्दगानी का क्या भरोसा? बुलाकी – हाथ खाली हो जाएगा।

सुजान – भगवान की इच्छा होगी, तो फिर रुपये हो जाएँगे। उनके यहाँ किस बात की कमी है।[1]

---

1. प्रेमचंद - सुजान भगंत - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 155

यहाँ संवाद द्वारा कथावस्तु का खुलासा करने के साथ आगे की ओर सोचने का मौका भी पाठकों को मिलता है। साथ-सुजान के चरित्र जो धार्मिक वातावरण में पले हैं, उसी की ओर भी स्पष्ट संकेत दिया गया है। कहानी में आगे सुजान के परोपकार मनोभाव की ओर भी दूसरे लोगों के बीच के आपसी वार्तालाप द्वारा प्रकाश डाला गया है।

.....'अरे भैया, यह धर्म की कमाई है। तुम भी तो छाती फाड़कर काम करते हो क्यों ऐसी ऊख नहीं लगती? क्यों ऐसी फसल नहीं होती? भगवान् आदमी का दिल देखते हैं। जो खर्च करता है, उसी को देते हैं।[1]

दूसरे पात्रों के कथन द्वारा प्रेमचंद ने सुजान के ईमानदार, सत्यनिष्ठ चरित्र को वाणी दिया है। मगर सुजान से 'सुजान भगत' बन जाने के बाद उसके जीवन में आए परिवर्तनों एवं विचारधाराओं के स्पष्टीकरण के लिए प्रेमचंद ने अपनी ओर से दो वाक्यांशों को जोडा है – "पहले उसकी यह चेष्टा होती थी कि मजूरी जितनी कम दी जा सके, दो; पर अब उसे मजूर के काम की कम, मजूरी की अधिक चिन्ता रहती थी - कही बेचारे मजूर का रोयाँ न दुखी हो जाये।"[2]

सुजान भगत की यह मानसिकता वास्तव में प्रेमचंदीय संवेदनशील नज़रिये को शब्दबद्ध करते हैं। लेकिन सुजान के जीवन में आए बदलाव उसके पारिवारिक जीवन में प्रतिफलित होने लगा। उसके हाथों से घर का स्वामीत्व ढीला होकर धीरे-धीरे वह मंदिर का देवता बन गया। इस बात की ओर प्रेमचंद ने आपसी संवादों

---

1. प्रेमचंद - सुजान भगंत - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 156
2. वही - पृ. 157

द्वारा ही प्रकाश डाला है।[1] माँ-बेटे के बीच के उस व्यंग्य संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने कहानीगत वातावरण में आये परिवर्तन की सूचना दी है। पत्नी तथा बाल-बच्चों से तिरस्कार पाकर वह अपने ही घर में परायापन महसूस करने लगा। पत्नी के मुँह से निकले शब्दों द्वारा शब्द सचमुच उस दारुण यथार्थ की अभिव्यक्ति देती है–

"बुलाकी..... अब हमारा और तुम्हारा निवाह इसी में है कि नाम के मालिक बने रहें और वही करें, जो लड़कों को अच्छा लगे। मैं यह बात समझ गई, तुम क्यों नहीं समझ पाते? जो कमाता है, उसी का घर में राज होता है, यही दुनिया का दस्तर है। मैं बिना लड़कों से पूछे कोई काम नहीं करती, तुम क्यों अपने मन की करते हो? इतने दिनों तक तो राज कर लिया, अब क्यों इस माया में पड़े हो? आधी रोटी खाओ, भगवान का भजन करो और पड़े रहे। चलो खाना खालो।[2]

परिवार में आए बदलाव को सुजान की पत्नी के शब्दों द्वारा प्रेमचंद ने बाहरी अभिव्यक्ति दी है जो कहानी के विकास का द्योतक है। लेकिन अपने ही घर में दूसरों का राज स्वीकार करने के लिए सुजान तैयार नहीं था। अपने बुढ़ापे की परवाह किये बिना वह फिर से काम करना शुरू किया। इस ओर भी संवाद द्वारा प्रकाश डाला गया है।[3]

सुजात भगत के दृढ़निश्चयी चरित्र उसकी खोयी हुई अस्मिता को पुनः प्रतिष्ठित करता है। अंत में वह घर का मालिक बन जाता है। उन्हीं के मुँह से निकले कथन द्वारा उसकी ओर संकेत किया गया है।

---

1. प्रेमचंद - सुजान भगंत - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 157-158
2. वही - पृ. 160
3. वही - पृ. 161-162

"भिक्षुक ने भोला की ओर संदिग्ध नेत्रों से देखकर कहा - मेरे लिए इतना भी बहुत है। भगत – नहीं; तुम सकुचाते हो, अभी और भरो। भिक्षुक ने एक पंसेरी अनाज और भरा, और फिर भोला की ओर सशक्त दृष्टि से देखने लगा।

भगत – उसकी ओर क्या देखते हो, बाबाजी? मैं जो कहता हूँ, वह करो। तुमसे जितना उठाया जा सके, उठा लो।[1]

महीनों पहले बेटे की राज में, उसके घर के द्वार से खाली हाथ लौटे भिक्षुक का मन भरने में सुजान सफल हो गए हैं। सुजान के दयाशील परोपकारी चरित्र को उजागर करना ही प्रेमचंद का कहानीगत उद्देश्य था। प्रस्तुत संवाद में उसकी सफल अभिव्यक्ति हुई है। कहानी के प्रत्येक संवाद सुजान भगत के चरित्र को उभारने में सहायक निकला है।

प्रायश्चित

प्रायश्चित की अग्नि में जलकर चरित्र शुद्धि हासिल करनेवाले मदारीलाल के चरित्र को इस कहानी में प्रेमचंद ने उजागर किया है। कहानीगत उद्देश्य ही शीर्षक बनकर कहानी को सार्थकता प्रदान करती है।

कथावस्तु तथा चरित्र की ओर कहानी के आरंभ में ही संवाद के ज़रिये प्रकाश डाला गया है। दफ्तर के कर्मचारियों को, उसके आने से पहले ही उल्टी-सीधी बातें कहकर वह चेतावनी देता है।

---

1. प्रेमचंद - सुजान भगत - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 164

जब ज़रा चित्त शान्त हुआ, तब मराटी ने दफ्तर के कलकों को सहकारी हुक्म सुनाते हुए कहा – "अब आप लोग जरा हाथ पाँव सँभालकर रहिएगा। सुबोधचन्द्र वे आदमी नहीं है, जो भूलों को क्षमा कर दें।"

एक क्लर्क ने पूछा – क्या बहुत सख्त है?

मदारीलाल ने मुस्कराकर कहा – वह तो आप लोगों को दो चार दिन में ही मालुम हो जाएगा। मैं अपने मुँह से किसी को क्यों शिकायत करूँ? बस, चेतावनी दे दी कि हाथ पाँव सँभालकर रहिएगा। आदमी योग्य है, पर बड़ा ही क्रोधी, बड़ा ही दम्भी। गुस्सा तो उसकी नाक पर रहता है।[1]

प्रस्तुत संवाद मदारीलाल के ईर्ष्यालु चरित्र को शब्दबद्ध करने में सफल निकला है। साथ ही कहानीगत वातावरण की ओर संकेत भी दिया गया है। सुबोधचन्द्र के आने से सच्चाई का पता सबको मिल जाता है। उन्हीं के कथन द्वारा प्रेमचंद ने चारित्रिक विशेषताओं की ओर भी प्रकाश डाला है। एक वाक्चतुर क्लर्क ने कहा - 'हम सब हुजूर के ताबेदार हैं। यथाशक्ति आपको असंतुष्ट न करेंगे; लेकिन आदमी ही हैं, अगर कोई भूल हो भी जाय, तो हुज़ूर उसे क्षमा करेंगे।

सुबोध ने नम्रता से कहा - यही मेरा सिद्धान्त है और हमेशा से यही सिद्धान्त रहा है। जहाँ रहा, मातहतों से मित्रों का सा बर्ताव किया। हम और आप दोनों ही किसी तीसरे के गुलाम है। फिर रोब कैसा और अफसरी कैसी? हाँ, हमें नेकनीयती के साथ अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए।[2]

---

1. प्रेमचंद - प्रायश्चित - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 252
2. वही - पृ. 253

सुबोध चन्द्र के ईमानदार तथा, धार्मिक, एवं मूल्यपरक जीवशैलियों को प्रेमचंद ने प्रस्तुत संवाद द्वारा वाणी दी है। सुबोध चन्द्र के विरुद्ध लोगों को भडकाने में असमर्थ होने से वह दूसरा षड्यन्त्र बनाता है। उसी ओर भी संवाद द्वारा ही प्रकाश डाला गया है।[1] चोरी का पता पाठकों को सुबोधचन्द्र और मदारीलाल के वार्तालाप से ही मिलते हैं। लेकिन सीधे होने के कारण सुबोध चन्द्र मदारी लाल पर कोई शंका नहीं रखता है। लेकिन आगे कहानी को नया मोड़ देने तथा कथानक को उद्देश्य की ओर ले जाने के लिए प्रेमचंद ने दोनों मित्रों के संवाद का ही आश्रय लिया है।

सुबोध ने करुण स्वर में कहा - "बैंक में मुश्किल से दो-चार सौ रुपये होंगे, भाईजान! रुपये होते तो क्या चिन्ता थी। समझ लेता, जैसे पचीस हज़ार उड़ गए, वैसे तीस हज़ार भी उड़ गए। यहाँ तो कफ़न को भी कौड़ी नहीं।"[2]

प्रस्तुत संवाद सुबोधचन्द्र की दयनीय आर्थिक स्थिति की ओर प्रकाश डालते हैं। अंत में अपमान और बेइज़्जती के भय से सुबोध चन्द्र आत्महत्या करता है तो उसी ओर चपरासी के कथन द्वारा संकेत दिया है।[3] साथ ही सुबोध चन्द्र के मन में अपने लँगोटीयार मदारीलाल के प्रति जो विश्वास एवं प्यार था, उसकी भी सफल अभिव्यक्ति चपरासी के कथन द्वारा पाठकों को मिलते हैं।

"क्या सेक्रेटरी साहब कोई खत लिखकर छोड़ गए है?"

---

1. प्रेमचंद - प्रायश्चित - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 255
2. वही - पृ. 257
3. वही - पृ. 257

"हाँ, मालुम होता है, छुरी चलाते वक्त याद आई कि शुबहे में दफ्तर के सब लोग पकड़ लिए जायँगे। बस, कलक्टर, साहब के नाम लिख दी।

चिट्ठी में मेरे बारे में भी कुछ लिखा है? तुम्हें यह क्या मालूम होगा?

"हुजूर अब मैं क्या जानूँ, मुदा इतना सब लोग कहते थे कि आपकी बड़ी तारीफ़ लिखी है।"[1]

सुबोध चन्द्र के मन की सादगी तथा मित्रता की गहराई की ओर प्रकाश डालने के साथ प्रस्तुत संवाद के ज़रिये कहानीगत वातावरण में भी परिवर्तन लाया गया है। आगामी घटनाओं की ओर यहाँ ध्यान खींच लिया गया है। इसी के फलस्वरूप मदारीलाल को गलती का अहसास होने लगा, जिसकी अभिव्यक्ति प्रेमचंद यों शब्दबद्ध करते हैं कि – "मदारीलाल को सारा विश्व अपने आँखों में तैरता हुआ मालूम हुआ। उन्होंने बहुत जब्त किया; मगर आँसुओं के प्रवाह को रोक न सके।"[2]

प्रायश्चित की अग्नि में हृदय को मलिनमुक्त करके सुबोधचन्द्र के मुँह से निकले शब्द कहानी को उद्देश्य की ओर स्वाभाविकता से खींच लाया है।

यह देखकर मदारीलाल ने जाकर कहा – "बहूजी, यह संस्कार मुझे करने दो। तुम क्रिया पर बैठ जाओगे, तो बच्ची को कौन सँभालेगा? सुबोध मेरे भाई थे। ज़िन्दगी में उनके साथ कुछ सलूक न कर सका, अब जिन्दगी के बाद मुझे दोस्ती का कुछ हक अदा कर लेने दो। आखिर मेरा भी तो उस पर कुछ हक था।"[3]

---

1. प्रेमचंद - प्रायश्चित - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 258
2. वही - पृ. 259
3. वही - पृ. 260

मदारीलाल के मानसिक परिवर्तन को प्रस्तुत संवाद द्वारा प्रेमचंद ने वाणी दी है। यहाँ शीर्षक की सार्थकता को भी दिखाया गया है। कहानी के अंत में प्रेमचंद ने शीर्षक की सफल अभिव्यक्ति देकर मदारीलाल को आदर्श की मूर्ति साबित किया है। रामेश्वरी और मदारीलाल के बीच के संवाद उस ओर संकेत करता है।

मदारी – "और अभी बेटी का विवाह भी तो करना है?"

विधवा - उसके विवाह की अब कोई चिन्ता नहीं किसानों में ऐसे बहुत से मिल जाएँगे, जो बिना कुछ लिये-दिये विवाह कर लेंगे।

मदारीलाल ने एक क्षण सोचकर कहा - अगर मैं कुछ सलाह दूँ, तो उसे मानेंगी आप?

रामेश्वरी - भैयाजी, आपकी सलाह न मानूँगी तो किसकी सलाह मानूँगी। और दूसरा है ही कौन?

मदारी - तो आप अपने घर जाने के बदले मेरे घर चलिए। जैसे मेरे बाल-बच्चे रहेंगे, वैसे ही आपके भी रहेंगे। आपको कष्ट न होगा। ईश्वर ने चाहा, तो कन्या का विवाह भी किसी अच्छे कुल में हो जायगा।"[1]

कहानी के इस अंतिम संवाद लेखकीय उद्देश्य को साकार बनाने में सफल हुआ है। प्रायश्चित की अग्नि में जल कर मदारीलाल का मन शुद्ध एवं सद्भावनाओं से भर गया है। प्रेमचंद ने बड़े प्रभावशाली ढंग से उपयुक्त, पात्रोचित एवं सारगर्भित

---

1. प्रेमचंद - प्रायश्चित - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 261

संवादों द्वारा कहानी को सोद्देश्य बनाया है। सचमुच संवाद-योजना के कमाल से ही कहानी प्रेषणीय बनी है।

3.7 मानसरोवर भाग-6 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

मानसरोवर भाग-6 में संकलित कहानियों में से प्रतिनिधि कहानियाँ चुनकर उनमें प्रयुक्त संवाद-योजना के बहुआयामी प्रभाव को परखने का प्रयास यहाँ किया जा रहा है।

राजा हरदौल

यह ऐतिहासिक कथानक को लेकर लिखी गई प्रेमचंद की एक प्रसिद्ध कहानी है। जिसमें ऐतिहासिकता के परिप्रेक्ष्य में मानव मूल्यों एवं भावों के चित्र खींचने का प्रयास किया गया है। बुन्देलखंड के ह्रासशील सामन्तवाद के युग को उसकी सारी विकृतियों सहित प्रेमचंद ने इस कहानी में उतारने की कोशिश की है। इस अर्थ में संवादों की भूमिका ज्यादा महत्वपूर्ण है। कहानी में वर्णनों की प्रधानता है तो भी पात्रों के चरित्र तथा क्रियाकलापों की ओर से भावव्यंजक संवादों द्वारा ही प्रकाश डाला गया है। तत्कालीन वातावरण और चरित्र-चित्रण दोनों की सफल अभिव्यक्ति देने के लिए जीवन्त संवाद-योजना का प्रयोग हुआ है।

जुझारूसिंह के चरित्र को कहानी के आरंभ में बन्धु-प्रेमी स्नेहिल भाई के रूप में किया है दक्षिण की ओर जाने से पहले हरदौलसिंह को बुला कर कहा – "भैया, मैं तो जाता हूँ। अब यह राज पाट तुम्हारे सुपुर्द है। तुम भी इसे जी से प्यार करना। न्याय ही राजा का सबसे बड़ा सहायक है। न्याय की गढ़ी में कोई शत्रु नहीं

घुस सकता, चाहे वह रावण की सेना या इन्द्र का बल लेकर आये, पर न्याय वही सच्चाई है जिसे प्रजा भी न्याय समझे। तुम्हारा काम केवल न्याय ही करना न होगा, बल्कि प्रजा को अपने न्याय का विश्वास भी दिलाना होगा और मैं तुम्हें क्या समझाऊँ, तुम स्वयं समझदार हो।[1]

जुझारुसिंह के देश-प्रेम, न्याय प्रियता एवं प्रजावत्सलता को संवाद शब्दबद्ध किया है। हरदौल के प्रति जो ममता एवं विश्वास उसके मन में हैं, उसी को भी संवाद द्वारा शब्दबद्ध किया है। संवाद सारगर्भित होने के साथ पात्रोचित भी है।

इस कहानी में वर्णनों के बीच प्रेमचंद ने कथा प्रवाह को घटनाओं द्वारा नया मोड दिया है। कादिर खाँ से हुई लड़ाई में बुन्देलों के हार की सूचना कुलीना और हरदौल के संवाद द्वारा दिया गया है।[2] राजा हरदौल के शब्दों में लड़ाई के वातावरण उसके मानसिक उथल-पुथल एवं देश के भविष्य की चिन्ता स्पष्ट सुनाई देता है। पात्रों के मानसिक परिवर्तन और संघर्ष की अभिव्यक्ति के लिए प्रेमचंद ने इसमें अवसरोचित एवं पात्रोचित संवादों का ही सहारा लिया है जिससे कहानी में प्रेषणीयता तथा गतिशीलता का समावेश हुआ है। राजा हरदौल के प्रति कुलीना के अनपेक्षित संबन्ध की सूचना जुझारूसिंह को चरित्रहीन एवं हठवादी बना देता है। वह बन्धुप्रेमी, स्नेहिल भाई से बन्धुद्रोही बन जाता है। कुलीना और राजा के आपसी वार्तालाप उस सच्चाई को खोलकर दिखाता है।

"बोली - आपके इस सन्देह को कैसे दूर करूँ?

---

1. प्रेमचंद - राजा हरदौल - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 13
2. वही - पृ. 16-17

राजा - हरदोल के खून से।

रानी - मेरे खून से दाग न मिटेगा?

राजा - तुम्हारे खून से और पक्का हो जाएगा।

रानी - और कोई उपाय नहीं?

राजा - नहीं।

रानी - यह आपका अन्तिम विचार है?

राजा - हाँ, यह मेरा अन्तिम विचार है। देखो, इस पानदान में पान का बीडा रखा है। तुम्हारे सतीत्व की परीक्षा यही है कि तुम हरदौल को इसे अपने हाथों खिला दो। मेरे मन का भ्रम उसी समय निकलेगा जब इस घर से हरदौल की लाश निकलेगी।"[1]

प्रस्तुत नाटकीय संवाद से राजा हरदौल के मन की विद्रोह भावना तथा सनी कुलीना के मानसिक घुटन एवं निस्सहायता को प्रेमचंद ने वाणी दी है। अपने सतीत्व की परीक्षा के लिए रानी मजबूर हो जाती है। उसकी मानसिक उथल-पुथल को आत्मसंवाद के ज़रिए प्रेमचंद ने आगे व्यक्त किया है।[2] चरित्रांकन की दृष्टि से तथा कहानी को घटनाओं की ओर गतिशील बनाने में भी प्रस्तुत आत्मसंवाद सहायक निकला है।

---

1. प्रेमचंद - राजा हरदौल - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 21
2. वही - पृ. 22

कहानी के अन्त में राजा हरदौल के शूर-वीर सेवाव्रती चरित्र एवं निष्पाप भावना को प्रेमचंद ने उन्हीं के मुँह से वाणी देकर उसके चरित्र की महानता को साकार बनाया है। वास्तव में लेखकीय उद्देश्य की पूर्ण अभिव्यक्ति यहाँ दर्शनीय है।

"उन्होंने संभल कर पूछा, "इस समय कहाँ चले?

हरदौल का मुखड़ा प्रफुल्लित था। वह हँस कर बोला, कल आप यहाँ पधारे हैं, इसी खुशी में मैं आज शिकार खेलने जाता हूँ। आपको ईश्वर ने अजित बनाया है, मुझे अपने हाथ से विजय का बीड़ा दीजिए।"[1]

प्रस्तुत पात्रोचित संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने कहानी को सोद्देश्य बनाया है। देश एवं देशहित के लिए आत्मबलिदान देने वाले राजा हरदौल के वीर चरित्र को उजागर करके प्रेमचंद ने तात्कालीन वातावरण को शब्दबद्ध किया है। केवल तीन पात्रों के ज़रिये उन्होंने एक महान उद्देश्य की पूर्ति की है।

लाग - डॉट

इस संग्रह की अन्य कहानियों से भिन्न होकर यह कहानी ग्रामीण परिवेश में स्वाधीनता के प्रभाव की ओर प्रकाश डालती है। लेकिन परिवेश से ज़्यादा पात्र एवं चरित्र चित्रण को ही प्रधानता दी गई है। देश प्रेम व स्वराज्यवाद की आवश्यकताओं पर बल देने वाली इस कहानी में दो मित्रों के बीच तीन पीढ़ियों से चली आ रही अदालत और आपसी झगड़े को माध्यम बनाया है। प्रेमचंदीय आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का स्पष्ट उदाहरण इसमें दर्शनीय है।

---

1. प्रेमचंद - राजा हरदौल - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 23

जब देश में राजनीतिक आंदोलन शुरू हुआ, तो दोनों मित्र-चौधरी और भगत पक्ष-विपक्ष में खड़े हो गये। एक ओर चौधरी स्वराज्यवादी हो गये तो भगत राजभक्ति से प्रेरित होकर साम्राज्यवादियों का पक्षधर बन गया। इसकी ओर दोनों मित्रों के वार्तालाप द्वारा ही प्रकाश डाला गया है।

"चौधरी जनता में स्वराज्यवाद का प्रचार करने लगे – "मित्रो, स्वराज्य का अर्थ है अपना राज। अपने देश में अपना राज्य हो, वह अच्छा है कि दूसरे का राज्य हो वह?"

जनता ने कहा - अपना राज हो, वह अच्छा है।

चौधरी – तो वह स्वराज्य कैसे मिलेगा?

"आत्मबल से, पुरुषार्थ से, मेल से, एक दूसरे से द्वेष करना छोड दो। अपने झगड़े आप मिलकर निपटा लो।

एक शंका - आप तो नित्य अदालत में खड़े रहते हैं.....

चौधरी – अपने घर का बना हुआ गाढ़ा पहनो अदालतों को त्यागो, नशेबाजी छोडो, अपने लड़कों को धर्म-कर्म सिखाओ, मेल से रहे - बस यही स्वराज्य है। जो लोग कहते हैं कि स्वराज्य के लिए खून की नदी बहेगी, वे पागल है - उनकी बातों पर ध्यान मत दो।[1]

चौधरी के वास्तविक चरित्र एवं उसकी वाक्पुटता को दर्शाने में प्रस्तुत संवाद सफल हुए है। जनता के कथन में व्यंग्य का पुट देखने को मिलता है। इसी

---

1. प्रेमचंद - लाग डॉट - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 170

प्रकार विपक्ष में खडे होकर जनता को राजभक्ति का उपदेश देने वाले भगतजी के शब्दों में उसकी चारित्रिक विशेषताओं को भली-भान्ति दर्शाया गया है।

–"भाईयो, राजा का काम राज करना और प्रजा का काम उसकी आज्ञा का पालन करना है। इसीको राजभक्ति कहते हैं। और हमारे धार्मिक ग्रन्थों में हमें इसी राजभक्ति की शिक्षा दी गई है। राजा ईश्वर का प्रतिनिधि है, उसकी आज्ञा के विरुद्ध चलना महान पातक है। राजविमुख प्राणी नरक का भागी होता है।

एक शंका - राजा को भी तो अपने धर्म का पालन करना चाहिए?

दूसरी शंका - हमारे राजा तो नाम के हैं, असली राजा तो विलायत के बनिये महाजन है।

तीसरी शंका - बनिये धन कमाना जानते हैं, राज करना क्या जानें।....."[1]

भगतजी के चरित्र एवं विचारधाराओं की ओर प्रकाश डालने के साथ तत्कालीन महाजनी सभ्यता की खोखली नीतियों की ओर भी इशारा किया गया है। कहानी में, जनता के व्यंग्य बाण द्वारा प्रेमचंद ने शासन व्यवस्था की कुरूपताओं को खोलकर दिखाने की कोशिश की है। शिक्षा प्रणाली की कमियों की ओर जनता के शब्दों में संकेत किया गया है।

"दूसरी शंका - जो विद्या घमंडी बना दे, उससे मूरख ही अच्छा। यही नयी विद्या पढ़कर तो लोग सूट-बूट, घड़ी-छड़ी, हैट-कैट लगाने लगते है और अपने शौक के पीछे देश का धन विदेशियों के जेब में भरते हैं। ये देश के द्रोही है।"[2]

---

1. प्रेमचंद - लाग डॉट - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 171
2. वही - पृ. 172

जनता के शब्द वस्तुतः प्रेमचंद का अपना मत है। इस कहानी के ज़रिये प्रेमचंद ने स्वराज्यवाद के प्रति उनकी अटूट आस्था को शब्दबद्ध किया है। अंग्रेज़ी शासन की ओर विद्रोही भावना यहाँ जनता के शब्दों में मुखरित है तो भगतजी के आवाज में देशद्रोही मानसिकता एवं स्वार्थलोलुपता नज़र आती है।

कहानी का उद्देश्य स्वराज्यवाद की प्रधानता को तत्कालीन जन मानस में प्रतिष्ठित कराना ही है। उसके लिए प्रेमचंद ने भगतजी के हृदय परिवर्तन को माध्यम बनाया है। उन्हीं के मुँह से निकले शब्दों के ज़रिये अंत में प्रेमचंद ने कहानी को सोद्देश्य बनाया है।

–"भाइयो, मुझे यहाँ देखकर अचरण मत करो, मैं स्वराज्य का विरोधी नहीं हूँ। ऐसा पतित कौन प्राणी होगा जो स्वराज्य का निन्दक हो; लेकिन इसके प्राप्त करने का वह उपाय नहीं है जो चौधरी ने बताया है और जिस पर तुम लोग लट्टू हो रहे हो..... स्वराज्य लेने का केवल एक ही उपाय है और वह आत्म-संयम है। यह महाषौधि तुम्हारे समस्त रोगों को समूल नष्ट करेगी।..... आत्मबल के बिना स्वराज्य कभी उपलब्ध न होगा।"[1]

प्रस्तुत लम्बे, सारगर्भित संवाद के द्वारा भगतजी में आए बदलाव की सूचना देने के साथ-साथ कहानी गत उद्देश्य की भी सफल अभिव्यक्ति पाठकों को मिलते हैं। कहानी में आद्यन्त पात्र खुद चरित्र की अभिव्यक्ति देते प्रतीत होते हैं। यथार्थ से आदर्श तक की कहानी की यात्रा संवाद-योजना के अवसरोचित प्रयोग से सुगम बन गई है।

---

1. प्रेमचंद - लाग डॉट - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 173-174

चकमा

शीर्षक की सफल अभिव्यक्ति देने वाली यह कहानी प्रेमचंद की छोटी कहानियों में से एक है। संवाद-योजना के अवसरोचित प्रयोग ही कहानी की सफलता का निदान है। वातावरण को वर्णनों द्वारा शब्दबद्ध करके चरित्र चित्रण एवं उद्देश्य की ओर संवादों द्वारा ही इशारा किया गया है। आरंभिक संवाद से ही कहानी के मर्म उद्‌घाटित हो जाते हैं।

इतने में मुनिम जी ने कहा – लाला जी, यह देखिये, कई व्यापारी हमारी तरफ आ रहे थे। पहरे वालों ने उनको न जाने का मन्त्र पढ़ा दिया, सब चले जा रहे हैं।

चन्दूमल - अगर इन पापियों को कोई गोली मार देता तो मैं बहुत खुश होता। यह सब मेरा सर्वनाश करके दम लेंगे।

मुनीम - कुछ हेठी तो होगी, यदि आप प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कर देते तो यह पहरा उठ जाता। तब हम भी यह सब माल किसी-न-किसी तरह खपा देते।

चन्दूमल - मन में तो मेरे भी यह बात आती है, पर सोचो अपमान कितना होगा? इतनी हेकड़ी दिखाने के बाद फिर चुका नहीं जाता। ....मगर एक उपाय सूझ रहा है। अगर चकमा चल गया तो पौ बारह है। बात तो तब है जब साँप को मारूँ, मगर लाठी बचाकर। पहरा उठा दूँ, पर बिना किसी की खुशामद किये।[1]

चन्दूमल के शब्दों में उसके स्वार्थलोलुप, धनमोही एवं चरित्रहीन व्यक्तित्व साफ मुखरित है। कथावस्तु का पर्दाफाश होने के साथ आगे की घटनाओं की ओर

---

1. प्रेमचंद - चकमा - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 185

भी स्पष्ट संकेत यहाँ मिलता है। तत्कालीन सामाजिक वातावरण को भी यहाँ वाणी मिला है। सेठजी की अवसरवादी, बदली हुई मानसिकता की ओर भी संवाद-योजना के ही माध्यम से प्रकाश डाला गया है।[1] प्रस्तुत संवाद के द्वारा कथानक तथा पात्र गतिशील होते हैं। आगे की ओर सोचने के लिए भी पाठकों को बाध्य कर देते हैं।

अपने कारोबार को आगे बढाने के लिए अवसरवादी एवं स्वार्थी सेठजी काँग्रेस वालों की खुशामद करने से भी हिचकते नहीं है। अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए सेठजी कुछ भी करने को तैयार हो जाता है जिसके कारण वह पुलिस के खिलाफ गवाही नहीं देता है। काँग्रेस के दफ्तर में मंत्री और प्रधान के बीच होने वाले संवाद इसकी ओर संकेत करता है।

"प्रधान ने कहा - सेठ चन्दूमल की दूकान पर धरना देने के लिए दो स्वयंसेवक भेजिए। मंत्री - मेरे विचार में वहाँ अब धरना देने की कोई ज़रूरत नहीं।

प्रधान - क्यों? उन्होंने अभी प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर तो नहीं किये?

मंत्री - हस्ताक्षर नहीं किये, वह हमारे मित्र अवश्य हो गये। पुलिस की तरफ से गवाहीह न देना यही सिद्ध करता है। अधिकारियों का कितना दबाव पड़ा होगा, इसका अनुमान किया जा सकता है। यह नैतिक साहस में परिवर्तन हुए बिना नहीं आ सकता।"[2]

---

1. प्रेमचंद - चकमा - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 185-186
2. प्रेमचंद - लाग डॉट - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 188

मंत्री के शब्दों में सेठजी के झूठे बयान का स्पष्ट प्रभाव दर्शनीय है। काँग्रेस वालों के मन में परिवर्तन लाकर अपनी कुचक्र से सेठजी लक्ष्य की पूर्ति करता है। उसी ओर मुनीम और सेठजी के आपसी वार्तालाप द्वारा प्रकाश डाला गया है।

"मुनीम से बोले - कौड़ी चित्त पड़ी।

मुनीम - मालूम तो होता है। एक महाशय भी नहीं आये।

चन्दूमल - न आये और न आयँगे।

बाज़ी अपने हाथ रही। कैसा दाँव खेला चारों खाने चित्त।

चन्दूमल - आप भी बातें करते हैं? इन्हें दोस्त बनाते कितनी देर लगते हैं। कहिए, अभी बुलाक जूतियाँ सीधी करवाऊँ टके के गुलाम हैं न किसी के दोस्त, न किसी के दुश्मन। सच कहिये, कैसा चकमा दिया है?

मुनीम - बस, यही जी चाहता है कि आपके हाथ चूमलें। साँप भी मरा और लाठी भी न टूटी। मगर काँग्रेस वाले भी टोहे में होंगे।....."[1]

प्रस्तुत संवाद कहानी को पाठकों के सामने सचमुच शब्द बद्ध किया है। संवाद द्वारा चन्दूमल के खटिया चरित्र सामने आने के साथ कहानी को सोद्देश्य भी बनाया गया है। प्रत्येक शब्द लेखकीय उद्देश्य की सार्थक अभिव्यक्ति पाठकों को देते प्रतीत होती है।

---

1. प्रेमचंद - लाग डॉट - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 189

3.8 मानसरोवर - भाग-7 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

मानसरोवर भाग-7 में 23 कहानियाँ संकलित किया गया है। उनमें से 4 प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता को परखने का प्रयास यहाँ किया जा रहा है।

जुलूस

तत्कालीन सामाजिक वातावरण को शब्दबद्ध करनेवाली इस कहानी के ज़रिये प्रेमचंद ने देशप्रेम व स्वराज्यवादी विचारधाराओं का सशक्त चित्रण किया है। कहानी यथार्थवादी धरातल पर आगे बढ़ती है। कहानी के आरंभ में शंभुनाथ और दीनदयाल के बीच के संवाद द्वारा कथावस्तु की ओर संकेत दिया गया है।

"शम्भूनाथ ने दूकान की पटरी पर खड़े होकर अपने पडोसी दीनदयाल से कहा - "सब के सब काल के मुँह में जा रहे हैं। आगे सवारों का दल मार-मार भगा देगा। दीनदयाल ने कहा - महात्माजी भी सठिया गए हैं। जुलूस निकालने से स्वराज्य मिल जाता तो अब तक कब का मिल गया होता और जुलूस में हैं कौन लोग देखो लौंडे लफंगे, सिर-फिरे। शहर का कोई बड़ा आदमी नहीं।"[1]

प्रस्तुत संवाद के माध्यम से प्रेमचंद ने स्वतन्त्रता आन्दोलन से जुडी सामाजिक विषमताओं एवं आम आदमी के योगदान को रेखांकित किया है। उस यथार्थ को आगे मैकू के शब्दों में खोलकर दिखाया गया है–

"मैकू – "हँसा इस बात पर जो तुमने कही कि कोई बड़ा आदमी जुलूस में नहीं है। बड़े आदमी क्यों जुलूस में आने लगे, उन्हें उस राज में कौन आराम नहीं

---

1. प्रेमचंद - जुलूस - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 44

है? बंगलों और महलों में रहते हैं, मोटरों पर घूमते हैं, साहबों के साथ दावत खाते हैं, कौन तकलीफ़ है? मर तो हम लोग रहे हैं, जिन्हें सेटियों का ठिकाना नहीं।"[1]

उपर्युक्त कथन वास्तव में प्रेमचंद का अपना मन है। मैकू यहाँ प्रेमचंद की प्रतिनिधि बनकर आवाज़ उठा रहा है। स्वराज्य की माँग वास्तव में आम जनता की ओर से सशक्त रूप से आया है। क्योंकि पराधीन देश में रहने का बोझ समाज के दीन दुखियों को सबसे ज़्यादा सहना पड़ा है। उच्च वर्ग केवल बातों से स्वराज्य की माँग करते हैं, उसके लिए मर मिटना केवल आम आदमी ही है। गाँधीजी के अहिंसक लडाई की ओर कहानी सीधा संकेत देती है। कहानी में इब्राहिम अली के शब्दों में वह आवाज़ गूँज उठती है।[2] कहानी आद्यान्त स्वराज्यवादी भावनाओं को बढ़ावा देती है। बीरबल और इब्राहिम का वार्तालाप हमेशा कहानी को आगामी घटनाओं की ओर मोडने में सहायक रहते हैं। कहानी के हरेक पात्र खुद चरित्र को अभिव्यक्त करते रहते हैं। देश को आज़ादी दिलाने के लिए मर मिटने वाले धीर योद्धाओं के आत्मबलिदान को भी शंभू के शब्दों में उजागर किया गया है। साथ ही कहानी को आगे की ओर खींच लाई गई है।

"एकाएक उसने भी दूकान बढ़ाली और बोला - एक दिन तो मरना ही है, जो कुछ होना है हो। आखिर वे लोग सभी के लिए तो जान दे रहे हैं। देखते-देखते अधिकांश दूकानें बंद हो गई। वे लोग जो दस मिनट पहले तमाशा देख रहे थे, इधर-उधर से दौंड़ पड़े और हज़ारों आदमियों का एक विराढ दल घटनास्थल की

---

1. प्रेमचंद - जुलूस - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 44
2. वही - पृ. 45

ओर चला। यह उन्मत्त हिंसमद से भरे हुए मनुष्यों का समूह था, जिसे सिद्धान्त और आदर्श की परवाह न थी।....[1]

यहाँ पात्र विशेष से बढ़कर देशस्नेही भावनाओं की सफल अभिव्यक्ति दर्शनीय है। तत्कालीन वातावरण उसके मूर्त रूप में यहाँ दर्शनीय है।

कहानी में आगे दारोगा बीरबल सिंह और स्वराज्य स्नेही पत्नी मिट्ठन बाई के बीच के संवाद कहानी को उद्देश्य की ओर परिवर्तित करने में सर्वथा सहायक रहा है।[2] मिट्ठन बाई के कथन में दृढ़ता एवं स्वराज्य के प्रति अटूट आस्था विद्यमान है। लेकिन पति दारोगा बीरबल सिंह के शब्दों में भीरुता तथा स्वामी भक्ति स्पष्ट दिखाई देता है।

जुलूस निकलने की बात दोनों पती-पत्नी के आपसी संवाद द्वारा बाहरी अभिव्यक्ति पाती है।

"बीरबल सिंह के लिए कोई सरकारी चिट्ठी आने पर मिट्ठन ने पूछा -- क्या तरक्की का परवाना आ गया?

बीरबल सिंह ने झेंपकर कहा – तुम तो बनाती हो। आज फिर कोई जुलूस निकलने वाला है। मुझे उसके साथ रहने का हुक्म हुआ है।

मिट्ठन – फिर तो तुम्हारी चाँदी है, तैयार हो जाओ। आज फिर वैसे ही शिकार मिलेंगे। खूब बढ़-चढ़कर हाथ दिखलाना। डी.एस.पी. भी ज़रूर आएँगे। अबकी तुम इन्स्पेक्टर हो जाओगे! सच।"[3]

---

1. प्रेमचंद - जुलूस - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 47
2. वही - पृ. 48
3. वही - पृ. 49

स्वराज्यवादी मिट्ठन के शब्दों में बीरबल पर व्यंग्य बाण दर्शनीय है। कहानी को शीर्षक की सार्थक अभिव्यक्त देने के अर्थ में प्रत्येक संवाद महत्वपूर्ण है। कथानक के घटनाक्रम में आए परिवर्तनों की ओर भी संवाद प्रकाश डालता है।

जुलूस में आई देशस्नेही महिलाओं के व्यंग्योक्तियाँ सचमुच दारोगाजी के हृदय में हलचल मचायी है।

"एक बुढिया ने आँखें चढ़ाकर कहा – "मेरी कोख में ऐसा बालक जन्म होते, तो उसकी गर्दन मरोड़ देती।

एक युवती ने उसका तिरस्कार करके कहा – आप भी खूब कहती है, माताजी, कुत्ते तक तो नमक का हक अदा करते हैं, यह तो आदमी है।

बुढिया ने झल्लाकर कहा – पेट के गुलाम, हाय पेट। हाय पेट।[1]

तत्कालीन वातावरण में देशद्रोही को लोग किस नज़रिये से देखते हैं, उस यथार्थ का प्रस्तुत संवाद खुलासा कर देता है। प्रेमचंदीय विचारधाराओं को रूपायित करने में कहानी के प्रत्येक संवाद अपनी सफल भूमिका निभायी है। बीरबल सिंह के परिवर्तित चरित्र की ओर संकेत देने के लिए भी प्रेमचंद ने संवाद-योजना का ही सहारा लिया है।

बीरबल ने तीव्र भाव से कहा – "चुप रहो! जानते भी हो, सरकश किसे कहते हैं? सरकश वे कहलाते हैं, जो डाके मारते हैं, चोरी करते हैं, खून करते हैं।

---

1. प्रेमचंद - जुलूस - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 50

उन्हें सरकश नहीं कहलाते, जो देश की भलाई के लिए अपनी जान हथेली पर लिए फिरते हो। हमारी बदनसीबी है कि जिनकी मदद करनी चाहिए, उनका विरोध कर रहे हैं। यह घमंड करने और खुश होने की बात नहीं है, शर्म करने और रोने की बात है।"[1]

गाँधीजी की अहिंसात्मक लड़ाई के महत्व तथा देशस्नेही वीर योद्धाओं के आत्म बलिदान को प्रस्तुत संवाद उजागर करने के साथ-साथ कहानी को सोद्देश्य भी बनाई है। बीरबल सिंह के शब्द उसके मानसिक परिवर्तन का द्योतक ही है। उसकी पुष्टी कहानी के अंतिम संवाद में दर्शनीय है। इब्राहिम अली के घर में पति को देखकर उसने क्रोधमय आश्चर्य से पूछा – "तुम यहाँ कैसे आये?"

बीरबल सिंह ने कहा – "उसी तरह जैसे तुम आयी। अपने अपराध क्षमा करने आया है।"[2]

कहानी का मर्म इस अंतिम शब्दों में उद्‌घाटित हुआ है। प्रत्येक संवाद सोद्देश्य, स्वाभाविक एवं सारगर्भित है जिसके ज़रिये कहानी गतिशीलता के साथ आगे बढ़ी है।

दुर्गा का मन्दिर

'दुर्गा का मन्दिर' कहानी में भारतीयों की धर्म भीरू मानसिकता तथा जीवन मूल्यों के प्रति अटूट आस्था को अंकित करने का सफल प्रयास किया गया है। ये दोनों ही वास्तव में भारतीयता की पहचान है।

---

1. प्रेमचंद - जुलूस - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 52
2. वही - पृ. 53

कहानी के आरंभ में व्रजनाथ और भाषा के आपसी वार्तालाप कहानीगत वातावरण की स्पष्ट अभिव्यक्ति पाठकों को देती है।

"व्रजनाथ ने क्रुद्ध होकर भामा से कहा - तुम इन दुष्टों को यहाँ से हटाती हो कि नहीं? नहीं तो मैं एक-एक की खबर लेता हूँ।

भामा चुल्हे में आग जला रही थी, बोली – अरे तो क्या संध्या को भी पढ़ते ही रहोगे? ज़रा दम तो ले लो।

व्रज - उठा तो न जाएगा, बैठी-बैठी वहीं से कानून बघारोगी! अभी एक आध को पटक दूँगा, तो वही से गरजती हुई आओगी कि हाय-हाय! बच्चों को मार डाला।[1]

कथावस्तु का पर्दाफाश होने के साथ दोनों के चरित्र की ओर भी यहाँ प्रकाश डाला गया है। आगे की ओर कहानी, स्पष्ट संकेत भी देती है। माया ओर व्रजनाथ के बीच के वार्तालाप से कहानी में घटना विस्तार भी होता है। व्रजनाथ के हाथ में स्वावरेन देखकर भामा ने पूछा – किसका है?

व्रज - मेरी

भामा - चलो, कहीं हो न।

व्रज - पडी मिली है।.....

भामा गिन्तियों को पति के हाथ से छीनने की चेष्टा करने लगी।

---

1. प्रेमचंद - दुर्गा का मन्दिर - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 110

व्रजनाथ ने कहा - क्यों छीनती हो?

भामा - लाओ, मैं अपने पास रख लूँ।

व्रज रहने दो, मैं इसकी इत्तला करने थाने जाने जाता हूँ।

भामा का मुख मलिन हो गया। बोली –

पड़े हुए धन की क्या इत्तला?

व्रज - हाँ, और क्या, इन आठ गिन्नियों के लिए ईमान बिगाड़ूँ न?..... गुलबन्द की लालसा में गले में फाँसी लगाना चाहती हो क्या?[1]

व्रजनाथ और भामा की चारित्रिक विशेषताओं की ओर प्रस्तुत संवाद द्वारा प्रेमचंद ने प्रकाश डाला है। संक्षिप्तता तथा नाटकीयता संवाद को प्रेषणीय बनाने में सहायक रहा है। संवाद के ज़रिये आगे की घटनाओं की ओर नाटकीय सूचना भी पाठकों को मिलते हैं।

धन की लालसा से प्रेरित होकर भामा पराया धन लौटाना नहीं चाहती थी। मगर उसके मन में अपराध बोध छाया हुआ था। इसलिए उसके कानों में देवी के मुँह से निकले शब्द - 'पराया धन लौटा दे, तेरा भला होगा' - गूँजने लगी। प्रेमचंदीय आदर्शवाद यहाँ भामा के चरित्र को बदल डालने में कार्यरत है। धर्मभीरू भारतीय जनमानस को यहाँ प्रेमचंद ने वाणी देने की कोशिश की है।

पात्रों के हृदय परिवर्तन द्वारा प्रेमचंद ने यथार्थ को आदर्श की ओर आसानी से ले गया है। कहानी में, हाथ फैलाकर देवी के सामने भीख माँगनेवाली

---

1. प्रेमचंद - दुर्गा का मन्दिर - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 110

वृद्ध स्त्री की प्रार्थना भामा के अन्तःकरण में प्रतिध्वनि होने लगी। 'पराया धन लौटा दो, नहीं तो तेरा सर्वनाश हो जायगा।"[1]

यहाँ प्रस्तुत कथन उसके हृदय में गलती की अहसास जगा देने में सहायक हुआ है। अपने उद्देश्य को लक्ष्य तक पहुँचाते में प्रेमचंद संवादों एवं घटनाओं का अवसरोचित प्रयोग करने में सिद्धहस्त थे। आगे की ओर सोचने में पाठकों को वह मज़बूर कर देते हैं। आगे की कथा की ओर संकेत देकर ही यहाँ संवादों का प्रयोग किया गया है। वृद्धा और भामा के बीच के संवाद में उपर्युक्त बात की पुष्टी होती है।

"क्यों माता, तुम्हारा धन किसी ने ले लिया है?

बोली - हाँ बेटी।

भामा - कितने दिन हुए?

वृद्धा - कोई डेढ़ महीना।

भामा - कितने रुपये थे?

वृद्धा - पूरे एक सौ बीस।

भामा - कैसे खोए?

वृद्धा - क्या जाने कहीं गिर गए। मेरे स्वामी पलटन में नौकर थे। आज कई बरस हुए वह परलोक सिधारे। अब मुझे सरकार से साठ रुपये साल पेन्शन मिलती है। अब की दो साल की पेन्शन एक साथ ही मिली थी। खजाने से

---

1. प्रेमचंद - दुर्गा का मन्दिर - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 117

रुपये लेकर आ रही थी। मालूम नहीं, कब और कहाँ गिर पड़े। आठ गिन्नियाँ थीं।[1]

प्रस्तुत स्वाभाविक, नाटकीय संवाद द्वारा प्रेमचंद ने कहानी का रूप परिवर्तन किया है जो कहानी को सोद्देश्य बनाने सहायक रहा है। यहाँ भी भामा के हृदय परिवर्तन को शब्दबद्ध किया है। ईश्वरीय न्याय की स्थापना, मानव जीवन को सही रास्ते की ओर ले चलते हैं। एक दिग् भ्रमिक समाज में धार्मिक सद्भावनाओं को जगाकर लोगों को मूल्यों की ओर उन्मुख करने में कहानी सफल निकला है। कहानी का वास्तविक अन्त दोनों पति-पत्नी के आपसी वार्तालाप से हुआ है।

"ये लो अपने रुपये; गोरेलाल दे गए। भामा ने कहा - ये मेरे रुपये नहीं, तुलसी के है, एक बार पराया धन लेकर सीख गई।

व्रज - लेकिन तुलसी के पूरे रुपये तो दे दिए गए।

भामा - दे दिए गये तो क्या हुआ? ये उसके आशीर्वाद की न्योछावर है।

व्रज - कान के झुमके कहाँ से आयेंगे।

भामा - झुमके न रहेंगे, न सही, सदा के लिए 'कान' तो हो गए।"[2]

यहाँ इस अंतिम संवाद द्वारा प्रेमचंद ने एक ऐसे समाज की कल्पना को साकार बनाया जो धर्म और ईश्वरीय न्याय की नींव पर खड़े हो। भावाभिव्यक्ति की तीव्रता संवाद को प्रभावशाली एवं सोद्देश्य बनाया है।

---

1. प्रेमचंद - दुर्गा का मन्दिर - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 117
2. वही - पृ. 118

बड़े घर की बेटी

आदर्शवादी ढंग से लिखी गई इस कहानी में सामंतवादी समाज के टूटने से उत्पन्न जीवन विसंगतियों का चित्रण किया गया है। सामंतवादी समाज के टूटने से वस्तुतः संयुक्त परिवार - प्रथा अंग हो गई थी। उसके परिणामों की ओर कहानी ध्यान आकर्षित करती है।

पारिवारिक वातावरण तथा पात्र संबन्धी जानकारी विवरणों द्वारा देकर घटनाविशेष की ओर संवाद-योजना द्वारा प्रकाश डाला गया है। कहानी के मुख्य पात्र आनन्दी के चरित्र को उद्‌घाटित करने के लिए दूसरे पात्रों के वार्तालाप का ही सहारा लिया है। भामा के चरित्र चित्रण के लिए लालबिहारी और बेनीमाधव के संवाद का ही आश्रय लिया है।

"एकान्त हुआ, तो लालबिहारी ने कहा - भैया, आज ज़रा भाभी को समझा दीजिएगा कि मुँह संभालकर बातचीत किया करें, नहीं तो एक दिन अनर्थ हो जाएगा।

बेनीमाधव सिंह ने बेटे की ओर साक्षी दी - हाँ, बहु-बेटियों का यह स्वभाव अच्छा नहीं कि मर्द के मुँह लगें।

लालबिहारी - वह बडे घर की बेटी हैं, तो हम भी कोई - कुर्सी कहार नहीं है। श्रीकंठ ने चिंतित स्वर में पूछा - 'आखिर बात क्या हुई?'

लालबिहारी ने कहा - कुछ भी नहीं, यों ही आप ही उलझ पड़ीं। मैके के सामने हम लोगों को कुछ समझती नहीं।"[1]

---

1. प्रेमचंद - बड़े घर की बेटी - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 123

प्रस्तुत संवाद द्वारा कथानक की ओर स्पष्ट संकेत मिलता है। झगडे का मूल कारण संयुक्त परिवार में उत्पन्न बिखराव ही है। आनंदी और श्रीकंठ के आपसी वार्तालाप आगे की घटनाओं की सूचना देते हैं। यहाँ पारिवारिक बिखराव की ओर स्पष्ट संकेत दिया गया है।

"प्रातः काल अपने बाप के पास जाकर बोले - दादा, अब इस घर में मेरा निबाह न होगा।.....

बेनीमाधव घबरा उठे और बोले 'क्यों?'

श्रीकंठ - इसलिए कि मुझे भी अपनी मान प्रतिष्ठा का कुछ विचार है। आपके घर में अब अन्याय और हठ का प्रकोप हो रहा है। जिनको बडों का आदर-सम्मान करना चाहिए, वे उनके सिर चढ़ते हैं। मैं दूसरे का नौकर ठहरा, घर पर रहता नहीं। यहाँ - मेरे पीछे स्त्रियों पर खड़ाऊँ और जूतों की बौछारें होती हैं।...."[1]

पारिवारिक संबन्धों में आए अलगाव को संवाद द्वारा प्रेमचंद ने शब्दबद्ध किया है। कहानीगत वातावरण की ओर भी यहाँ इशारा मिलता है। यहाँ झगडे के केन्द्र में आनन्दी को ही रखा गया है। घटना विशेष का परस्पर बाँधकर कथावस्तु का क्रमिक विकास कराने में संवाद सफल निकला है।

दोनों भाइयों के मेल टूटने की ओर भी श्रीकंठ के कथन द्वारा बाहरी अभिव्यक्ति दिया गया है।[2] दोनों भाइयों के रिश्ते में आए उस तनाव को शब्दबद्ध

---

1. प्रेमचंद - बड़े घर की बेटी - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 124
2. वही - पृ. 125

करने के साथ प्रेमचंद ने वस्तुतः एक व्यवस्था के टूटने का चित्रण किया है। कहानी को बिना कोई रुकावट से उद्देश्य की ओर मोड़ने में संवाद सफल ही निकला है।

जब समस्या की गहराई का पता चला तो लालबिहारी से सहा न पाया वह आनंदी से कहकर क्षमा माँगते हुए घर छोड़ने का वादा करता है।[1] प्रस्तुत कथन द्वारा प्रेमचंद ने लालबिहारी के मानसिक परिवर्तन को वाणी दी है, और कहानी को उद्देश्य की ओर परिवर्तित भी किया है। तत्कालीन समाज में गिरते मूल्यों को पुनर्जीवित करने की तीव्र इच्छा प्रेमचंद में दर्शनीय है। इसीलिए वह संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था को टूटने से बचाता है। बिगडते उस परिवार को फिर से बनाने का काम अंत में आनंदी अपना परम कर्तव्य समझती है। श्रीकंठ के साथ हुए वार्तालाप उस ओर संकेत करता है।

"श्रीकंठ को देखकर आनंदी ने कहा –

लाला बाहर खड़े बहुत दो रहे हैं।

श्रीकंठ - तो मैं क्या करूँ?

आनंदी - भीतर बुला लो। मेरी जीभ में आग लगे। मैं ने कहाँ से यह झमडा उठाया।

श्रीकंठ - मैं न बुलाऊँगा।

आनंदी - "पछताओगे। इन्हें बहुत ग्लानि हो गई है, ऐसा न हो, कहीं चल।"[2]

---

1. प्रेमचंद - बड़े घर की बेटी - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 126
2. वही - पृ. 126

आनंदी के चरित्र के उज्ज्वल पक्ष यहाँ अनावृत होता है। दोनों भाइयों को फिर से मिलाने के लिए दृढ़प्रतिज्ञ होकर वह आगे बढ़ती है। आगामी घटनाओं की ओर भी यहाँ सूचना मिलती है। यहाँ पात्रों के क्रियाकलापों की ओर प्रकाश डालने में संवाद की भूमिका सर्वप्रथम ही है। कहानी के अंत में लालबिहारी आनन्दी से कहकर घर छोडकर जाने को उद्यत हो गया तो श्रीकंठ का पत्थर सा कलेजा पिघलकर वह लाल बिहारी से गले लगा दिया। इस अवसर पर दोनों भाइयों ओर बेनिमाधव सिंह के बीच के संवाद कहानी को सोद्देश्य बनाने में सहायक रहा है।

"लाल बिहारी सिसकते हुए कहा –

"भैया, अब कभी मत कहना कि तुम्हारा मुँह न देखूँगा, इसके सिवा आप जो दंड देंगे, मैं सहर्ष स्वीकार करूँगा। ..... दोनों भाइयों के गले मिलने देख, आनंद से पुलकित हो गए। बोल उठे – बढ़े घर की बेटियाँ ऐसी ही होती हैं। बिगड़ना काम बना लेती है।"[1]

यहाँ एक घर को ही नहीं एक संपूर्ण व्यवस्था को बिगड़ने से बचाने का काम प्रेमचंद ने उस अंतिम संवाद के द्वारा सफल बनाया है। पारिवारिक एकता को उन्होंने समाज के कल्याण के लिए आवश्यक माना है। पात्र हो, संवाद हो, कथानक हो या वातावरण हो, कहीं भी प्रेमचंद तटस्थ होकर कलम नहीं चलाते। उनके संवाद जीवन प्रवाह से निकले जीवन्त उक्तियाँ है जिसके अन्तर्गत मानव जीवन का संपूर्ण चित्र शब्दबद्ध हो गए हैं।

---

1. प्रेमचंद - बड़े घर की बेटी - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 127

पंच परमेश्वर

प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वप्रथम लिखी गई कहानी है 'पंच परमेश्वर'। न्याय एवं धर्म की जीत को उद्घाटित करनेवाली इस कहानी में प्रेमचंद ने देहाती जीवन शैलियों के प्रति गहरा विश्वास और आस्था प्रकट किया है। कहानी में आद्यान्त अन्याय के विरुद्ध संघर्षशील बूढ़ी खाला के इर्द-गिर्द संवाद घूमती रहती है।

कहानी विवरणों से शुरू होती है तो भी कथावस्तु को गतिशील बनाने के लिए प्रेमचंद ने संवाद-योजना का ही सहारा लिया है। कहानी में घटनाविशेष की अभिव्यक्ति के लिए जुम्मन शेख और बूढ़ी खाला के आपसी संवाद का साहारा लिया है।

"खाला ने जुम्मन से कहा - बेटा। तुम्हारे साथ मेरा निर्वाह न होगा। तुम मुझे रुपये दे दिया करो, मैं अपना पका खा लूँगी।

जुम्मन ने घृष्टता के साथ उत्तर दिया - रुपये क्या यहाँ फलते हैं?

खाला ने नम्रता से कहा – मुझे कुछ रूख सूखा चाहिए कि नहीं?

जुम्मन ने गंभीर स्वर में जवाब दिया – तो कोई यह थोड़े ही समझा था कि तुम मौत से लड़कर आयी हो? खाला बिगड़ गई, उन्होंने पंचायत करने की धमकी दी। ....वह बोले - हाँ, ज़रूर पंचायत करो। फैसला हो जाय। मुझे भी यह रात-दिन की खटपट पसंद नहीं।"[1]

---

1. प्रेमचंद - पंच परमेश्वर - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 129

कहानी को आगामी घटनाओं की ओर ये संवाद ले जाते हैं। जुम्मन और खाला के चरित्र की ओर भी स्पष्ट संकेत मिलता है। कहानीगत वातावरण यहाँ संवाद द्वारा अनावृत होते हैं।

अलगू और खाला के आगे के संवाद सचमुच कहानी को गतिशील बनाता है।[1] पंचायत करने पर जुम्मन को पूरा विश्वास था क्योंकि अलगू उसका पुराना मित्र था। सबके सामने न्याय के लिए बिनती करनेवाली बूढ़ी खाला के मन में ईमान से जीने की लालसा दर्शनीय है। प्रेमचंद खाला चरित्र के ज़रिये यह बताना चाहते हैं कि मनुष्य की अभिलाषाएँ कभी बूढ़ी नहीं होती हैं। यहाँ पंच को परमेश्वर मानकर उस के फैसले को स्वीकारने वाले ग्रामीण जीवन रीतियों को भी उजागर किया है।

पंचायत के सामने न्याय की माँग करनेवाली बूढ़ी खाला जुम्मन की क्रोध भरे आक्षेप का उत्तर यों देती है–

"बेटा, खुदा से डरो। पंच न किसी के दोस्त होते हैं, न किसी के दुश्मन। कैसी बात कहते हो। और तुम्हारा किसी पर विश्वास न हो, तो जाने दो? अलगू चौधरी को मानते हो? लो मैं उन्हीं को सरपंच बदती हूँ।[2]

ग्रामीण अनपढ़ बूढ़ी खाला के मन में पंचायत के प्रति जो आस्था एवं विश्वास है, उसी को प्रस्तुत संवाद खोलकर दिखाता है। पंचायत का फैसला व्यक्ति हित पर आधारित नहीं, बल्कि समाज हित पर केन्द्रित है। इसलिए तो खाला कहती

---

1. प्रेमचंद - पंच परमेश्वर - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 130
2. वही - पृ. 131-132

है – "पंच के दिल में खुदा बसता है। पंचों के मुँह से जो बात निकलती है, वह खुदा की तरफ़ सी निकलती है।[1]

प्रेमचंद की विचारधाराओं को यहाँ खाला के शब्दों में अभिव्यक्ति दी है। अलगू द्वारा न्याय के पक्ष में फैसला मुनाकर प्रेमचंद ने ग्रामीण जीवन गतिविधियों तथा विश्वासों को उजागर किया है। बैलों को लेकर अलगू और साहू के बीच के संवाद से ही कहानी के दूसरे पक्ष की जानकारी पाठकों को मिलते हैं।[2] वहाँ भी कथानक को आगे बढ़ाने के साथ वातावररण में आए परिवर्तन को भी वाणी दी गयी है। वास्तव में इन दोनों घटनाओं के ज़रिये प्रेमचंद यह स्थापित करने की कोशिश करता है कि पंचों की वाणी ईश्वर की वाणी होती है। वहाँ दोस्ती या शत्रुता का कोई स्थान नहीं हैं। जुम्मन सरपंच की वाणी में पंच परमेश्वर की आवाज़ निहित है। इसलिए तो फैसला सुनकर चारों ओर से ये प्रतिध्वनी हुई कि "पंच परमेश्वर की जय!"[3] कहानी के अन्त में जम्मन का कथन सचमुच कहानी के शीर्षक की सार्थक अभिव्यक्ति देता है। चरित्र से बढ़कर प्रेमचंद ने इस कहानी में कथानक को श्रेष्ठ बनाया है जो उनके आदर्शवादी चेहरे को अनावृत करते हैं। कहानी के अंतिम संवाद में प्रेमचंद ने जुम्मन के ज़रिये पाठकों को समझाया कि पंच की जबान में खुदा बैठता है। नीतिवादी सत्यनिष्ठा की झलक कहानी के प्रत्येक संवाद में दर्शनीय है। समसामयिक जीवन की गहरी सच्चाई को

---

1. प्रेमचंद - पंच परमेश्वर - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 132
2. वही - पृ. 135
3. वही - पृ. 137

सामने लाने तथा मानवीय जीवन मूल्यों को उजागर करने की दृष्टि से कहानी का महत्व निर्विवाद ही है।

3.9 मानसरोवर भाग-8 की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

मानसरोवर भाग-8 में संकलित 31 कहानियों में से प्रतिनिधि कहानियों में प्रयुक्त संवादात्मकता को परखने का प्रयास यहाँ किया जा रहा है।

बूढ़ी काकी

'बूढ़ी काकी' प्रेमचंद की यथार्थपरक कहानियों में से एक है जिसमें उन्होंने बुजुर्गों के प्रति सहानुभूति एवं प्यार व्यक्त किया है। बुढ़ापे को तिरस्कार की दृष्टि से नहीं, बल्कि प्यार और सहिष्णुता की नज़रों से अपनाना चाहिए – इसी विचारधारा को 'बूढ़ी काकी' कहानी के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। विवरणों से शुरू होती है तो भी घटना विशेष को अंकित करने के लिए सफल संवाद योजना का ही प्रयोग किया है। बुढ़ापा तृष्णा रोग से ग्रस्त समय है। बूढ़ी काकी भी उस का शिकार बन गई है। उस सामाजिक वैषम्य की ओर काकी के आत्मसंलाप द्वारा ध्यान आकर्षित किया गया है।

"वे मन ही मन विचार कर रही थी, संभवतः मुझे पूड़ियाँ न मिलेंगी। इतनी देर हो गयी, कोई भोजन लेकर नहीं आया। मालूम होता है, सब लोग भोजन कर चुके हैं। मेरे लिए कुछ न बचा। यह सोचकर उन्हें रोना आया; परन्तु अशंकुन के भय से रो न सकीं।"[1]

---

1. प्रेमचंद - बूढ़ी काकी - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 126

प्रस्तुत संवाद बूढ़ी काकी की परेशानी और तृष्णा रोग से पीडित उसकी दयनीय जिन्दगी को भली भान्ति अभिव्यक्त करते हैं। घर के वातावरण तथा परिवार के अन्य सदस्यों के व्यवहार दोनों की ओर यहाँ सूचना भी मिलते हैं। काकी के स्वभाव में बच्चों सा तरलता भी दिखाई देता है।

रसोई में कार्यभार से उद्विग्न रूपा की मानसिक स्थिति को व्यक्त करने के लिए भी दूसरे लोगों के बीच के संवाद का सहारा लिया है।[1]

प्रस्तुत संवाद वातावरण की ओर संकेत देने के साथ रूपा के चरित्र को भी परोक्ष रूप से अनावृत करते हैं। आगे बूढ़ी काकी को कडाह के पास देखकर रूपा अपना सारा क्रोध उस पर छोड दिया।

"जिस प्रकार मेंढ़क केचुए पर झपटता है, उसी प्रकार वह बूढ़ी काकी पर झपटी और उन्हें दोनों हाथों से झटककर बोली–

"ऐसी पेट में आग लगे, पेट है या भाड? कोठरी में बैठते हुए क्या दम घुटता था? अभी मेहमानों ने नहीं खाया, भगवान को भोग नहीं लगा, तब तक धैर्य न हो सका? आकर छाती पर सवार हो गयी। जल जाय ऐसी जीभ। दिन भर खाती न होती तो न जाने किसकी हाँडी में मुँह डालती?.....[2]

कहानीगत संपूर्ण वातावरण को प्रस्तुत संवाद शब्दबद्ध किया है। रूपा की क्रोधभरी भाषा, उस समय के ग्रामीण स्त्रीयों के पूरे लहजे को मूर्तता प्रदान करती

---

1. प्रेमचंद - बूढ़ी काकी - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 127
2. वही - पृ. 127-128

है। कहावतों एवं मुहावरों के प्रयोग से संवाद ज़्यादा सुबोध एवं प्रभावशाली बन गया है।

पंडित बुद्धिराम का काकी के प्रति दुर्व्यवहार को भी प्रेमचंद ने पात्रानुकूल संवादों द्वारा अंकित किया है।

थाल को ज़मीन पर पटक दिया और जिस प्रकार एक निर्दयी महाजन अपने किसी बेईमान औ भगोडे कर्जदार को देखते ही झपटकर उसका टेटुआ पकड़ लेता है, उसी तरह लपक कर उन्होंने काकी के दोनों हाथ पकड़े और घसीटते हुए लाकर उन्हें अँधेरी कोठरी में पटक दिया।[1]

प्रस्तुत संवाद भाषा शैली की निपुणता के कारण प्रभावशाली बना है। बुद्धिराम के चरित्र को अभिव्यक्ति देने के साथ प्रेमचंद ने बूढ़ी काकी के प्रति परिवारवालों की हीन एवं तिरस्कार पूर्ण बर्ताव को भी वाणी दी गई है। चित्रात्मकता तथा पात्रानुकूलता प्रस्तुत संवाद की खूबी ही है। लेकिन अपने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की प्रतिष्ठा के लिए प्रेमचंद ने बुद्धिराम की बेटी लाडली को माध्यम बनाया है।

कहानी में बीच-बीच में बूढ़ी काकी के आत्मकथन द्वारा प्रेमचंद ने उस सामाजिक मान्यताओं पर प्रश्न चिह्न लगाया है जिसकी प्रतिनिधि रूप में रूपा और बुद्धिराम के चरित्र हमारे सामने आते हैं।[2]

---

1. प्रेमचंद - बूढ़ी काकी - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 129
2. वही - पृ. 130

प्रेमचंद ने बूढ़ी काकी के शब्दों द्वारा उन तमाम आलंबहीन एवं दीनदुखी, हतज्ञानी लोगों की वकालत की है जो सब की दया एवं करुणा की भीख माँगती है।

लाडली द्वारा काकी को खाना खिलाने की ओर तथा उससे अतृप्त क्षुधातुर काकी झूठे पन्तलों में पुडियों के टुकडे के लिए टूट पडने का दृश्य दोनों की ओर संवाद द्वारा ही प्रकाश डाला गया है। यह घटना वास्तव में रूपा के हृदय परिवर्तन का कारण बन गई है। क्योंकि वह दृश्य उतना हृदय भेदक था कि कठिन हृदय वाली रूपा भी पिघलकर द्रवित हो गई। उसी समय उसके मुँह से निकले शब्द सचमुच कहानी को एक आदर्श रूप प्रदान किया है।

"उसने सच्चे हृदय से गगन-मंडल की ओर हाथ उठाकर कहा - "परमात्मा, मेरे-मेरे बच्चों पर दया करो। इस अनर्थ का दंड मुझे मत दो, नहीं तो मेरा सत्यानाश हो जायगा।"[1]

प्रस्तुत संवाद कहानी को सोद्देश्य बनाने में सर्वथा उचित रहा है। गलती अहसास रूपा के चरित्र को ही बदल डाला है। इसलिए तो वह सोचने लगी – 'हाय! कितनी निर्दय हूँ! जिसकी संपत्ति से मुझे दो सौ रुपया वार्षिक आय हो रही है, उसकी यह दुर्गति! और मेरे कारण! हे दयामय भगवान! मुझसे बड़ी भारी चुक हुई है, मुझे क्षमा करो।..... रूपा ने कंठावरुद्ध स्वर में कहा – "काकी उठो, भोजन कर लो। मुझसे आज बड़ी भूल हुई, उसको बुरा न मानना। परमात्मा से प्रार्थना कर दो कि वह मेरा अपराध क्षमा कर दे।"[2]

---

1. प्रेमचंद - बूढ़ी काकी - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 132
2. वही - पृ. 132

प्रायश्चित की नदी में डूबकर अपने को सारी मलिनताओं से मुक्त करने की सदिच्छा रूपा के शब्दों में स्पष्ट परिलक्षित है। धर्म परिरक्षा और कर्तव्य पालन को प्रेमचंद ने यहाँ श्रेष्ठ स्थापित किया है। यहाँ पात्र एवं चरित्र से बढ़कर कथानक का महत्व ज़्यादा है। बुढापे के प्रति जो तिरस्कार भाव लोगों के मन में रूढ़मूल हुआ था, उसको निकालकर, उसके बदले बूढ़ी काकी के चरित्र द्वारा समाज में बुजुर्गों के प्रति प्यार, एवं सहिष्णुता भाव जगाने का महान कार्य संवादों द्वारा पूर्ण अभिव्यक्ति पाया है।

स्वत्व रक्षा

समाज के पीडित एवं दुखी आम लोगों की वकालत करने वाले प्रेमचंद के मन में पशु पक्षियों के प्रति भी संवेदनशील नज़रिया कूड-कूड कर भरी हुई है। इसका उत्तम उदाहरण है यह कहानी। अपने स्वत्व की रक्षा के लिए दृढ़-प्रतिज्ञा बद्ध होने वाले एक घोडे का संवेदनशील चित्रण किया गया है।

कथानक की ओर प्रकाश डालने के लिए प्रेमचंद ने संवाद-योजना का ही सहारा लिया है।

"चार बजे मुंशीजी ने आकर मीर साहबा से कहा - यार अपना घोडा दे दो, वर को स्टेशन तक पहुँचा दें। पालकी तो कहीं मिलती ही नहीं।

मीर साहब - आपको मालूम नहीं, आज इतवार का दिन है।

मुंशीजी - मालूम क्यों नहीं; पर आखिर घोड़ा ही तो ठहरा। किसी न किसी तरह स्टेशन तक पहुँचा ही देगा। कौन दूर जाना है?

मीर साहब - यों आपका जानवर है। ले जाइए। पर मुझे उम्मीद नहीं कि आज वह पट्ठे पर हाथ तक रखने दे।"[1]

कहानीगत उद्देश्य की ओर भी यहाँ शुरू के संवाद द्वारा संकेत दिया गया है। घोडे के स्वभाव की विशेषताओं को भी मीरसाहब के कथन द्वारा शब्दबद्ध किया है।

अपने स्वत्व की परिरक्षा के लिए घोड़ा सदैव बद्धश्रद्ध दिखाई देता है। इसीलिए दुल्हा कूदकर ऊपर सवार हो गया तो वह यों सोचने लगा – "थोड़े से दाने के बदले अपने इस स्वत्व से हाथ धोना एक कटोरे कढ़ी के लिए अपने जन्मसिद्ध अधिकारों को बेचना है।"[2]

यहाँ संवाद प्रेमचंदीय संवेदनशील नज़रिये को साकार बनाने में सफल निकला है। थोडे से लाभ के लिए ईमान बेचने वाले अवसरवादी लोगों की ओर व्यंग्य बाण यहाँ दर्शनीय है।

घोड़े को जगाने के लिए कई उपाय किया, मगर घोड़ा अपने इरादे पर अडल रहा है। वह किसी के भी सामने अपने आन की कुर्बानी नहीं दी। वह पाँव हिलाये बिना खड़ा हो गया। अंतिम उपाय के रूप में पहिया गाड़ी में लगाने की कोशिश में उसके पिछले पैर आप ही उठ गए। लेकिन फिर भी वह एक कदम आगे रखने को तैयार नहीं हुई। घोडे की दृढ़ प्रतिज्ञा के सामने मुंशीजी और साथियों को हाथ धोना पड़ा उसकी सफल अभिव्यक्ति उन्हीं के शब्दों में सुनाई देती है।

---

1. प्रेमचंद - स्वत्व रक्षा - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 160
2. वही - पृ. 161

"महाशय, अपना भाग्य बखानो कि मीरसाहब के घर हो। यदि मैं तुम्हारा मालिक होता तो तुम्हारी हड्डी-पसली का पता न लगता। इसके साथ ही मुझे आज मालूम हुआ कि पशु भी अपनी स्वत्व की रक्षा किस प्रकार कर सकता है। मैं न जानता था, तुम व्रतधारी हो।"[1]

प्रेमचंद ने इस प्रतीकात्मक कहानी के ज़रिये नागरिकों के मौलिक अधिकारों की ओर घोड़े के माध्यम से ध्यान खींचा गया है। एक घोड़ा अपने थोड़े से लाभ के लिए ईमान बेचने को तैयार नहीं होता है। लेकिन मनुष्य अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए कुछ भी करने के लिए तैयार हो जाते हैं। इस सच्चाई को प्रेमचंद ने इस कहानी के ज़रिये वाणी दी है। मनुष्य को अपने व्यवहारों में स्वत्व बोध की परिरक्षा करनी चाहिए - इस आदर्श को कहानी उजागर करती है। एक दिशा भ्रमित समाज के सही मार्ग दर्शन देने की दृष्टि से प्रेमचंद की कहानियों का महत्व ज़्यादा हैं।

सज्जनता का दंड

प्रेमचंद की मूल्यपरक कहानियों में से एक है 'सज्जनता का दंड' जिस में चरित्र चित्रण को ही प्रमुखता दी गई है। सरदार शिवसिंह के सहनशील एवं सदाशय चरित्र, उनकी नैतिक सजगता आदि को कहानी उजागर करती है। कहानी में आद्यन्त संवाद-शिल्प द्वारा ही चरित्र की व्याख्या प्रस्तुत की है।

सरदार साहब की सज्जनता और भलमनसाहब की ओर संकेत करने के लिए दोनों पति-पत्नी के आपसी संवाद योजना को ही माध्यम बनाया है।

---

1. प्रेमचंद - स्वत्व रक्षा - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 163-164

"एक दिन दफ्तर से आये उनकी पत्नी ने स्नेहपूर्ण ढंग से कहा, "तुम्हारी यह सज्जनता किस काम की, जब सारा संसार तुमको बुरा कह रहा है।"

सरदार साहब ने दृढ़ता से जवाब दिया, "संसार जो कुछ कहे परमात्मा तो देखता है।"[1]

सरदार साहब की सज्जनता तथा ईश्वर चिन्ता को प्रस्तुत संवाद खोलकर दिखाता है। चरित्रोन्मुख होने के साथ कहानी की कथावस्तु की ओर भी यहाँ प्रकाश मिला है तत्कालीन जन जीवन में घटती जा रही मूल्यों की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करके, ऐसे माहौल में अपनी सज्जनता को कायम रखने वाले सरदार सिंह के उज्ज्वल चरित्र की ओर भी आपसी वार्तालाप द्वारा ही प्रकाश डाला गया है।[2] प्रतिकूल परिस्थितियों के वश में पड़कर भी वह चरित्रहीन होता नहीं चाहता है। झूठी शान व सम्मान के लिए इज्जत को कलंकित करने वाले लोगों की ओर व्यंग्य दृष्टि भी यहाँ देखने को मिलती है। कहानी में आगे शाहवाज खाँ, सेठ चुन्नीलाल और बूढ़े हरिदास के आपसी वार्तालाप द्वारा सरदार साहब की चारित्रिक विशेषताओं की ओर प्रकाश डाला गया है।

".....शाहवाज खाँ ने फरमाया हाँ; इसमें तो कोई शक नहीं कि यह शख्त नेकी का फरिश्ता है।

---

1. प्रेमचंद - सज्जनता का दंड - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 224
2. वही - पृ. 224

सेठ चुन्नीलाल ने गंभीरता से कहा, खाँ साहब बात तो वही है, जो तुम कहते हो। लेकिन क्या किया जाय? नेकनीयती से तो काम नहीं चलता। यह दुनिया छल-कपट की है।[1]

तत्कालीन वातावरण में सज्जनता के प्रति समाज के विभिन्न दृष्टिकोण और सरदार साहब के आदर्श चरित्र को भी यहाँ वाणी दी गयी है। कहानी के प्रवाह में घटनाओं के ज़रिये परिवर्तन डालने के लिए भी प्रेमचंद ने संवाद-योजना का ही सहारा लिया है जिसके कारण कहानी अभीष्ट की ओर मुड़ गई है।

विवाह के लिए पाँच हज़ार रुपये देने की बात पर वकील स्थिर रहते हैं। उसका पत्र देखकर सरदार साहब निस्सहाय एवं आशाहीन हो गए। उस दुविधा ग्रस्त स्थिति में उसके मन की अवस्था को आत्मसंवाद द्वारा प्रेमचंद ने यों अंकित किया है - "आह! मैं किस भ्रम में पड़ा हुआ हूँ? क्या उस आत्मिक पवित्रता को, जो मेरी जन्म भर की कमाई है, केवल थोड़े ही धन पर अर्पण कर दूँ? जो मैं अपने सहकारियों के सामने गर्व से सिर उठाये चलता था, जिससे मोटरकार वाले भ्रातृगण आँखें नहीं मिला सकते थे, वही मैं आज अपने उस सारे गौरव और मान को, अपनी संपूर्ण आत्मिक संपत्ति को दस-पाँच हज़ार रुपयों पर त्याग दूँ। ऐसा कदापि नहीं हो सकता।"[2]

प्रस्तुत संवाद सरदार साहब के आन्तरिकमन को वाणी देती है। धन के ऊपर ईमानदारी और सज्जनता का महत्व कहीं ज़्यादा है। बड़े इंजीनियर साहब के

---

1. प्रेमचंद - सज्जनता का दंड - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 225-226
2. वही - पृ. 227

सामने जिले के ठेकेदारों ने उनकी शिकायत की तो चीफ़ इंजीनियर ने मुआइने की किताब में लिखा, "सरदार शिवसिंह बहुत ईमानदार आदमी हैं। उनका चरित्र उज्ज्वल है, मगर वे इतने बड़े जिले के कार्य भार नहीं संभाल सकते।"[1]

प्रस्तुत संवाद कहानीगत उद्देश्य को रूपायित करने में सर्वथा सहायक रहा है। मगर पत्नी भामा सचेत होकर प्रेमचंदीय आवाज़ में उस उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति पाठकों को देती है।

–"बोलो, क्यों इतने उदास हो? सरदार साहब ने उत्तर दिया, क्या करूँ हँसूँ?

भामा ने गंभीर स्वर से कहा, "हँसना ही चाहिए! रोये तो वह जिसने कौड़ियों पर अपनी आत्मा भ्रष्ट की हो - जिसने रुपयों पर अपना धर्म बेचा हो। वह बुराई का दंड नहीं है। यह भलाई और सज्जनता का दंड है; उसे सानंद झेलना चाहिए।"[2]

यही वास्तव में प्रेमचंदीय आदर्शवाद की परिकल्पना है। भामा का कथन शीर्षक को भी शब्दबद्ध किया है। जीवन में मूल्यों की स्थापना को महत्व देते हुए कहानी का अंतिम वाक्य प्रेमचंद ने यों लिखा है कि, "उसे गले लगा कर वे बोले, भामा! मुझे तुम्हारी ही सहानुभूति की ज़रूरत थी, अब मैं इस दंड को सहर्ष सहूँगा।"[3]

---

1. प्रेमचंद - सज्जनता का दंड - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 228
2. वही - पृ. 228
3. वही - पृ. 229

भारतीय परिवारों से अलग होते सच्चे जीवन मूल्यों को पुनर्जीवित करने की लालसा यहाँ दर्शनीय है। उस अर्थ में परखने पर सरदार साहब का चरित्र महान एवं प्रेरणादायक ही है। जीवन्त संवादों के साथ कहानी आगे बढ़ती है। सरदार साहब और पत्नी के चरित्र को उद्‌घाटित करने में संवाद की भूमिका ही सर्वप्रथम है।

3.10 'कफ़न' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

'कफ़न' संग्रह में 14 कहानियाँ संकलित किया गया है। उनमें से दो प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता को जाँचने का प्रयास आगे किया जा रहा है।

कफ़न

घोर यथार्थवादी धरातल पर लिखी गई यह कहानी प्रेमचंद की अंतिम और सर्वोत्तम माननेवाली रचना है। कहानी के प्रमुख पात्र घीसू और माधव के ज़रिये प्रेमचंद ने यह दिखाने की कोशिश की है कि गरीब और कामचोर मनुष्य विषमतापूर्ण सामाजिक पद्धति की ही उपज है। दोनों पात्रों के संवाद उस दारुण यथार्थ की सफल अभिव्यक्ति पाठकों को देता है। कहानी में प्रयुक्त संवाद की वास्तविक खूबी यह है कि वे पाठकों को बाहर हँसाते हुए अन्दर ही अन्दर उन्हें रुलाने के लिए मजबूर बनाते हैं।

कहानी के आरंभ में ही घीसू और माधव के अमानवीय चरित्र की जानकारी पाठकों को संवादों के द्वारा ही मिलते हैं।

"घीसू ने कहा - मालूम होता है, बचेगी नहीं। सारा दिन दौड़ते हो गया, जा देख तो आ। माधव चिढ़कर बोला - मरना ही है तो जल्दी मर क्यों नहीं जाती? देखकर क्या करूँ?

"तू बड़ा बेदर्द है बे! साल भर जिसके साथ सुख चैन से रहा, उसी के साथ इतनी बेवफाई।"

"तो मुझसे तो उसका तड़पना और हाथ-पाँव पटकना नहीं देखा जाता।"[1]

इस आरंभिक संवाद से ही कहानी पाठकों को सोचने के लिए बाध्य करते हैं वस्तुतः घीसु और माधव के शब्द भयावह होते हुए भी सामाजिक व्यवस्था पर प्रहार करते सुनाई देती है। कहानीगत समस्या - किसान के जीवन की सबसे बड़ी त्रासदी - को प्रेमचंद ने दोनों बाप-बेटे के संवादों द्वारा उभारने की कोशिश की है।[2] प्रसव वेदना से तडपती पत्नी को देखकर माधव और घीसु के आपसी संवाद से दोनों की मनोदशा की ओर प्रकाश डाला गया है। मानव मन को छूने वाले शब्दों के माध्यम से प्रेमचंद ने एक घटित इतिहास को खोलकर दिखाने की कोशिश की है। वास्तव में घीसु माधव तत्कालीन वर्गीय व्यवस्था की उपज ही है। किसान से मज़दूर बनने की विवशता को ही नहीं, खेती के साथ जुड़ी रागात्मक चेतना को भी उसकी सारी विकृतियों सहित प्रेमचंद ने संवादों में उतारा है।

भारतीय अभावग्रस्त किसान मज़दूर के जीवन में पौष्टिक भोजन दूर की बात है। उस ओर घीसु-माधव की यादों द्वारा प्रकाश डाला गया है।

---

1. प्रेमचंद - कफ़न - 'कफन' संग्रह - पृ. 5
2. वही - पृ. 6-7

"ठाकुर साहब की दावत में बीस साल पहले मिले उस भोजन की ताज़ी याद कर वह (घीसू) बोला – वह भोज नहीं भूलता। तब से फिर उस तरह का खाना और भरपेट नहीं मिला। लड़कीवालों ने सबको भरपेट पूडियाँ खिलाई थी, सबको !.....

माधव ने इन पदार्थों का मन-ही-मन मज़ा लेते हुए कहा – अब हमें कोई ऐसा भोज नहीं खिलाता।

"अब कोई क्या खिलायेगा? वह ज़माना दूसरा था। अब तो सबको किफायत सूझती है। सादी-ब्याह में मत खर्च करो, क्रिया-कर्म में मत खर्च करो। पूछो, गरीबों का माल बटोर-बटोर कर कहाँ रखोगे? बटोरने में तो कमी नहीं है। हाँ, खर्च में किफ़ायत सूझती है।"[1]

तत्कालीन ज़मीन्दारी शोषण की ओर संवाद तीखा प्रहार करते हैं। धीसू और माधव के शब्द वास्तव में उस वर्ग वैषम्य की ओर संकेत करते हैं जो उन्हें मानवीय हक से जीने में बाधक होते हैं। उनके मुँह से निकले प्रत्येक शब्द सामाजिक चेतना को जगाने में सफल ही है।

प्रसव वेदना से तडपकर जब माधव की पत्नी मर जाती है तो लाश को ढँकने के लिए समाज के ठेकेदार लोग कफ़न खरीदने के पैसे देते हैं। उस समय के बाप-बेटे के आपसी संवाद मानवीय संवेदनहीनता पर करारा व्यंग्य करते हैं।

".....माधव बोला - हाँ, लकड़ी तो बहुत है, अब कफ़न चाहिए।"

---

1. प्रेमचंद - कफ़न - कफ़न संग्रह - पृ. 8

"तो चलो, कोई हल्का-सा कफ़न ले लें।"

"हाँ और क्या। लाश उठते-उठते रात हो जायगी। रात को कफ़न कौन देखता है?"

"कैसा बुरा रिवाज़ है कि जिसे जीते जी तन ढाँकने को चीथड़ा भी न मिले, उसे मरने पर नया कफ़न चाहिए।"

"कफ़न लाश के साथ जल ही तो जाता है।"

"और क्या रखा रहता है? यही पाँच रुपये पहले मिलते, तो कुछ दवा-दारु कर लेते।"[1]

घीसु और माधव यहाँ प्रेमचंदीय विचारधारा की प्रतिनिधि रूप में आवाज़ उठाते हैं। वह यह बताना चाहता है कि सामाजिक वर्ग व्यवस्था से उत्पन्न संवेदनहीनता मनुष्य से बढ़कर खोखले रीति-रिवाज़ों पर विश्वास रखते हैं। इन सब के यथार्थ चित्रण करके प्रेमचंद ने व्यवस्था में परिवर्तन की माँग उठाई है। प्रत्येक संवाद पाठकों को सोच-विचारने के लिए बाध्य कर देते हैं। घीसु-माधव आखिर सोचते हैं कि "कफ़न लगाने से क्या मिलता? आखिर जल ही तो जाता।....."[2]

यहाँ भी समाज की संवेदनहीन नज़रिये को खोलकर दिखाने की एक कोशिश दर्शनीय है। घीसु-माधव की मानसिकता तात्कालीन समाज सापेक्ष्य ही है। प्रेमचंद बताना चाहते हैं कि इन विषमतापूर्ण सामाजिक पद्धति के कारण पूरे समाज को हानि हो रही है।

---

1. प्रेमचंद - कफ़न - कफ़न संग्रह - पृ. 10
2. वही - पृ. 11

शराब खाने से भर पेट खा-पीकर आए बाप-बेटे के संवाद सचमुच कहानी के मर्म को उद्‌घाटित करने में सहायक निकला है। मानवीय करुणा एवं दया से संचालित ये शब्द हमारी संवेदनशीलता को जाग्रत करने में सक्षम ही है। यथार्थ को इतना खुला रूप अन्यत्र देखने को नहीं मिलता है।

"माधव ने फिर आसमान की तरफ देखकर कहा – वह वैकुण्ड में जायगी दादा, वैकुण्ड की रानी बनेगी।

घीसू खड़ा हो गया और जैसे उल्लास की लहरों में तैरता हुआ बोला - हाँ, बेटा वैकुण्ड में जायगी। किसी को सताया नहीं, किसी को दबाया नहीं, मरते-मरते हमारी ज़िन्दगी की सबसे बड़ी लालसा पूरी कर गई। वह न वैकुण्ड में जायगी तो क्या ये मोटे-मोटे लोग जायँगे, जो गरीबों को दोनों हाथों से लूटते हैं और अपने पाप को धोने के लिए गंगा में नहाते हैं और मन्दिरों में जल चढ़ाते हैं।[1]

तत्कालीन सामाजिक वर्ग चेतना के प्रति तीखा व्यंग्य घीसू के शब्दों में गूँज उठती है। यह स्वर एक पक्षीय नहीं, बल्कि यह आवाज़ उन तमाम शोषित, पीड़ित सामाजिक - शोषण ग्रस्त दीन दुखियों की है जो मानवीय हक से जीने की लालसा रखते हैं। वास्तव में कहानी की शुरुआत में घीसू माधव को पाठक क्रोध भरी आँखों से देखते थे तो अंत में वे अपना क्रोध उस सामाजिक व्यवस्था पर प्रकट करने में मजबूर हो जाते है जिसके कारण दोनों बाप-बेटे आचरण में अमानवीय दीख पड़ते हैं।

---

1. प्रेमचंद - कफ़न - कफ़न संग्रह - पृ. 13

कहानी के अंत में घीसू का कथन दार्शनिक पक्ष को उजागर करती है।

"घीसु ने समझाया - "क्यों रोता है बेटा, खुश हो कि वह माया-जाल से मुक्त हो गई, जंजाल से छूट गई। बडी भाग्यवान थी, जो इतनी जल्द माया-मोह के बन्धन तोड़ दिये।"[1]

कहानी यहीं पर समाप्त होते हैं तो भी पाठक आगे की ओर सोचने के लिए विवश हो जाते हैं। कहानी के प्रत्येक संवाद मानव मन को मथनेवाली एवं दूषित सामाजिक व्यवस्था पर आहत करती सुनाई देती है। कहानी इसी भयावहता से शुरू होती है और उसी के साथ समाप्त भी होती है। कथाशिल्प की यही सजगता संवाद को गहरे अर्थ एवं कलात्मक सौंदर्य प्रदान करते हैं। यहाँ पात्र केवल प्रतीकात्मक हैं, जिसके ज़रिये एक सामाजिक व्यवस्था को बदल डालने की माँग की गई है।

जुरमाना

प्रेमचंद की चरित्र-प्रधान कहानियों में एक है 'जुरमाना' जिसके माध्यम से पाठकों में मानवीय संवेदना जगाने की कोशिश की गई है। सफाई के दारोगा खैरात अली खाँ और अलारक्खी के बीच कहानी के संवाद घूमती रहती हैं। संवाद सब कहीं पात्र एवं वातावरण को प्रकाशित करते रहते हैं। अलारक्खी अपनी निस्सहाय अवस्था के कारण दारोगा के नाम पर बच्ची को धमकी देती है। बुरी नसीब के कारण दारोगा उस समय वहाँ पहुँचते हैं।

---

1. प्रेमचंद - कफ़न - कफ़न संग्रह - पृ. 13

"उसने झाड़ू तानकर कहा – "चुप हो जा, नहीं तो झाड़ू से मारूँगी, जान निकल जायगी, अभी दारोगा दाढ़ीदार आता होगा.....[1]

दारोगा के चरित्र की ओर संकेत देने के साथ प्रस्तुत संवाद आलारक्खी की दयनीय ज़िन्दगी को भी वाणी देती है। आगे क्या घटित होनेवाला है - इसी सोच में पाठक भी भावविभोर हो जाते हैं। कहानी में गतिशीलता लाने की दृष्टि से भी संवाद का महत्व ज़्यादा है। दारोगा और अलारक्खी के बीच के संवाद कथानक - में आए परिवर्तन को शब्दबद्ध करते हैं।

"दारोगा ने डॉटकर कहा - काम करने चलती है तो एक पुच्छिल्ला साथ ले लेती है। इसे घर क्यों नहीं छोड़ आई?

अलारक्खी ने कातर स्वर में कहा – इसका जी अच्छा नहीं है हुज़ूर, घर पर किसके पास छोड़ आती।

"क्या हुआ है इसको।"

"बुखार आता है हुज़ूर।"

"और तू इसे क्यों छोड़कर रुला रही है। मरेगी कि जियेगी?"

"गोद में लिये-लिये काम कैसे करूँ हुज़ूर!"

"छुट्टी क्यों नहीं ले लेती।"

"तलब कर जाती हुज़ूर, गुजारा कैसे होता?"

---

1. प्रेमचंद - जुरमाना - कफ़न संग्रह - पृ. 28

"इसे उठा ले और घर जा। हुसैनी लौटकर आये तो इधर झाड़ू लगाने के लिए भेज देना।"[1]

प्रस्तुत संवाद सारगर्भित होने के साथ स्वाभाविक एवं संक्षिप्त भी हैं। कथानक का ढाँचा पूर्ण रूप से खोलने की क्षमता संवाद में निहित है। अलारक्खी की दयनीय ज़िन्दगी देखकर सचमुच दारोगा का हठी चरित्र बदल जाता है। उस ओर कहानी के अंतिम संवाद परोक्ष रूप से संकेत करता है। कहानीगत उद्देश्य भी यहाँ सार्थक अभिव्यक्ति पाती है।

"दारोगा द्वारा तलब काटने या नौकरी से निकाल देने के भय से खड़ी अलारक्खी को जब पूरा वेतन मिली तो वह दंग रह गई। जब खजांची ने पूछा, "अब क्यों खड़ी है, जाती क्यों नहीं? तब वह धीरे से बोली - "यह तो पूरे रुपये हैं।"

खजांची ने चकित होकर उसकी ओर देखा।

"तो और क्या चाहती है, कम मिलें?"

"कुछ जरीमाना नहीं है?"

"नहीं अबकी कुछ जरीमाना नहीं है।"[2]

प्रस्तुत अंतिम संवाद दारोगा खैरात अलीखाँ के मानसिक परिवर्तन को वाणी देती है। अलारक्खी के चरित्र की निर्मलता दारोगा के पत्थर जैसे हृदय को पिघलाने में काफ़ी था। मानवीय भावनाओं की सफल अभिव्यक्ति हेतु इस कहानी के संवादों का अपना महत्वपूर्ण स्थान है।

---

1. प्रेमचंद - जुरमाना - कफ़न संग्रह - पृ. 29
2. वही - पृ. 31

निष्कर्ष

प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त शिल्पगत विधियों में सबसे प्रभावी एवं विशिष्ट विधि है - संवादात्मकता। उनकी प्रतिनिधि कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना के विविध पहलुओं को परखने से पता चलता है कि उनकी ज़्यादातर कहानियों में संवाद-तत्व के ज़रिये ही आगामी घटनाओं की सूचना, कथावस्तु की सुसंबद्धता, संभाव्यता, नाटकीयता, चारित्रिक स्पष्टता एवं कहानीगत उद्देश्य की ओर संकेत किया गया है। वस्तुतः प्रेमचंदीय संवाद योजना सब कहीं कहानी के सभी तत्वों को एक साथ पिरोकर कहानी को सोद्देश्य तथा परसंवेद्य बनाने में सहायक ही है। पात्रों के सभी क्रिया कलापों की सार्थक अभिव्यक्ति देने में उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद योजना उपयुक्त ही है। इन संवादों में उन्होंने अभिनयात्मकता से अधिक विश्लेषणात्मक पद्धति पर ही बल दिया है। नाटकीयता, सार्थकता, सोद्देश्यता, स्वाभाविकता, सरलता एवं पात्रानुकूलता उनके संवादों की विशेषताएँ हैं। उन्होंने अपनी कहानियों में मानव जीवन की सहज, स्वाभाविक एवं सार्थक अभिव्यक्ति के लिए संवादों का अवसरोचित प्रयोग किया है। उनके संवादों की भाषा विचारों एवं भावों को रूप देने में सर्वथा उचित ही है। आकाश में बिखरे नक्षत्रों की भान्ति प्रज्वलित प्रेमचंदीय संवाद-योजना ही वस्तुतः उनकी कलात्मक गरिमा की पहचान है जो उनके कहानी-साहित्य को कालजयी बनाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

चौथा अध्याय

जयशंकर प्रसाद की कहानियों में संवादात्मकता

सारांश – *प्रस्तुत अध्याय में 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप', 'आँधी' और 'इन्द्रजाल' संग्रहों से संवाद-तत्त्व की दृष्टि से प्रतिनिधि कहानियाँ चुनकर उनमें प्रयुक्त संवाद योजना को बारिकी से परखने का प्रयास किया गया है। प्रसाद की कहानियाँ एक श्रेष्ठ रोमान्टिक कवि की कहानियाँ हैं। उसी कारण वह एक भावुक गद्यकार है, विशुद्ध कहानीकार नहीं है। 'छाया' और 'प्रतिध्वनि' में संकलित कहानियों की भाषा अति भावुक होने से संवाद उतना प्रभावशाली नहीं निकला। मगर 'आँधी', 'आकाशदीप' और 'इन्द्रजाल' की कहानियाँ प्रसाद की कहानी कला का चरमोत्कर्ष ही है। इन कहानियों में उन्होंने परिस्थिति एवं पात्रों के मनोभावों के आधार पर स्वतन्त्र व स्वाभाविक संवाद योजना पर बल दिया है। उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद पात्रों के चिरत्र की अपेक्षा उनके आंतरिक भावों के सूक्ष्म विश्लेषण में अधिक सहायक निकला है। प्रसाद ने अपनी कहानियों में गतिशीलता लाने तथा पात्रों के कार्य व्यापार को सूचित करने के लिए काव्यात्मक और नाटकीय संवाद योजना का आश्रय लिया है। एक भावुक कवि एवं मंचे हुए नाटककार होने के कारण भाषा पर उनका असामान्य अधिकार था जो उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवादों के भावात्मक एवं व्यंजनापूर्ण शैली में देख सकते हैं। प्रसाद ने अपने संवादों को नाटकीय और जीवन्त बनाने के लिए भाषिक चमत्कार पैदा किया है जिसके कारण संवाद सांकेतिक एवं प्रतीकात्मक बन गए। अपनी इस परिनिष्ठित भाषा के कारण प्रसाद जी के द्वारा प्रयुक्त संवाद पाठकों के हृदय से ज़्यादा बुद्धि को प्रभावित करते हैं। उनके नाट्यकार रूप कहानियों में उत्कृष्ट संवादों की रचना में काफी सहायक सिद्ध होते हैं।*

चौथा अध्याय
जयशंकर प्रसाद की कहानियों में संवादात्मकता

4.1 जयशंकर प्रसाद की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

हिन्दी कहानी साहित्य के इतिहास में मुंशी प्रेमचंद के साथ जयशंकर प्रसाद का भी योगदान अन्यतम है। इतिहास और संस्कृति के प्रति जो विशेष गृहातुरता प्रसाद साहित्य में विद्यमान है, उसका ज्वलन्त उदाहरण है उनकी भावमूलक कहानियाँ। ये कहानियाँ, भारतीय समाज और संस्कृति के प्रौढ़ एवं विकसित रूप ही हैं। प्रसादजी की कहानियों का संपूर्ण सौन्दर्य और आकर्षण, उनमें प्रयुक्त पात्रानुरूप, परिस्थिति सापेक्ष्य, गतिशील एवं नाटकीय संवादों के प्रभावी प्रयोग पर निर्भर है। उनकी विचारशीलता कहानियों को एक वैचारिक धरातल प्रदान करती है जिसका स्पष्ट प्रभाव प्रयुक्त संवाद योजना में भी दर्शनीय है।

प्रसादजी सर्वप्रथम एक कुशल नाट्यकार एवं भावुक कवि थे। जिस प्रकार उनकी नाटक-यात्रा विकास की ओर अग्रसर थी, उसी प्रकार कहानी यात्रा भी विकसित होती गई। प्रशस्त, मंजे हुए नाटककार होने के कारण संवाद शैली पर उनका विशेष अधिकार था। इसीलिए उनके कथा-साहित्य में मानव मन की सूक्ष्मतम भावनाओं के अत्यन्त रसात्मक चित्रण के लिए संवादों का चित्रण अधिक हुआ है। समाज से अलग होकर व्यक्ति के ऐकान्तिक जीवन और व्यक्ति मन की वैयक्तिक भावनाओं का चित्रण ही उनकी कहानियों के मूल में कार्यरत है। इसीलिए उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद नाटकीय होते हुए भी भावात्मक हैं। प्रसादजी की

कहानियों को रचनाकाल के अनुसार पाँच संग्रहों में संकलित किया गया है। 'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकाश-दीप', 'आँधी' और 'इन्द्रजाल' नामक कहानी संग्रहों में प्रसाद द्वारा लिखी गई 70 कहानियों को संग्रहित किया गया है जो सन् 1911 और 1935 के बीच लिखी गई हैं। इन संग्रहों की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता को परखने का प्रयास आगे किया जा रहा है।

4.2 'छाया' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

प्रसादजी की सर्वप्रथम रचित ग्यारह कहानियों को सन् 1922 में प्रकाशित 'छाया' संग्रह में संकलित किया गया है। जो सन् 1911 और 1918 ई. के बीच लिखी गई थी। इनमें अधिकांश कहानियाँ प्रेम की अभिव्यंजना से ओतप्रोत है। ये कहानियाँ ऐतिहासिक धरातल पर लिखी जाने के कारण इनकी शैली इतिवृत्तात्मक और वर्णनात्मक होती हैं। पहला संग्रह होने के कारण ये कहानियाँ प्रसादजी के कहानीकार रूप की आरंभिक अवस्था का परिचायक प्रतीत होती हैं। अर्थात् उनके कहानीकार व्यक्तित्व का सामान्य रूप ही इनमें देखने को मिलता है। इसलिए भाषा का भी कोई सुदृढ़ रूप पाया नहीं जा सकता है। इस संग्रह से प्रतिनिधि कहानियों में प्रयुक्त संवादात्मकता को परखने का प्रयास आगे किया जा रहा है।

ग्राम

प्रसादजी की सर्वप्रथम लिखी गई कहानी 'ग्राम' सन् 1911 ई. में 'इन्दु' में प्रकाशित हुई थी। उनकी अन्य कई कहानियों से भिन्न होकर आधुनिक यथार्थवादी सामाजिक कहानियों की परम्परा में आने वाली कहानी है 'ग्राम'। प्रयुक्त भाषा में

भी ग्रामीण शब्दावलियों से युक्त एक सामाजिक धरातल दर्शनीय है। आरंभिक कहानी होने के कारण प्रयुक्त संवाद-योजना भी आरंभिक अवस्था में ही पायी जाती है।

कथानक का पर्दा खोलने के लिए स्टेशन मास्टर और मोहनलाल के बीच के वार्तालाप का ही सहारा लिया है।

स्टे.मा : आप इस वक्त कहाँ से आ रहे हैं?

मोहन : कारिंदों ने इलाकों में बड़ा गडबड़ मचा रक्खा है, इसलिये मैं कुसुमपुर जो कि हमारा इलाका है - इंस्पेक्शन के लिए जा रहा हूँ।

स्टे. मा: फिर कब पलटियेगा?

मोहन : दो रोज़ में। अच्छा, गुड इवनिंग।[1]

प्रस्तुत संवाद से कहानीगत वातावरण एवं कथावस्तु की ओर इशारा किया गया है। यहाँ प्रयुक्त भाषा परिस्थिति तथा पात्रानुकूल ही है। बाबु मोहनलाल की भाषा उसके चरित्र को उद्‌घाटित करने में सहायक ही है। पात्रों के क्रियाकलापों को वाणी देकर कहानी को परिवर्तित करने में संवाद की एक महत्वपूर्ण भूमिका है। बालिका और मोहनलाल के बीच के संवाद वास्तव में कहानीगत वातावरण में आए परिवर्तन को स्पष्ट करते हैं।

"अस्तु, रूखेपन के साथ पूछा–

कुसुमपुर का रास्ता किधर है? बालिका इस भव्य मूर्ति को देख कर डरी, पर साहस के साथ बोली – मैं नहीं जानती।

---

1. प्रसाद - ग्राम - छाया - पृ. 17

- तो जो जानता हो, मुझे बतलाओ, मैं उससे पूछ लूँगा।

बालिका : हमारी माता जानती होंगी।

मोहन : इस समय तुम कहाँ जाती हो?

बालिका : (मचान की ओर दिखाकर) वहाँ जो कई लड़के हैं, उनमें से एक हमारा भाई है, उसी को खिलाने जाती हूँ।

मोहन : बालक, इतनी रात को खेत में क्यों बैठा है?

बालिका : वह रात भर और लड़कों के साथ खेत में ही रहता है।

मोहन : तुम्हारी माँ कहाँ है?

बालिका : चलिये, मैं लिवा चलती हूँ।"[1]

प्रस्तुत नाटकीय और ग्रामीण सौन्दर्य से युक्त भाषा में प्रयुक्त संवाद के ज़रिये प्रसादजी ने वातावरण की ओर संकेत दिया है। आगे की ओर जानने की इच्छा संवाद की एक खूबी है। कथावस्तु की ओर कोई स्पष्ट संकेत यहाँ नहीं मिलता है। लेकिन कहानी में आगे बालिका की माँ और मोहनलाल के आपसी संवाद कहानीगत उद्देश्य को शब्दबद्ध करते हैं।

स्त्री ने आशीर्वाद दिया और पूछा–

"बेटा! कहाँ से आते हो?

मोहन : मैं कुसुमपुर जाता था, किन्तु रास्ता भूल गया.....।

---

1. प्रसाद - ग्राम - छाया - पृ. 18

मोहनलाल आश्चर्यान्वित होकर देख रहे थे। उन्होंने पूछा - आपको कुसुमपुर के नाम से क्षोभ क्यों हुआ?

स्त्री : बेटा! उसकी बड़ी कथा है? तुम सुनकर क्या करोगे?

मोहन : नहीं, मैं सुनना चाहता हूँ, यदि आप कृपा करके सुनावें।

स्त्री : अच्छा, कुछ जलपान कर लो, तब सुनाऊँगी पुनः बालिका की ओर देखकर स्त्री ने कहा - "कुछ जल पीने ले आओ।"[1]

प्रस्तुत संवाद द्वारा प्रसादजी ने घटना में आकस्मिक परिवर्तन लाया है। पाठकों की उत्सुकता जगाने की दृष्टि से संवाद सफल ही है। कहानी के अंतिम संवाद कहानीगत सभी गोपनीय बातों को खोलकर प्रकट करती हैं। कहानी को यथार्थोन्मुखी बनाने में ये संवाद सहायक रहा है।

स्त्री कहने लगी - "हमारे पति इस प्रान्त के गण्य भूस्वामी थे और वंश भी हम लोगों का उच्च था। जिस गाँव का अभी आपने नाम लिया है, वहीं हमारे पति की प्रधान ज़मीन्दारी थी। कार्यवश कुन्दनलाल नामक महाजन से कुछ ऋण लिया गया। कुछ भी विचार न करने से उनका बहुत रुपया बढ़ गया..... इस दशा होने के उपरान्त हम लोग इस दूसरे गाँव में आकर रहने लगीं। यहाँ के ज़मीन्दार बहुत धर्मात्मा है, उन्होंने कुछ सामान्य 'कर' यह भूमि दी है, इसी से अब हमारी जीविका है।....."[2]

---

1. प्रसाद - ग्राम - छाया - पृ. 19
2. वही - पृ. 19-20

कहानी का वास्तविक मर्म उपर्युक्त लम्बे संवाद के ज़रिये अनावृत हो गया है। उस निर्धन, स्वाभिमानी स्त्री के कथन में घर की आर्थिक परिस्थिति, ज़मीन्दारी अत्याचार एवं पति की मृत्यु सब की एक साथ अभिव्यक्ति मिलती है। कहानीगत सभी गोपनीय बातों की खुलासा इस अंतिम संवाद में सार्थक अभिव्यक्ति पाती है। वातावरण प्रधान होने के कारण संवादों में वातावरण की ओर स्पष्ट संकेत मिलता है। संवाद लम्बे होने के कारण कहानी पढ़ने से एक नाटक-का सा आभास पाठकों को मिलते हैं।

स्त्री की कथा सुनकर मोहनलाल के मन में विषाद और लज्जा ने अधिकार कर लिया था। क्योंकि वह कुन्दनलाल, मोहनलाल के ही पिता थे। इसकी ओर कहानी केवल विवरण ही दे रही थी। कहानी केवल यथार्थ की ही ओर उन्मुख है।

सिकन्दर की शपथ

कहानी ऐतिहासिक धरातल पर लिखी गई है तो भी वैयक्तिक भावनाओं को ही महत्व दिया गया है। इसमें वातावरण तथा चारित्रिक विशेषताओं की ओर इशारा करने के लिए संवाद-योजना का ही प्रयोग किया गया है।

सिकन्दर के दुर्ग के अन्दर प्रहरी वेश में प्रवेश करने की ओर प्रतीकात्मक संवाद योजना द्वारा प्रकाश डाला गया है।

समीप की झाड़ी से एक दूसरा व्यक्ति निकल पड़ा, जिसने आकर सिकन्दर से कहा - "देर न कीजिये क्योंकि यह वही है।.... उसने प्रकाश डालकर पूछा - कौन है?

उत्तर मिला – मैं दुर्ग से नीचे गिर पड़ा हूँ।

प्रहरी ने कहा – घबड़ाइये मत, मैं डोरी लटकाता हूँ।"[1]

प्रस्तुत सांकेतिक कथन के ज़रिये घटनाचक्र की ओर केवल कुछ अस्पष्ट सूचनाएँ ही दी गई है। कहानी की वास्तविक प्रगति दुर्ग के अन्दर पहुँच, सरदार की पत्नी और सिकन्दर के बीच के संवाद से होती है।

उसने हृदय के सारे बल को एकत्र करके पूछा - तुम कौन हो?

उत्तर मिला – शाहंशाह सिकंदर

रमणी ने पूछा – यह वस्त्र किस तरह मिला?

सिकन्दर ने कहा – सरदार को मार डालने से।

रमणी के मुख से चीत्कार के साथ ही निकल पड़ा - क्या सरदार मारा गया?

सिकन्दर – हाँ, अब वह इस लोक में नहीं है। रमणी ने अपना मुख दोनों हाथों से ढँक लिया, पर उसी क्षण उसके हाथ में एक चमकता हुआ छुरा दिखाई देने लगा।

सिकन्दर घुटने के बल बैठ गया और बोला – "सुन्दरी। एक जीव के लिए तुम्हारी दो तलवारें बहुत थीं, फिर तीसरी की क्या आवश्यकता है?"[2]

---

1. प्रसाद - सिकन्दर की शपथ - छाया - पृ. 31
2. वही - पृ. 31-32

नाटकीय वातावरण में प्रयुक्त होने के कारण प्रस्तुत संवाद अभिव्यक्ति कौशल की दृष्टि से सफल ही है। एक मंचे हुए नाटककार होने की वजह से उनकी कहानियों में नाटकीयता का समावेश होना स्वाभाविक ही है। अंतिम वाक्य सिकन्दर के निडर, कामुक एवं मर्यादहीन चरित्र की स्पष्ट अभिव्यक्ति देता है। परोक्ष रूप से रमणी की मानसिक स्थितियों को भी चित्रित किया गया है।

घटनाओं की सूचना देकर कहानी का क्रमिक विकास करने के लिए भी संवाद योजना का ही प्रयोग किया है। दुर्ग पर अपना अधिकार स्थापित करने के बाद सिकन्दर का कथन भावी घटनाओं की ओर इशारा करता है।

सिकन्दर ने कहा - "तुम घबड़ाओ मत। जिस तरह से तुम्हारी इच्छा होगी, उसी प्रकार संधि के नियम बनाये जायेंगे। अच्छा मैं जाता हूँ।"[1]

प्रस्तुत संवाद तत्कालीन वातावरण को व्यक्त करने की दृष्टि से सफल ही है। साथ ही कथानक का क्रमिक विकास भी होता है।

ग्रीक सैनिकों एवं राजपूत वीरों के बीच के आपसी वार्तालाप से सिकन्दर की गूढ़ नीतियों की आरे संकेत मिलता है।

ग्रीक सैनिक उसके समीप आकर बोला - "शाहंशाह सिकन्दर ने तुम लोगों को दया करके अपनी सेना में भरती करने का विचार किया है। आशा है कि इस संवाद से तुम लोग बहुत प्रसन्न होंगे।

---

1. प्रसाद - सिकन्दर की शपथ - छाया - पृ. 32

युवक बोल उठा - इस दया के लिए हम लोग कृतज्ञ हैं, पर अपने भाइयों पर अत्याचार करने में ग्रीकों का साथ देने के लिए हम लोग कभी प्रस्तुत नहीं है।.....

ग्रीक - क्या तुम लोग इस बात पर दृढ़ हो? एक बार और विचारकर उत्तर दो, क्योंकि उसी उत्तर पर तुम लोगों का जीवन-मरण निर्भर होगा। इस पर कुछ राजपूतों ने समवेत स्वर में कहा - हाँ - हाँ, हम अपनी बात पर दृढ़ है, किन्तु सिकंदर, जिसने देवताओं के नाम पर शपथ ली है, अपनी शपथ को न भूलूँगा। ग्रीक - सिकन्दर ऐसा मूर्ख नहीं है कि आए हुए शत्रुओं को और दृढ़ होने का अवकाश दे। अस्तु, अब तुम लोग मरने के लिए तैयार हो।"[1]

यही वास्तव में सिकन्दर की शपथ थी। प्रस्तुत व्यंग्यात्मक संवाद के ज़रिये कहानी उद्देश्य की ओर अग्रसर हुई है। राजपूत लोगों की देशभक्ति एवं भाइचारे को भी यहाँ वाणी मिली है। सिकन्दर की गूढ़नीति, भारतीय सैनिकों की रण-कुशलता, कर्तव्य-पारायणता, देशस्नेह और आत्म बलिदान को भी प्रसादजी ने अवसरोचित संवादों के ज़रिये सफल अभिव्यक्ति दी है। भारत के गौरवान्वित अतीत को उजागर करने की दृष्टि से भी संवाद का अपना महत्व है।

जहाँनारा

मुगलकालीन इतिहास को आधार बनाकर लिखी गई एक ऐतिहासिक कहानी है 'जहाँनारा'। पितृभक्ति में लीन होकर राजकीय सुखों का त्याग करने

---

1. प्रसाद - सिकन्दर की शपथ - छाया - पृ. 33

वाली जहाँनारा के उदात्त चरित्र को प्रसादजी ने भावात्मक संवादों के ज़रिये उजागर किया है।

कहानी के शुरुआत में ही शाहजहाँ और जहाँनारा के पारस्परिक संवाद से राजदरबार के कलह की सूचना देकर कथावस्तु का खुलासा किया है। आकस्मात् उसके मुख से निकल पड़ा–

"नहीं-नहीं, क्या वह ऐसा करेगा, क्या हमको तख्त-ताऊस से निराश जो जाना चाहिए?

हाँ, अवश्य निराश हो जाना चाहिये।

शाहजहाँ ने सिर उठाकर कहा – कौन? जहाँनारा? क्या यह तुम सच कहती हो?

जहाँनारा – (समीप आकर) हाँ, जहाँपनाह!

यह ठीक है; क्योंकि आपका अकर्मण्य पुत्र 'दारा' भाग गया, और नमक-हराम "दिलेर खाँ क्रूर औरंगजेब से मिल गया, और किला उसके अधिकार में हो गया।...."[1]

कहानी में वर्णित मुख्य घटना की ओर पिता और पुत्री के भावात्मक संवाद द्वारा प्रसादजी ने इशारा किया है। संवाद की दूसरी एक खूबी यह है कि तीसरे पात्र के चरित्र को भी अभिव्यक्ति दी गई है। आगामी घटनाओं की ओर भी यहाँ स्पष्ट संकेत मिलता है।

---

1. प्रसाद - जहाँनारा - छाया - पृ. 52-53

जहाँनारा की पितृभक्ति एवं देशस्नेह को स्पष्ट करने के लिए भी संवाद का ही सहारा लिया है।

"औरंगज़ेब ने एक बार फिर सिर नीचे कर लिया, और कुछ बड़बड़ाकर ज़ोर से बोला – "कौन जहाँनारा, तुम यहाँ कैसे?"

जहाँनारा – औरंगजेब! तुम यहाँ कैसे?

औरंगज़ेब – (पलटकर अपने लड़के की तरफ़ देखकर) बेटा! मालूम होता है कि बादशाह बेगम का कुछ दिमाग बिगड गया है, नहीं तो इस बेशर्मी के साथ इस जगह पर न आती। तुम्हें इनकी हिफायत करती चाहिए।

जहाँनारा – और औरंगज़ेब के दिमाग को क्या हुआ है, जो वह अपने बाप के साथ बेअदबी से पेश आया....."[1]

प्रस्तुत नाटकीय एवं तीखे संवाद-योजना तत्कालीन राजनीतिक परिवेश को वाणी दी है। संस्कृतनिष्ठ शब्दावलियों का प्रयोग होते हुए भी संवाद सर्वथा समय, स्थिति और पात्र के अनुकूल ही प्रयुक्त हुआ है। कहानी में आगे जहाँनारा और औरंगज़ेब के पारस्परिक वार्तालाप द्वारा ही राजदरबार के कलह की ओर संकेत किया गया है।[2]

तख्त ताऊस के प्रति दोनों भाइयों के बीच जो कलह मच रहे हैं, उसी की ओर सीधे प्रकाश डालने के साथ आगामी घटनाओं की सूचना भी यहाँ मिलती हैं।

---

1. प्रसाद - जहाँनारा - छाया - पृ. 54
2. वही - पृ. 55

वर्णनों के साथ कहानी को आगे बढ़ाकर अंत में औरंगज़ेब के हृदय परिवर्तन की ओर संकेत देने के लिए घटनाओं एवं संवादों का ही सहारा लिया है।

"…..समीप मुँह ले जाकर बोला-बहिन, कुछ हमारे लिये हुक्म है?

जहाँनारा ने अपनी आँखें खोल दी और एक पुरजा उसके हाथ में दिया, जिसे झुककर औरंगज़ेब ने लिया। फिर पूछा – बहिन, क्या तुम हमें माफ़ करोगी?…..

औरंगज़ेब उठा और उसने आँसू पोंछते हुए पुरजे को पढ़ा। उसमें लिखा था-

"बगैर सब्जः न पोश्द कसे मजार मरा।

कि कब्रपोश गरीबाँ हमीं गयाह बसस्त।।"[1]

पिता-पुत्री के निस्स्वार्थ प्यार एवं करुणामयी जिन्दगी के चित्रण करने में संवाद सफल निकला है। कहानी का वास्तविक उद्देश्य वातावरण तथा चरित्र को अभिव्यक्त करना था। उस दृष्टि से कहानी के प्रत्येक संवाद सफल ही है। तख्त ताऊस के कारण घटित निर्मम मृत्यु का पश्चाताप और क्षमा याचना औरंगज़ेब के अन्तिम संवाद में मुखरित है। कहानी के अन्त में जहाँनारा के कथन को पद्यात्मक रूप में चित्रित करके प्रसादजी ने अपने कवि रूप का भी परिचय दिया है।

4.3 'प्रतिध्वनि' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

'छाया' के बाद लिखी गई पन्द्रह कहानियों को इस संग्रह में संकलित किया गया है जो सन् 1926 में प्रकाशित किया गया है। इन कहानियों का भी धरातल

---

1. प्रसाद - जहाँनारा - छाया - पृ. 56

भावात्मक है। प्रतिपादित विषय एवं संगठन में एक नया मोड़ देखने को मिलता है। पहले संग्रह से भिन्न होकर ये कहानियाँ विभिन्न भाव-भंगिमाओं एवं परिस्थितियों की सफल अभिव्यक्ति देने वाली हैं। प्रसादजी के भावुक एवं सुकुमार मन की प्रतिध्वनि के रूप में ये कहानियाँ पाठकों के मन को उद्वेलित करते हैं। ऐतिहासिक, आर्थिक एवं सामाजिक समस्या से पीड़ित जनता का संक्षिप्त चित्र इन कहानियों में देखने को मिलता है। प्रसादजी की अभिनव व्यंजना शैली और भावाभिव्यक्ति की तीव्रता इन कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना में भी दर्शनीय है।

गूदड़ साई

प्रसादजी की सुकुमार भाववृत्तियों को शब्दबद्ध करनेवाली इस कहानी में उनकी मानवतावादी दृष्टि ही प्रमुख है। एक साधारण चरित्र को लेकर लिखी गई इस कहानी में जीवन के प्रति आस्थावादी स्वर मुखरित है।

एक छोटे-से पुकार से कहानी शुरू होती है जो पाठकों का ध्यान खींचने में काफ़ी था।

"साई! ओ साई!" एक लड़के ने पुकारा।"[1]

इस आरंभिक वाक्यांश से ही पाठक कहानी की ओर उत्सुक हो जाते हैं। क्योंकि आगे क्या होनेवाला है, वह व्यक्ति कौन है आदि कई प्रश्न-उत्तर की तलाश में पाठकों के मन को उद्वेलित करेगा। साई और बालक के बीच के संवाद कथानक की ओर स्पष्ट संकेत देने के साथ चरित्र संबन्धी जानकारी भी पाठकों को देते हैं।

---

1. प्रसाद - गूदड़ साई, प्रतिध्वनि - पृ. 76

"“मोहन!”

“तुम आजकल आते नहीं?”

“तुम्हारे बाबा बिगड़ते थे।”

“नहीं, तुम रोटी ले जाया करो।”

“भूख नहीं लगती।”

“अच्छा, कल ज़रूर आना; भूलना मत!”

इतने में एक लड़का साई का गूदड़ खींच कर भागा। गूदड़ लेने के लिए साई उस लड़के के पीछे दौड़ा।”[1]

प्रस्तुत संक्षिप्त व सांकेतिक संवाद योजना के ज़रिये मोहन और साई के बीच के भावात्मक संबन्ध को वाणी दी गई है। आगामी घटनाओं की ओर भी स्पष्ट संकेत दिया गया है।

गूदड़ साई के दिल में बसे वात्सल्य क्षुधा और मानवीय संवेदनशीलता की ओर भी आपसी संवादों द्वारा ही प्रकाश डाला गया है। मोहन के पिता द्वारा उस नटखट लड़के के सिर पर चपत मारते देख साई और मोहन के पिता के बीच के संवाद इसी ओर संकेत करता है।

"“मत मारो, मत मारो, चोट खाती होगा!” साई ने कहा और लड़के को छुडाने लगा। मोहन के पिता ने साई से पूछा–

---

1. प्रसाद - गूदड़ साई, प्रतिध्वनि - पृ. 77

"तब चीथड़े के लिए दौड़ते क्यों थे?"

सिर फटने पर भी जिसको रुलाई नहीं आयी थी, वह साई लड़के को रोते देखकर रोने लगा। उसने कहा – "बाबा मेरे पास दूसरी कौन वस्तु है, जिसे देकर इन 'रामरूप' भगवान को प्रसन्न करता!"

"तो क्या तुम इसीलिए गूदड़ रखते हो?"

"इस चीथड़े को लेकर भागते हैं भगवान् और मैं उनसे लड़कर छीन लेता हूँ, रखता हूँ फिर उन्हीं से छिनवाने के लिए, उनके मनोविनोद के लिए। सोने का खिलौना तो उचक्के भी छीनते हैं, पर चीथडों पर भगवान् ही दया करते हैं।".....

मोहन के पिता आश्चर्य से बोले–

"गूदड़ साई! तुम निरे गूदड़ नहीं, गुदड़ी के लाल हो!!"[1]

फ़कीर गूदड साई की छाती पर धड़कने वाली इन्सानियत को प्रसादजी ने उपर्युक्त संवाद के ज़रिये वाणी दी है। मार्मिकता एवं सुसंबद्धता संवाद को परसंवेद्य बनाने में सहायक निकला है। संवाद से शुरू होकर संवादों से ही कहानी समाप्त होती है। बालकों में ईश्वर रूप देखने की भारतीय नैतिक विचारधाराओं की ओर भी संवाद द्वारा यहाँ संकेत मिलता है।

---

1. प्रसाद - गूदड़ साई, प्रतिध्वनि - पृ. 77-78

दुखिया

सामाजिक धरातल पर लिखी गई इस कहानी में ग्राम्य जीवन की सफल अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। दीन दरिद्रों की करुण गाथा को प्रसादजी ने कहानी में उतारने की कोशिश की है। वर्णनों से शुरू होती है तो भी दुखिया के दुखपूर्ण जीवन तथा घर की आर्थिक स्थिति की ओर संवादों द्वारा ही प्रकाश डाला गया है।

ज़मीन्दार कुमार ने दुखिया की सहायता के बदले जब रुपया रचना देना चाहा, तब दुखिया और मोहन सिंह के बीच के संवाद से रामगुलाम और मोहनसिंह की चारित्रिक विशेषताएँ उद्‌घाटित होती हैं।

दुखिया ने हाथ जोड़कर कहा – ""बाबूजी, हम तो आप ही के गुलाम हैं। इसी घोड़े को घास देने से हमारी रोटी चलती है।"".....

उसने पूछा – "क्या तुम समगुलाम की लड़की हो"

"हाँ, बाबुजी।"

"वह बहुत दिनों से दिखता नहीं!"

"बाबुजी, उनकी आँखों से दिखाई नही पड़ता।"

"अहा, हमारे लड़कपन में वह हमारे घोड़े को, जब हम उस पर बैठते थे, पकड़ कर टहलाता था। वह कहाँ है?"

"अपनी मड़ई में।"

"चलो, हम वहाँ तक चलेंगे।"..... उसने कहा–

"बाबुजी, घास पहुँचाने में देर हुई है। सरकार बिगडेंगे।"

"कुछ चिन्ता नहीं; तुम चलो।"[1]

संक्षिप्त एवं सारगर्भित प्रस्तुत संवाद से पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं की ओर संकेत देने के साथ कहानी का क्रमिक विकास भी संभव होता है। रामगुलाम और मोहनसिंह के आपसी संवाद द्वारा उनके भावात्मक संबन्धों की ओर संकेत किया गया है।[2]

जमीन्दार पुत्र होते हुए भी मोहनसिंह का चरित्र मानवीय संवेदनाओं से युक्त है। रामगुलाम के शब्दों में तत्कालीन सामाजिक अवस्था विशेष एवं आर्थिक पराधीनता स्पष्ट परिलक्षित है। पात्रानुकूल भाषा संवाद को प्रभावशाली बनाने में उपयुक्त रहा है।

कहानी के अंत में घटना विशेष की अंतिम परिणति यानी कहानीगत लेखकीय उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति हेतु भी अवसरानुकूल संवाद योजना का ही प्रयोग हुआ है। पशुशाला निरीक्षक देर से आने के कारण उस पर टूट पड़ते हैं।

"बड़ी नीचता से उसने कहा – "मारे जवानी के तेरा मिजाज ही नहीं मिलता! कल से तेरी नौकरी बंद कर दी जायगी। इतनी देर?".....

"छोटे सरकार घोड़े पर से गिर पड़ रहे। उन्हें मड़ई तक पहुँचाने में देर....।"

---

1. प्रसाद - दुखिया, प्रतिध्वनि - पृ. 102
2. वही - पृ. 103

"चुप हरामजादी ! तभी तो तेरा मिजाज और बिगड़ा है। अभी बड़े सरकार के पास चलते हैं।"[1]

तत्कालीन सामाजिक वातावरण को ये संवाद मूर्त कर देता है। साथ ही ज़मीन्दारी दुर्व्यवहार से पीड़ित, दुखिया के मनोभावों को भी वाणी दी गई है। एक छोटी-सी घटना विशेष को कहानी का रूप दिया गया है जिसके ज़रिये परिवेश तथा चरित्र दोनों को शब्दबद्ध किया है। कहानी में भाव की व्यंजना ही संवादों के मूल में कार्यरत है। कथावस्तु, पात्र एवं वातावरण के अनुकूल शब्दों का चयन किया गया है। अपनी प्रवृत्तिगत विशेषता के कारण वह संवादों के अन्त में काफ़ी कुछ पाठकों के लिए छोड़ देते हैं। जाने-अनजाने प्रेम के एक अदृश्य एवं अव्यक्त आकर्षण भी यहाँ देखने को मिलता है।

प्रलय

'प्रतिध्वनी' संग्रह की अंतिम कहानी है 'प्रलय' जिसमें प्रसादजी के विराट महाकाव्य, 'कामायनी' का रूप-सादृश्य देखने को मिलता है। रचना विधान में छोटी होते हुए भी यह कहानी संग्रह की अन्य कहानियों से कहीं आगे खड़ी होती है। शिव भक्ति को आधार मानकर इस कहानी में भी प्रलय के आनन्ददायिनी अंत की ओर संकेत दिया गया है। प्रलय और सृष्टि दोनों के अभिन्न संबन्ध को भी दर्शाने की कोशिश की गई है।

प्रसादजी के दार्शनिक व्यक्तित्व को भली भान्ति अंकित करने वाली यह कहानी संवादों से शुरू होती है। 'कामायनी' के आरंभ की याद दिलानेवाली

---

1. प्रसाद - दुखिया, प्रतिध्वनि - पृ. 102

हिमालय चोटियों के ऊपर और नीचे के दृश्यों के बीच प्राकृतिक उद्यान में खड़े हुए युवक और युवति के आपसी संवाद दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति देता है।

"उपत्यका की कन्दरा में, प्राकृतिक उद्यान में खड़े हुए युवक ने युवती से कहा - "प्रिये!"

"प्रियतम! क्या होने वाला है?"

"देखो क्या होता है; कुछ चिन्ता नहीं - आसव तो है न?"

"क्यों प्रिय। इतना बड़ा खेल क्या यों ही नष्ट हो जायगा?".....

"क्या सृष्टि की चेष्टा मिथ्या थी?"

"मिथ्या थी या सत्य, नहीं कहा जा सकता पर सर्ग, प्रलय के लिए होता है, यह निस्सन्देह कहा जायगा, क्योंकि प्रलय भी एक सृष्टि है।"[1]

प्रतीकात्मक ढंग से अभिव्यक्त प्रस्तुत संवाद सचमुच दार्शनिक विचार धाराओं से परिपूर्ण ही है। इसलिए एक गद्यगीत-का-सा आभास पाठकों को मिलता है। 'कामायनी' का बीज शायद यहाँ बिखरे हुए प्रतीत होता है। प्रसादजी की विचारधाराओं का स्पष्ट प्रतिफलन युवक के शब्दों में मुखरित है। भावी प्रलय की एक प्रतिध्वनि युवक के संवादों में सुनाई देता है।

प्रलय के भीषण व्यापार को देखकर युवक और युवती के आपसी संवाद प्रकाशजी की आध्यात्मिक विचारधाराओं की ओर प्रकाश डालते हैं।[2] यहाँ संवाद

---

1. प्रसाद - प्रलय - प्रतिध्वनि - पृ. 107
2. वही - पृ. 108

द्वारा मानव मन की सूक्ष्म एवं दार्शनिक विचारों को प्रतीकात्मक रूप से अभिव्यक्ति देने की कोशिश की है। इसलिए संवाद के बीच कहीं भी कथातत्व या घटनाओं का फैलाव नहीं है। आगे प्रलय के भीषण ताण्डव नृत्य एवं भयंकर ज्वालामुखियों के लावे, जलराशी के समान जलते देखकर युवक प्रफुल्लित हो जाते हैं। उस समय के संवाद उसकी मनःस्थितियों का खुलासा करता है।

"युवक ने अट्टहास करते हुए कहा –

"ऐसी बरसात काहे को मिलेगी। एक पात्र और।"

युवती सहसा पात्र भरती हुई बोली – "मुझे अपने गले से लगा लो, बड़ा भय लगता है।"

युवक ने कहा – "तुम्हारा त्रस्त करुण अर्ध कटाक्ष विश्व-भर की मनोहर छोटी-सी आख्यायिका का सुख देख रहा है।"

"हाँ एक–"

.....

"अभिमान ही होता, तो प्रयास करके तुमसे क्यों मिलती? जाने दो, तुम मेरे सर्वस्व हो। तुमसे अब यह माँगती हूँ कि अब कुछ न माँगूँ, चाहे इसके बदले मेरी समस्त कामना ले लो। युवती ने गले में हाथ डाल कर कहा।"[1]

प्रसाद की यह प्रतीकात्मक दार्शनिक दृष्टि उनके कई नाटकों में भी देखने को मिलती है। उनका मानना है कि परिवर्तन ही सृष्टि और जीवन है। 'स्कन्दगुप्त'

---

1. प्रसाद - प्रलय - प्रतिध्वनि - पृ. 109

नाटक में इसी विचारधारा की सार्थक अभिव्यक्ति दर्शनीय है। युवक की वाणी में शान्तता है तो युवती में मोहभंग की व्याकुलता सुनाई देती है। युवक धीरे-धीरे युवति को आत्मज्ञान प्राप्त करने की प्रेरणा देता है।

कहानी के अंत में दोनों के बीच के संवाद में प्रसादजी का आनंदवादी दर्शन पूर्ण अभिव्यक्ति पाती है। युवति भी आत्मज्ञान से ग्रस्त हो गई।

"युवति सचेत होकर बोली–

"प्रियतम।"

"क्या प्रिये?"

"नाथ! अब मैं तुमको पाऊँगी।"

"क्या अभी तक नहीं पाया था?"

"मैं अभी तक तुम्हें पहचान भी नहीं सकी थी। तुम क्या हो, आज बता दोगे?"

"क्या अपने को जान लिया था; तुम्हारा क्या उद्देश्य था?"

"अब कुछ-कुछ जान रही हूँ; जैसे मेरा अस्तित्व स्वप्न था; आध्यात्मिकता का मोह था; जो तुमसे भिन्न, स्वतन्त्र स्वरूप की कल्पना कर ली थी, वह अस्तित्व नहीं, विकृति थी। उद्देश्य की तो प्राप्ति हुआ ही चाहती है।".....

"आओ, यह प्रलय-रूपी तुम्हारा मिलन आनंदमय हो। आओ।"

अखण्ड शान्ति! आलोक!! आनन्द!!!"[1]

---

1. प्रसाद - प्रलय - प्रतिध्वनि - पृ. 109-110

प्रस्तुत अंतिम संवाद से प्रलय की सृष्टि का संकेत दिया गया है। यहाँ शैव दर्शन के अनुसार युवक – 'पुरुष' का और युवति – 'प्रकृति' का यानी सूक्ष्म एवं स्थूल के प्रतीक रूप में चित्रित किया गया है। दोनों के प्रलयवत मिलन वास्तव में अखंड और परम आनंद की उपलब्धि सिद्ध होती है।

प्रसादजी ने इस प्रतीकात्मक कहानी में प्रतीकात्मक संवादों के प्रयोग से सृष्टि की विराट चेतना एवं उसके आध्यात्मिक पक्ष को अखंड आनंद प्राप्ति के लिए उजागर किया गया है। कहानी के प्रत्येक संवाद प्रतीकात्मक है। कहानी से बढ़कर एक मनःस्थिति को संकेतों एवं प्रतीकों के ज़रिये चित्रित किया है।

4.4 'आकाश-दीप' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

'छाया' और 'प्रतिध्वनि' की कहानियों का विकसित रूप और कहानीकार प्रसाद की परिष्कृत एवं प्रौढ़ कहानीकला के प्रमाण है, सन् 1929 ई में प्रकाशित 'आकाशदीप' संग्रह की कहानियाँ। सभी कहानियाँ एक स्तर की नहीं है तो भी प्रसादजी की परिपक्वता मौलिकता और कहानीकार के रूप में स्वतन्त्र पहचान की दृष्टि से ये कहानियाँ महत्वपूर्ण ही है। अलग-अलग मायने की होते हुए भी उन सभी कहानियों का धरातल 'प्रेम' ही है। 'आकाश-दीप' कहानी इस संग्रह की प्रतिनिधि-कहानी है जो प्रसादजी के कहानीकार व्यक्तित्व को हिन्दी कहानी-साहित्य में दीप्तमान करने के लिए काफ़ी है।

इसमें प्रसादजी की कल्पनाशीलता, मानवीय प्रेम और संवेदनशीलता से संचित कर मानव जीवन के सुन्दरतम चित्रों की सृष्टि करने में सफल हुई।

आकाश-दीप संग्रह में संकलित उन्नीस कहानियों में से प्रतिनिधि कहानियों में प्रयुक्त संवादात्मकता को परखने का प्रयास आगे किया जा रहा है।

आकाश-दीप

'आकाश-दीप' कहानीकार प्रसाद की सशक्त रचना है। इसमें प्रेम का द्वन्द्वात्मक एवं सूक्ष्म स्तरीय मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है। कहानी की केन्द्रीय भावना के अनुरूप वातावरण, पात्र और परिस्थिति का सजीव चित्र सफल संवादों के ज़रिये चित्रित किया है। नाटकीयता की ओर अधिक ध्यान देने के कारण कहानी का आरंभ ही संवादों से हुआ है। पूरी कहानी का बीज इस प्रकार के नाटकीय, संक्षिप्त एवं श्रेष्ठ संवादों से ही बोया गया है। इसलिए ये संवाद नाटकीय एवं अभिनयात्मक है। आरंभिक संवाद में प्रसादजी का नाटककार रूप काफी सजग दिखाई देता है।

"बंदी!"

"क्या है? सोने दो।"

"मुक्त होना चाहते हो?"

"अभी नहीं, निद्रा खुलने पर, चुप रहो।"

"फिर अवसर न मिलेगा।"

"बड़ा शीत है, कहीं से एक कंबल डालकर कोई शीत से मुक्त करता।"

"आँधी की संभावना है। यही अवसर है। आज मेरे बन्धन शिथिल हैं।"

"तो क्या तुम भी बन्धी हो?"

"हाँ, धीरे बोलो, इस नाव पर केवल दस नाविक और प्रहरी हैं।"

"शस्त्र मिलेगा?"

"मिल जायगा। पोत से संबद्ध रज्जु काट सकोगे?"

"हाँ।"[1]

प्रस्तुत नाटकीय संवाद इस बात का प्रमाण है कि प्रसादजी एक कुशल नाटककार होने के कारण भाषा पर उनका असाधारण अधिकार हैं। इसीलिए उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद पूर्णतया प्रभावोत्पादक ही है। कथानक को गतिशील बनाकर आगामी घटनाओं की सूचना देने की दृष्टि से संवाद का स्थान अद्वितीय है। आरंभिक संवाद-योजना कहानी को परसंवेद्य बनाने में सर्वथा उचित रहा है। संक्षिप्तता, सांकेतिकता एवं नवीन नाटकीय वातावरण की सृष्टि संवाद को प्रभावशाली बनाया है। वातावरण के अनुकूल प्रयुक्त होने के कारण पाठकों के मन में एक स्पष्ट चित्र उपस्थित कराने में संवाद सफल हुए हैं। मुक्त होने की छटपटाहट, अतीत की पीड़ा और मानसिक व्यथा दोनों के शब्दों में भरी पड़ी है। बुधगुप्त और चम्पा के संवाद इन सबकी सूचना पाठकों को देते हैं।

"नायक ने कहा – "बुधगुप्त! तुमको मुक्त किसने किया?"

कृपाण दिखाकर बुधगुप्त ने कहा - "इसने।"

नायक ने कहा – "तो तुम्हें फिर बन्दी बनाऊँगा।"

---

1. प्रसाद - आकाश-दीप - आकाश दीप - पृ. 112

"किसके लिए? पोताध्यक्ष मणिभद्र अतल जल में होगा – नायक! अब इस नौका का स्वामी मैं हूँ।"

"तुम? जलदस्यु बुधगुप्त? कदापि नहीं।".....

तो तुम द्वन्द्व युद्ध के लिए प्रस्तुत हो जाओ, जो विजयी होगा, वह स्वामी होगा।"[1]

घटनाओं के ज़रिये पात्रों के मनोभावों को अंकित करने में प्रस्तुत संवाद सर्वथा उपयुक्त रहा है। संबद्धता एवं गतिशीलता संवाद को प्रेषणीय बनाया है। पात्रों के क्रियाकलापों द्वारा कहानीगत वातावरण की ओर भी प्रकाश डाला गया है। दोनों पात्रों के जीवन परिस्थितियों की ओर भी संवाद द्वारा ही प्रकाश डाला गया है।[2] बुधगुप्त और चम्पा के जीवन की झाँकी संवाद द्वारा पाठकों को मिलती हैं। भयात्मकता एवं नाटकीयता संवाद को एक आकर्षणीयता प्रदान करती है। "मैं अपने अदृष्ट को अनिर्दिष्ट हीं रहने दूँगी। वह जहाँ ले जाय" – चम्पा के इस कथन में उसकी मानसिक पीड़ा, निस्सहाय जीवन एवं पवित्र प्रेम को प्रसादजी ने सफल अभिव्यक्ति दी है। जिस प्रकार कहानी का आरंभ नाटकीय संवादों से हुआ है, उसी प्रकार कहानी का क्रमिक विकास भी नाटकीय संवादों से ही हुआ है। शब्द-चयन और वाक्य-विन्यास की दृष्टि से संवादों की भाषा परिमार्जित एवं सौष्ठव संपन्न है। चम्पा के प्रेमी मन की व्याकुलता और कर्तव्यनिष्ठा को दिखाने के लिए भी उपयुक्त संवाद योजना का ही सहारा लिया है।

---

1. प्रसाद - आकाशदीप - आकाशदीप - पृ. 113
2. वही - पृ. 114

"बुधगुप्त! आज मैं अपने प्रतिशोध का कृपाण अतल जल में डूबो देता हूँ। हृदय ने छल किया, बार-बार धोखा दिया!" चमककर वह कृपाण समुद्र का हृदय बेधता हुआ विलीन हो गया।

"तो आज से मैं विश्वास करूँ, क्षमा कर दिया गया?" आश्चर्य कंपित कंठ से महानाविक ने पूछा।

"विश्वास? कदापि नहीं, बुधगुप्त। जब मैं अपने हृदय पर विश्वास नहीं कर सकी, उसी ने धोखा दिया, तब मैं कैसे कहूँ? मैं तुम्हें घृणा करती हूँ, फिर भी तुम्हारे लिए मर सकती हूँ। अंधेर है जलदस्यु। तुम्हें प्यार करती हूँ।" – चम्पा रो पडी।

वह स्वप्नों की रंगीन संध्या, तुम से अपनी आँखें बन्द करने लगी थी। दीर्घ निश्वास लेकर महानाविक ने कहा - "इस जीवन की पुण्यतम घड़ी की स्मृति में एक प्रकाश-गृह बनाऊँगा, चम्पा। यही उस पहाड़ी पर। संभव है कि मेरे जीवन की धुँधली संध्या उससे आलोक पूर्ण हो जाय।"[1]

चम्पा और बुधगुप्त के निस्वार्थ चरित्र और पवित्र प्रेम की ओर संवाद द्वारा प्रकाश डाला गया है। चम्पा के शब्दों में उसकी जीवन निष्ठा, कर्तव्यशील चरित्र दोनों साकार हो उठा है। प्रसादजी की कहानियों के पात्रों में, प्रेम का संसार एक असफल मिलन या एक अछोर टीस बनकर रह जाता है। बुधगुप्त और चम्पा के प्रेम भी इसी यथार्थ को अभिव्यक्ति देती है। यहाँ चरित्र की अपेक्षा पात्रों के

---

1. प्रसाद - आकाशदीप - आकाशदीप - पृ. 118

मानसिक भावों की ही प्रधानता है। वातावरण को मूर्त करने की क्षमता भी संवादों में निहित है।

चम्पा के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व और कर्तव्य निष्ठा ने उसे प्रेम की वेदी पर सिर झुकने को विवश बना दिया है। संवाद उस सत्य को भी शब्दबद्ध करते हैं।[1] चम्पा के शब्दों में गहरी मानसिक पीड़ा भरी पड़ी है। प्रेम की तीव्रता को वह कर्तव्य की बलिवेदी पर पूर्णाहुति करती है। प्रसादजी के संवेदनशील प्रेमी मन यहाँ सक्रिय दिखाई देता है। कहानी के अन्त में चम्पा के ऐकान्तिक एवं असफल प्रेम के बदले देश प्रेम की भावना को ऊँचा उठाकर प्रसादजी ने भारतीय संस्कृति और इतिहास के प्रति अपनी अटूट आस्था को प्रकट किया है। चम्पा यों कहती है–

"बुधगुप्त! मेरे लिए सब मिट्टी है; सब जल तरल है; सब पवन शीतल है। कोई विशेष आकांक्षा हृदय में अग्नि के समान प्रज्ज्वलित नहीं। सब मिलाकर मेरे लिए एक शून्य है। प्रिय नाविक। तुम स्वदेश लौट जाओ, विभवों का सुख भोगने के लिए, और मुझे, छोड दो इन निरीह भोले-भाले प्राणियों के दुःख की सहानुभूति और सेवा के लिए।"

"तब मैं अवश्य चला जाऊँगा, चम्पा। यहाँ रहकर मैं अपने हृदय पर अधिकार रख सकूँ - इसमें सन्देह है। आह! उन लहरों में मेरा विनाश हो जाय।"

महानाविक के उच्छ्वास में विकलता थी। फिर उसने पूछा - "तुम अकेली यहाँ क्या करोगी।"

---

1. प्रसाद - आकाशदीप - आकाशदीप - पृ. 119

"पहले विचार था कि कभी इस दीप-स्तंभ पर से आलोक जला कर अपने पिता की समाधि का इस में अन्वेषण करूँगी। किन्तु देखती हूँ, मुझे भी इसी में जलना होगा, जैसे आकाश-दीप।"[1]

प्रसादजी की कहानी कला की समस्त विशेषताएँ इस अंतिम संवाद में एक साथ समाहित हो गई है। प्रस्तुत भावात्मक, नाटकीय संवाद में चम्पा के चरित्र की सफल अभिव्यक्ति छिपी हुई है। प्रेम की निस्वार्थ अनुभूति, कर्तव्यबोध, त्याग-भरा जीवन-सब नक्षत्रों की भान्ति उसके शब्दों में दीप्तमान है। एक प्रज्ज्वलित दीपशिखा के समान चम्पा उस दीप में जीवन पर्यन्त जलती रही। प्रेम और त्याग की ऐतिहासिक प्रतिमूर्ति के समान चम्पा के महान चरित्र को प्रसादजी ने उजागर किया है। कहानी के अप्रतिम संवाद-योजना को देखकर डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा लिखते हैं कि "इस कहानी में इतनी संवाद और क्रिया मिलती है कि यदि बीच-बीच में रंगमंच संबन्धी निर्देश लगा दिये जायें तो एक सुन्दर एकांकी तैयार हो जाय।"[2]

भावात्मक कहानियों के प्रणेता प्रसादजी की इस श्रेष्ठ रोमान्टिक कहानी में प्रयुक्त प्रत्येक संवाद उनके नाटककार तथा कवि व्यक्तित्व को मुखरित करते हैं। पात्र एवं चरित्र, पाठकों के मनोमन्दिर में जीवन्त मूर्ति समान प्रतिष्ठित हो जाते हैं। इन सब को सार्थक अभिव्यक्ति देने में संवाद-योजना ही कार्यरत है।

भिखारिन

सामान्य मानव के सामान्य जीवन को आधार बनाकर लिखी गई इस कहानी में प्रसादजी ने चरित्र विविधता पर बल दिया है। फिर भी कहानी का

1. प्रसाद - आकाशदीप - आकाशदीप - पृ. 120
2. डॉ. जगन्नाथ प्रसाद शर्मा - कहानी का रचना विधान - पृ. 150

धरातल प्रेम ही है। यथार्थवादी होते हुए भी प्रसाद जी के व्यक्तित्व के अनुरूप सौन्दर्यचेतना आभिजात्य संस्कार और चारित्रिक गरिमा कहानी में दर्शनीय है।

निर्मल और माँ के आपसी संवाद से ही कहानी में घटना विस्तार होते हैं।

"अपनी चादर ओढ़ते हुए स्नेह से उसने निर्मल से पूछा - "क्या तू स्नान न करेगा?

निर्मल ने कहा - "नहीं माँ, मैं तो धूप निकलने पर घर पर ही स्नान करूँगा।"

पंडाजी ने हँसते हुए कहा – "माता, अबके लड़के पुण्य-धर्म क्या जानें? यह सब तो जब तक आप लोग हैं, तभी तक हैं।"

निर्मल का मुँह लाल हो गया। फिर भी वह चुप रहा। उसकी माँ संकल्प लेकर कुछ दान करने लगी। सहसा जैसे उजाला हो गया - एक धवल दाँतों की श्रेणी अपना भोलापन बिखेर गई–

"कुछ हमको दे दो, रानी माँ।" निर्मल ने देखा, एक चौदह बरस की भिखारिन भीख माँग रही है। पंडाजी झल्लाये, बीच ही में संकल्प अधूरा छोड़कर बोल उठे – "चल हट!"

निर्मल ने कहा - "माँ! कुछ इसे भी दे दो।"

निर्मल एक भावुक युवक था। उसने पूछा - "तुम भीख क्यों माँगती हो?".....

उसने कहा - बाबुजी, पेट के लिए।"

निर्मल ने कहा – "नौकरी क्यों नहीं करती? माँ, इसे अपने यहाँ रख क्यों नहीं लेती हो? धनिया तो प्रायः आती भी नहीं।"

माता ने गंभीरता से कहा - "रख लो!"

कौन जाति है, कैसी है, जाना न सुना; बस रख लो।"

निर्मल ने कहा – "माँ, दरिद्रों की तो एक ही जाति होती हैं।"[1]

कहानी की ज्ञान और लेखकीय उद्देश्य - दोनों की सफल अभिव्यक्ति उपर्युक्त संवाद में निहित है। निर्मल के कथन में प्रसादजी की मानवतावादी दृष्टि का परिपाक दर्शनीय है। संवाद के अंतिम कथन इसका सफल उदाहरण है। समाज की रूढ़िवादी नेता लोग जो धर्म का अंधानुकरण करके वास्तविक जीवन जगत और मानवीय संवेदनशीलता से अलग खडे रहते हैं, उन पर व्यंग्य दृष्टि डालने के लिए ही प्रसादजी ने निर्मल के मुँह से ऐसा कहलवाया है। यहाँ उनकी मानवतावादी दृष्टि किसी धर्म सापेक्ष्य नहीं, बल्कि धर्म निरपेक्ष ही है।

कहानी के बीच में भिखारिन के मुँह से "सुनि री निर्धन के धन राम!

सुने री" – ये पंक्तियाँ दुहराकर प्रसादजी ने दीन दुखियों पर दया करने वाले भगवान राम के दयानिधान रूप का महत्व स्थापित किया है।

जब भाभी और माँ द्वारा भिखारिन का मज़ाक उडाती है तो निर्मल का संवेदनशील मन चुप रह नहीं जाता था।

---

1. प्रसाद - भिखारिन - आकाशदीप - पृ. 142

"यह क्या भाभी! मैं तो इससे ब्याह करने के लिए भी प्रस्तुत हो जाऊँगा। तुम व्यंग्य क्यों कर रही हो?"[1]

यहाँ निर्मल अपने मन की अभिव्यक्ति किया है तो भिखारिन के जवाब उसके स्वाभिमानी और परिश्रमी व्यक्तित्व को स्पष्ट कर देता है।

"दो दिन माँगने पर भी तुम लोगों से एक पैसा तो देते नहीं बना, फिर क्यों गाली देते हो बाबू? ब्याह करके निभाना तो बड़ी दूर की बात है।"[2]

धार्मिक खोखलेपन तथा तत्कालीन बेमतलब सामाजिक नीतियों पर भिखारिन के कथन द्वारा व्यंग्य किया गया है। कहानी उस सामाजिक यथार्थ को वाणी देने की कोशिश करते हैं। संवाद परिस्थिति समय और पात्र के अनुरूप ही प्रयुक्त प्रत्येक शब्द उसकी चारित्रिक विशेषताओं को उभारने में सफल हुआ है। सामाजिक विचारधाराओं में एक परिवर्तन की माँग कहानी पाठकों के सामने रखती है जिसकी ओर संवादों द्वारा ध्यान आकर्षित किया गया है। बीच में काव्य पंक्तियों का भी प्रयोग किया गया है जो उनके कवि व्यक्तित्व को सक्रिय बना देने में सहायक हुआ है।

समुद्र-संतरण

यह प्रसादजी की एक रहस्यात्मक प्रेम कहानी है जिसमें अलौकिक तत्वों के उद्‌घाटन पर बल दिया है। प्रेम भावना को जाति और सामाजिक मर्यादाओं से परे मूल्यवान स्थापित करने की कोशिश यहाँ दर्शनीय है। एक सुख भरी रोमान्टिक कल्पना को राजकुमार और धीवर बालिका के प्रेम के माध्यम से चित्रित किया है।

---

1. प्रसाद - भिखारिन - आकाशदीप - पृ. 143
2. वही - पृ. 144

स्वच्छन्दतावादी धरातल पर लिखी गई इस कहानी में पात्रों के क्रियाकलापों की ओर संवादों द्वारा ही प्रकाश डाला गया है।

"उसने पुकारा – "सुन्दरी!"

धीवर-बाला आकर खड़ी हो गई।

बोली – "मुझे किसने पुकारा?"

"मैंने।"

"क्या कहकर पुकारा?"

"सुन्दरी।"

"क्यों, मुझमें क्या सौन्दर्य है?" और है भी कुछ, तो क्या तुमसे विशेष?"

"हाँ, मैं आज तक किसी को सुन्दरी कहकर नहीं पुकार सका था; क्योंकि यह सौन्दर्य विवेचना मुझ में अब तक नहीं थी।"

"आज आकस्मात् यह सौन्दर्य-विवेक तुम्हारे हृदय में कहाँ से आया?"

"तुम्हें देखकर मेरी सोई हुई सौन्दर्य" तृष्णा जाग गई।"[1]

प्रसादजी के उन्मुक्त प्रेमी मन की अभिव्यक्ति पात्रों के संवाद में गूँज उठती है। संवाद संक्षिप्त और सांकेतिक होने के कारण प्रभावशाली बन गया है। वैयक्तिक अनुभूतियों को ही प्रधानता ही गई है। यहाँ अभिव्यक्त प्रेम भावना मन की गहराई को छूनेवाली है।

---

1. प्रसाद - समुद्र-संतरण - आकाशदीप - पृ. 160-161

घटनाक्रम की ओर प्रकाश डालने के लिए भी संवाद-योजना का ही सहारा लिया गया है लेकिन पात्रानुकूल होने के कारण संवाद चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भी उपर्युक्त रहा है।

""हाँ, तो तुम राजकुमार हो! इसी से तुम्हारा सौन्दर्य सापेक्ष है।"

"तुम कौन हो?"

"धीवर बालिका।"

"क्या करती हो?"

"मछली फँसाती हूँ।".....

निष्ठूर है तो, पर मैं विवश हूँ। हमारे द्वीप के राजकुमार का परिणय होने वाला है। उसी उत्सव के लिए सुनहली मछलियाँ फँसाती हूँ। ऐसे ही आज्ञा है।

"परन्तु वह ब्याह तो होगा नहीं।"[1]

कथा प्रवाह में गतिशीलता लाने में प्रस्तुत संवाद का अपना महत्व है। भाषाई कुशलता ने संवाद को प्रेषणीय बनाया है। धीवर बालिका के शब्दों में कर्तव्य पालन का दृढ़निश्चय है तो राजकुमार के शब्दों में एक प्रेममूलक भावुकता एवं राजकीय संकल्प विद्यमान है। आगामी घटनाओं की ओर संवाद ध्यान आकर्षित करते है।[2] पात्रानुकूलता इस प्रकार के संवादों की परम विशेषता है। छोटे-छोटे शब्दों द्वारा संकेत रूप में प्रयुक्त होने के कारण संवाद की प्रेषणीयता भी बढ़ गया

---

1. प्रसाद - समुद्र-संतरण - आकाशदीप - पृ. 161
2. वही - पृ. 161

है। राजकुमार के शब्दों में एक भावुक अनुरागी मन की वाणी सुनाई देता है। दोनों के इस निशब्द प्रेम को प्रसादजी ने सामाजिक रूढ़ियों के परे एक स्वच्छन्दतावादी रूप दिया है। यहाँ उनका भावुक मन ही काम करता है।

कहानी के अन्त में प्रेम की स्वच्छन्द प्रकृति एवं अलौकिक मिलन की ओर संकेत किया गया है।

"धीवर-बाला ने कहा 'आओगे?'

लहरों को चीरते हुए सुदर्शन ने पूछा – "कहाँ ले चलोगी?"

"पृथ्वी से दूर जल-राज्य में; जहाँ कठोरता नहीं, केवल शीतल, कोमल और तरल आलिंगन है, प्रवंचना नहीं; सीधा आत्मविश्वास है; वैभव नहीं, सरल सौन्दर्य है।

धीवर-बाला ने हाथ-पकड़ कर सुदर्शन को नाव पर खींच लिया। दोनों हँसने लगे। चन्द्रमा और जलनिधि भी।"[1]

वैयक्तिक प्रेम को नाटकीय वातावरण में परस्पर मिलन की ओर प्रसाद जी ने संवादों के अवसरोचित प्रयोग से पहुँचाया है। प्रसाद के प्रणय शिल्पी मन यहाँ सरलता और विश्वास से युक्त एक आदर्श लोक की कल्पना में सार्थक अभिव्यक्ति पाया है। एक साधारण धीवर बालिका की सरलता से युक्त सामान्य चरित्र की ओर राजकुमार सुदर्शन का आकृष्ट होना, ऐश्वर्य की ऊष्मा से ऊबकर

---

1. प्रसाद - समुद्र-संतरण - आकाश दीप - पृ. 163

व्यक्ति का सामान्य जीवन शालीनता की ओर आकर्षित होने का सूचक है। प्रसादजी की अन्य कई कहानियों से भिन्न होकर यहाँ असफल प्रेम की व्यंजना के बदले मिलन की अभिव्यंजना हुई है।

चूड़ीवाली

प्रेम के प्रतीक सृष्टा प्रसादजी की एक विचार-प्रधान सामाजिक कहानी है 'चूड़ीवाली'। अन्य प्रेममूलक कहानियों से भिन्न होकर एक सुधारवादी दृष्टिकोण को यहाँ अपना है जिसे देखकर प्रेमचंदीय परम्परा का बोध उत्पन्न होता है। चूड़ीवाली तथा सरकार के हृदय परिवर्तन को ही कहानी के केन्द्र में रखा गया है। इस कहानी के माध्यम से प्रसादजी बताना चाहते हैं कि वेश्याएँ हृदय से बुरी नहीं होती हैं, उन्हें कुत्सित करने का उत्तरदायित्व समाज पर निर्भर है।

कहानी तो संवादों से ही शुरू होती है जिसके ज़रिये कथानक का पर्दाफाश होता है।

"अभी तो पहना गई हो।"

"बहूजी, बड़ी अच्छी चूड़ियाँ है।"

"सीधे बंबई से पारसल मँगाया है। सरकार का हुकम है, इसलिए नई चूड़ियाँ आते ही चली आती हूँ।"

"तो जाओ, सरकार को ही पहनाओ, मैं नहीं पहनती।"

"बहूजी ज़रा देख तो लीजिए।"[1]

---

1. प्रसाद - चूडीवाली - आकाश-दीप - पृ. 168

चूड़ीवाली के संवाद पात्रानुकूल भाषा में प्रयुक्त होने के कारण आकर्षक बन गया है। बहूजी की वाणी में व्यंग्य का पुट दर्शनीय है जो चूड़ीवाली और सरकार के बीच के अदृश्य आकर्षण को व्यक्त करते हैं। जब चूड़ियाँ पहनने से बहूजी ने इन्कार किया तो दोनों के बीच के संवाद उस आकर्षण की ओर उसकी सन्देह भरी दृष्टि को भी स्पष्ट करते हैं।[1]

चूड़ीवाली और बहूजी के चरित्र को उभारने की दृष्टि से भी प्रस्तुत संवाद सफल निकला है। बहुजी के मन की शंकालू वृत्ति उसके मुँह से निकले प्रत्येक शब्द में दर्शनीय है। कहानी में आगे चूड़ीवाली के जीवन यथार्थ को विवरणों द्वारा अभिव्यक्त करके घटनाचक्र में परिवर्तन डालने के लिए संवादों का प्रयोग किया गया है।

सरकार और चूड़ीवाली के आपसी संवाद उस अवैध संबन्ध की ओर स्पष्ट संकेत करता है।

"सरकार बड़ी देर से कौतुक देख रहे थे, बोले - "इसे पकड़कर पालतू बनाया जाय, तो कैसा है?"

"उहूँ, यह फूलसुंधी है। पिंजरे में जी नहीं सकती। उसे फूलों का प्रदेश ही जिला सकता है, स्वर्ण पिंजर नहीं, उसे खाने के लिए फूलों की केसर का चारा और पीने के लिए मकरन्द - मदिरा कौन जुटावेगा?.....

---

1. प्रसाद - चूड़ीवाली - आकाश-दीप - पृ. 169

"जिसमें बाधा नहीं, बंधन नहीं, जिसका सौन्दर्य स्वच्छन्द है, उस असाधारण प्राकृतिक कला का मूल्य क्या बन्धन है? कुरुचि के द्वारा वह कलंकित भले ही हो जाय, परन्तु पुरस्कृत नहीं हो सकती। उसे आप पिंजरे में बन्द करके पुरस्कार देंगे या दण्ड?"[1]

प्रस्तुत संवाद वेश्यावृत्ति के व्यापक पहलुओं को प्रतीकात्मक रूप से पाठकों के सामने प्रस्तुत करते हैं। चूड़ीवाली के प्रत्येक शब्द, मानव मन को गहराई से छूनेवाले हैं। एक घोर सामाजिक यथार्थ को प्रसादजी ने प्रतीकों के सुन्दर प्रयोग से परसंवेद्य बनाया है। फूलों से मकरन्द पीने वाली काली चिडिया वास्तव में वेश्या स्त्री के लिए प्रयुक्त एक काल्पनिक प्रतीक है। प्रसादजी बताना चाहते हैं कि चूड़ीवाली, विलासी जीवन से पहले ही कलंकित है, पकड़कर पिंजरे में रखने से वह उड़ जायगी क्योंकि वह फूलसुन्धी होने के कारण मकरन्द के बिना वह रह नहीं सकती।

अन्त में सरकार और चूड़ीवाली के जीवन में आए आमूल परिवर्तन की ओर भी आपसी संवाद द्वारा इशारा किया गया है।[2] प्रस्तुत संवाद के ज़रिये कहानी के विन्यास में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर है। सालों बीतने पर चूड़ीवाली के सामने निस्सहाय होकर एक बटोही के रूप में आए सरकार से वह कहती है–

""परन्तु वेश्या का व्यवसाय करके भी मैं ने एक ही व्यक्ति से प्रेम किया था। मैं और धर्म नहीं जानती, पर अपने सरकार से जो कुछ मिला, उसे मैं लोक

---

1. प्रसाद - चूड़ीवाली - आकाश-दीप - पृ. 169
2. वही - पृ. 172-173

सेवा में लगाती हूँ। मेरे तालाब पर कोई भूखा नहीं रहने पाता। मेरी जीविका चाहे जो रहे हो, मेरे अतिथि-धर्म में बाधा न दीजिए।" .....सहसा बोल उठा-

"चूड़ीवाली?"

"कौन सरकार?"

"हाँ, तुमने शोक हर लिया। मेरे अपराधजनक तमाम त्याग में पुण्य का भी भाग था, यह मैं नहीं जानता।"

"सरकार। मैंने गृहस्थ-कुलवधु होने के लिए कठोर तपस्या की है। इन चार वर्षों में मुझे विश्वास हो गया है कि कुलवधु होने में जो महत्व है, वह सेवा का है, न कि विलास का।"[1]

उपर्युक्त लम्बे संवाद के ज़रिये प्रसादजी ने कहानी को सोद्देश्य बनाया है। तत्कालीन समाज की कटु वास्तविकताओं को खोलकर दिखाकर परिवर्तन की माँग की गई है। प्रतीकों के सुन्दर प्रयोग संवादों में मनोरम अभिव्यक्ति पाया है। कहानी का मूल स्वर आदर्श का है जो प्रेमचंदीय कहानी कला की याद दिलाती है।

सौन्दर्य और विलासिता के वैभव में डूबी सरकार और चूड़ीवाली जीवन की वास्तविकताओं से अपरिचित हो गये थे। मगर उन्हें सेवा मार्ग के आदर्श के द्वारा प्रसादजी ने वास्तविक जीवन के निकट लाया है। प्रेम का एक अलग रूप दिखाकर प्रसादजी ने असफल, एकपक्षीय चित्रण के बदले प्रेम के एक आदर्श मिलन को सार्थक बनाया है। वैयक्तिक प्रतीक होते हुए भी कहानी सामाजिक

---

1. प्रसाद - चूड़ीवाली - आकाश-दीप - पृ. 172-173

धरातल पर आगे बढ़ती है। सब कहीं प्रयुक्त संवाद योजना वातावरण स्थिति और समय के अनुकूल दीख पड़ते हैं।

4.5 'आँधी' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

'आकाशदीप' संग्रह के बाद सन् 1933 में प्रकाशित 'आँधी' संग्रह, प्रसादजी का प्रौढ़ एवं सर्वोत्तम कहानी संग्रह माना जाता है। इसमें 'आँधी' से लेकर 'पुरस्कार' तक की ग्यारह कहानियों को संकलित किया गया है। ये कहानियाँ सुखान्त और दुखान्त दोनों प्रकार की होती हैं। वस्तुतः 'पुरस्कार' और 'मधुआ' जैसी महान कृतियों के कारण ही यह संग्रह श्रेष्ठ बन गई हैं। भावात्मकता और मनोवैज्ञानिकता से युक्त इस संग्रह की कहानियाँ आँधी के समान हृदय की हलचल का प्रतीक बन कर मानव मन को छूती हैं। इस संग्रह की कई कहानियों में गद्य-गीतों का प्रयोग दर्शनीय है। पहले के संग्रहों से भिन्न होकर ये कहानियाँ जीवन से अधिक निकट हैं। इसका कारण यह है कि यहाँ तक आते-आते प्रसादजी अतीत के स्वप्न से वर्तमान की टकराहट स्वयं महसूस करने लगा। जैसे-जैसे उनकी कहानी-कला विकसित हो गई, वैसे-वैसे प्रयुक्त संवाद-योजना में भी क्रमिक विकास दृष्टिगोचर हैं। उस विकास की दृष्टि से प्रतिनिधि कहानियाँ चुनकर उनमें संवादात्मकता को परखने का प्रयास आगे किया जा रहा है।

मधुआ

'मधुआ' मनोवैज्ञानिक धरातल पर लिखी गई एक यथार्थवादी कहानी है। इसमें प्रसादजी ने मानवीय गौरव की सार्वभौमता को व्यक्त करने की कोशिश की

है। इसमें कहानी का आरंभ ही बिना कोई घुमाव-फिराव या प्रकृति चित्रण से सीधे पात्र की ओर संकेत किया है जिसके कारण कहानी की कलात्मक गरिमा बढ़ गई है।

"आज सात दिन हो गये, पीने को कौन कहे-छुआ तक नहीं! आज सातवाँ दिन है, सरकार!

तुम झूठे हो। अभी तो तुम्हारे कपड़े से महक आ रही है।

वह.....वह तो कई दिन हुए। सात दिन के ऊपर - कई दिन हुए - अँधेरे में बोतल उँडेलने लगा था। कपड़े पर गिर जाने से नशा भी न आया। और आपको कहने का..... क्या कहूँ..... सच मानिए। सात दिन - ठीक सात दिन से एक बूँद भी नहीं।"[1]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रसादजी ने सीधे पात्रों के चरित्र पर प्रकाश डाला गया है। शब्दों को बीच-बीच में छोड-छोडकर प्रयोग करने से शराबी की मानसिक व्यथा को पूरी स्वाभाविकता से चित्रित करने में सफलता मिली है। शब्दों के बीच का वह मौन भी पाठकों से संवाद करती नज़र आती है।

कहानी में आगे सरकार और शराबी के आपसी वार्तालाप द्वारा सामाजिक अन्याय और विषय मानवीय परिस्थितियों का बोध प्रकट करते हैं।

"अद्‌भुत! सात दिन पेट काटकर आज अच्छा भोजन न करके तुम्हें पीने की सूझी है यह भी....

---

1. प्रसाद - मधुआ - आँधी - पृ. 220

सरकार ! मौज-बहार की एक घड़ी एक लम्बे दुखपूर्ण जीवन से अच्छी है। उसकी खुमारी में रूखे दिन काट लिये जा सकते हैं।"[1]

यहाँ शराबी के शब्दों में उसके दयनीय, दुखपूर्ण जीवन की स्वाभाविक अभिव्यक्ति दर्शनीय है। गरीबों के जीवन में मौज-बहार की दूसरी कोई सुविधा नहीं है। परोक्ष रूप से शराबी के विरस जीवन की ओर भी यहाँ इशारा मिलते हैं। ठाकुर साहब और शराबी के बीच के निकट संबन्ध की ओर भी आपसी संवादों द्वारा ही प्रकाश डाला गया है।[2]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये शराबी के चरित्र की ओर संकेत करने के साथ सामाजिक शोषण की ओर भी परोक्ष रूप से ध्यान खींचा गया है। शराबी के मन में व्याप्त अकेलापन, दुख-दर्द एवं मानवीय करुणा की ओर भी आपसी वार्तालाप द्वारा ही प्रकाश डाला गया है।

"सरकार ! बूढ़ों से सुने हुए वे नवाबी के सोने-से दिन, अमीरों की रंग-रेलियाँ, दुखियों की दर्द भरी आहें, रंगमहलों में धुल-धुलकर मरने वाली बेगमें, अपने आप सिर में चक्कर काटती रहती हैं। मैं उनकी पीड़ा से रोने लगता हूँ। मैं उनकी पीड़ा से रोने लगता हूँ। अमीर कंगाल हो जाते हैं। बड़े-बड़ों का घमंड चूर होकर धूल में मिल जाते हैं। तब की दुनिया बड़ी पागल है। मैं उनकी पागलपन को भुलाने के लिए शराब पीने लगता हूँ। सरकार ! नहीं तो यह बुरी बला कौन अपने गले लगता।"[3]

---

1. प्रसाद - मधुआ - आँधी - पृ. 220
2. वही - पृ. 221
3. वही - पृ. 221

शराबी के यथार्थ जीवन को यहाँ वाणी दी गई है। साथ ही तत्कालीन समाज में व्याप्त शोषण की विभिन्न पहलुओं को भी उद्‌घाटित किया गया है। शराबी की मनःस्थिति, अन्तर्द्वन्द्व एवं पीड़ा भरी यादों को भी उन्हीं के शब्दों में खोलकर दिखाया है।

मधुआ के चरित्र को वाणी देने के लिए भी संवादों एवं घटना विशेष का समावेश किया गया है।"[1]

मधुआ के प्रति मानवीय करुणा पाठकों के मन में जगाने में प्रस्तुत संवाद सफल निकला है। शराबी की मनःस्थिति में परिवर्तन लाने के लिए भी संवाद सहायक रहा है। इसलिए तो शराबी मधुआ से कहता है कि "तब तक तू उसे चबा, मैं तेरा गढ़ा भरने के लिए कुछ और ले आऊँ - सुनता हे रे छोकरे ! रोना मत, रोएगा तो खूब पीटूँगा। मुझसे रोने से बड़ा बैर है। पाजी कहीं का, मुझे भी रुलाने का.....[2]

शराबी के चरित्र में आए परिवर्तन को प्रस्तुत संवाद शब्दबद्ध करते हैं। कहानी में घटनाक्रम द्वारा गतिशीलता लाने की दृष्टि से भी संवाद का अपना महत्व है। प्रसादजी के व्यक्तित्व में आए बदलाव वस्तुतः कहानी के कलेवर में भी प्रतिफलित है। एक भावुक, रोमांटिक कवि से ऊपर उठकर वह सूक्ष्म संवेदना और अनुभूतियों के एक सहज स्वाभाविक दुनिया में पहुँच गए हैं। 'मधुआ' कहानी में उसकी स्पष्ट झलक देखने को मिलता है।

---

1. प्रसाद - मधुआ - आँधी - पृ. 221
2. वही - पृ. 222

मधुआ के लिए मिठाई खरीदने वाले शराबी के शब्दों में वास्तव में वात्सल्य की धारा बहती हैं।[1] उनके संवाद में अपनापन की भावना कूड-कूड भरी पड़ी है। इस बात की पुष्टि शराबी के मन में उठने वाले प्रश्नों के रूप में मिलती है।

"मेरी इतनी माया-ममता जिस पर, आज तक केवल बोतल का ही पूरा अधिकार था इसका पक्ष क्यों लेने लगी? इस छोटे से पाजी ने मेरे जीवन के लिए कौन-सा इन्द्रजाल रचने की बीड़ा उठाया है? तब क्या करूँ? कोई काम करूँ? कैसे दोनों का पेट चलेगा?[2]

यहाँ सामान्य मानव होते हुए भी शराबी का चरित्र असामान्य लगने लगता है। मधुआ की करुण सिसकियाँ और भूख ने उसकी जीवनधारा को ही बदल डाला है। शराबी के मन में जीने की लालसा पैदा होती है। वह जीवन की सार्थकता खोजने लगा। निर्णय लेने में अशक्त होने के कारण वह गोमती किनारे जाता है। वहाँ उन्हें रास्ता नज़र आया। वापस घर आकर मधुआ और शराबी के बीच के संवाद सचमुच कहानी की गति को पलट देती है। कहानी अन्तिम परिणति की ओर पहुँच जाती है।

".....तब कोई काम करना चाहिए।

करेगा?

जो कहो?

---

1. प्रसाद - मधुआ - आँधी - पृ. 223
2. वही - पृ. 223

अच्छा, तो आज से मेरे साथ-साथ घूमना पड़ेगा, यह कल तेरे लिए लाया हूँ। आज से तुझे सान देना सिखाऊँगा। कहाँ, इसका कुछ ठीक नहीं। पेड़ के नीचे रात बिता सकेगा न?"

"कहीं भी रह सकूँगा; पर उस ठाकुर की नौकरी न कर सकूँगा?"

शराबी ने एक बार स्थिर दृष्टि से उसे देखा। बालक की आँखें दृढ़ निश्चय की सौगंध खा रही थी। ....

शराबी ने पूछा - "तू किसे उठायेगा?"

"जिसे कहो।"

"अच्छा, तेरा बाप जो मुझको पकड़े तो?"

"कोई नहीं पकडेगा, चलो भी। मेरे बाप कभी मर गये।"[1]

प्रस्तुत अंतिम संवाद से कहानी सोद्देश्य बन गई है। जीवन और मनुष्य के प्रति प्रसादजी की गहरी आस्था और निष्ठा कहानी के प्रत्येक संवाद अनावृत करते हैं। कहानी की शुरुआत में शराब के बोतल में जीवन का अर्थ खोजने वाले शराबी, कहानी के अन्त में वात्सल्य और ममता से भरी एक जीवन की राहों के अन्वेषी बन गए हैं। निष्क्रिय जीवन बिताने वाले शराबी के हृदय में मानवता का उज्ज्वल प्रकाश भरने में मधुआ ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इस मूल संवेदना को प्रत्येक संवाद मुखरित करता है। प्रसादजी के कहानी-साहित्य की एक महान उपलब्धि के रूप में कहानी का स्थान सबसे ऊँचा ही है। भाषा, चमत्कार से बढ़कर

---

1. प्रसाद - मधुआ - आँधी - पृ. 225

जीवन प्रवाह से मिलती-जुलती नज़र आती है। यही नाटकीय भाषा-शैली कहानी के संवादों को एक अनोखा सौन्दर्य प्रदान करती है।

घीसू

यह प्रसादजी की एक यथार्थवादी कहानी है जिसमें जीवन की आर्थिक परिस्थितियों के प्रति एक संवेदनशील नज़रिया अपनाई गई है। इसमें प्रसादजी का भावुक मन चुप रहता है, मगर उनका संवेदनशील मन जागरूक नज़र आता है। एक लघु कथानक को आस्वाभाविक विस्तार के बिना संवादों के अवसरानुकूल प्रयोग से कहानी का मनोरम रूप दिया गया है। इसलिए वातावरण में यथार्थता और सहजता विद्यमान है। काशी के वातावरण में पले घीसू के जीवन में आए काशी के प्रभाव को रेखांकित करने की कोशिश इसमें स्पष्ट परिलक्षित है। क्योंकि काशी प्रसादजी के लिए भी प्रिय नगरी है जहाँ रहकर उन्होंने जीवन की कटु वास्तविकताओं के दर्शन किये हैं। उसी लगाव कहानीगत वातावरण के चित्रण में साफ दिखाई देता है।

कहानी काशी के वातावरण में शुरू होती है। एक बनारसी अन्दाज़ घीसू के शब्दों में भी दर्शनीय है।

"घीसू को देखते ही नन्दू बाबा कह देते - "आ गये घीसूँ!"

हाँ बाबु, गहरे बाजों ने बड़ी धूल उड़ाई - साफ़े का लोच आते-आते बिगड गया!.....

नन्दू बाबू उसे अपने डिब्बे से दो खिल्ली पान की देते हुए कहते - लो, इसे जमा लो! क्यों, तुम तो इसे जमा लेना ही कहते हो न?[1]

---

1. प्रसाद - घीसू - आँधी - पृ. 240

घीसू और नन्दू बाबा के बीच के संवाद दोनों के बीच के भावात्मक संबन्ध को शब्दबद्ध किया है। भाषाई लहजा तथा वातावरण काशी की याद दिलाती है। घीसू के अनभ्यस्त जीवन पर बिन्दो के प्रभाव तथा उसके आर्थिक संकट और दारिद्र्य पूर्ण जीवन की विवशता को बिन्दो के साथ होने वाले संवाद से वाणी दी गई है।

"वह कहती - "देखो, घिसे पैसे न देना।"

वाह बिन्दो! घिसे पैसे तुम्हारे ही लिए हैं? क्यों?"

तुम तो घीसू ही हो, फिर तुम्हारे पैसे क्यों न घिसे होंगे? कहकर वह मुस्करा देती; तो घीसू कहता - "बिन्दो! इस दुनियाँ में मुझसे अधिक कोई न घिसा; इसीलिए माता-पिता ने घीसू नाम रक्खा था।"[1]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये घीसू की घिसी हुई करुणाद्र ज़िन्दगी को प्रसादजी ने वाणी दी है। बनारसी लहजे में प्रयुक्त इस संक्षिप्त संवाद दोनों के भावात्मक संबन्ध की ओर स्पष्ट संकेत देते हैं।

कहानी में बिन्दो की दयनीय स्थिति एवं पति द्वारा उस पर किये गये अत्याचारों का खुलासा करने के लिए भी संवाद-योजना का ही कमाल दिखाया है।[2]

कहानी को घटनाओं द्वारा गतिशील बनाने की दृष्टि से प्रस्तुत संवाद सफल ही है। साथ ही मानवीय संवेदना भी जगाने में सहायक रहा है। बिन्दों के

---

1. प्रसाद - घीसू - आँधी - पृ. 240-241
2. वही - पृ. 242

जीवन से संबन्धित गोपनीय बातों को भी संवाद द्वारा वाणी दी गई है। प्रसादजी के जलते - उबलते नारी पात्रों में बिन्दो को भी स्थान दिया गया है।

निस्सहाय होकर घीसू के साथ निकलने वाली बिन्दो और घीसू की खामोशी में भी एक तरह से गहरी वेदना भरी पडी है। प्रसादजी के पात्र मौन में भी अपने चरित्र की सार्थक अभिव्यक्ति देने वाले होते हैं। पूरी कहानी नाटकीय वातावरण तथा संवादों में आगे बढ़ती है। स्वाभाविक एवं यथार्थ चित्रण के ज़रिये प्रसादजी ने कहानी को प्रेषणीय बनाया है। सब कुछ समझते हुए भी बिन्दो अपनी खामोशी को कभी तोड़ा नहीं। लेकिन मानवीय शोषण के शिकार बने घीसू अपने अंत को निकट देखकर बिन्दो से कहा - "बिन्दो! क्षमा करना, मैंने तुम्हें बड़ा दुःख दिया। अब मैं चला। लो, यह बचा हुआ पैसा! तुम जानो भगवान्...."[1]

यहाँ बहुत कुछ पाठकों को सोचने के लिए बाकी रखकर प्रसाद कहानी को समाप्त करते हैं। यह वास्तव में, आम आदमी के कभी न अंत होने वाली पीड़ा तथा दयनीय ज़िन्दगी की ओर मौन संकेत देता है। इस वातावरण-प्रधान कहानी की सफलता का मुख्य कारण भाषा की लहजा एवं यथार्थ का कच्चा चित्रण ही है।

पुरस्कार

मानव मन के गहन अन्तर्द्वन्द्व को मनोवैज्ञानिक धरातल पर अंकित करने वाली 'पुरस्कार' कहानी में प्रेम के उदात्त स्वरूप का चित्रण किया है। हृदय की अनुभूतियों को गहराई में छूनेवाली प्रस्तुत कहानी में प्रेम की चरम सीमा को

---

1. प्रसाद - घीसू - आँधी - पृ. 244

प्रदर्शित किया है। इसमें प्रयुक्त उत्कृष्ट देशकाल चित्रण, मनोरम संवाद-योजना और अद्वितीय मानसिक अन्तर्द्वन्द्व की अवतारणा इस रोमान्टिक प्रेम कहानी को अमरत्व प्रदान करती है। प्रेम और देशभक्ति के लिए संघर्ष कर अन्त में उसके पुरस्कार स्वरूप प्राणदण्ड स्वीकार करने वाली मधूलिका के उज्ज्वल चरित्र कहानी का मुख्य आकर्षण बिन्दु है। वास्तव में प्रसादजी ने उसके चरित्र को स्वाभिमान और प्रणय के सामंजस्य से मानवीय हृदय की उत्सर्ग भावना का प्रतिरूप बनाया है। कहानीकार प्रसाद की इस उत्कृष्ट कृति में उद्देश्य से मंडित सांकेतिक संवाद-योजना का बखूबी प्रयोग दर्शनीय है। छोटे-छोटे वाक्यों से युक्त ये संवाद पाठकों को एक दृश्य-चित्र जैसी अनुभूति देते हैं।

कहानी के आरंभ में महाराज द्वारा खेत के पुरस्कार रूप में दी गयी स्वर्ण मुद्राओं को बिखेरकर मधूलिका के मुँह से निकले शब्द, उसके स्वाभिमानी चरित्र की स्पष्ट अभिव्यक्ति देती है।

"देव! यह मेरे पितृ-पितामहों की भूमि है। इसे बेचना अपराध है; इसलिए मूल्य स्वीकार करना मेरी सामर्थ्य के बाहर है।.....

राजकीय रक्षण की अधिकारिणी तो सारी प्रजा है, मन्त्रिवर!.... महाराज को भूमि समर्पण करने में मेरा कोई विरोध न था और है; किन्तु मूल्य स्वीकार करना असंभव है। मधूलिका उत्तेजित हो उठी।"[1]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये कथावस्तु की ओर स्पष्ट संकेत दिया गया है। साथ ही आगामी घटनाओं की ओर सूचना भी दी है। मधूलिका के शब्दों में एक

---

1. प्रसाद - पुरस्कार - आँधी - पृ. 270-271

साधारण कृषक बालिका के तेज, आत्मसम्मान, उत्तेजना एवं विनय दर्शनीय है। अपने खेत के प्रति असाधारण ममता और प्यार उसके शब्दों में प्रकट है।

अरुण और मधूलिका के मिलन तथा अरुण के प्रेमी मन को भी दोनों के आपसी संवाद द्वारा बाहरी अभिव्यक्ति दी है।[1] अरुण के प्रेमी मन पूरी संवेदना के साथ यहाँ बोल उठता है। उसके प्रेमी मन की तीव्रता को दिखाने के लिए प्रसादजी ने अपूर्ण वाक्यांशों का सुन्दर प्रयोग किया है। कृषक बालिका होते हुए भी मधूलिका के शब्दों में दृढ़निश्चय एवं अचंचलता विद्यमान है। वह कौशल के राष्ट्रीय नियम को तोड़कर वैयक्तिक सुख भोगना नहीं चाहती है। मधूलिका और महाराज के आपसी संवाद से कहानी नया मोड़ लेती है।

"महाराज ने स्थिर दृष्टि से उसकी ओर देखा और कहा - "तुम्हें कहीं देखा है?"

"तीस बरस हुए देव! मेरी भूमि खेती के लिए ली गई थी।"

"ओह, तो तुमने इतने दिन कष्ट में बिताये, आज उसका मूल्य माँगने आई हो, क्यों? अच्छा-अच्छा तुम्हें मिलेगा। प्रतिहारी!

"नहीं महाराज, मुझे मूल्य नहीं चाहिए।"

"मूर्ख! फिर क्या चाहिए?"

"उतनी ही भूमि, दुर्ग के दक्षिणी नाले के समीप की जंगली भूमि, वहीं मैं अपनी खेती करूँगी। मुझे सहायक मिल गया। वह मनुष्यों से मेरी सहायता करेगा, भूमि को समतल भी बनाना होगा।".....[2]

---

1. प्रसाद - पुरस्कार - आँधी - पृ. 270-271
2. वही - पृ. 275

कथाप्रवाह में आए बदलाव की ओर स्पष्ट सूचना मिलने के साथ मधूलिका की बदलती मनः स्थिति की ओर भी संवाद संकेत देता है। कुतूहलता संवाद को उपयुक्त बनाने में सहायक रहा है।

मधूलिका के मानसिक अन्तर्द्वन्द्व की ओर प्रकाश डालने के लिए प्रसादजी ने उसके आत्मसंवाद का सहारा लिया है। अरुण के प्रति प्रेम और विश्वास ने उसे देशद्रोह के मार्ग पर जाने के लिए प्रेरित किया था। मगर देश प्रेम से प्रेरित होकर वह अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों के परे सोचने के लिए बाध्य हो जाती है।[1]

कर्तव्य पालन और प्रेम की बलिवेदी पर डावाँडोल होने वाली मधूलिका का आत्मसंघर्ष एवं स्वाभिमान व्यक्तित्व दोनों प्रस्तुत आत्म संवाद में मुखरित है। उसके मुँह से निकले एक-एक शब्द गहरी संवेदना से युक्त है। पात्रों के अन्तर्मन की रहस्यमय उलझनों को पकड़ने की प्रसादजी की असाधारण कला चातुर्य यहाँ सफल अभिव्यक्ति पाती है। अंत में वैयक्तिक संघर्ष को जीतकर अपराध बोध से तड़पने वाली मधूलिका के महान चरित्र को प्रसादजी ने यों वाणी दी है - "बाँध लो, मुझे बाँध लो। मेरी हत्या करो। मैं ने अपराध ही ऐसा किया है।"

सेनापति हँस पड़े, बोले - "पगली है।"

"पगली नहीं, यदि वही होती, तो इतनी विचार वेदना क्यों होती? सेनापति! मुझे बाँध लो राजा के पास ले चलो।"

"क्या है, स्पष्ट कह!"

---

1. प्रसाद - पुरस्कार - आँधी - पृ. 275

"श्रावस्ती का दुर्ग एक प्रहर में दस्युओं के हस्तगत हो जायगा। दक्षिणी नाले के पार उनका आक्रमण होगा।"

सेनापति चौंक उठे। उन्होंने आश्चर्य से पूछा–

"तू क्या कह रही है?

"मैं सच कह रही हूँ; शीघ्रता करो।"[1]

एक देश स्नेही, उत्तेजित नारी के रूप में मधूलिका के चरित्र की सफल अभिव्यक्ति देने में प्रस्तुत संवाद सफल निकला है। देश भक्ति की भावना को वैयक्तिक प्रेमानुभूति से कहीं मूल्यवान स्थापित करने की दृष्टि से संवाद योजना अद्वितीय बन पड़ा है। सामान्य दिखनेवाली एक नारी पात्र को यहाँ असामान्य स्थापित किया गया है। मधूलिका के चरित्र में एक ओर प्रणय की तीव्रता है तो दूसरी ओर मानवता और जगत को महत्व देने की एक विलक्षण प्रतिबद्धता प्रकट है।

कहानी की अंतिम परिणती भी संवादों से करके सचमुच प्रसादजी ने इस कहानी को एक अमूर्त संवाद-शिल्प का ढाँचा ओढ़ लिया है। शीर्षक की सार्थक अभिव्यक्ति भी यहाँ साकार होती है।

"वह पगली-सी आकर खड़ी हो गई। कोशल-नरेश ने पूछा - मधूलिका, तुझे जो पुरस्कार लेना हो, माँग। वह चुप रही।

राजा ने कहा - "मेरी निज की जितनी खेती है, मैं सब तुम्हें देता हूँ।" मधूलिका ने एक बार बन्दी अरुण की ओर देखा। उसने कहा - "मुझे कुछ न चाहिए।"

---

1. प्रसाद - पुरस्कार - आँधी - पृ. 277

अरुण हँस पड़ा।

राजा ने कहा– "नहीं, मैं अवश्य दूँगा। माँग लो।

"तो मुझे भी प्राणदण्ड मिले।" कहती हुई वह बन्दी अरुण के पास जा खड़ी हुई।"[1]

कहानी के अंतिम संवाद सचमुच मार्मिक व पात्रोचित ही था। भावाभिव्यक्ति की तीव्रता उस संवाद का प्राण है। मधूलिका के असाधारण चरित्र यहाँ वीर मृत्यु अपना लेती है। अंतिम वाक्य - 'मुझे भी प्राणदण्ड मिले' - में पूरी कहानी का रस समा गई है। मधूलिका ने कर्तव्य की वेदी पर अपने प्रेम की पूर्णाहुति दे दी। स्नेह की भूमि पर से अपना हिस्सा छिन जाने की वेदना सहते हुए भी वह कोशल के राष्ट्रीय नियम को तोड़ना नहीं चाहती है, बल्कि उसकी रक्षा के लिए अपने वैयक्तिक प्रेम की भी कुर्बानी देती है। प्रसादजी के नारी पात्रों की यही विशेषता मधूलिका के चरित्र में भी शब्दबद्ध हो गई है। प्रेम के सूक्ष्म धरातल को हृदय में मचलती भावनाओं के द्वन्द्व के साथ सशक्त एवं सांकेतिक रूप में चित्रित करने में संवाद योजना का हाथ सर्व प्रमुख ही है। शिल्पगत वैशिष्ट्य और सूक्ष्म चरित्र चित्रण ही 'पुरस्कार' कहानी की असली पहचान एवं प्रसादजी के विकसित कहानीकार रूप का सौंदर्य भी है।

4.6 'इन्द्रजाल' संग्रह की प्रतिनिधि कहानियों में संवादात्मकता

सन् 1936 ई में प्रकाशित 'इन्द्रजाल' प्रसादजी की अंतिम कहानी संग्रह है। पूर्ववर्ती संग्रहों से अपेक्षाकृत प्रौढ़ एवं यथार्थवादी धरातल पर लिखी गई चौदह

---

1. प्रसाद - पुरस्कार - आँधी - पृ. 278

कहानियों को इसमें संकलित किया गया है। वस्तुतः ये कहानियाँ उनकी कहानी यात्रा का विकसित पड़ाव है। वास्तविक जीवन जगत से अधिक निकट रहनेवाली कहानियों में स्वच्छन्दतावाद और युग-प्रेरित यथार्थवाद दोनों का एक मिश्रित रूप देखने को मिलता है।

प्रसादजी की उदात्त मानवीय दृष्टि से परिचालित इन कहानियों के ज़रिये व्यष्टि और समष्टि के जीवन-परिवेश को उसकी सारी विकृतियों सहित उन्होंने उद्‌घाटित किया है। कोरी भावुकता के स्थान पर भावों की विविधता पर उन्होंने इन कहानियों में बल दिया है। अतीत और वर्तमान का एक अपूर्व संयोग इसमें पायी जाती है। कहानियों के कलेवर में आए इस बदलाव का स्पष्ट प्रभाव संवादों के प्रयोग में भी दृष्टिगोचर है। पहले की अपेक्षा संवाद प्रौढ़ और परिमार्जित अवस्था में पायी जाती है। अर्थात् जिस प्रकार उनकी कहानी कला विकसित होती गयी, उसी मायने में संवादों के प्रयोग एवं प्रभावशाली चित्रण में भी काफ़ी विकास हुआ है। उस दृष्टि से प्रतिनिधि कहानियाँ चुनकर उनमें प्रयुक्त संवादात्मकता को परखने का प्रयास आगे किया जा रहा है।

छोटा जादूगर

एक किशोर बालक की मातृ-भक्ति, सेवा मनोभाव, करुणा एवं उत्तरदायित्व का मार्मिक निरूपण करने वाली यह कहानी सच्चे अर्थों में प्रेमचंद की 'ईदगाह' कहानी की याद दिलाती है। इसमें प्रयुक्त संवाद-योजना के कारण ही कहानी मनोरम बन पड़ी है। इस हृदय-विदारक दुखान्त कहानी में मानव-जीवन के दुख-दर्द के वैयक्तिक पहलुओं को उद्‌घाटित करने की कोशिश की है। वातावरण की

सच्ची अभिव्यक्ति के साथ कहानी शुरू होती है तो भी पात्र और उनके चरित्र को भी उचित स्थान दिया गया है।

"मैंने पूछा - क्यों जी, तुमने इसमें क्या देखा?

"मैंने सब देखा है। यहाँ चूड़ी फेंकते हैं। खिलौनों पर निशाना लगाते हैं। तीर से नंबर छेदते हैं।..... उससे अच्छा तो ताश का खेल मैं ही दिखा सकता हूँ।"

मैंने पूछा - और उस परदे में क्या है? वहाँ तुम गये थे?

"नहीं, वहाँ मैं नहीं जा सका। टिकट लगता है।

मैं ने कहा - "तो चल, मैं वहाँ पर तुमको लिवा चलूँ। मैंने मन-ही-मन कहा-

"भाई! आज के तुम्हीं मित्र रहे।"

उसने कहा - "वहाँ जाकर क्या कीजिएगा? चलिए, निशाना लगाया जाय।"[1]

प्रस्तुत पात्रोचित संवाद के ज़रिये बाल मनोविज्ञान की सफल अभिव्यक्ति मिलती है। बालक के शब्दों में जिज्ञासा तथा उत्सुकता दर्शनीय है। आगे दोनों के बीच के नाटकीय संवाद से बालक के व्यक्तिगत जीवन की झाँकी पाठकों को मिलती हैं।

"राह में ही उससे पूछा – "तुम्हारे और कौन है?"

"माँ और बाबूजी।"

---

1. प्रसाद - छोटा जादूगगर - इन्द्रजाल - पृ. 296

"उन्होंने तुमको यहाँ आने के लिए मना नहीं किया?"

"बाबूजी जेल में है।"

"क्यों?"

"देश के लिए।" वह गर्व से बोला।

"और तुम्हारी माँ?"

"वह बीमार है।"

"और तुम तमाशा देख रहे हो?"

उसके मुँह से तिरस्कार की हँसी फूट पड़ी।

उसने कहा - "तमाशा देखने नहीं, दिखाने निकला हूँ। कुछ पैसे ले आऊँगा, तो माँ को पथ्य दूँगा। मुझे शरबत न पिलाकर आपने मेरा खेल देखकर मुझे कुछ दे दिया होता, तो मुझे अधिक प्रसन्नता होती।"[1]

यहाँ बालक के शब्दों में यथार्थ की तीव्र अभिव्यक्ति हुई है। कथानक की ओर स्पष्ट संकेत भी दिया गया है। बालक के मुँह से निकले प्रत्येक शब्द उसके घोर जीवन यथार्थ की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हैं। बालक की मातृभक्ति एवं सेवा मनोभाव भी यहाँ उद्‌घाटित हुआ है। अपने उम्र की अपेक्षा वह अधिक समझदार दिखाई देता है।

कहानी को गतिशील बनाने के लिए भी संवादों का उपयुक्त प्रयोग हुआ है। कलकत्ते के उद्यान में श्रीमती के साथ बैठते वक्त अचानक छोटा जादूगर दिखाई

---

1. प्रसाद - छोटा जादूगगर - इन्द्रजाल - पृ. 296-297

दिया। उस समय के संवाद उसके अभाव ग्रस्त जीवन की झाँकी प्रस्तुत करते हैं।[1] गंभीर विषाद से जूझते समय भी धैर्य से जिन्दगी का सामना करने वाले उस फटे कुरतेवाले के प्रति सहज आकर्षण श्रीमती के शब्दों में नज़र आता है। गहरी मानवीय संवेदना जगाने की दृष्टि से ये संवाद अत्यन्त सफल निकला है।

"श्रीमती जी ने धीरे से उसे एक रुपया दे दिया। वह उछल उठा।

मैंने कहा - "लड़के।"

"छोटा जादूगर कहिए। यही मेरा नाम है।

इसीसे मेरी जीविका है।"

"मैं कुछ बोलना ही चाहता था कि श्रीमती ने कहा – "अच्छा, तुम इस रुपये से क्या करोगे?"

"पहले भर पेट पकौड़ी खाऊँगा। फिर एक सूती कंबल लूँगा।"[2]

बालक के शब्दों में जीवन के यथार्थ की गहरी पकड़ दर्शनीय है। एक चतुर बालक होने के साथ-साथ वह एक कर्तव्य निष्ठ एवं ज़िम्मेदार पुत्र भी है। संवाद इस वास्तविकता को वाणी देता है। अपना खेल समाप्त करके पैसा जल्दी से बटोरने वाले जादूगर के शब्द तो कहानी की मूल संवेदना को पकडती है।

मैंने उसकी पीठ थपथपाते हुए पूछा–

"आज तुम्हारा खेल जमा क्यों नहीं?"

---

1. प्रसाद - छोटा जादूगगर - इन्द्रजाल - पृ. 298
2. वही - पृ. 298

"माँ ने कहा कि आज तुरन्त चले आना।

"मेरी घड़ी समीप है।" अविचल भाव से उसने कहा।

"तब भी तुम खेल दिखलाने चले आये।"

मैं ने कुछ क्रोध से कहा।.....

उसने कहा - "न क्यों आता।"[1]

बालक के शब्दों में बालकों की जैसी चंचलता के बदले कठोर जीवन यथार्थ की पकड़ है जो पाठकों की संवेदना की माँग करते हैं। कहानी के अन्त में प्रसादजी अपनी निजी विशेषता के अनुरूप काफ़ी कुछ पाठकों के लिए छोड़ देते हैं। कुछ संकेतों द्वारा वह कहानी को समाप्त करते हैं। बालक के घर पहूँचने से पहले बालक की माँ अपनी पीड़ा समाप्त कर चली गयी थी। एक छोटी कथानक को प्रसादजी ने मानवीय भावनाओं के सूक्ष्म विश्लेषण का माध्यम बनाया है। वातावरण तथा संवेदना को मूर्त करने के लिए उपयुक्त संवाद-योजना का प्रभावशाली प्रयोग किया है।

नूरी

मुगलकालीन विलासी वातावरण का प्रभावशाली चित्रण करने वाली इस प्रेम-प्रधान कहानी में तत्कालीन वातावरण का सफल चित्रण हुआ है। प्रसादजी न केवल भारतीय प्राचीन इतिहास के मर्मज्ञ थे, बल्कि मध्यकालीन भारत के इतिहास में भी उनकी गहरी पैठ थी। एक तरह से देखने पर मुगलकालीन विलासिता के एक

---

1. प्रसाद - छोटा जादूगगर - इन्द्रजाल - पृ. 299

अलौकिक 'इन्द्रजाल' के रूप में इस कहानी को देखना ज़्यादा समीचीन होगा। ऐतिहासिक परिवेश में लिखी गई इस दुखान्त प्रेम कहानी में नियति की निर्मम ठोकरों से वियुक्त हुए दो प्रेमियों के जीर्णशीर्ण मिलन का चित्रण हुआ है। प्रयुक्त संवाद सब कहीं लेखकीय उद्देश्य की सफल अभिव्यक्ति देता है। समय, स्थिति और पात्र के अनुरूप प्रयुक्त इन संवादों में रोचकता, स्वाभाविकता एवं सहजता दर्शनीय है।

कहानी की शुरुआत में ही युवक और युवति के प्रेम की ओर छोटे-छोटे वाक्यांशों द्वारा संकेत किया गया है।

"ऐ, - तुम कौन?"

"....."

"बोलते नहीं?"

"....."

"तो मैं बुलाऊँ किसी को - "कहते हुए उसने छोटा-सा मुँह खोला ही था कि युवक ने एक हाथ उसके मुँह पर रखकर उसे दूसरे हाथ से दबा लिया।"[1]

आरंभिक संवाद से ही दोनों के बीच के भावात्मक संबन्ध की ओर स्पष्ट संकेत किया गया है। प्रसादजी ने अपने संवादों को सार्थकता प्रदान करने के लिए मौन की अभिव्यंजना भी की है। बहुत कम शब्दों में उन्होंने एक प्रेम मिलन की सार्थकता प्रदान की है।

---

1. प्रसाद - नूरी - इन्द्रजाल - पृ. 300

अकबर के विलासी जीवन की ओर सूचना देने के लिए नूरी और अकबर के बीच के संवाद-योजना का ही सहारा लिया है।

"उसने साहस से कहा – "मैं पहचान गयी?"

"....."

"जहाँपनाह" उसके मुँह से निकला ही था कि अकबर ने उसका मुँह बंद कर लिया और धीरे से उसके कानों में कहा–

"मरियम को बता देना, सुलताना को नहीं; समझी न! मैं उस कुंज में जाता हूँ।"[1]

कुछ शब्द-संकेतों द्वारा प्रसादजी ने अकबर के विलासी जीवन की ओर संकेत दिया है। तत्कालीन वातावरण का एक नग्न चित्र भी यहाँ अनावृत होता है। शब्दविहीन संकेतों के सफल प्रयोग वातावरण की तीव्रता को अभिव्यक्त करते हैं। आगे याकूब खाँ और नूरी के आपसी संवाद दोनों की चारित्रिक विशेषताओं की ओर प्रकाश डालते हैं।[2] संक्षिप्त शब्दों में प्रसादजी ने नूरी के जीवन-यथार्थ को पाठकों के सामने खोलकर चित्रित किया है। साथ ही कथा में क्रमिक विकास भी लाया गया है। याकूब का कथन आगामी घटनाओं की जानकारी पाठकों को देता है। अकबर के चंगुल में छटपटाने वाले याकूब के मुँह से निकले एक-एक शब्द उसकी मानसिक पीड़ा को व्यक्त करते हैं। अपूर्ण वाक्यांशों के सफल प्रयोग कथन में स्वाभाविकता लाने में सहायक हुआ है। काश्मीर के प्रति याकूब के मन में अपार आत्मीयता और ममता भरी पड़ी है।

---

1. प्रसाद - नूरी - इन्द्रजाल - पृ. 301
2. वही - पृ. 302

नूरी के मन में व्याप्त याकूब के प्रेम को भी वह एक स्थान में यों प्रकट करती है।

"आप चाहे काश्मीर को प्यार करते हों। पर कुछ लोग ऐसे भी हो सकते हैं, जो आपको प्यार करते हों।.....

"पागल! मेरे सामने एक ही तसवीर है। फूलों से भरी, फलों से लदी हुई, सिन्ध और झेलम की घाटियों की हरियाली! मैं इस प्यार को छोड़कर दूसरी ओर.....?[1]

प्रस्तुत कथन में प्रसादजी के मन में व्याप्त उदात्त देशप्रेम को वाणी मिली है जो वैयक्तिक अनुभूतियों का नज़र अन्दाज़ करते दिखाई देता है। लेकिन कहानी के अंत में, अकबर की गूढ़ नीतियों के शिकार बनकर दोनों अलग होते हैं तो भी प्रसादजी ने उन्हें फिर से मिला दिया। तब तक उनके यौवन का उन्माद समाप्त हो चुका था।

".....तब तुम नहीं जानती होगी। उसका भी नाम नूरी था! वह कश्मीर की रहनेवाली थी।"

"उससे आपको क्या काम है?"

मन-ही-मन काँप कर नूरी ने पूछा।

"मिले तो कह देना कि एक अभागे ने तुम्हारे प्यार को ठुकरा दिया था। वह काश्मीर का शाहजादा था। पर अब तो भिखमंगे से भी..... कहते-कहते उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

---

1. प्रसाद - नूरी - इन्द्रजाल - पृ. 302

नूरी ने उसके आँसू पोंछकर पूछा–

"क्या अब भी उससे मिलने का मन करता है?"[1]

यहाँ संवाद पात्रों की सूक्ष्म भावनाओं के अंकन में सफल निकला है।

रूप, यौवन और विलास के धनी एक चित्रकार के रूप में प्रसादजी ने इस कहानी में तत्कालीन राजनीतिक वातावरण को शब्दबद्ध किया है। प्रयुक्त संवादों में प्रसादजी के नाटककार, कवि तथा कहानीकार व्यक्तित्व की स्पष्ट झलक दर्शनीय है। प्रेम की उदात्त भावना से शुरू होकर करुणा और सेवा के महान आदर्श की स्थापना में समाप्त होती है। संवाद सब कहीं पात्र तथा परिवेश की सार्थक अभिव्यक्ति देती है।

गुंडा

'गुंडा' प्रसादजी की श्रेष्ठ कहानियों में से एक है जिसमें असफल प्रेम की अभिव्यंजना हुई है। तत्कालीन वातावरण की सार्थक अभिव्यक्ति देनेवाली इस कहानी में प्रसादजी का नाटककार तथा कवि व्यक्तित्व जाग उठता है। सब कहीं नाटकीय संवाद योजना का ही प्रयोग किया है। जिस प्रकार कहानी में वातावरण प्रधान होते हैं, उसीप्रकार चरित्र भी प्रधान होते हैं। गुलेरी जी की चर्चित कहानी 'उसने कहा था' का एक सच्चा प्रतिरूप दिखनेवाली यह कहानी प्रसादजी की कहानी कला को शब्दबद्ध करते हैं।

---

1. प्रसाद - नूरी - इन्द्रजाल - पृ. 308-309

गुण्डा नन्हकूसिंह के पौरुषपूर्ण एवं दृढ़निश्चयी चरित्र को मन्नू के साथ होने वाले संवाद से चित्रित किया है।

"मन्नू तमोली की दूकान पर बैठते हुए उसने कहा - "आज सायत अच्छी नहीं रही, मन्नू!"

क्यों मालिक! चिन्ता किस बात की है। हम लोग किस दिन के लिए हैं। सब आप ही का तो है।

"अरे बुद्ध ही रहे तुम! नन्हकूसिंह जिस दिन किसी से लेकर जुआ खेलने लगे उसी दिन समझना वह मर गये।"[1]

गुण्डा नन्हकूसिंह के चरित्र को शब्दबद्ध करने के साथ मन्नू के शब्दों में गुण्डे के प्रति लोगों की मानसिकता की ओर भी इशारा किया गया है। दुलारी के चरित्र चित्रण काशी के वातावरण के अनुरूप ही प्रसादजी ने इस कहानी में किया है। मौलवी के कथन में उसके चरित्र की ओर स्पष्ट संकेत किया गया है।

"चोबदार। अभी वह सुअर की बच्ची उतरी नहीं। जाओ, कोतवाल के पास मेरा नाम लेकर कहो कि मौलवी अलाउद्दीन कुबरा ने बुलाया है। आकर उसकी मरम्मत करें। देखता हूँ तो जब से नवाबी गयी इन काफ़िरों की मस्ती बढ़ गयी है।"[2]

तत्कालीन काशी का वातावरण ही कुछ ऐसा था कि वेश्यावृत्ति नवाबी राज का अभिन्न हिस्सा बन गई थी। दुलारी का चरित्र उसका अंग बन गया था।

---

1. प्रसाद - गुंडा - इन्द्रजाल - पृ. 338-339
2. वही - पृ. 340

ब्रिटीश कालीन भारतीय जीवन की झाँकी भी संवादों की चाल में दर्शनीय है। भाषा की दृष्टि से विचार करने पर प्रसादजी के पात्रों के विचारों को रूप देने में प्रयुक्त भाषा सर्वथा उचित निकला है।

अतीत की स्मृतियाँ प्रसाद साहित्य की निधि मानी जाती है। राजमाता पन्ना और दुलारी के आपसी वार्तालाप पूर्वापर संबन्धों की सूचना पाठकों को देते हैं।

"मैंने कहा – "सरकार की पूजा पर मुझे भजन गाने को जाना है। और यह जाने नहीं दे रहा है। उन्होंने मौलवीं को ऐसा लगाया कि उसकी हेकडी भूल गयी। और तब जाकर मुझे किसी तरह यहाँ आने की छुट्टी मिली।"

"कौन बाबू नन्हकूसिंह!"

दुलारी ने सिर नीचा करके कहा-

"अरे सरकार को नहीं मालूम?"

"बाबू निरंजनसिंह के लड़के। उस दिन, जब मैं बहुत छोटी थी, आपकी बारी में झूला झूल रही थी, जब नवाब का हाथी बिगडकर आ गया था, बाबू निरंजन सिंह के कुँवर ने ही तो उस दिन हम लोगों की रक्षा की थी।"[1]

घटनाक्रम में परिवर्तन लाकर कहानी को गतिशील बनाने में प्रस्तुत संवाद सफल निकला है। साथ ही नन्हकूसिंह के चरित्र को भी गौरवान्वित किया गया है। गुण्डा होते हुए भी उसके मन का आन्तरिक सौंदर्य संवाद खोलकर दिखाता है।

---

1. प्रसाद - गुंडा - इन्द्रजाल - पृ. 341

दुलारी और पन्ना दोनों के शब्दों में उसकी ओर स्पष्ट इशारा है। कहानी के आगे पन्ना और दुलारी के बीच के संवाद में नन्हकूसिंह का यथार्थ चरित्र सामने आता है।[1] वह बाहर से कठोर दिखाई देते हैं तो भी अन्दर ही अन्दर करुणा की एक जीवित मूर्ति है। पन्ना के मन में दुलारी के प्रेम के बारे में जो शंका पैदा होती है, उसकी ओर भी बड़ी तन्मयता से इशारा किया गया है - "दुलारी, वे तेरे यहाँ आते हैं न?"

इसी से तू उनकी बड़ाई.....।"[2] यहाँ पन्ना के मन को ये संवाद भली भान्ति प्रकट करते हैं।

गुण्डा नन्हकूसिंह के चरित्र की ओर संकेत देने के साथ राजमाता पन्ना के मन में सुरक्षित उस असफल प्रेम भावना को भी शब्दबद्ध करने में संवाद सफल निकला है। दुलारी के मन में उठी प्रेम के आवेगों को स्पष्ट करने के लिए भी आपसी वार्तालाप का प्रयोग किया है।

".....क्या?

"क्या, ...यही कि....

कभी तुम्हारे हृदय में.....

"उसे न पूछ दुलारी! हृदय को बेकार ही समझ कर तो उसे हाथ में लिये फिर रहा हूँ। कोई कुछ कर देता-कुचलता-चीरता-उछलता! मर जाने के लिए सब कुछ तो करता हूँ; पर मर नहीं पाता।"[3]

---

1. प्रसाद - गुंडा - इन्द्रजाल - पृ. 342-343
2. वही - पृ. 343
3. वही - पृ. 344

गुण्डा नन्हकूसिंह के आन्तरिक उलझनों को एक अभागे प्रेमी मन के आवेगों के साथ जोड़कर प्रसादजी ने अभिव्यक्ति दी है। आगे कहानी में आई अप्रत्याशित घटनाओं की जानकारी भी आपसी संवादों के ज़रिये दी गई है।[1] पन्ना के बारे में सोचकर नन्हकूसिंह बहुत चिंतित होने लगा। उसकी अधीर मानसिक स्थिति देखकर दुलारी यों पूछती है – "क्यों बाबू साहब, आज रानी पन्ना का नाम सुनकर आपकी आँखों में आँसू क्यों आ गये?"[2] पन्ना के प्रति वह खोई हुई प्यार नन्हकूसिंह के मन में आज भी सुरक्षित है। संवाद उसकी ओर स्पष्ट इशारा करते हैं। वह पवित्र प्रेम की आँसू में भीगे नन्हकूसिंह राजमाता पन्ना को नहीं, अपनी बचपन की प्रेमिका पन्ना को जान देकर बचाता है। पन्ना द्वारा चेतनसिंह को भी साथ लेने का प्रस्ताव स्वीकार करके नन्हकूसिंह कहता है - "मेरे मालिक, आप नाव पर बैठें। जब तक राजा भी नाव पर न बैठ जायेंगे, तब तक सत्रह गोली खाकर भी नन्हकूसिंह जीवित रहने की प्रतिज्ञा करता है।" पन्ना ने नन्हकू को देखा। एक क्षण के लिए चारों आँखें मिली; जिनमें जन्म-जन्म का विश्वास, ज्योति की तरह जल रहा था।[3]

गुण्डा नन्हकूसिंह के सात्विक प्रेम, विश्वास, प्रणय बलिदान की भावना आदि को प्रस्तुत संवाद उजागर करती है। कथानक में आए क्रमिक विकास को भी संवाद शब्दबद्ध करते हैं। प्रसादजी की अन्य कहानियों से भिन्न होकर इसमें कथातत्व अधिक है और घटनाएँ कथानक के विकास की सूचनाएँ देती हैं। फिर भी

---

1. प्रसाद - गुण्डा - इन्द्रजाल - पृ. 344
2. वही - पृ. 344
3. वही - पृ. 346

कहानी चरित्र पर ही केन्द्रित है। नन्हकूसिंह के महान चरित्र की उदात्तता शायद प्रसादकृत किसी अन्य कहानियों के पुरुष पात्रों में दर्शनीय नहीं है। संयम, मौन त्याग, देशस्नेह और साहस की प्रतिमूर्ति के रूप में एक गुण्डे का चरित्र प्रसादजी ने ऊँचा उठाया है। कहानी के अन्त में प्रसादजी ने लिख डाला - 'गुण्डे का एक एक अंग कट कर वहीं गिरने लगा। वह काशी का गुण्डा था।'[1] सचमुच प्रसादजी ने कहानी को मर्मभेदी तथा रोमांचक अभिव्यक्ति देकर प्रणयबलिदान की सात्विकभावना को साकार बनाया है। आद्यन्त कहानी नाटकीय, भावात्मक एवं पात्र तथा वातावरण के अनुकूल प्रयुक्त संवादों द्वारा बुनी गई है।

देवरथ

इतिहास प्रेमी प्रसादजी ने इस कहानी के माध्यम से बौद्ध धर्म के विकृत वज्रयानी रूप का यथार्थ चित्रण किया है। बौद्ध धर्म के ह्रासोन्मुख काल को आधार बनाकर उसके ज़रिए अधर्म पर धर्म की विजय को स्थापित किया है। एक अर्थ में तत्कालीन परिवेश का यथार्थ चित्रण करके उन्होंने सुधारवादी दृष्टिकोण को इसमें अपनाई गई है। कथावस्तु ऐतिहासिक है तो भी कहानी का मूल स्वर समाजवादी है। सुजाता नामक केन्द्रीय पात्र के इर्द-गिर्द कहानी घूमती रहती है। पवित्र पारिवारिक बन्धन तोडकर विकृत वज्रयानी नर पिशाचों के चंगुल में फँसकर, अँधी होकर संसार में दौडनेवाले लोगों को सही रास्ते की ओर राह प्रशस्त करना ही कहानी का वास्तविक उद्देश्य है।

---

1. प्रसाद - गुण्डा - इन्द्रजाल - पृ. 347

सुजाता और आर्यमित्र के बीच के संवाद से कहानी में कथानक का पर्दाफाश होता है। दोनों के चरित्र की ओर भी यहाँ संकेत मिलता है।

"सुजाता, आज तुम स्वस्थ हो?"

"हाँ, अब तो स्वस्थ हूँ।"

"अभी पथ्य सेवन करना होगा।"

"अच्छा।"

"मुझे और भी एक बात कहनी है।"

"क्या? नहीं, क्षमा कीजिए। आपने कब से प्रव्रज्या ली है।"

"वह सुनकर तुम क्या करोगी? संसार ही दुःखमय है।"

"ठीक तो.... अच्छा, नमस्कार।"[1]

आर्यमित्र का सुजाता के प्रति आकर्षण और काषाय वस्त्र में छिपे दोनों की यथार्थ मानसिकता को प्रसादजी ने संवादों द्वारा वाणी दी है। जहाँ भी पात्र मुँह खोलते हैं, वहाँ सब विकृत वज्रयानी धर्म की कुरूपताओं का चित्र देखने को मिलता है। सुजाता और आर्यमित्र के संवाद द्वारा ही कहानी आगे बढ़ती है।

".....'मैं भिक्षुणी क्यों हुई आर्य्यमित्र!"

"व्यर्थ सुजाता। मैं ने अमावस्या की गंभीर रजनी में संघ के सम्मुख पापी होना स्वीकार कर लिया है। अपने कृत्रिम शील के आवरण में सुरक्षित नहीं रह

---

1. प्रसाद - गुण्डा - इन्द्रजाल - पृ. 351

सका। मैं ने महास्थविर से कह दिया कि संघमित्र का पुत्र आर्यमित्र सांसारिक विभूतियों की उपेक्षा नहीं कर सकता। कई पुरुषों की संचित महौषधियाँ, कलिंग के राजवैद्य का सम्मान, सहज में छोडा नहीं जा सकता। मैं केवल सुजाता के लिए ही भिक्षु बना था। उसी का पता लगाने के लिए मैं इस नील विहार में आया था। वह मेरी वाग्दत्ता भावी पत्नी है।"

"किन्तु आर्य्यमित्र, तुमने विलम्ब किया, मैं तुम्हारी पत्नी न हो सकूँगी।" सुजाता ने बीच में रोककर कहा।[1]

प्रस्तुत संवाद दोनों के चरित्र को स्पष्ट करने के साथ, उनके भविष्य की आकांक्षाओं को भी खोलकर दिखाया है। संवाद यह भी बताते हैं कि वे पाषाणी प्रतिमा नहीं है और आत्मा की क्षणिकता पर विश्वास भी नहीं करते। आगे सुजाता पर पड़े विपत्ति के वज्रपात की सूचना एवं बौद्धधर्म का कच्चा चित्र दोनों की ओर भी, दोनों प्रेमियों के वार्तालाप से ही सूचना दी गई है।

"सुजाता, स्पष्ट कहो, क्या तुम मुझसे प्रेम नहीं करती हो?".....

"करती हूँ आर्य्यमित्र। इसी का दुख है। नहीं तो भैरवी के लिए किस उपयोग की कमी है।"

"आर्य्यमित्र ने चौंककर सुजाता का हाथ छोड़ते हुए कहा - "क्या, कहा, भैरवी!"

"हाँ, आर्य्यमित्र। भैरवी हूँ, मेरी....."

.....

---

1. प्रसाद - देवरथ - इन्द्रजाल - पृ. 352

आर्य्यमित्र अधीर होकर सोचने लगा - "पारिवारिक पवित्र बन्धनों को तोड़कर जिस मुक्ति की - निर्वाण की - आशा में जनता दौड रही है, उस धर्म की यही सीमा है। यह अंधेर-गृहस्थों का सुख न देख सकनेवालों का यह निर्मम दण्ड, समाज कब तक भोगेगा?"[1]

सुजाता के कथन में प्रेम की पवित्रता, अपराध बोध और टूटे दिल की उद्‌गारें स्पष्ट दर्शनीय है। लेकिन आर्य्यमित्र के शब्दों में व्यक्तिगत जीवन की व्यथा तथा विकृत बौद्ध धर्म के प्रति आक्रोश का स्वर गूँज उठती है। तत्कालीन वातावरण को संवाद भलीभान्ति प्रकट करते हैं।

स्थविर और सुजाता के बीच होनेवाली संवाद द्वारा कहानी उद्देश्य की ओर परिवर्तित हो जाती है।

"सुजाता, तुमने प्रायश्चित किया?"

"किसके पाप का प्रायश्चित! तुम्हारे या अपने?" - तीव्र स्वर में सुजाता ने कहा!

"अपने और आर्य्यमित्र के पापों का, सुजाता तुमने अविश्वासी हृदय से धर्म द्रोह किया है।"

"धर्मद्रोह? आश्चर्य!!"

तुम्हारा शरीर देवता को समर्पित था, सुजाता।

तुमने....."

---

1. प्रसाद - देवरथ - इन्द्रजाल - पृ. 352-353

"चुप रहो, असत्यवादी। वज्रयानी नर-पिशाच....."

".....उसने दाँत किटकिटाकर कहा–

"मृत्युदण्ड!"

सुजाता ने उसकी ओर देखते हुए कहा–

"कठोर से भी कठोर मृत्यु-दण्ड मेरे लिए कोमल है। मेरे लिए इस स्नेहमयी धरणी पर बचा ही क्या है? स्थविर तुम्हारा धर्मशासन घरों को चूर-चूर करके विहारों की सृष्टि करता है - कुचक्र में जीवन को फँसाता है। पवित्र गार्हस्थ बन्धनों को तोड़कर तुम लोग भी अपनी वासना-तृप्ति के अनुकूल ही तो एक नया घर बनाते हो, जिसका नाम बदल देते हो। तुम्हारी तृष्णा तो सरल गृहस्थों से भी तीव्र है, क्षुद्र है और निम्न कोटि की है।"

"किन्तु सुजाता, तुमको मरना होगा।"

"तो मरूँगी स्थविर; किन्तु तुम्हारा यह काल्पनिक आडम्बरपूर्ण धर्म भी मरेगा। मनुष्यता का नाश करके कोई धर्म खड़ा नहीं रह सकता।"[1]

सुजाता के इस अंतिम कथन ही कहानी की मूल संवेदना है। प्रस्तुत संवाद द्वारा तत्कालीन बौद्ध धर्म का कच्चा चिट्ठा खुलकर पाठकों के सामने आ गया है। तत्कालीन धार्मिक परिवेश को संवाद स्पष्ट रूप से प्रतिबिम्बित करता है। एक अर्थ में कहने पर धार्मिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह करने वाली एक मानवतावादी कहानी

---

1. प्रसाद - देवरथ - इन्द्रजाल - पृ. 353-354

के रूप में 'देवरथ' कहानी को देखना ज़्यादा समीचीन होगा। इसमें भी प्रसादजी का नाट्यकार रूप उत्कृष्ट संवादों की रचना में सहायक सिद्ध हुआ है।

दूसरे दिन देवरथ के चक्र के नीचे शव के रूप में पड़ी सुजाता को देखकर लोग 'काला पहाड़'[1] चिल्लाकर भागने लगा। वास्तव में सुजाता की लाश विकृत बौद्ध धर्म के उन्मूलन की ओर इशारा करता है। एक तरह से देखने पर एक सुधारवादी दृष्टिकोण कहानी के अन्त में पाठकों के मन में जाग उठते हैं। यही प्रसादजी की कहानी कला का वैशिष्ट्य है कि कहानी के अन्त में काफ़ी कुछ पाठकों को सोचने के लिए छोड देते हैं।

निष्कर्ष

प्रसादजी सर्वप्रथम एक मंचे हुए नाटककार एवं भावुक कवि हैं। इसलिए उनकी कहानियाँ अपेक्षतया भाव प्रधान हैं, शिल्प प्रधान नहीं है। काव्य और नाटक मिलकर उनकी कहानियों को एक नवीन शिल्प विधि प्रदान करती है। यह नवीन शिल्पविधि उनकी कहानियों में 'नावक के तीर' के समान प्रयुक्त प्रभावशाली एवं रोचक संवादों में स्पष्ट दर्शनीय है। 'छाया' और 'प्रतिध्वनि' संग्रहों की कहानियों में प्रयुक्त भाषा शैली अनगढ़ होने के कारण संवाद-योजना भी अपरिपक्व प्रतीत होती है। लेकिन उनकी विकास कालीन कहानियों, यानी 'आकाशदीप', 'आँधी' और 'इन्द्रजाल' संग्रहों की कहानियों में, नाटकीयता की ओर अधिक ध्यान देने के कारण प्रयुक्त संवाद-योजना काफ़ी परिपक्व और पात्रों के मानसिक-स्थिति सापेक्ष्य

---

1. प्रसाद - देवरथ - इन्द्रजाल - पृ. 354

बन गए हैं। नाटकीयता और गद्य-काव्यात्मकता से युक्त ये संवाद पात्रों की मनोगत भावनाओं की अभिव्यक्ति में ज़्यादा खरा उतरता है। प्रसाद ने अपने संवादों को नाटकीय और जीवन्त बनाने के लिए भाषिक चमत्कार पैदा किया है जिसके कारण संवाद सांकेतिक एवं प्रतीकात्मक हो गए हैं। अपनी परिनिष्ठित भाषाई कुशलता के कारण प्रसाद जी के द्वारा प्रयुक्त संवाद पाठकों के हृदय से ज़्यादा बुद्धि को प्रभावित करते हैं। सब कहीं उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद-योजना, समय, स्थिति और वातावरण के अनुकूल दीख पड़ते हैं। अपनी कहानियों में वे सब कुछ न बताकर काफ़ी कुछ पाठकों के अनुमान के लिए अधूरा छोड़ देते हैं। कुल मिलाकर कहने पर प्रसादजी संवाद लेखन के अद्‌भुत आचार्य ही हैं जिसका ज्वलन्त उदाहरण है उनकी भावमूलक कहानियाँ।

पाँचवाँ अध्याय

प्रेमचंद और जयशंकार प्रसाद की कहानियों के संवाद-तत्त्व का तुलनात्मक अध्ययन

सारांश - *इस अध्याय में तुलनात्मक दृष्टि से प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना के साम्य-वैषम्यों पर विचार किया गया है। मुख्य रूप से भाषा, कथ्य, कथन-शैली और अन्य विधायी प्रभाव की दृष्टि से तुलना की गई है।*

प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद दोनों हिन्दी कथा साहित्य के प्रमुख हस्ताक्षर होते हुए भी उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना में काफी अन्तर हैं। भाषा परक दृष्टि से विचार करने पर प्रेमचंद के द्वारा प्रयुक्त संवाद यथार्थ, स्वाभाविक एवं जीवनव्यापी है। जीवन की सहजता और यथार्थता के धरातल पर निर्मित उनके संवादों की भाषा उनके विचारों को रूप देने में सक्षम है। प्रसाद एक परिनिष्ठित एवं परिष्कृत भाषा लेखक होने की वजह से उनके द्वारा प्रयुक्त संवादों की भाषा साहित्यिक, भावात्मक और व्यंजनात्मक है जो छायावादी काव्यभाषा के निकट है।

कथन शैली की दृष्टि से विचार करने पर प्रेमचंद की कहानियों के कलेवर में तत्कालीन साहित्य में प्रचलित सभी शैलियों का सफलता पूर्वक समावेश पायी जाती है। आत्मविश्लेषणात्मक शैली, नाटकीय शैली, व्यंग्यात्मक शैली, कथोपकथनों पर आधारित शैली आदि विभिन्न शैलियों में लिखी उनकी कहानियों की संवाद योजना पूरी तरह से कहानी के अनुरूप ही है। प्रसादजी के द्वारा प्रयुक्त संवाद योजना मुख्य रूप से मनोविश्लेषणात्मक एवं प्रतीकात्मक शैली पर आधारित है जिसके ज़रिये उन्होंने व्यक्ति मन के तीव्र अर्न्तद्वन्द्वों को अपनी कहानियों में अभिव्यक्त किया है।

कथ्यपरक दृष्टि से अध्ययन करने से पता चलता है कि प्रेमचंद की सारी कहानियाँ आम आदमी के वास्तविक जीवन जगत से जुडी हुई यथार्थपरक व संवेदनशील हैं। लेकिन प्रसादजी की कहानियों में कथ्यपरक विविधता पायी जाती है। उनकी अधिकांश कहानियों में असफल प्रेम की व्यंजना मुखरित है जिसका धरातल काल्पनिक एवं स्वच्छन्दतावादी है।

प्रेमचंद एक ही समय सफल उपन्यासकार व कहानीकार होने के कारण उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवादों में उपन्यास की अमिट छाप दर्शनीय है। प्रसादजी की कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना में उनके कवि तथा नाटककार रूप दौडे चले आते हैं। उनमें एक कवि की कल्पना एवं भावना और नाटककार का विश्लेषण चातुर्य एक साथ प्रतिबिम्बित है। वे सचमुच संवाद-लेखन के अद्‌भुत चितेरे हैं।

पाँचवाँ अध्याय
प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों के संवाद-तत्व का तुलनात्मक अध्ययन

प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों में प्रयुक्त संवादात्मकता का सूक्ष्म विश्लेषण करने से पता चलता हैं कि हिन्दी कहानी-साहित्य को कथ्य और शिल्प की दृष्टि से उत्तरोत्तर विकसित करने में दोनों रचनाकारों का योगदान अन्यतम है। इन दोनों कहानीकारों ने अपनी कहानियों में संवाद-तत्व का बहुआयामी प्रयोग कर कहानी-साहित्य को एक अलग पहचान दिया है। लेकिन कहानी के क्षेत्र में दोनों ने भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियों को ही अपनाया है।

प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में यथार्थमूलक दृष्टि को अपनाया है तो प्रसादजी ने अपने निजी व्यक्तित्व के अनुरूप भावमूलक दृष्टि का व्यापक प्रयोग किया है। इन दोनों प्रवृत्तियों का अनुकरण और प्रभाव पूरे विकास युग पर परिलक्षित होता है। लेकिन तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर प्रेमचंद की यथार्थवादी परम्परा को अधिक कहानीकारों ने स्वीकार किया है। फिर भी व्यापक रूप में विचार करने पर हिन्दी कहानी यात्रा के वास्तविक विकास में इन दो महान प्रतिभाओं का स्थान सर्वोपरि ही है। इस अध्याय में प्रेमचंद और प्रसाद की कहानियों में प्रयुक्त संवाद-तत्व की भाषापरक, शैलीपरक, कथ्यपरक और अन्य विधायी प्रभाव की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है।

5.1 प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों का भाषापरक अन्तर

भाषा कहानी शिल्प का सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपकरण है। कहानीकार भाषा के माध्यम से ही अपने विचारों एवं भावों और उद्देश्य को पाठकों के सामने प्रकट करते हैं। पाठकों और लेखक के बीच के संप्रेषण की कड़ी 'भाषा' है। इसलिए कहानीकार को प्रयुक्त भाषा पर अधिक ध्यान रखनी चाहिए। भाषा के अनुचित एवं नीरस प्रयोग से पाठकों के मन में रचना के प्रति अरुचि पैदा होती है। कहने का तात्पर्य यह है कि कहानी की सफलता या असफलता, प्रयुक्त भाषाई कौशल पर ही निर्भर रहती है। क्योंकि भाषा के माध्यम से ही अन्य सभी तत्वों का स्पष्टीकरण संभव होता है। इसलिए पात्रानुकूलता पर ज़्यादा ध्यान रखनी चाहिए। भाषा शिल्प का निर्माण प्रत्येक कहानीकार अपनी अनुभूति के स्तर पर करता है। यही कारण है कि कहानियों के अभिव्यक्ति पक्ष में भिन्नता पायी जाती है। कहानी में प्रयुक्त भाषा के संबन्ध में 'हिन्दी कहानियों में शिल्प विधि का विकास' में लेखक बताते हैं - "वस्तुतः कहानीकार के मनोभावों की अभिव्यक्ति का माध्यम है 'भाषा' और चित्रोपम-शब्द-चयन या वाक्य-संयोजन सहित सहज भावाभिव्यक्ति है कहानी की भाषा की कलात्मकता।"[1] इस अर्थ में विचार करने पर पता चलते हैं कि कहानी की भाषा जितनी सहज, सरल एवं बोधगम्य होगी, रचना उतनी प्रभावशाली, प्रौढ़ एवं अद्वितीय होगी। कहानी कला का मूल उद्देश्य ही मानवीय भावनाओं की रागात्मक और चित्रात्मक प्रस्तुतीकरण है।

---

1. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - हिन्दी कहानियों में शिल्पविधि का विकास - पृ. 300

5.2 प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त भाषा की विशेषताएँ

"कहानी की भाषा बहुत ही सरल और सुबोध होनी चाहिए। उपन्यास तो वे लोग पढ़ते हैं जिनके पास रुपया है और समय भी..... आख्यायिका साधारण जनता के लिए लिखी जाती है, जिनके पास न धन है न समय। यहाँ तो सरलता में सरसता पैदा कीजिए, यही कमाल है।"[1] कहानी की भाषा के संबन्ध में साधारण जनता के कथाकार प्रेमचंद का यह विचार उनकी कहानियों में प्रयुक्त भाषा में स्पष्ट दिखाई देता है। उनके अनुसार कहानी साहित्य को जीवनोपयोगी बनाने के लिए तथा कहानी में अभिव्यक्त विचारों को स्पष्टता प्रदान करने के लिए कहानी की भाषा सरल, सुबोध और प्रेषणीय होना बहुत ज़रूरी है। कहने का मतलब यह है कि कहानी की भाषा आकर्षक तथा उपयुक्त होनी चाहिए। इस बात का समर्थन देते हुए 'कुछ विचार' में प्रेमचंद लिखते हैं "हम कहानी ऐसी चाहते हैं कि वह थोड़े से थोड़े शब्दों में कही जाय, उसमें एक वाक्य, एक शब्द भी अनावश्यक न आने पाये, उसका पहला ही वाक्य मन को आकर्षित कर ले। उसमें कुछ चटपटापन हो, कुछ ताज़गी हो।"[2]

प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त भाषा सचमुच उपर्युक्त बात को साबित करती है। उनकी भाषा उनके विचारों की अनुगामिनी बनकर कहानी को जीवन्त बनाती है। वास्तव में अपनी सहज-सुबोध हृदय को छूनेवाली भाषिक संरचना द्वारा ही प्रेमचंद ने यथार्थ को आदर्श से जोड़ा है। इसलिए उनकी कहानियाँ मानव जीवन

---

1. प्रेमचंद - कुछ विचार भाग-1 (साहित्य और भाषा संबन्धी) पृ. 24-25
2. प्रेमचंद - कुछ विचार - भाग-1 - पृ. 31

की सच्ची गाथा रचने में कामयाब हुई है। स्वयं प्रेमचंद ने यह स्वीकार किया है "स्वाभाविकता से दूर होकर 'कला' अपना आनन्द खो देती हैं।"[1] अपनी कहानियों में इस स्वाभाविकता को लाने की पूरी कोशिश उन्होंने किया है। इसलिए पात्रानुकूल व ग्रामीण शब्दावलियों से युक्त स्वाभाविक बोलचाल की भाषा का प्रयोग कर उन्होंने कहानियों को मानव-जीवन से जोड़ा है। व्यावहारिक दृष्टि से प्रेमचंद की कहानियों की भाषा में विविधता पायी जाती है। इससे सहमत होते हुए डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल कहते हैं "प्रेमचंद भाव और अनुभूति के साथ भाषा के भी बहुत बड़े बादशाह थे।"[2] इससे स्पष्ट है कि हिन्दी भाषा के जीवन्त व्यावहारिक एवं बोलचालू रूप को ही प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में सफलतापूर्वक अंकित किया है। जन-साधारण के लेखक होने के कारण उनकी कहानियों के अधिकांश पात्र भारतीय ग्रामीण परिवार से जुड़े कृषक-मज़दूर, देहाती, सर्वहारा दुर्बल लोग है तो भी जीवन के विभिन्न स्तर से विभिन्न स्वभाव वाले कई पात्रों को भी उचित स्थान दिया गया है। समाज में जीने वाले इन सब पात्रों के स्तर तथा चरित्र के अनुरूप भाषिक प्रवृत्तियों की पहचान प्रेमचंद की कहानियों में देखने को मिलते हैं। यही वस्तुतः उनकी कहानियों की जीवन्तता का निदान है।

किसान-मज़दूर की भाषा

प्रेमचंद की कहानियों में आनेवाले अशिक्षित सर्वहारा जन-समुदाय के लोगों की भाषा में ग्रामीण शब्दों का प्रयोग बहुत अधिक हुआ है। 'जुर्माना', 'सद्गति', 'पूस की रात' आदि कहानियों में प्रयुक्त भाषा इसका स्पष्ट उदाहरण हैं।

---

1. प्रेमचंद - कुछ विचार - भाग-1 - पृ. 36
2. डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - हिन्दी कहानियों में शिल्पविधि का विकास - पृ. 145

'जुर्माना' की अलारक्खी खजांची से कहते हैं - "कुछ जरिमाना नहीं है?"[1] 'जुर्माना' के बदले 'जरिमाना' का प्रयोग करके प्रेमचंद ने अलारक्खी की अनपढ़, गंवारू जीवन शैली की ओर संकेत किया है। 'सद्गति' की झुरिया बोलती हैं, "देखते नहीं, कितने नेम-धरम से रहते हैं।"[2] यहाँ भी झुरिया के शब्द उसके सामान्य जीवन स्तर की ओर संकेत देते हैं।

उच्च - मध्यवर्गीय पात्रों की भाषा

आर्थिक दृष्टि से संपन्न पात्रों की भाषा में स्वामित्व या रोब दिखाने लायक कटु शब्दों का प्रयोग देखने को मिलता है। 'सभ्यता का रहस्य' नामक कहानी में राय रतन किशोर के शब्दों में जो कर्कशता एवं अधिकार भाव है, वह सर्वथा उसके उच्च चरित्र की सफल अभिव्यक्ति देता है। घमंडी को डाँटेते हुए राय साहब कहते हैं "जब हम तुम्हें रात-दिन के लिए रखे हुए हैं, तो तुम घर पर क्यों रहे? कल के पैसे कट जाएँगे। .....बक बक मत करो।..... दो रुपये जुरमाना।"[3]

यहाँ रतन साहब के शब्दों में एक दबावपूर्ण फटकार है। मध्यवर्गीय पात्रों की भाषा में तो उनके प्रवृत्तियों के अनुसार शब्दों का चयन किया गया है। 'बड़े घर की बेटी' का मध्यवर्गीय श्रीकंठ के शब्दों में यह देखने को मिलता है।

श्रीकंठ - "इतना मैं जानता हूँ, आपके आशीर्वाद से ऐसा मूर्ख नहीं हूँ। आप स्वयं जानते हैं कि मेरे ही समझाने - बुझाने से, इसी गाँव के कई घर संभल

---

1. प्रेमचंद - कफन संग्रह - पृ. 31
2. प्रेमचंद - मानसरोवर भाग-4 - पृ. 18
3. प्रेमचंद - सभ्यता का रहस्य - मानसरोवर, भाग-4 - पृ. 166

गए, पर जिस स्त्री की मान प्रतिष्ठा का मैं ईश्वर के दरबार में उत्तर दाता हूँ, उसके प्रति ऐसा घोर अन्याय और पशुवत् व्यवहार मुझे असह्य है।....."[1] यहाँ श्रीकंठ के शब्दों में मध्यवर्गीय मानसिकता का पुट मिलता है। धर्म-भीरू सामाजिक दृष्टि की सफल अभिव्यक्ति उसके शब्दों में मुखरित है।

निम्न एवं कमज़ोर पात्रों की भाषा में विनय, भय एवं आदर का भाव स्पष्ट दर्शनीय है। 'महातीर्थ' कहानी की दासी कैलासी विनीत स्वर में बोली - "या मेरे परमात्मा! अरे कुली! कुली! बेटा, आकर मेरा सामान गाड़ी से उतार दे। अब मुझे तीरथ जाना नहीं सूझता। वाँ बेटा, जलदी कर, बाबू जी देखो, कोई एक्का तो ठीक कर लो।"[2]

इस प्रकार की भाषा सचमुच पात्रों के चरित्र के अनुभूति पक्ष को पाठकों तक पहुँचाने में सहायक ही है। यही प्रेमचंदीय संवादों की सफलता का रहस्य भी है। सच्चे अर्थों में वे एक समाज प्रतिबद्ध रचनाकार सिद्ध होते हैं।

प्रेमचंद की कुछ कहानियों में आधुनिक शिक्षित जन समुदाय की भाषा में अंग्रेज़ी के प्रभाव भी दर्शनीय है। 'नशा', 'पंडित मोटे राम की डायरी', 'एक आँच की कसर', विनोद, 'लॉटरी' आदि कई कहानियों में इसका प्रत्यक्ष उदाहरण देखने को मिलता है। 'एक आँच की कसर' कहानी में यशोदानंद बातचीत करते समय महाशय से कहते हैं - "मेरा तो यह निश्चय है कि हमें सदैव principles पर स्थिर रहना चाहिए। Principle के सामने money की कोई value नहीं है। दहेज की

---

1. प्रेमचंद - बड़े घर की बेटी - मानसरोवर, भाग-7 - पृ. 124
2. वही - पृ. 194

कुप्रथा पर मैं ने खुद कोई व्याख्यान नहीं दिया, शायद कोई नोट तक नहीं लिखा। हाँ, conference में इस प्रस्ताव को second कर चुका हूँ..... यशोदानंद - मैं ने अपनी duty कर दी, उसका recognition हो या न हो, मुझे इसकी परवा नहीं।"[1]

यहाँ यशोदानंद के संवाद में अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग कर प्रेमचंद ने उसके पात्र एवं चरित्र की महिमा को स्थापित किया है। यही पात्रानुकूल चरित्र चित्रण की पहली शर्त है। यहाँ अंग्रेज़ी में ही शब्दों का प्रयोग किया है तो 'लॉटरी' कहानी में अंग्रेजी शब्दों का हिन्दी लिपि में प्रयोग किया है। विक्रम के शब्दों में यह दर्शनीय है - "विक्रम इतना संतोषी न था। बोला - पाँच लाख क्या, हमारे लिए तो इस वक्त पाँच सौ भी बहुत है भाई; मगर ज़िन्दगी का प्रोग्राम तो बदलना पड़ गया। मेरी यात्रावाली स्कीम तो टल नहीं सकती। .....जी नहीं, उसका बजट है साढ़े तीन लाख का। सात वर्ष का प्रोग्राम है, पचास हज़ार रुपए साल ही तो हुए?"[2]

प्रेमचंद की भाषिक निपुणता, दृष्टिकोण की व्यापकता इस प्रकार के शब्दों में झलकती है। कुछ कहानियों के तो नामकरण ही अंग्रेज़ी शब्दों में ही, किया है, जैसे - 'मिस पद्मा', 'एक्ट्रेस', 'डिमॉस्ट्रेशन' आदि।

विभिन्न क्षेत्रीय बोलियों को भी पात्रों के स्तर के अनुसार कहानियों में प्रयुक्त किया है। 'नशा', 'मनुष्य का परम धर्म', 'स्वामिनी', 'ज्योति' आदि कहानियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। 'मनुष्य का परम धर्म' कहानी के पंडिताइन, पति

---

1. प्रेमचंद - एक आँच की कसर - मानसरोवर, भाग-3 - पृ. 81
2. प्रेमचंद - लॉटरी - मानसरोवर, भाग-2 - पृ. 251

मोटेराम से कहती है - "का सहर-भर माँ अब कोऊ भल मनई नाहीं रहा? सब मरि गए?..... तुमहूँ तो घर माँ बैठे रहत हो। अब ई जमाने में कोई ऐसन दानी नाहीं है कि घर बैठे नेवता भेज देय! कभूँ-कभूँ जुबान लड़ा दिया करी।"[1]

यहाँ पंडिताइन के शब्दों में ग्राम प्रधान लोक भाषा का पुट मिलता है जो प्रेमचंद के बहुव्यापक लोक व्यवहारी दृष्टि का सफल परिचय देता है।

प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में पात्रों की परिस्थिति, समय एवं मानसिक स्थिति सापेक्ष्य भाषिक अभिव्यंजना पर बाल दिया है। कहानी के पाठकों के मन में पात्रों की मानसिक स्थितियों की गहरी पैठ इस प्रकार के संवादों द्वारा होते हैं। 'पंच परमेश्वर', 'लाग-डॉट', 'विमाता', 'विद्रोही', 'विस्मृति' आदि कई कहानियों में प्रयुक्त भाषिक प्रयोग इस बात की पुष्टी देता है। 'लाग-डॉट' के भगत के शब्द सचमुच उसके मनोभावों का स्पष्टीकरण देता है।

"भाइयों, मुझे यहाँ देखकर अचरज मत करो, मैं स्वराज्य का विरोधी नहीं हूँ। ....जब आपस में फूट और रार है, पंचायतों से क्या होगा? जब विलासिता का भूत सिर पर सवार है तो नशा कैसे छूटेगा, मदिरा की दुकानों का बहिष्कार कैसे करेगा?...."[2]

'विद्रोही' कहानी का कृष्णा जब क्रोध में पागल हो जाता है तो उसकी तनावपूर्ण मनोवृत्ति की ओर संकेत करने के लिए प्रेमचंद ने उपयुक्त भाषा का प्रयोग किया है।

---

1. प्रेमचंद - मनुष्य का परम धर्म - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 178
2. प्रेमचंद - लाग डॉट - मानसरोवर - भाग-6 - पृ. 173

"अब तक तो न समझता था; लेकिन परिस्थिति ने ऐसा समझने को मज़बूर किया। मेरे खून का प्यासा दुश्मन भी मेरे ऊपर इससे घातक वार न कर सकता था। मेरा खून आप ही की गरदन पर होगा।"[1]

यहाँ जो तीव्रानुभूति सूचक शब्द चयन किया है, वह बिलकुल कृष्णा के उस समय की मानसिक स्थिति के अनुकूल है। प्रेमचंदीय भाषा विचारों एवं भावों की अनुगामिनी बनकर पात्रों को शब्दबद्ध करते हैं। इसके संबन्ध में डॉ. रामविलास शर्मा कहते हैं कि "प्रेमचंद पात्रों का चरित्र-चित्रण खुद अपने शब्दों से, या घटनाओं के द्वारा और दूसरों की सम्मति पेश करके ही नहीं करते, साधारणतः उनके पात्रों के संवाद उनके चरित्र को सबसे अच्छी तरह प्रकट करते हैं। यहाँ भाषा पर प्रेमचंद का असाधारण अधिकार स्पष्ट दिखाई देता है। हिन्दी भाषा समृद्ध है, उसका परिचय भी मिलता है।"[2]

हिन्दी भाषा पर प्रेमचंद का यह असाधारण अधिकार उनकी असंख्य कहानियों में पायी जाती है। कहीं ठेठ उर्दु शब्द है, तो कहीं फारसी मिश्रित उर्दु, कहीं हिन्दी मिश्रित उर्दु, कहीं हिन्दुस्तानी, तो कहीं-कहीं संस्कृत निष्ठ हिन्दी शब्दों का भी सुन्दर समन्वय है। 'दिल की रानी', 'रसिक संपादक', 'बेटों वाली विधवा', 'अमावस्या की रात्रि' आदि कहानियों में उपर्युक्त बात का उदाहरण मिलते हैं। 'दिल की रानी' में तैमुर के शब्दों में उर्दु भाषा का वास्तविक रूप देखने को मिलता है।

---

1. प्रेमचंद - विद्रोही - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 96
2. डॉ. रामविलास शर्मा - प्रेमचंद और उनका युग - पृ. 113

"तुम कहते हो, खुदा ने तुम्हें ऐश करने के लिए पैदा किया है। मैं कहता हूँ, यह कुफ्र है। खुदा ने इन्सान को बन्दगी के लिए पैदा किया है और इसके खिलाफ़ जो कोई कुछ करता है, वह काफिर है, जहन्नुमी! रसूलपोक हमारी जिन्दगी को पाक करने के लिए, हमें सच्चा इन्सान बनाने के लिए आये थे, हमें हराम की तालीम देने नहीं।..."[1]

प्रेमचंद सबसे पहले उर्दु में लिखते थे, इसलिए उर्दु भाषा तथा उर्दु-मिश्रित भाषा के शब्दों का बहुत अधिक प्रयोग कहानियों में होना स्वाभाविक है। 'रसिक संपादक' में तो हिन्दी का साहित्यिक रूप सुन्दर ढंग से चित्रित है।[2] 'डिक्री के रुपये' कहानी में तो संस्कृत-प्रधान भाषा का ही प्रयोग किया है। 'बेटों वाली विधवा' के फूलमती के शब्दों में हिन्दुस्तानी का वास्तविक रूप दर्शनीय है।

"क्या आटा तीन ही बोरे लाये? मैं ने तो पाँच बोरे के लिए कहा था। और घी भी पाँच ही टिन मँगवाया। तुम्हें याद है, मैंने दस कनस्तर कहा था? किफ़ायत को मैं बुरा नहीं समझतीं, लेकिन जिसने यह कुआँ खोदा, उसी की आत्मा पानी को तरसे, यह कितनी लज्जा की बात है।"[3]

इस तरह विचार करने से एक बात तो स्पष्ट होती हैं कि स्वाभाविकता लाने के लिए जैसी भाषा का प्रयोग चाहिए, वैसी भाषा का ही प्रयोग उन्होंने अपनी कहानियों में किया है। उनकी वाक्य-रचना में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया और

---

1. प्रेमचंद - दिल की रानी - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 157
2. प्रेमचंद - रसिक संपादक - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 270
3. प्रेमचंद - बेटोंवाली विधवा - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 55

क्रिया विशेषण, कारक, मुहावरे और लोकोक्तियों का भी अवसरोचित प्रयोग दर्शनीय है। 'नमक का दारोगा', 'पूस की रात', 'बूढ़ी काकी', 'अधिकार चिन्ता', 'नागपूजा', 'आत्माराम', 'मुक्तिमार्ग' आदि कई कहानियों में जन प्रचलित मुहावरों का सफल प्रयोग स्वाभाविक रूप से हुआ है। 'मुक्तिमार्ग' कहानी में झींगूर के कथन में तत्कालीन जन जीवन से जुड़े मुहावरों का प्रयोग संवाद को प्रभावी तथा प्रेषणीय बनाने में सहायक रहा है।

"इधर, झींगुर दिन-भर मज़दूरी करता, तो कही आधा पेट अन्न मिलता। बुद्ध के घर कंचन बरस रहा था। .....क्या निभती है। नकटा जिया बुरे हवाल! दिन-भर कल में मज़दूरी करते हैं, तो चूल्हा जलता है।"[1]

'आत्माराम' में महादेव के बारे में लोगों का कहना है "देहात के आदमी थे, गड़े मुर्दे को उखाड़ना क्या जानें।"[2]

'स्मृति का पुजारी' में पात्र महाशय से कह रहा है "हजरत, जरा ठहर जाइए, मेरी साँस फूल रही हैं, मगर आप हैं कि सुनते नहीं। आखिर जब मैं ने अपने सिर की कसम दिलायी, तब जाकर आप रुके।....."[3]

इन सब उदाहरणों में स्वाभाविक बोलचाल की भाषा की चुस्ती के साथ मुहावरों की सुंदर सजावट कही गई बात को अनोखा प्रभाव प्रदान किया है।

---

1. प्रेमचंद - मुक्तिमार्ग - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 207-208
2. प्रेमचंद - आत्मारम - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 108
3. प्रेमचंद - स्मृति का पुजारी - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 251

प्रेमचंद ने अपनी कई कहानियों में वाक्य-विशेष के साथ कथन की पुष्टि के लिए या किसी सत्य के समर्थन के लिए लोकोक्तियों का भी आकर्षक प्रयोग किया है। 'बूढ़ी काकी', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'मुक्तिमार्ग', 'अधिकार-चिन्ता', 'बेटी का धन', 'वेश्या' आदि कहानियों में इस प्रकार के भाषा सौन्दर्य दर्शनीय है। 'शतरंज के खिलाड़ी' में मिरजा और मीर के संवादों में इसका उदाहरण अनेक स्थानों में दर्शनीय है।

मीर - "क्यों अपने बुजुर्गों के मुँह में कालिख लगाते हो - वे ही बावरची का काम करते होंगे।"[1] 'बूढ़ी काकी' में रूपा काकी को कड़ाह के पास देखकर जल उठी और कही – ".....आकर छाती पर सवार हो गयी। जल जाय ऐसी जीभ। दिनभर खाती न होती तो न जाने किसकी हाँड़ी में मुँह डालती? गाँव देखेगा तो कहेगा कि बुढ़िया भर पेट खाने को नहीं पाती तभी तो इस तरह मुँह बायें फिरती है। ..... डायन न मरे न माँचा छोडे। नाम बेचने पर लगी है। नाक कटवा कर दम लेगी।"[2]

उपर्युक्त विवेचनों से यह स्पष्ट हो जाते हैं कि प्रेमचंद की कहानी कला का अविभाज्य अंग है भाषा शैली की विविधता। सूक्तियाँ और अलंकारों की भी सुन्दर सजावट उनकी कहानियों के संवादों में पायी जाती है जिसके ज़रिये कहानी में प्रवाहात्मकता, व्यंग्यात्मकता एवं नाटकीयता लाने में उन्हें सफलता मिली है। 'ढपोर शंख', 'दो बैलों की कथा', 'आँसुओं की होली', 'मन्त्र', 'शंखनाद', 'शाप',

---

1. प्रेमचंद - शतरंज के खिलाड़ी - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 234
2. प्रेमचंद - बूढ़ी काकी - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 127-128

'जिहाद' आदि कहानियों में इसका सटीक प्रयोग देखने को मिलता है। अर्थवत्ता, गुणवत्ता एवं उपयुक्तता की दृष्टि से ये सूक्तियाँ कहानी के सौंदर्य में चार चाँद लगा देती है। 'शंखनाद' कहानी में प्रेमचंद लिखते हैं "जिस तरह पत्थर और पानी में आग छिपी रहती है, उसी तरह मनुष्य के हृदय में भी चाहे वह कैसा भी क्रूर और कठोर क्यों न हो, उत्कृष्ट और कोमल भाव छिपे रहते हैं। गुमान की आँखें भर आई। आँसू की बूँदें बहुधा हमारे हृदय की मलिनता को उज्ज्वल कर देती है।"[1]

'ढपोर शंख' कहानी में ढपोरसंख गंभीर होकर कहा - "झूठ वह बोलता है जिसका पक्ष निर्बल होता है।"[2]

'दो बैलों की कथा' में बैलों के माध्यम से प्रेमचंद ने कई नीति विषयक बात छोड दिया है जिससे दिशाहीन भारतीय जन मानस को सही मार्ग प्रदर्शन दिया है। मोती द्वारा मालकिन को सींग से फेंकने की बात सुनकर हीरा ने कहा है "लेकिन औरत जात पर सींग चलाना मना है, यह भूले जाते हो।"[3]

प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त भाषा वास्तव में अनेकरूपिणी प्रभावशाली ही है। 'हुज़ूर', 'हाय राम', 'अरे राम', 'सरकार', 'बाबा' आदि विनय सूचक संबोधनों का प्रयोग कई कहानियों में देख सकते हैं। 'पशु से मनुष्य', 'लांछन', 'इस्तीफ़ा', 'निमंत्रण', 'त्यागी का प्रेम', 'आँसुओं की होली' आदि कहानियों में इसका सफल उदाहरण दर्शनीय है। 'पशु से मनुष्य' कहानी में 'हुज़ूर' शब्द का

---

1. प्रेमचंद - शंखनाद - मानसरोवर - भाग-7 - पृ. 144-145
2. प्रेमचंद - ढपोर शंख - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 49
3. प्रेमचंद - दो बैलों की कथा - मानसरोवर - भाग-2 - पृ. 133

प्रयोग प्रत्येक वाक्य के आरंभ में है।[1] 'इस्तीफा' कहानी में चपरासी मुँह खोलते समय 'बाबूजी' शब्द का प्रयोग करके ही बात करता है।[2] पात्रानुकूलता लाने के लिए इस प्रकार के संबोधन कहानी में अभीष्ट ही है। प्रेमचंद ने कई कहानियों में प्रेषणीयता, गतिशीलता तथा काव्यात्मकता लाने के लिए गीतात्मक उद्धरणों का भी अवसरोचित प्रयोग किया है। 'लैला', 'दीक्षा', 'गुरुमंत्र' 'वज्रपात' कफ़न आदि कहानियों में इसका उदाहरण मिलते हैं।

'लैला' कहानी में लैला के रूप सौन्दर्य को तेहरान की जनता को परिचित कराने के लिए 'हाफ़िज' की एक गज़ल की पंक्तियों को उद्धरण के रूप में यों प्रस्तुत किया है–

"रसाद मुजरा कि ऐयामे गम न ख्याहद माँद,
चुनाँ न माँद, चुनी नीज हम न ख्याहद माँद।"[3]

इस प्रकार के उद्धरण आगे भी कई स्थानों में मिलता है। 'दीक्षा' कहानी में नशीली चीज़ों के वशीभूत दुष्परिणामों की झलक दिखाने के लिए ये पंक्तियाँ लिखी–

"जाम चलने को है, सब, अहल-नज़र बैठे हैं;
आँख साकी न चुराना, हम इधर बैठे हैं।"[4]

---

1. प्रेमचंद - पशु से मनुष्य - मानसरोवर - भाग-8 - पृ. 92-93
2. प्रेमचंद - इस्तीफा - मानसरोवर - भाग-5 - पृ. 271
3. प्रेमचंद - लैला - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 132
4. प्रेमचंद - दीक्षा - मानसरोवर - भाग-3 - पृ. 162

प्रेमचंद का शब्द भण्डार इतना विशाल है कि उसके लिए कोई सीमा निर्धारित करना मुश्किल ही है। भाषिक संरचना की मूल इकाई 'शब्द' के कमाल से भी उनकी कहानियाँ बेजोड़ है। तत्सम, तद्भव, देशज आदि का भी व्यावहारिक रूप व्यापक परिप्रेक्ष्य में उनकी कहानियों में दीख पड़ते हैं। 'नेउर', 'मिस पद्मा', 'घासवाली', 'जेल' आदि कहानियों में इसका स्पष्ट प्रभाव है। काव्य की भान्ति प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में वाणी की व्यंजकता एवं मनोहारिता लाने के लिए अलंकारों एवं शब्द शक्तियों का भी सफल प्रयोग किया है। यमक, उपमा, विशेषोक्ति, दृष्टान्त, भ्रान्तिमान अलंकारों का अवसरोचित प्रयोग कई स्थानों में पायी जाती है तो भी मुख्य रूप से अनुप्रास की सुन्दर छटा उनके संपूर्ण कथा-साहित्य में है। 'कुसुम' कहानी में तो 'अ' वर्णों की आवृत्ति से चमत्कार पैदा किया है।

कुसुम यों लिखती है - "स्वामी, क्या आपने सोचा है, आप यह क्रोध किस पर कर रहे हैं? वह अबला, जो आपके चरणों पर पड़ी हुई आपसे क्षमा-दान माँग रही है, जो जन्म-जन्मान्तर के लिए आपकी चेटी है, क्या वह क्रोध को सहन कर सकती है?"[1]

इस प्रकार के व्यापक प्रभाव को दृष्टि में रखकर हम कह सकते हैं कि प्रेमचंद की कहानियों की भाषा शैली उन्हें 'भाषा के उस्ताद' स्थापित करते हैं। प्रेमचंदीय भाषा साहित्यिक होते हुए भी व्यावहारिक, सरल, एवं मुहावरेदार है जो उनके विचारों एवं भावों की अनुगामिनी बनकर पाठकों के हृदय में हलचल मचाते हैं। प्रेमचंद की यह मान्यता 'हमारी भाषा का सीधा लगाव हमारी जनता से हैं' सही अर्थों में उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद शब्दबद्ध करते हैं।

---

1. प्रेमचंद - कुसुम - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 13

5.3 जयशंकर प्रसाद की कहानियों में प्रयुक्त भाषा की विशेषताएँ

भारतीय सांस्कृतिक चेतना के कहानीकार जयशंकर प्रसाद मूलतः कवि और बाद में नाटककार होने के कारण उनकी कहानियाँ, कहानियाँ होने के साथ-साथ काव्य और नाटक की जैसी प्रतीति देती है। कहानी साहित्य प्रसादजी के लिए मूलकेन्द्रित विधा तो नहीं था जैसे वह प्रेमचंद के लिए थी। प्रसादजी छायावादी संस्कारों के कवि होने के कारण उनकी कहानियों की सृजनभूमि काव्यात्मकता पर टिकी हुई है। उनकी कहानियों का शैल्पिक सौन्दर्य उनका अपना बनाया हुआ एक अलग संसार है। ऐसा एक संसार गढ़ने में उनकी भावमूलक भाषा का हाथ सर्वप्रथम ही है। क्योंकि प्रसादजी का भाषा पर असामान्य अधिकार था। उनकी इस भाषा कौशल को देखकर 'अज्ञेय का कथा साहित्य' के लेखक बताते हैं, "भाषा-शैली की दृष्टि से प्रसाद अत्यंत परिष्कृत एवं परिनिष्ठित भाषा-लेखक है।"[1] भाषा पर उनकी यह पकड़ उनके पूरे साहित्य-संसार को एक अनोखी भाव-भंगिमा प्रदान करते हैं। उनकी भाषा की सर्वप्रथम विशेषता विशुद्धता एवं भावुकता है। लेकिन अतिभावुकता कहानी में बाधक होती हैं। इसलिए प्रसादजी की कहानियों की भाषा के बारे में श्री. शिवदान सिंह चौहान कहते हैं, "प्रसादजी जितने भावुक गद्यकार है, उतने विशुद्ध कहानीकार नहीं है।"[2]

कहने का मतलब यह है कि प्रसादजी की कहानियों की भाषा भावात्मक होते हुए भी साहित्यिक एवं प्रतीकात्मक है जिसमें एक भावुक कवि एवं कुशल

---

1. ओम प्रभाकर - अज्ञेय का कथा-साहित्य - पृ. 118
2. शिवदान सिंह चौहान - हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष - पृ. 180

नाटककार का अर्थ गांभीर्य प्रतिबिम्बित है। इस अर्थ में विचार करने पर हम बता सकते हैं कि प्रसादजी की कहानियों का मुख्य आकर्षण और सौन्दर्य भाषाशैली पर ही केन्द्रित है। पहले संग्रहों में, यानी 'छाया' और 'प्रतिध्वनि' में संकलित कहानियों की भाषा शैली 'आकाश-दीप', 'आँधी' और 'इन्द्रजाल' की कहानियों की तुलना में उतनी खरी नहीं निकलती। क्योंकि उनमें प्रयुक्त भाषा काफ़ी हद तक अनगढ़ ही है। उनमें काव्यात्मक शब्दों से युक्त आभिजात भाषा का ही प्रयोग अधिक हुआ है। ये कहानियाँ भावलोक से अधिक निकट हैं। 'आँधी' और 'इन्द्रजाल' की कहानियाँ तो उनका आभिजात्य संस्कार युक्त गद्य भाषा का कमाल दर्शनीय है। 'सालवती' कहानी में वृद्ध और सालवती के बीच के संवाद में प्रसादजी का अभिजात संस्कार उसकी पूर्णता में देख सकते हैं।

वृद्ध ने कहा - "चौंक मत बेटी! मैं हिरण्य गर्भ का एक उपासक हूँ। देख, सदानीरा की शिलाओं में स्वर्ण की प्रचुर मात्रा है।"

"तो क्या पिताजी! तुमने इसलिए इन काले पत्थरों से झोंपड़ी भर रक्खी है?"[1]

इस प्रकार की भाषा-शैली कहानी को एक नाटकीय आख्यान बना देती है। ऐतिहासिक कहानियों में प्रयुक्त शिक्षित पात्रों के संवादों में प्रसादजी की यह आभिजात भाषा छायावादी काव्यभाषा के निकट आती है। 'स्वर्ग के खण्डहर में' कहानी में शेख और लज्जा के बीच के संवाद भाषा इस अर्थ में उल्लेखनीय है।

---

1. जयशंकर प्रसाद - सालवती - इन्द्रजाल - पृ. 360

उसने कहा - "तुम ठीक मेरे स्वर्ग की रानी होने के योग्य हो। यदि मेरे मत में तुम्हारा विश्वास हो, तो मैं तुम्हें मुक्त कर सकता हूँ। बोलो!"

'स्वर्ग! इस पृथ्वी को स्वर्ग की आवश्यकता क्या है, शेख? न, ना, इस पृथ्वी को स्वर्ग के ठेकेदारों से बचाना होगा। .....पृथ्वी को केवल वसुन्धरा होकर मानव जाति के लिए जीने दो, अपनी आकांक्षा के कल्पित स्वर्ग के लिए, क्षुद्र स्वार्थ के लिए इस महती को, इस धरणी को नरक न बनाओ, जिसमें देवता बनने के प्रलोभन में पड़कर मनुष्य राक्षस न बन जाय, शेख।"[1]

प्रसादजी की कहानीकला के समस्त तत्वों का सुनियोजित एवं श्रेष्ठ रूप उपर्युक्त संवाद की भाषाई कुशलता में हम देख सकते हैं। यहाँ उनकी भाषा काव्यात्मक एवं नाटकीय वक्रता से युक्त है। उससे बिलकुल भिन्न होकर उनकी सामाजिक कहानियों के ठेठ पात्रों की बातचीत में रोजमर्रा की स्थितियों के चित्रण करते समय भाषा अत्यन्त वेगवती, व्यावहारिक एवं लोकभाषा की शक्ति संपन्न ही है। 'मधुआ', 'ग्राम', 'गुदड़ी में लाल', 'गूदड़ साई' आदि कहानियों की भाषा में इस बात का सफल उदाहरण दर्शनीय है। 'गुदड़ी में लाल' की बुढ़िया के शब्दों में उसकी रोजमर्रा की स्थितियों का वास्तविक रूप देखने को मिलता है। बुढ़िया अपनी कोठरी में बैठी-बैठी विचारती थी, "जीवन भर के संचित इस अभिमान-धन को एक मुट्ठी अन्न की भिक्षा पर बेच देना होगा। असह्य! भगवान क्या मेरा इतना सुख भी नहीं देख सकते! उन्हें सुनना होगा।"[2]

---

1. जयशंकर प्रसाद - स्वर्ग के खंडहर में - आकाशदीप - पृ. 133
2. जयशंकर प्रसाद - गुदड़ी में लाल - प्रतिध्वनी - पृ. 80

बुढिया के मन में बसे आत्माभिमान का स्वाभाविक चित्रण करने में भाषा उपयुक्त ही रहा है। 'मधुआ' कहानी में मूल संवेदना को शब्दबद्ध करने में यथार्थ से जन्मी रोजाना की आम भाषा का ही प्रयोग हुआ है।

शराबी ने कहा - "ले उठ, कुछ खा ले, अभी रात का बचा हुआ है; और अपनी राह देख! तेरा नाम क्या है रे?

बालक ने सहज हँसी हँसकर कहा - 'मधुआ!' भला हाथ-मुँह भी न धोऊँ। खाने लगूँ? और जाऊँगा कहाँ?

"आह! कहाँ बताऊँ उसे कि चला जाय। कह दूँ कि भाड़ में जा; किन्तु वह आज तक दुःख की भट्‌टी में जलता ही रहा है।....."[1]

प्रस्तुत संवाद की भाषा में आम बोलचाल की लहजा, व्यंजनात्मकता और वाक्य विन्यास भी है तो चरित्र की पकड़ की दृष्टि से उपयुक्त है। इसीप्रकार 'गुण्डा' कहानी में गुण्डा नन्हकूसिंह के शब्दों में पात्रानुकूल भाव व्यंजकता उसके वैयक्तिक जीवन को शब्दबद्ध करने में काफ़ी सजग रहा है।

उसने कहा - "चुप रहो, तुम उसको जानकर क्या करोगी? ....दुलारी! जीवन में आज वह पहला ही दिन है कि एकान्त में एक स्त्री मेरे पलंग पर आकर बैठ गयी है, मैं चिरकुमार! अपनी एक प्रतिज्ञा का निर्वाह करने के लिए सैकड़ों असत्य, अपराध करता फिर रहा हूँ। क्यों? तुम जानती हो? मैं स्त्रियों का घोर विद्रोही हूँ और पन्ना! ....किन्तु उसका क्या अपराध।"[2]

---

1. जयशंकर प्रसाद - मधुआ - आँधी - पृ. 223-224
2. जयशंकर प्रसाद - गुण्डा - इन्द्रजाल - पृ. 344-355

यहाँ गुण्डा नन्हकूसिंह के मुँह से निकले एक-एक शब्द उसके पात्रगत प्रवृत्तियों के अनुरूप ही है। प्रसादजी की कुछ कहानियों की भाषा संस्कृत शब्दों के मधुर, भावात्मक एवं चित्रात्मक है जिसके ज़रिये उन्होंने पात्रों के भावों एवं चरित्रों का सुन्दर समन्वय किया है। 'आकाशदीप' कहानी की भाषा इसका उत्तम उदाहरण है। कहानी के संवादों के प्रत्येक शब्द पाठकों को उद्वेलित करने में सफल है।

चम्पा बुधगुप्त से कहती है - "बुधगुप्त! मेरे लिए सब मिट्टी हैं, सब जल तरल है, सब पवन शीतल है। कोई विशेष आकांक्षा हृदय में अग्नि के समान प्रज्ज्वलित नहीं। सब मिलाकर मेरे लिए एक शून्य है। प्रिय नाविक! तुम स्वदेश लौट जाओ, विभवों का सुख भोगने के लिए, और मुझे, छोड दो इन निरीह भोले-भाली प्राणियों के दुःख की सहानुभूति और सेवा के लिए।"[1]

भारतीय इतिहास-सम्मत और हमारी सांस्कृतिक चेतना से जुड़े पारिभाषिक शब्दावलियों से युक्त प्रस्तुत संवाद भाषा सहज संवेद्य, लाक्षणिक एवं स्वच्छन्द है। प्रसादजी की कुछ ऐतिहासिक कहानियों में तो उर्दु-मिश्रित भाषा का कमाल दर्शनीय है। 'गुलाम' कहानी के मंसूर के संवाद में उर्दु-मिश्रित शब्दावलियों का प्रयोग हैं।

मंसूर - "जहाँपनाह! वह तो गुलाम है। फकत हुजूर की कदमबोसी हासिल करने के लिए आया है। और, उसकी तो यही अर्जी है कि हमारे आका शाहशाह-हिंद एक काफिर के हाथ की पुतली न बने रहें। अगर हुक्म दें, तो क्या यह गुलाम वह काम नहीं कर सकता?"[2]

---

1. जयशंकर प्रसाद - आकाशदीप, आकाशदीप - पृ. 120
2. जयशंकर प्रसाद - गुलाम - छाया - पृ. 50

यहाँ प्रयुक्त भाषा प्रेमचंदीय भाषा के निकट संबन्ध रखती हैं। लेकिन कहीं-कहीं अतिशय शब्दाडम्बर-से युक्त भाषा संवाद को कृत्रिम तथा बोझीला बना देती है। 'शालवती' कहानी में सालवती और अभिनन्द के शब्दों में भाषा कृत्रिम-शब्दाडम्बर मात्र रह जाती है जो कहानी के स्तर को नीचे गिरा देती है।

अभिनन्द ने कहा - "कल्याणी! हम लोग आपका परिचय पाने के लिए उत्सुक हैं।"

"स्वर्गीय कुलपुत्र आर्य्य धवलयश की दुहिता सालवती के परिचय में कोई विचित्रता नहीं है।" सालवती ने गंभीरता से कहा - वह दुर्बल कटि पर पूर्ण कलश लिए कुछ रुक-सी गयी थी।"[1]

यहाँ स्वाभाविकता का बिलकुल अभाव दर्शनीय है। लेकिन भाषिक चमत्कार उत्पन्न करने की दृष्टि से तथा परिवेश को वाणी देने में भी संवादीय भाषा सशक्त एवं अलंकृत है। हिन्दी के तत्सम, तद्भव, देशज एवं विदेशी शब्दों का भी प्रयोग प्रचुर मात्रा में प्रसादजी की भाषा में पायी जाती है। 'अशोक', 'पाप की पराजय', 'दुखिया', 'ग्राम' आदि कहानियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। 'दुखिया' कहानी में ज़मीन्दार के शब्दों में कहीं-कहीं देशज शब्दों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है - "चुप हरामजादी! तभी तो तेरा मिजाज और बिगड़ा है। अभी बड़े सरकार के पास चलते हैं।"[2]

---

1. जयशंकर प्रसाद - सालवती - इन्द्रजाल - पृ. 364
2. जयशंकर प्रसाद - दुखिया - प्रतिध्वनी - पृ. 103

प्रसादजी की सामाजिक कहानियों में इस प्रकार के कई शब्द बात को प्रभावी बनाने के लिए प्रयुक्त किया है। अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग भी प्रसादजी की कहानियों में मिलते हैं। 'ग्राम' कहानी में मोहनलाल और स्टेशन मास्टर के संवाद में अंग्रेज़ी तथा देशी शब्दों का प्रयोग हुआ है।

मोहन - "कारिंदों ने इलाकों में बड़ा गड़बड़ मचा रक्खा है, इसलिये, मैं कुसुमपुर - जो कि हमारा इलाका है - इंस्पेक्शन के लिए जा रहा हूँ।

स्टे.मा. - फिर कब पलटियेगा?

मोहन - दो रोज़ में। अच्छा, गुड इवनिंग।"[1]

यहाँ प्रसादजी की भाषा पात्रानुकूल होने के कारण देशकाल एवं परिवेश को मुखरित करने में सफल हुआ है। शब्द शक्तियों का भी सुन्दर समन्वय उनकी कहानियों की भाषा में दर्शनीय है। 'मधुआ', 'जहाँनारा' जैसी कहानियों में इस बात का उदाहरण देख सकते हैं। 'जहाँनारा' कहानी में प्रसादजी लिखते हैं "पाषाण भी पिघला, औरंगज़ेब की आँखें आँसू से भर आयी और वह घुटने के बल पर बैठ गया।"[2]

प्रस्तुत संवाद में 'पाषाण भी पिघला' के प्रयोग से प्रसादजी में औरंगजेब के स्वार्थी, एवं कठोर मानसिकता की ओर इशारा किया है।

कहावतों और मुहावरों का भी सुन्दर प्रयोग प्रसादजी की भाषाई कौशल में अपना अलग पहचान रखते हैं। 'गुलाम', 'बेडी' आदि कहानियों में इसका प्रयोग

---

1. जयशंकर प्रसाद - ग्राम - छाया - पृ. 17
2. जयशंकर प्रसाद - जहाँनारा - छाया - पृ. 56

संवाद को प्रभावशाली बनाने में सहायक हुआ है। 'बेड़ी' कहानी के सूरदास कहते हैं - "बाबूजी, यह मेरा लड़का है - मुझे अंधे की लकड़ी है।"[1]

'गुलाम' कहानी में कादिर एक स्थान में बादशाह से कहता है, "मालूम होता है, सीधी उँगली से ही नहीं निकलेगा।"[2]

इसप्रकार देखने से उनकी भाषा कई बिन्दुओं को अपने में समेटने की शक्ति लिये हुए हैं। फिर भी मुख्य रूप से काव्यात्मकता का गुण कई स्थानों में उनकी कहानियों की भाषा को अलंकृत किया है। कहीं-कहीं काव्य पंक्तियों का सफल प्रयोग बीच-बीच में करके वर्णित विषय को प्रभावशाली बनाया है। 'प्रतिमा', 'ग्रामगीत', 'गुण्डा' आदि कहानियों में इस प्रकार के प्रयोग दिखाई देता है।

'प्रतिमा' कहानी में कुजननाथ आरती रखते समय कोई इस प्रकार गाता हुआ जा रहा था-

"सच कह दूँ में विरहमन गर तू बुरा न माने।
तेरे सनमकदे के बुत हो गये पुराने।"[3]

'ग्रामगीत' कहानी में बीच-बीच में कविता की पंक्तियाँ पात्रों की मानसिक स्थिति के अनुकूल वातावरण की सृष्टि करने के लिए प्रयुक्त किया है।

"अपने बाबा की बारी दुलारी,
खेलत रहली ऊँगनवाँ में बरजोरी बसे हो–

---

1. जयशंकर प्रसाद - बेड़ी - आँधी - पृ. 244
2. जयशंकर प्रसाद - गुलाम - छाया - पृ. 51
3. जयशंकर प्रसाद - प्रतिमा - प्रतिध्वनि - पृ. 104

.....

ई कुल बतियाँ कबौ नाही जनली,

देखली कबौं न सपनवाँ में।

बरजोरी बसे हो–"[1]

कहानी में पगली रोहिणी के मुँह से निकलनेवाली इस गीत के ज़रिये प्रसादजी ने उसके मानसिक स्थिति विशेष को वाणी दी है। प्रसादजी मूलतः कवि थे, इसलिए उनकी कहानियों का विश्लेषण करते समय उनके छायावादी कवि व्यक्तित्व को नकारा नहीं जा सकता।

प्रतीकात्मक रचना विधान तो प्रसादजी की कहानियों का अभिन्न अंग है। इसका उत्कृष्ट उदाहरण 'बिसाती' कहानी में देखने को मिलता है। शीरी और सरदार का वार्तालाप इस ओर संकेत करता है।

"एक मेरा पालतू बुलबुल शीत में हिन्दुस्तान की ओर चला गया था। वह लौटकर आज सबेरे दिखलाई पड़ा। पर जब वह पास आ गया तो मैं ने उसे पकड़ना चाहा, मगर वह कोहकाफ की ओर भाग गया!".....

सरदार ने हँसकर कहा–

"फूल को बुलबुल की खोज? आश्चर्य है!"[2]

---

1. जयशंकर प्रसाद - ग्रामगीत - आँधी - पृ. 253
2. जयशंकर प्रसाद - बिसाती - आकाश दीप - पृ. 195

यहाँ उपर्युक्त प्रतीक-योजना के माध्यम से प्रसादजी ने शीरी के आन्तरिक मन को वाणी दी है। सरदार के शब्दों में उसके साथ व्यंग्य का पुट भी दर्शनीय है। नाटकीय सौन्दर्य से युक्त उनकी कहानियों के कलेवर से भाषा संबन्धी कोई भी चमत्कार अछूता नहीं रहा है। उनकी भाषा सदैव उत्सुकता और चमत्कार युक्त ही है। इसके संबन्ध में 'कहानी उद्‌भव और विकास' में लेखक कहते हैं "नाटककार होने के कारण उनके कथोपकथन में नाटकीय सौंदर्य और अर्थ-गंभीर्य मिलता है। साथ ही उनसे घटना-विकास और पात्रों के चरित्र विकास पर भी प्रकाश पड़ता है। उत्सुकता और कुतूहल द्वारा वे कहानी का सौंदर्य बढ़ा देते हैं। शब्द-चयन, वाक्य विन्यास आदि की दृष्टि से उनकी भाषा में सौष्ठव और परिमार्जन है।"[1]

प्रसादजी ने अपनी कहानियों में सांस्कृतिक तत्वों की गरिमा दिखाते हुएच कवित्व, प्रवाहात्मकता, चित्रोपमता एवं रोमान्टिक भावुकता की पूर्ण रक्षा की है। उनकी कहानियों में पात्रों के चरित्र की अपेक्षा उनके व्यक्तित्व एवं भावों की ही प्रधानता रहती है। इसलिए उनकी कहानियाँ मुख्य रूप से मानव हृदय में हलचल मचाने वाली ही हैं। प्रकृति एवं अतीत के पुजारी होने के कारण प्राकृतिक दृश्यों और परिवेश के चित्रण में उनकी भाषा प्रायः चित्रमय हो जाती थी। प्रकृति का इतना रोचक चित्र शायद ही किसी अन्य कहानीकारों की भाषा शैली में पायी जाती है। इसके संबन्ध में 'हिन्दी के प्रमुख कहानीकार' नामक पुस्तक में लेखक बताते हैं "प्रसाद की कहानी की भाषा-शैली में कवि की कल्पना, नाटककार का विश्लेषण और निबंधकार के चिन्तन-तीनों का सुन्दर समन्वय है।"[2] यही प्रसादजी की

---

1. डॉ. सुरेश सिन्हा - कहानी : उद्‌भव और विकास - पृ. 359
2. श्री राजनाथ शर्मा - हिन्दी के प्रमुख कहानीकार - पृ. 47

कहानियों की वास्तविक पहचान है। उनकी कहानियों के मूल में काव्य और नाटक की परिष्कृत भावनाओं की विराट चेतना कार्यरत है। कई कहानियों में पात्रों की मूढ़ता, वाचालता, मानसिक घात-प्रतिघातों, एवं अन्तर्द्वन्द्वों को अपूर्व वाक्य विन्यासों द्वारा भाषिक अभिव्यक्ति प्रदान की है। पात्रों के अन्तर्मन के विचारों को मौन के रूप में भी उन्होंने सफल अभिव्यक्ति दी है। 'गुण्डा' कहानी के दुलारी के संवादों में इसप्रकार के भाषाई कौशल देख सकते है - "नहीं, मैं कुछ कहने आयी हूँ।"

"क्या?"

"क्या..... यही कि..... कभी तुम्हारे हृदय में....."[1]

गुण्डा नन्हकू सिंह के प्रति मौन अनुराग जो दुलारी के मन में छिपा हुआ है, उसकी भावात्मक अभिव्यक्ति अपूर्ण वाक्यांशों द्वारा दी गया है। वास्तव में भावों के सूक्ष्म विवेचन में इस प्रकार के संवाद ज़्यादा प्रभावशाली ही है।

प्रेमचंद ने अपनी अनेकरूपिणी व्यावहारिक - जनवाणी के ज़रिये सब कुछ कह डाला है तो प्रसादजी ने अपनी काव्यात्मक, नाटकीय एवं प्रतीकात्मक भाषाई कौशल से काफ़ी कुछ पाठकों को सोचने के लिए छोड़ दिया है। प्रेमचंद ने विवरणों को प्रधानता दिया है तो प्रसादजी ने भाव को प्रधानता दिया है। प्रेमचंद में गद्य की छटा अधिक है तो प्रसाद में गद्य-काव्यात्मकता ज़्यादा दीप्तमान है।

5.4 प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों की कथन शैली परक अन्तर

किसी भी बात को कहने या लिखने के विशेष ढंग या तरीके को शैली कहते हैं। साहित्य की सभी विधाओं में लेखन को प्रभावशाली बनाने के लिए

---

1. जयशंकर प्रसाद - गुण्डा - इन्द्रजाल - पृ. 344

विभिन्न शैलियों का सफल प्रयोग साहित्यकार करते हैं जो उनकी सृजनात्मक कुशलता का परिचायक है। हिन्दी कहानियों में तो विभिन्न शैलियाँ पायी जाती हैं। वस्तु और भाव के अनुरूप कहानीकार विभिन्न शैलियों को अपनाते हैं। प्रयुक्त शैली की उपयुक्तता के अभाव में रचना अपरिपक्व या अव्यवस्थित हो जायगी। कहानी की शैली केवल भाषा तक ही सीमित नहीं है, बल्कि समस्त रचना प्रक्रिया के साधनों तक इसका एक व्यापक धरातल है। एक तरह से देखने से कहानी में प्रयुक्त शैली, कहानी शिल्प का एक छोटा रूप ही है।

प्रत्येक रचनाकार अपनी क्षमता एवं उद्देश्य के अनुरूप कहानी का सृजन करते हैं। इस सृजन को अलंकृत एवं परिष्कृत करने के लिए कहानीकार विभिन्न शैलियों का सफलतापूर्वक आयोजन करते हैं। मुख्य रूप से वर्णनात्मक, आत्म-कथात्मक, संवादात्मक, नाटकीय, डायरी, काव्यात्मक, स्मृतिपरक, मनोविश्लेषणात्मक एवं पत्रात्मक शैलियों का प्रयोग हिन्दी कहानियों में पायी जाती है। शैली चाहे जो भी हो, उसमें आलंकारिकता, प्रवाहात्मकता, प्रतीकात्मकता, व्यंग्यात्मकता और आँचलिकता के गुण होने से कहानी के सौंदर्य पक्ष में वृद्धि होती है। कहानी कहने का ढंग, कथावस्तु के सौंदर्य को काफ़ी हद तक प्रभावित करते हैं। मतलब यह है कि शैली का सीधा संबन्ध, कहानी शिल्प से ही है। शिल्प जितना सुदृढ़ एवं परिपक्व होगा, शैली उतनी उपयुक्त होगी। इसलिए शैली और कथावस्तु का अभिन्न संबन्ध होता है।

5.5 प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त विभिन्न शैलियाँ

प्रेमचंद ने अपने विराट कहानी-साहित्य में कहानी कला में प्रयुक्त सभी शैलियों का सफल प्रयोग किया है। मुख्य रूप से उनकी कहानियों में आत्मकथात्मक शैली, नाटकीय शैली, संवादात्मक शैली, लघुकथात्मक शैली, भाषणशैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली, पत्रात्मक शैली आदि का प्रयोग दर्शनीय है। इन सभी के मूल में उनकी अनेकरूपिणी भाषाई कुशलता का हाथ सर्वप्रथम है।

आत्मकथात्मक शैली

प्रेमचंद की आत्मकथात्मक शैली में लिखी गई कहानियों में 'यह मेरी मातृभूमि है', 'हार की जीत', 'शाप', 'बडे घर की बेटी', 'नशा, 'कजाकी', 'विमाता' आदि महत्वपूर्ण है। 'यह मेरी मातृभूमि है' में आत्मकथात्मक शैली का अद्‌भुत सौंदर्य दर्शनीय है। व्यक्ति-सत्य का पूर्ण आभास इस कहानी में पायी जाती है–

"मैं विशेष आनंद में मग्न था। मैंने अपना पुराना कोट और पतलून उतारकर फेंक दिया और गंगा माता की गोद में जा गिरा, जैसे कोई भोला-भाला बालक दिन भर निर्दय लोगों के साथ रहने के बाद संध्या को अपनी प्यारी माता की गोद में दौड़कर चला आये और उसकी छाती से चिपट जाय।"[1]

यहाँ मातृभूमि के प्रति असीम वात्सल्य एवं ममता के दर्शन होते हैं। यहाँ व्यक्ति चेतना ही मुखरित है।

---

1. प्रेमचंद - यह मेरी मातृभूमि है - मानसरोवर भाग-6 - पृ. 12

आत्म विश्लेषणात्मक शैली : प्रेमचंद की लिखी 'ब्रह्म का स्वांग' कहानी में आत्म विश्लेषणात्मक शैली का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। इसमें कालबद्ध जीवन की घटनाओं का विश्लेषण होता है।

"स्वामी ने सिद्धान्त और व्यवहार में अन्तर स्पष्ट करते हुए व्यावहारिक ज्ञान की शिक्षा यों दी है – ".....जब उसकी आज्ञा के बिना एक पत्ता भी नहीं हिल सकता, तो इतनी महान, सामाजिक व्यवस्था उसकी आज्ञा के बिना क्यों कर भंग हो सकती है? जब वह स्वयं सर्वव्यापी है तो वह अपने ही को ऐसे-ऐसे घृणोत्पादक अवस्थाओं में क्यों रखता है?"[1]

यहाँ व्यक्ति के हृदय - जगत् के भीतर चल रहे कार्य व्यापारों को आत्म विश्लेषणात्मक प्रवृत्ति द्वारा स्पष्ट किया गया है।

नाटकीय शैली : कथावस्तु को आकर्षक तथा रोचक बनाने के लिए प्रेमचंद ने नाटकीय शैली का भी प्रयोग किया है। प्रहसन के रूप में लिखी गई 'दुराशा' कहानी में इसका सफल उदाहरण देखने को मिलता है।

दयाशंकर - "निस्सन्देह वह समय आकस्मिक है। इस दशा में तुम्हारे जाने में कोई हस्तक्षेप नहीं।

सेवती - और भी आकस्मिक समय गिनाऊँ?

दयाशंकर - नही भाई, इसका फैसला तुम्हारी वृद्धि पर निर्भर है।

---

1. प्रेमचंद - ब्रह्म का स्वांग - मानसरोवर भाग-8 - पृ. 119

आनन्दमोहन - मित्र, संतोष की सीमा तो अन्त हो गयी। अब प्राण-पीड़ा हो रही है। ईश्वर करे, घर आबाद रहे, बिदा होता हूँ।"[1]

यहाँ मित्रों के संवादों में नाटकीय वस्तु-विधान दर्शनीय है। पूरी कहानी इसी शैली में लिखी गई है। भोजन के प्रति मित्रों के मन में हुई दुराशा की सफल अभिव्यक्ति नाटकीय वातावरण में रोचकता के साथ चित्रित किया है।

भावात्मक शैली : प्रेमचंद की कई कहानियों में भावात्मक शैली का सुन्दर प्रयोग हुआ है। 'ईदगाह', 'मुक्तिमार्ग' आदि कहानियाँ भावात्मक शैली की सफल अभिव्यक्ति देती है। 'ईदगाह' के हामिद के मुँह से निकलने वाले शब्दों में तो उसके कठोर जीवन अनुभवों की ओर भावात्मक अभिव्यक्ति दी है।

"अमीना ने छाती पीट ली। यह कैसा बेसमझ लड़का है कि दोपहर हुआ, कुछ खाया न पिया। लाया क्या, चिमटा। सारे मेले में तुझे और कोई चीज़ न मिली, जो यह लोहे का चिमटा उठा लाया?

हामिद ने अपराधी भाव से कहा-

"तुम्हारी उँगलियाँ तवे से जल जाती थी, इसलिए मैं ने इसे लिया।"[2]

प्रस्तुत संवाद के ज़रिये प्रेमचंद ने छोटे हामिद के चरित्र के उज्ज्वल पक्ष का भावात्मक चित्रण किया है।

---

1. प्रेमचंद - दुराशा - मानसरोवर भाग-6 - पृ. 236
2. प्रेमचंद - ईदगाह - मानसरोवर भाग-1 - पृ. 38

संवादात्मक शैली : प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त सबसे प्रभावी एवं आकर्षक शैली संवादात्मक शैली ही है। संवादों की सफलता ही उनकी कहानियों की विशिष्टता का आधार है।

'धर्म-संकट' कहानी में आरंभ में ही संवादात्मक प्रणाली को अपनाई गई है।

"पुरुषों और स्त्रियों में बड़ा अन्तर है। तुम लोगों का हृदय शीशे की तरह कठोर होता है और हमारा हृदय नरम। वह विरह की आँच नहीं सह सकता।"

"शीशे ठेस लगाते ही टूट जाता है। नरम वस्तुओं में लचक होती है।...."[1]

उपर्युक्त आरंभिक संवाद से ही कथावस्तु का पर्दाफाश होते है, पात्रों के चरित्र की ओर इशारा मिलते हैं और वातावरण की ओर भी संकेत दिया गया है।

भाषणशैली : 'आभूषण' कहानी में भाषणशैली का सफल आयोजन हुआ है। कथ्य पक्ष को प्रभावशाली बनाने के लिए लम्बे-लम्बे भाषणों के ज़रिये कथा को आगे बढ़ाने की कोशिश की गई है।

"जब किसी पथिक को चलते-चलते ज्ञात होता है कि मैं रास्ता भूल गया हूँ, सो वह सीधे रास्ते पर आने के लिए बड़े वेग से चलता है। झुँझलाता है कि मैं इतना असावधान क्यों हो गया? सुरेश भी अब शान्ति-मार्ग पर आने के लिए विकल हो गये। .....अन्त में उन्होंने लिखा - "अब उस रत्न की खोज में स्वयं जाता हूँ। या तो लेकर ही आऊँगा, या कहीं मुँह में कालिख लगा कर डूब मरूँगा।"[2]

---

1. प्रेमचंद - धर्म संकट - मानसरोवर भाग-8 - पृ. 35
2. प्रेमचंद - आभूषण - मानसरोवर भाग-6 - पृ. 132-133

इस प्रकार की लिखी गई कहानियाँ ज्यादा लम्बी होती हैं। इसलिए वे नीरस वर्णनों की भरमार रह जाती हैं। पाठकों को आकर्षित करने की क्षमता उनमें बहुत कम है। ये कहानियाँ पढ़ने से पाठक सचमुच ऊब जाते हैं।

पत्रात्मक शैली : प्रेमचंद ने अपनी कुछ कहानियों में पत्रात्मक शैली को भी अपनाया है। 'कुसुम', 'विनोद', 'आहुति', 'दो सखियाँ' आदि में इसके उत्तम नमूने दर्शनीय है। 'दो सखियाँ' नामक कहानी में पात्रोचित भावनाओं तथा रहस्यों के उद्‌घाटन के लिए दो सखियों के आपसी पत्र व्यवहार को ही आधार बनाया है। पूरी कहानी इस प्रकार के आपसी पत्रों के ज़रिये आगे बढ़ती है।

मंसूरी - 5-8-25

प्यारी चन्दा,

सैकड़ों बातें लिखनी है, किस क्रम से शुरू करूँ, समझ में नहीं आता। सबसे पहले तुम्हारे विवाह के शुभ अवसर पर न पहूँच सकने के लिए क्षमा चाहती हूँ। .....ये सभी बातें विस्तार से लिखना। देखें, फिर कब मुलाकात होती है।

तुम्हारी,

पद्‌मा[1]

दोनों सखियों के बीच की गाढ़ी मित्रता, उनकी कोमल भावनाएँ आदि को पत्रात्मक संवाद द्वारा शब्दबद्ध किया गया है। इसमें भावनाओं का आदान-प्रदान ही मुख्य रूप से दर्शनीय है।

---

1. प्रेमचंद - दो सखियाँ - मानसरोवर - भाग-4 - पृ. 179-180

डायरी शैली : यह शैली एक तरह से आत्मकथा लेखन के अन्तर्गत आती है। एक अन्तर्मुखी व्यक्तित्व की पहचान इस प्रकार की शैलियों की विशेषता है। 'पंडित मोटेराम की डायरी' कहानी इसका एक सफल उदाहरण है। इस लम्बी कहानी में पंडित मोटेराम ने अपने जीवन की कथा, संवादों, आत्मकथनों और वर्णनों द्वारा अभिव्यक्त किया है।

"चलने को तो चला; लेकिन हृदय मेरा भी काँपता था। प्रयाग तक तो मेरा मन ठिकाने रहा; लेकिन जब फिर भी बम्बई का कहीं पता न चला, तो मुझे रोना आ गया। भगवान! यह तो कालापानी है। दिन-भर चला, बम्बई नदारद।....."[1]

यहाँ आत्माभिव्यक्ति तथा आत्म कथन द्वारा कहानी में चरित्रांकन की सफल अभिव्यक्ति हुई है।

मनोविश्लेषणात्मक शैली : प्रेमचंद की कहानी-कला में प्रयुक्त वैविध्यपूर्ण शैलियों में मनोविश्लेषणात्मक प्रणाली का भी सुन्दर प्रयोग दर्शनीय है। 'कफ़न', 'मनोवृत्ति', 'नशा', 'बडे भाई साहब' आदि कहानियों में इस शैली के सुन्दर नमूने मिलते हैं। 'मनोवृत्ति' कहानी के एक उदाहरण इस प्रकार है। प्रातःकाल गाँधी पार्क में नींद में सोयी एक युवती को देखकर वहाँ आए लोगों के विभिन्न प्रकार के संदेहों का मनोविश्लेषमात्मक ढंग से प्रेमचंद ने चित्रित किया है।

....."है किसी भले घर की लड़की।"

"वेश्या है साहब, आप इतना भी नहीं समझते।"

---

1. प्रेमचंद - पंडित मोटेराम की डायरी - कफ़न संग्रह - पृ. 120

"वेश्या इतनी फूहड़ नहीं होती।"

"और भले घर की लड़कियाँ फूहड़ होती है?"

"नयी आज़ादी है, नया नशा है।"[1]

यहाँ संवाद द्वारा समाज की विभिन्न विचारधाराओं की ओर संकेत किया गया है। एक छोटी सी घटना का मनोविश्लेषणात्मक ढंग से विवेचन किया गया है।

इस प्रकार विचारने से पता चल जाते हैं कि प्रेमचंद की कहानियाँ शैल्पिक दृष्टि से भी अद्वितीय है। तत्कालीन कहानी-साहित्य में प्रयुक्त सभी शैलियों का सफलतापूर्वक आयोजन उन्होंने अपनी कहानियों में कर कहानियों को परसंवेद्य बनाया है। कहानी कला का ऐसा कोई भी तत्व नहीं है जो उनकी कहानियों के कलेवर से अलग रहा हो। प्रेमचंद की कहानियों का क्षेत्र, शैली और विषय-वैविध्य की दृष्टि से विस्तृत एवं व्यापक है। इन सब शैलियों के प्रयोग से प्रेमचंद ने मानवीय अनुभूतियों को एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में कहानियों में उभारने की कोशिश की है।

5.6 जयशंकर प्रसाद की कहानियों में प्रयुक्त विभिन्न शैलियाँ

जयशंकर प्रसाद ने अपनी कहानियों में विभिन्न शैलियों को न केवल प्रमुखता दी है वरन् उसे अपनी कहानियों की सफलता के आधारभूत तत्व के रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने अपनी कहानियों में मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि को ही प्रमुखता दी है। फिर भी मुख्य रूप से प्रसादजी की कहानियों में वर्णनात्मक शैली,

---

1. प्रेमचंद - मनोवृत्ति - मानसरोवर - भाग-1 - पृ. 278

आत्म कथात्मक शैली, संवादात्मक शैली, पत्रात्मक शैली, काव्यात्मक शैली, स्मृतिपरक शैली, मनोविश्लेषणात्मक शैली और सूक्तिपरक शैली का सुन्दर समन्वय पायी जाती है।

वर्णनात्मक शैली : प्रसादजी की अधिकांश कहानियों में इसका प्रयोग दर्शनीय है। इस शैली में कहानी तरल आवेंगों के साथ आगे बढ़ती है। पात्रों के विचारों एवं कहानीगत घटनाओं को वर्णनों द्वारा गतिशीलता प्रदान करने की विशेषता इनमें पायी जाती है। इस प्रकार की शैली में उनका कहानीकार व्यक्तित्व ज़्यादा सजग दिखाई देता है। 'आकाश दीप', 'रूप की छाया', सालवती, आदि कई कहानियों में इस प्रकार के वर्णनों द्वारा कहानीगत वातावरण की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया गया है। 'रूप की छाया' कहानी में, कहानी के आरंभ में दिये गए वर्णनों द्वारा कहानी की ओर पाठकों में रुचि पैदा करने की कोशिश की गई है।

"काशी के घाटों की सौध श्रेणी जाह्नवी के पश्चिम तट पर धवल शैलमाला-सी खड़ी है। उनके पीछे दिवाकर छिप चुके। सीढ़ियों पर विभिन्न वेशभूषा वाले भारत के प्रत्येक प्रान्त के लोग टहल रहे हैं। कीर्तन, कथा और कोलाहल से जाह्नवी - तट पर चहल-पहल है।"[1]

कहानी के आरंभ में ही इस प्रकार के वर्णन पढ़कर पाठक भावविभोर हो जाते हैं। वातावरण को शब्दबद्ध करते में इस शैली का ज़्यादा महत्व है।

आत्मकथात्मक शैली : आत्मकथात्मक शैली का भी सुन्दर समन्वय भी प्रसादजी की कहानी कला में पायी जाती है। अधिकतर प्रथम पुरुष में लिखी गई इस प्रकार

---

1. जयशंकर प्रसाद - रूप की छाया - आकाशदीप - पृ. 183

की कहानियों में केवल एक ही पात्र-विशेष पर बल देता है। 'चित्रवाले पत्थर' कहानी इसका एक उत्तम नमूना प्रस्तुत करती है। "मैं राजमहल का कर्मचारी था। उन दिनों मुझे विन्ध्य शैल-माला के एक उजाड़ स्थान में सरकारी काम से जाना पड़ा। भयानक वन-खंड के बीच, पहाड़ी से हटकर एक छोटी-सी डाक बँगलिया थी। मैं उसी में ठहरा था। वही की एक पहाड़ी में एक प्रकार का रंगीन पत्थर निकला था। मैं उनकी जाँच करने और तब तक पत्थर की कटाई बंद करने के लिए वहाँ गया था।"[1]

इस प्रकार की शैली में पात्र स्वयं अपने अनुभव को प्रस्तुत कर रहा है। पात्रों के मानसिक भावों के चित्रण की ओर इस शैली में ज़्यादा ध्यान दी जाती है।

नाटकीय शैली : प्रसादजी के कहानी लेखन में सबसे प्रभावी एवं सफल शैली नाटकीय कथन शैली है। अनेक स्थानों पर इस शैली का सुन्दर प्रयोग कर प्रसादजी ने अपनी कहानियों को अलंकृत किया है। पाठकों के मन में उत्सुकता एवं रोचकता पैदा करने में यह शैली सबसे ज़्यादा सक्षम है। 'परिवर्तन' कहानी का एक उदाहरण इस प्रकार है-

उसने चलते-चलते पूछा - "भला, तुझे दुल्हा कहाँ से मिल गया?"

"ओहो, तब आप क्या जानें कि हम लोगों के बयाह की बात पक्की हुए आठ बरस हो गये? नीलधर चला गया था, लखनऊ कमाने, और मैंने भी हर साल यही नौकरी करके कुछ-न-कुछ यही पाँच सौ रुपये बचा लिए हैं। अब वह भी एक

---

1. जयशंकर प्रसाद - चित्रवाले पत्थर, इन्द्रजाल - पृ. 323

हज़ार और गहने लेकर परसों पहुँच जायगा। फिर हम लोग ऊँचे पहाड़ पर अपने गाँव में चले जायेंगे। वहीं हम लोगों का घर बसेगा।.....[1]

यहाँ नाटकीय वातावरण की सृष्टि कर प्रसादजी ने कहानी की कथावस्तु का क्रमिक विकास किया है। पात्रों के मनोभावों एवं चरित्रगत विशेषताओं की ओर भी संकेत मिलते हैं। प्रसादजी की कहानियों में प्रयुक्त संवाद सब कहीं नाटकीय गुणों से युक्त ही है।

संवादात्मक शैली : इस प्रकार की कहानियों में संवाद या वार्तालाप द्वारा ही पूरी कहानी बुनी गई है। कथानक का क्रमिक विकास, पात्रों के चरित्र चित्रण, वातावरण की अभिव्यक्ति आदि कहानीगत सभी तत्वों के सफलतापूर्वक आयोजन के लिए संवादात्मक शैली उपयुक्त एवं प्रभावी होती है। वास्तव में प्रसादजी की संवादात्मक शैली की कहानियाँ ज़्यादा सफल मानी जाती हैं। संवाद-योजना उनके कहानी-शिल्प का अभिन्न अंग ही है। 'अघोरी का मोह', 'आकाशदीप', 'मधुआ', 'पुरस्कार' आदि कई कहानियों में इसका सटीक प्रयोग कहानी को प्रेषणीय बनाने में सहायक निकला है। 'आकाश-दीप' का एक उदाहरण इस प्रकार है–

"तुम्हें इन लोगों ने बंदी क्यों बनाया?"

"वणिक् मणिभद्र की पाप-वासना ने।"

"तुम्हारा घर कहाँ है?"

---

1. जयशंकर प्रसाद - परिवर्तन - इन्द्रजाल - पृ. 311

"जान्हवी के तट पर। चंपा नगरी की एक क्षत्रिय बालिका हूँ। पिता इसी मणिभद्र के यहाँ प्रहरी का काम करते थे। माता का देहावसान हो जाने पर मैं भी पिता के साथ नाव पर ही रहने लगी।".....

"मैं भी ताम्रालिप्ति का एक क्षत्रिय हूँ, चम्पा। परन्तु दुर्भाग्य से जलदस्यु बनकर जीवन बिताता हूँ। अब तुम क्या करोगी?"[1]

प्रसादजी की कहानियों के संवाद कहानी तथा पात्रों को गतिशील बनाने में सक्रिय ही है। चरित्रोद्‌घाटन तथा आगामी कथा की ओर सूचना देने का काम प्रस्तुत संवाद द्वारा संपन्न होते हैं।

पत्रात्मक शैली : पत्रात्मक शैली का भी सुन्दर प्रयोग प्रसादजी की कहानियों में पायी जाती है। आपसी संबन्ध रखने वाले दो पात्रों के बीच के पात्र के माध्यम से कहानी आगे बढ़ती है। 'देवदासी' कहानी इस शैली में लिखी गई है।

'.....'

28-3-25

"प्रिय रमेश!

तुम्हारा उलाहना निस्सार है। मैं इस समय केवल पदमा को समझ सकता हूँ। फिर अपने या तुम्हारे कुशल-मंगल की चर्चा क्यों करूँ? तुम उसका रूप-सौंदर्य पूछते हो, मैं उसका विवरण देने में असमर्थ हूँ। हृदय में उपमाएँ नाचकर चली जाती हैं, ठहरने नहीं पाती कि मैं लिपि बद्ध करूँ।.....[2]

---

1. जयशंकर प्रसाद - आकाशदीप - आकाशदीप - पृ. 114
2. जयशंकर प्रसाद - देवदासी - आकाशदीप - पृ. 154

यहाँ अशोक के कथन में दोनों मित्रों के आपसी संबन्धों की ओर स्पष्ट संकेत मिलते हैं। एक प्रकार के आत्मोल्लेख की भावना इस प्रकार की शैलियों में छिपी रहती है।

काव्यात्मक शैली : प्रसादजी की कई कहानियों में काव्यात्मक शैली का प्रयोग हुआ है जिसमें उनका कवि व्यक्तित्व जाग उठता है। भाव-प्रधान कहानियों में काव्यात्मकता को ही उन्होंने प्रमुखता दी है। इस प्रकार की शैलियों में अनेक स्थानों पर वर्णनों तथा संवादों के बीच गीतों एवं काव्य पंक्तियों का समावेश पायी जाती हैं। मुख्य रूप से संस्कृत, उर्दु, व्रजभाषा आदि के गीतों का ही प्रयोग कहानी को गतिशील बनाने के लिए किया गया है। 'ग्राम गीत' कहानी में कथ्य पक्ष को प्रभावी बनाने के लिए बीच-बीच में व्रजभाषा में रचित एक प्रेम गीत का प्रयोग किया गया है।

"पगली रोहिणी गा उठी।
"ढीठ ! बिसारे बिसरत नाहीं
कैसे बँसू जाय बनवाँ मों,
बनजोरी बसे हो....."[1]

पगली रोहिणी के हृदय की मार्मिक व्यथा की सफल अभिव्यक्ति के लिए उपर्युक्त काव्य पंक्तियों का प्रयोग किया है।

स्मृति परक शैली : इस प्रकार की कहानियों में पात्र अपनी स्मृति के सहारे अतीत में घटित घटनाओं को व्यक्त करते हैं। कहानी में कलात्मकता से युक्त आकर्षणीयता पैदा करने में स्मृतिपरक शैली सहायक सिद्ध होती है। 'सन्देह', 'मदन-मृणालिनी',

---

1. जयशंकर प्रसाद - ग्रामगीत - आँधी - पृ. 256

'ग्राम-गीत' आदि कहानियों में यह शैली पायी जाती है। 'सन्देह' कहानी में मोहन बाबू के संवाद में उनकी स्मृतियों की अभिव्यक्ति होती है।

"सचमुच मैं देख रहा था। गंगा की घोर धारा पर बजरा फिसल रहा था। नक्षत्र बिखर रहे थे। और एक सुन्दरी युवती मेरा आश्रय खोज रही थी। अपनी सब लज्जा और अपमान लेकर वह दुर्वह सन्देह-भार से पीड़ित स्त्री जब कहती थी कि आप देखते हैं न', तब वह मानो मुझसे प्रार्थना करती थी कि कुछ मत देखो, मेरा व्यंग्य - अपहास देखने की वस्तु नहीं।"[1]

यहाँ पात्र की मानसिक भावनाओं को स्मृति के सहारे वाणी दी गई है। चरित्रांकन की दृष्टि से यह शैली सफल मानी जाती है।

मनोविश्लेषणात्मक शैली : कहानी की सफल शैलियों में से एक है मनोविश्लेषणात्मक शैली। इसका सफल प्रयोग प्रसादजी ने अपनी कई कहानियों में किया है। इसका सौन्दर्य पूरी कहानी को आकर्षक बना देती है। 'आँधी' कहानी में भिक्षु और लैला के बीच के संवाद में भिक्षु की मनःस्थितियों का मनोविश्लेषणात्मक चित्रण दर्शनीय है।

"तो आप ब्याह करेंगे?"

"क्यों नहीं, वही करने तो जा रहा हूँ।"

"देखता हूँ, स्त्रियों पर आपको पूर्ण विश्वास है।"

"अविश्वास करने का कारण ही क्या है? इतिहास में, आख्यायिकाओं में कुछ स्त्रियों और पुरुषों का दुष्ट-चरित्र पढ़कर मुझे अपनी भावी सहधर्मिणी पर

---

1. जयशंकर प्रसाद - सन्देह - इन्द्रजाल - पृ. 316

अविश्वास कर लेने का कोई अधिकार नहीं? प्रत्येक व्यक्ति को अपनी परीक्षा देनी चाहिए।.....[1]

यहाँ भिक्षु के कथन में उनके दार्शनिक विचारों की अभिव्यक्ति पाठकों को मिलने के साथ उनकी अपनी वास्तविक मनःस्थिति की ओर भी स्पष्ट संकेत है।

सूक्तिशैली : यह प्रसादजी की प्रिय शैली मानी जाती है। इसकी सुन्दर अभिव्यक्ति उनकी कई कहानियों में हुई है। कथावस्तु को मज़बूत बनाने की दृष्टि से इस शैली का अपना महत्व है। उनके द्वारा प्रयुक्त सूक्तियाँ मानवीय जीवन सत्यों के प्रतिपादन में महत्वपूर्ण है। 'आँधी', 'परिवर्तन', 'देवरथ' आदि कहानियों में इस प्रकार की सूक्तियों का उल्लेख किया गया है।

'आँधी' कहानी में विरक्त भिक्षु यों कहता है–

"संसार के कर्मों को धार्मिकता के साथ करने में सुख की ही संभावना है।"[2]

यहाँ प्रसादजी भिक्षु द्वारा धार्मिकता का सार बता रहे हैं। 'देवरथ' कहानी में सुजाता का इस कथन, "यौवन काषाय से कहीं छिप सकता है?"[3] में, वास्तव में लौकिक जीवन की सुख सुविधाओं की ओर झुकाव का संकेत देता है। इसी कहानी के अन्त में प्रसादजी सुजाता के कथन द्वारा सचमुच विकृत हुए वज्रयानी धर्म के पतन को वाणी देने के साथ यह भी बताना चाहते हैं कि किसी भी धर्म के

---

1. जयशंकर प्रसाद - आँधी-आँधी - पृ. 205-206
2. वही - पृ. 206
3. जयशंकर प्रसाद - देवरथ - इन्द्रजाल - पृ. 350

मूल में मनुष्यता ही कार्यरत होती है – "मनुष्यता का नाश करके कोई धर्म खड़ा नहीं रह सकता।"[1]

प्रसादजी ने प्रस्तुत संवाद रूपी सूक्ति के माध्यम से कहानीगत मूल संवेदना का उद्‌घाटन किया है। सामाजिक कहानियों में एक सुधारवादी भावना से प्रेरित होकर इस प्रकार की सूक्तियों का प्रयोग किया गया है। इसका अर्थ यह है कि प्रसाद जी की कहानियों में स्वच्छन्दतावादी विचारधारा की प्रबल अभिव्यक्ति होने के साथ वे अपने समय के संघर्ष से अछूता नहीं रहा है।

इस प्रकार विभिन्न शैलियों के मनोरम समावेश से प्रसादजी की कहानियाँ अन्यतम है। उनकी शैलीगत विशेषताओं में भावात्मकता, प्रतीकात्मकता और गतिशीलता ही सर्वप्रथम हैं। आलंकारिकता का गुण तो उनकी कहानियों का मुख्य आकर्षण ही है। इसी कारण उनके द्वारा प्रयुक्त भाषा में कहीं कहीं क्लिष्ट शब्दों के प्रयोग से संवाद बोझिल बन गया है।

प्रेमचंद ने अपनी कहानियों के सृजन में कहानी-साहित्य में प्रचलित सभी शैलियों का सफलता पूर्वक प्रयोग किया है जिसके ज़रिये उन्होंने अपनी कहानियों को पर परसंवेद्य बनाया गया है। इन सभी की सफल अभिव्यक्ति प्रयुक्त संवाद-योजना में प्रतिबिंबित है। प्रसाद की के द्वारा प्रयुक्त शैलियों में मनोविश्लेषणात्मक एवं नाटकीय शैली प्रमुख है जिनके ज़रिये व्यक्ति मन की सूक्ष्मतम भावनाओं का सशक्त चित्रण उनकी कहानियों में हुआ है।

---

1. जयशंकर प्रसाद - देवरथ - इन्द्रजाल - पृ. 354

5.7 प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों के कथ्य परक अन्तर

प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद दोनों समसामयिक रचनाकार होते थे तो भी कहानी के क्षेत्र में विभिन्न प्रवृत्तियों को अपनाया है। कथ्य और शिल्प में ही नहीं, दोनों की रचनात्मक दृष्टि में भी भिन्नताएँ मौजूद है। प्रेमचंद की दृष्टि आदर्शोन्मुख यथार्थवाद पर टिकी रहती है तो उससे सर्वथा भिन्न होकर प्रसादजी भावमूलक यथार्थवाद की ओर उन्मुख थे। प्रेमचंद मानव जीवन से अधिक परिचित थे, इसलिए उनकी कहानियों में मानव जीवन के सर्वांगीण विकास की गाथा अभिव्यक्त हुई है। मानव जीवन से संबन्धित ऐसा कोई भी तत्व नहीं है जो उनकी कलम से वंचित रहा हो। विषय वैविध्य की दृष्टि से उनकी कहानियाँ बेजोड़ है। लेकिन प्रसादजी भावात्मक कहानियों के प्रणेता होने के कारण उनकी कहानियों में व्यक्तिमन की सूक्ष्मतम भावनाओं का ही चित्रण अधिक हुआ है। क्योंकि स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्तियों की ओर उन्हें विशेष रुचि रही है। इसलिए सौन्दर्य और प्रेम की प्रधानता उनकी कहानियों में अवश्य पायी जाती है। इन दोनों रचनाकारों की कहानियों की कथ्यपरक विशेषताओं पर आगे विचार करेंगे।

5.8 प्रेमचंद की कहानियों की कथ्यपरक विशेषताएँ

आधुनिक हिन्दी कहानियों के पितामह प्रेमचंद की कहानियों में कथ्य और शिल्प के क्षेत्र में जितनी विविधता पायी जाती है, उतनी अन्यत्र दुर्लभ है। उन्होंने कहानी-साहित्य को अपने समय के मानव-जीवन की कटु वास्तविकताओं की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम मानकर उससे संबन्धित विविध पहलुओं को अपनी

कहानियों के अन्तर्गत चित्रित किया है। इसलिए उनकी कहानियों के कथ्यपक्ष में वास्तविकता को ही प्रमुखता दी गई है।

उनकी आरंभकालीन कहानियों में भारतीय मध्यकालीन जन-जीवन का वास्तविक चित्रण मिलता है। लेकिन उनकी मध्यवर्गी कहानियों में मानव जीवन की उदात्त भावनाओं की विभिन्न प्रवृत्तियों का सशक्त चित्रण मिलता है। अंतिम दौर की कहानियों में यथार्थ को अधिक संवेदनशील एवं मनोवैज्ञानिक विश्लेषण दृष्टि से देखने-परखने की प्रवृत्ति दर्शनीय है। 'प्रेम-पीयूष' की भूमिका में प्रेमचंद बताते हैं "वर्तमान आख्यायिका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और जीवन के यथार्थ स्वाभाविक चित्रण को अपना ध्येय समझती है। उसमें कल्पना की मात्रा कम, अनुभूतियों की मात्रा अधिक होती है, बल्कि अनुभूतियाँ ही रचनाशील भावना से अनुरंजित होकर कहानी बन जाती है।"[1]

वास्तव में उनकी यह विचारधारा की सार्थक अभिव्यक्ति अंतिम दौर की कहानियों में दर्शनीय है। उनकी कहानी कला का मूर्त एवं परिपाक रूप ही यहाँ उत्कृष्ट संवादों की रचना में सहायक हुआ है।

प्रेमचंद की आरंभकालीन कहानियों में कथ्यपक्ष पूर्णरूप से सामान्य मानव जीवन से जुड़ा हुआ है। 'पंच परमेश्वर', 'सवा सेर गेहूँ', 'मैकू', 'जुलूस', 'मुक्तिमार्ग', 'समरयात्रा' आदि कहानियों में शोषक-शोषित के द्वन्द्व, स्वतन्त्रता आन्दोलन से जुड़ी घटनाएँ, वर्ग-भेद की समस्याएँ आदि को विषय बनाकर जीर्ण-शीर्ण सामाजिक

---

1. प्रेमचंद - प्रेम पीयूष - भूमिका - पृ. 33

रूढियों पर प्रहार किया है। इन कहानियों में पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन यथार्थ के संघर्षों को ही रेखांकित किया गया है। इससे सहमत होते हुए 'कहानी के नए सीमान्त' में लेखक बताते हैं "प्रेमचंद समसामयिक यथार्थ के संदर्भ में व्यक्ति और उसकी समस्याओं का चित्रण करते हैं और कहीं कुछ अनुचित है तो उसका प्रतिरोध करते हैं।"[1] प्रेमचंद की समाज सुधारवादी व्यक्तित्व की ओर यहाँ संकेत किया गया है। एक समाज प्रतिबद्ध रचनाकार अपने समय की माँग को अनदेखा नहीं करते हैं।

प्रेमचंद की ऐतिहासिक कहानियों में कोरे आदर्श की ही परिकल्पना हुई है। 'राजा हरदौज', 'रानी सारंधा', 'मर्यादा की वेदी', 'ममता', 'धोखा' आदि कहानियों का कथ्यपक्ष इस प्रकार के आदर्श की स्थापना के कारण यथार्थ से विचलित हो गई है। इन कहानियों में प्रेमचंदीय आदर्श एक कदम ऊपर उठकर ऐतिहासिक सच्चाइयों को ही उजागर करने की कोशिश करते हैं। इसलिए प्रेमचंदीय यथार्थ की पकड़ इन कहानियों में कमज़ोर है।

प्रेमचंद की कहानी कला का विकसित रूप अंतिम दौर की कहानियों में ज़्यादा प्रतिबिंबित है। क्योंकि इन कहानियों के कथ्यपक्ष में व्यक्ति को केन्द्र में रखकर सामाजिक वैषम्य की बात कही गई है। 'कफ़न', 'पूस की रात', 'आत्माराम', 'बूढ़ी काकी', 'शतरंज के खिलाडी' आदि कहानियाँ इस बात की सफल अभिव्यक्ति देने वाली हैं। इसीलिए उनकी अंतिम दौर की कहानियाँ हिन्दी कहानी-साहित्य में ज़्यादा दीप्तमान हैं। ये कहानियाँ ही काफ़ी है प्रेमचंद को हिन्दी कहानी-साहित्य के

---

1. डॉ. रत्नलाल शर्मा - कहानी के नए सीमान्त - पृ. 17

सूर्य स्थापित करने के लिए। अपने युगीन जीवन की विविधता को उन्होंने कहानियों में अंकित किया है। उनकी कहानियाँ समाज में जीवित मनुष्य के जीवंत दस्तावेज़ है। इसके संबन्ध में 'कहानी के नए सीमान्त' के लेखक बताते हैं "प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में अपने आसपास के जीवन का अंकन किया है, यथार्थ का आधार लिया है और आम आदमी को प्रमुखता दी है।"[1]

प्रेमचंद की कहानियों के कथ्य पक्ष का ज़मीन जीवन की विविधता पर ही टिकी रहती है। इन विविधताओं के मूल में उनकी व्यापक मानवतावादी दृष्टि ही सर्वप्रमुख है। चाहे ऐतिहासिक हो, सामाजिक हो या मानसिक घात-प्रतिघातों को लेकर लिखी गई कहानियाँ हो, वे सब आम आदमी के जीवन के आसपास ही चक्कर काटती रहती हैं।

5.9 जयशंकर प्रसाद की कहानियों की कथ्यपरक विशेषताएँ

जयशंकर प्रसाद की कहानियाँ एक भावुक कवि तथा विश्लेषण चतुर नाट्य-शिल्पी की कहानियाँ हैं। इसलिए इन कहानियों में घटना उतनी महत्वपूर्ण नहीं होती, जितना चरित्र और चरित्र की भावनाएँ प्रमुख होती हैं। प्रसादजी के मन में अतीत और इतिहास के प्रति जो विशेष लगाव है, उसका स्पष्ट प्रतिफलन उनकी कहानी कला में विद्यमान है। इसका समर्थन करते हुए एक लेखक बताते हैं ....."प्रसाद मुख्यतः अतीत और इतिहास में जाते हैं, कल्पना का रंग चढ़ाते हैं और भावुकता समन्वित दृष्टि को अपनाते हैं।"[2]

---

1. डॉ. रत्नलाल शर्मा - कहानी के नये सीमान्त - पृ. 17
2. वही - पृ. 17

कहने का मतलब यह है कि उनकी कहानियाँ ज़्यादातर भावलोक में विचरण करने वाली होती हैं। उनकी कहानियों के कथ्यपक्ष में भारत के गौरवान्वित अतीत को ही प्रथम स्थान दिया गया है। बाद में जीवन के वैयक्तिक पहलुओं को उजागर करने की कोशिश भी दर्शनीय है। लेकिन मानवतावाद को वह साथ लेकर ही चलते थे। इस के संबन्ध में "प्रसाद की कहानियाँ : प्रवृत्तिमूलक अध्ययन" में लेखक बताते हैं ".....फिर भी वास्तविक जीवन के संघर्षों से उनकी कहानियाँ बिलकुल अछूता नहीं रहा है।"[1] इस दृष्टि से विचार करने पर पता चलते हैं कि प्रसादजी की कहानियों के कलेवर में इतिहास के साथ मानवीय भावनाओं का भी सूक्ष्म वर्णन मिलती है। एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखने पर उनकी कहानियाँ मुख्य रूप से ऐतिहासिक, भावात्मक, सामाजिक, और मनोवैज्ञानिक धरातल पर लिखी गई होती हैं।

ऐतिहासिक कथ्यवाली कहानियाँ

अतीत के प्रति विशेष प्रेम और आदर दर्शानेवाले प्रसादजी की अधिकांश कहानियाँ ऐतिहासिक कथानक वाली या ऐतिहासिक प्रणाली में लिखी गई हैं। इन कहानियों के मूल में इतिहास का ही चित्रण है तो भी इनमें तत्कालीन सामाजिक सांस्कृतिक परिस्थितियों का बोध भी देखने को मिलता है। 'जयशंकर प्रसाद की कहानियों का शिल्प-विधान' के लेखक के अनुसार प्रसादजी की सत्तर कहानियों में से लगभग बीस कहानियाँ ऐतिहासिक है।[2] इन कहानियों में प्रमुख है 'पुरस्कार',

---

1. डॉ. एम.टी. नरसिंहाचारी - प्रसाद की कहानियाँ : प्रवृत्तिमूलक विश्लेषण - पृ. 39
2. अशोक कुमार गुप्ता - जयशंकर प्रसाद की कहानियों का शिल्प-विधान - पृ. 60

'नूरी', 'गुण्डा', 'दासी', 'देवरथ', 'आकाशदीप', 'ममता', 'वृतभंग' आदि। इनमें या तो ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख, या ऐतिहासिक परिस्थितियों को आधार बनाकर रचना की गई है। 'इतिहास की दृष्टि से पात्र और घटनाएँ कहीं-कहीं सत्य है तो अनेक स्थानों पर कल्पना के सहारे निर्मित हैं। लेकिन घटनाएँ और पात्र-परिकल्पना इतिहास की सामाजिक प्रवृत्ति में मिल जाती हैं।'[1] इसलिए ऐतिहासिक रस की सृष्टि कर पाठकों के मन को खींच लाने की दृष्टि से इन कहानियों का कथ्यपक्ष सुदृढ़ ही है।

इसप्रकार की कहानियों के ज़रिये इतिहास एवं परम्पराओं के पुनर्निर्माण की एक सफल कोशिश प्रसादजी ने किया है। वस्तुतः प्रसादजी ने इतिहास के आइने से वर्तमान को देखने-परखने का प्रयास ही किया है। इन कहानियों के नामकरण में भी ऐतिहासिकता है। पात्र एवं घटनाएँ यथार्थ और काल्पनिक दोनों प्रकार के होते हैं। प्रेम, वीरता और देश-भक्ति की भावनाओं को उजागर करने वाली इन कहानियों में भारतीय मध्यकालीन इतिहास को ही प्रमुख दी गई है।

भावात्मक कहानियाँ : साहित्यिक जगत में प्रसादजी भावमूलक प्रवृत्ति के उद्घोषक रहे थे। इसलिए उनकी ज़्यादातर कहानियों में भावात्मक चित्रण को ही प्रमुखता दी गई है। मानव-मन की सूक्ष्मतम भावनाओं एवं मनोवेगों का विश्लेषणात्मक चित्रण इन कहानियों में हुआ है। मनुष्य के अन्तःकरण में प्रवेश कर मन को भावविभोर करने की क्षमता इनमें निहित है। 'रसिया बालम', 'हिमालय का पथिक', 'आकाश दीप', 'बिसाती', 'दासी', 'मधुआ', 'भीख में', 'रूप की छाया', 'पाप की पराजय'

---

1. एस.टी. नरसिंहाचारी - प्रसाद की कहानियाँ : प्रवृत्तिमूलक विश्लेषण - पृ. 48

आदि कहानियाँ इनमें प्रमुख हैं। वर्णनों, घटनाओं एवं संवादों द्वारा भावात्मकता लाने का सफल प्रयास इनमें हुआ है। इन कहानियों में कथावस्तु कहीं ऐतिहासिक होते हैं, कहीं सामाजिक होते हैं तो कहीं स्वच्छन्दतावादी एवं असफल प्रेम से संबन्धित होती है। मानव हृदय को छूने वाली परिष्कृत भावनाओं के सूक्ष्म अंकन पर ही ये कहानियाँ टिकी रहती हैं।

सामाजिक कहानियाँ : इतिहास और प्रेम के उद्घोषक होते हुए भी प्रसादजी की कहानियाँ तत्कालीन सामाजिक समस्याओं में अछूता नहीं रहा है। धार्मिक भाव-बोध, परोपकार, दान-दक्षिणा, समर्पण भाव, शरणागत की रक्षा, देशप्रेम आदि मानवीय संस्कारों की ओर भी उनकी गहरी आस्था एवं विश्वास थे। इन सब की सफल अभिव्यक्ति उनकी कहानियों में मिलती हैं। 'शरणागत', 'जहाँनारा', 'परिवर्तन', 'चूड़ीवाली', 'भीख में', 'विजया', 'नीरा', 'विराम चिह्न', 'प्रतिमा', 'ग्रामगीत' आदि कहानियाँ इसका उत्तम उदाहरण है। इनके माध्यम से लोक जीवन से जुड़ी कई बातों का विवेचन किया गया है।

मनोवैज्ञानिक कहानियाँ : मनोवैज्ञानिक तत्वों का भी सफल समावेश उनकी कई कहानियों में देखने को मिलता है। 'सामान्य मनोविज्ञान पर आधारित इन कहानियों का संबन्ध व्यक्ति मन और व्यवहार की गतिशीलता से हैं।"[1] 'पाप की पराजय', 'मधुआ', 'परिवर्तन', 'गूदड़ साई', 'सहयोग', 'प्रतिध्वनि', 'प्रलय', 'ममता' आदि कहानियाँ इस कोटि में आती हैं। प्रसादजी की सभी कहानियों में किसी-न-किसी

---

1. अशोक कुमार गुप्ता - जयशंकर प्रसाद की कहानियों में शिल्प-विधान - पृ. 71

प्रकार मनोवैज्ञानिकता का पुट मिलता है तो भी इन कहानियों में कुछ उलझी हुई या कुछ बिखरी हुई विशिष्ट मनस्थिति के निरूपण पर बल दिया गया है।

प्रसादजी की कहानियों के कथ्य पक्ष का विश्लेषण करने से पता चलते हैं कि उनकी कहानियों में आई कथ्यपरक विविधता एकपक्षीय नहीं, बल्कि बहुआयामी एवं प्रभावशाली है। एक ही कहानी में एक ही समय विभिन्न पहलुओं का उद्‌घाटन किया गया है। 'गुंडा', 'देवरथ' आदि कहानियों में एक ओर यथार्थवादी स्वर मुखरित है तो दूसरी ओर असफल प्रेम की व्यंजना हुई है। इन सब के अलावा कहानी के मूल में मानवतावादी विचारधारा की झलक कार्यरत है। अर्थात् प्रसादजी की कहानियाँ में यथार्थवादी, स्वच्छन्दतावादी और मानवतावादी तत्वों का सम्मिश्रण मिलते हैं। लेकिन प्रेमचंद की कहानियों का कथ्य पक्ष समाज के जीवित मनुष्यों के वास्तविक जीवन जगत से जुड़ी हुई है जो उनकी व्यापक मानवतावादी व्यक्तित्व का परिचायक है। अर्थात् उनकी कहानियों का ज़मीन जीवन की विविधता पर टिकी रहती है।

5.10 अन्य विधायी प्रभाव की दृष्टि से प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों की तुलना

मुंशी प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद हिन्दी कहानी साहित्य के विकास-युगीन कहानीकार हैं। दोनों समसामयिक रचनाकार होते थे तो भी दोनों का रचना संसार अलग-अलग हैं। प्रेमचंद के लिए कहानी-साहित्य मूलकेन्द्रित विधा थी। लेकिन प्रसाद के लिए कहानी मूलकेन्द्रित विधा नहीं थी। क्योंकि प्रसाद सबसे पहले

एक भावुक कवि एवं मंचे हुए नाटककार है। इन दोनों के बाद ही उनका कहानीकार व्यक्तित्व हमारे सामने आते हैं। प्रेमचंद एक ही समय साहित्यिक जगत में उपन्यास और कहानी सम्राट नाम से जाने जाते थे। उपन्यास हो या कहानी हो, दोनों का रचनात्मक स्तर एक ही है। क्योंकि ये दोनों विधाओं में कथा तत्व को ही प्रमुखता देते हैं। भिन्नता केवल इस बात में है कि कहानी का पाट सीमित होते हैं, मगर उपन्यास का व्यापक होते हैं। इस प्रकार विचार करने से पता चलते हैं प्रेमचंद के कहानीकार व्यक्तित्व के मूल में उसका उपन्यासकार मन जागरूक है तो प्रसादजी के कहानीकार जब कलम चलाते हैं तो उसका भावुक कवि मन तथा विश्लेषण चतुर नाटककार की कल्पना दौडे चले आते हैं। इन दोनों कहानीकारों की कहानी कला में व्याप्त अन्य विधायी प्रभाव को बारीकी से परखने का प्रयास आगे करेंगे।

5.11 प्रेमचंदीय कहानियों में अन्य विधायी प्रभाव

अन्य विधायी प्रभाव की दृष्टि से देखने पर प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना में उनके उपन्यासकार व्यक्तित्व का स्पष्ट प्रभाव है। इन दोनों विधाओं में रचना शिल्प का अविभाज्य अंग है संवाद-योजना। रचना काल की दृष्टि से उनकी उर्दु में लिखी कहानियाँ पहले प्रकाशित हो चुकी हैं। लेकिन हिन्दी में लिखी कहानियाँ सन् 1910 के बाद ही प्रकाशन में आयी हैं। मगर ध्यान देने की बात यह है कि इसके पहले ही प्रेमचंद ने उर्दु में उपन्यास लिखना आरंभ किया था। उनके उर्दु में लिखे उपन्यासों में 'इसरारे मुहब्बत', प्रतापचन्द्र (1903), श्यामा (1903), प्रेमा (1907), रूठी रानी (1907), 'हम खुर्मा व हम सवाब' (1906) आदि प्रमुख हैं। हिन्दी में लिखा गया पहला उपन्यास 'प्रेमा' है जो सन् 1907 में

प्रकाशित हो गया है। बाद में 'सोजेवतन' (1908) नामक उर्दु कहानी-संग्रह प्रकाशित हुआ। इसके बाद हिन्दी उपन्यास 'सेवासदन' सन् 1918 में प्रकाशित किया गया।[1] इस प्रकार विचार करने से पता चलते हैं कि प्रेमचंद, कहानी-साहित्य में कदम रखने से पहले उपन्यास के क्षेत्र में अपना स्थान जमा लिया था। इसलिए उनकी कहानियों के मूल में उनके उपन्यासकार व्यक्तित्व की छटा अवश्य है। इन दोनों विधाओं में मानव जीवन की सफल अभिव्यक्ति के निमित्त उन्होंने संवादों की रचना की है। दोनों विधाओं में पात्रों के प्रवृत्ति विशेष के अनुसार ही संवादों पर बल दिया गया है। 'सेवासदन', 'गबन', 'रंगभूमि', 'गोदान' आदि उपन्यासों में प्रयुक्त संवाद-योजना का स्पष्ट प्रभाव उनकी कई कहानियों में पायी जाती हैं। उनकी 'पत्नी से पति', 'निमन्त्रण', 'जुलूस', 'समरयात्रा', 'मंत्र', 'मन्दिर', 'ईदगाह' आदि कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना में जो नाटकीय वातावरण की अभिव्यक्ति हुई है, वहाँ उनका उपन्यासकार व्यक्तित्व ही कार्यरत है। इसके अलावा कुछ कहानियों में संवाद कहीं-कहीं लम्बे हो गए हैं। इन लम्बे संवाद-योजना के पीछे भी उनका उपन्यासकार मन का स्पष्ट प्रभाव है। कहानी की अपेक्षा उपन्यास का फलक व्यापक होता है। इसलिए वहाँ संकलनत्रय का पूरा-पूरा निर्वाह होना ज़रूरी नहीं है। लेकिन कहानी का फलक छोटा और सीमित होने के कारण वहाँ संकलनत्रय का पूरा-पूरा निर्वाह होना ज़रूरी है। इसलिए कहानियों में प्रयुक्त संवाद संक्षिप्त, सारहीन, सजीव एवं चुस्त होना चाहिए। अर्थात् प्रेमचंद की कहानीकला के पीछे उनका उपन्यासकार व्यक्तित्व का प्रभाव है जिसके कारण उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना कहीं कहीं लम्बे एवं नीरस हो गए हैं।

---

1. डॉ. कमल किशोर गोयनका - प्रेमचंद - पृ. 44-45

5.12 जयशंकर प्रसाद की कहानियों में अन्य विधायी प्रभाव

जैसा कि सूचित किया गया है कि प्रसाद जी एक भावुक कवि एवं कुशल नाटककार होने के कारण उनकी कहानियों की पृष्ठभूमि काव्य की परिष्कृत भावनाओं एवं नाटक की कल्पना लोक में विचारण करती हैं। उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना में भी उक्त दोनों व्यक्तित्वों का स्पष्ट प्रभाव है। काव्य एवं नाटक में भी संवाद का महत्व है तो भी उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना में नाटकों का प्रभाव सबसे ज़्यादा है। प्रसाद-साहित्य पर काल क्रमानुसार विचार करने पर पता चलते हैं कि कहानी लेखन में आने से पूर्व ही उन्होंने काव्य रचना शुरू की थी। उनका पहला काव्य संग्रह चित्राधार सन् 1907 में प्रकाशित हो गया। उसके बाद 'प्रेमपथिक' (1913), 'करुणालय' (1913), 'महाराणा का महत्व' (1914), 'कानन कुसुम' (1916), 'झरना' (1920), 'आँसू' (1925), 'लहर' (1932) और 'कामायनी' (1936) की रचना हुई। लेकिन प्रसादजी का पहला नाटक 'राज्यश्री' सन् 1915 में प्रकाशित हुआ। उसके बाद विशाख (1921), 'अजातशत्रु' (1922), 'जनमेजय का नागयज्ञ' (1926), 'कामना' (1927), 'स्कन्दगुप्त' (1928), 'चन्द्रगुप्तट (1931) और 'ध्रुवस्वामिनी' (1933) में प्रकाशन में आया है। इस दृष्टि से विचार करने पर पता चलते हैं कि कहानी-साहित्य में उनका पदार्पण कविता लेखन के बाद ही हुआ है। सन् 1911 में प्रसाद जी की पहली कहानी 'ग्राम' की रचना हुई। सन् 1911 से लेकर सन् 1918 तक लिखी गई कहानियों को ही प्रथम संग्रह, छाया में सन् 1922 में प्रकाशित किया है। उसके बाद लगातार वे कहानियाँ लिखते रहे। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि प्रसादजी

एक ही समय कविता, नाटक और कहानियाँ लिखते रहे हैं। उनकी आरंभकालीन कहानियों में विशेषकर 'छाया' और 'प्रतिध्वनि' की कहानियों में छायावादी काव्यभाषा का प्रभाव दर्शनीय है जो उनके कवि मन को उजागर करते हैं। लेकिन उनकी परवर्ती संकलनों में यानी, 'आकाशदीप', 'आँधी' और 'इन्द्रजाल' की कहानियों में प्रसाद की नाटककार सक्रिय रूप में विद्यमान है जो उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना में प्रतिफलित है। अंतिम तीनों संकलनों की कहानियाँ, प्रसादजी के कहानीकार व्यक्तित्व को साबित करने में बेजोड़ ही है जिसमें उनके कवि तथा नाटककार ने मिलकर उत्कृष्ट संवादों की सृष्टि कर कहानियों को साहित्यिक ज़मीन में प्रतिष्ठित किया है। ये कहानियाँ इस बात का सफल उदाहरण है कि वे संवाद लेखन के अद्‌भुत आचार्य ही हैं। इसका समर्थन करते हुए 'कहानीकार प्रसाद' में लेखक बताते हैं "प्रसाद कुशल नाटककार थे, भाषा पर प्रसाद का पूर्ण अधिकार था। यही कारण उनके संवादों में प्रायः सभी गुण विद्यमान है।"[1]

उनकी नाट्य कृतियाँ जैसे 'अजातशत्रु', 'स्कन्दगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी' आदि में प्रयुक्त संवाद-योजना का सीधा प्रभाव कई कहानियों में पायी जाती है। इस दृष्टि से देखने पर प्रसाद की 'आकाशदीप', 'मधुआ', 'घीसू', 'छोटा जादूगर', 'ममता', 'पुरस्कार' आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं। इनमें जो व्यंजनात्मकता कथानक का आदि, मध्य तथा चरमबिन्दु के अनुसार क्रमिक विकास, असाधारण चरित्र-योजना, संस्कृत-निष्ठ सामयिक भाषा-शैली आदि दर्शनीय है, उसका सीधा संबन्ध उनके नाटकों से ही हैं।[2] यही नाट्य संवाद का कमाल है जिसका प्रसादजी ने अपनी

---

1. डॉ. रामअवतार शर्मा - कहानीकार प्रसाद - पृ. 130
2. ओम प्रभाकर - अज्ञेय का कथा-साहित्य - पृ. 109-110

कहानियों में सफल अंकन किया है। 'स्कन्दगुप्त' जैसे नाटकों में जो आरंभिक संवाद योजना द्वारा नाटकीय वातावरण की सृष्टि की गई है, उसका सफल प्रयोग 'आकाशदीप', 'मधुआ', 'भीख में' आदि कहानियों में पाया जाता है। कहानीगत मूल संघर्ष को पकड़ने में इसप्रकार की संवाद-योजना उत्तम है। इस प्रकार देखने से प्रसाद की साहित्य साधना में कविता, नाटक और कहानी तीनों का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। इसका समर्थन करते हुए 'हिन्दी के प्रमुख कहानीकार' में लेखक बताते हैं "प्रसाद की कहानी की भाषा-शैली में कवि की कल्पना, नाटककार का विश्लेषण और निबन्धकार के चिन्तन तीनों का सुन्दर समन्वय है।"[1] प्रसादजी की कहानियों में जो अभिनयात्मकता का समावेश है वहाँ भी उनका ये तीनों रूप स्पष्ट झलकता है। कुछ कहानियों में बीच-बीच में पात्रों की मानसिक स्थिति के अनुकूल पद्यों या गीतों का प्रयोग किया गया है। वस्तुतः प्रसादजी का रोमान्टिक कवि व्यक्तित्व इस प्रकार की कहानियों में जाग उठता है। इस ओर प्रकाश डालते हुए डॉ. रामदरश मिश्र बताते हैं "प्रसाद की कहानियाँ एक श्रेष्ठ रोमान्टिक कवि की कहानियाँ है। इसलिए उनका शिल्प नाटकीय और काव्यात्मक है। प्रसाद के वर्णनों में भी एक काव्यात्मक चित्रात्मकता और संक्षिप्ति है और कथा-विन्यास तथा संवाद-योजना में नाटकीय वक्रता और सांकेतिकता है।"[2] उनकी कहानियों के पात्र इस विचारधारा की सार्थक अभिव्यक्ति देने वाले होते हैं। वे सौन्दर्य और प्रेम के अद्‌भुत कल्पना-लोक में विचरण करते हैं। इसीलिए वे सब

---

1. श्री राजनाथ शर्मा - हिन्दी के प्रमुख कहानीकार - पृ. 47
2. डॉ. रामदरश मिश्र - जयशंकर प्रसाद और उनकी परम्परा - पृ. 53

कुछ सीधे नहीं बताते हैं। उनकी कहानियों के ज़्यादातर पात्र अपने संवादों में काफ़ी कुछ पाठकों को सोच विचारने के लिए छोड़ देते हैं, यहाँ भी उनका कवि मन कार्यरत है।

कुल मिलाकर हम कह सकते हैं कि प्रसाद की कहानियाँ उनके कवि तथा नाटककार व्यक्तित्व की निचोड़ है। काव्य, नाटक, कथा तीनों के समन्वित सौंदर्य पुंज के रूप में उनकी कहानियों का विश्लेषण करना ज़्यादा समीचीन लगता है। इनमें कविता जैसी रसात्मकता है, नाटक जैसा रचनात्मक चातुर्य है और कहानी जैसी आस्वाद्यता भी विद्यमान है।

निष्कर्ष

प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना में काफ़ी भिन्नताएँ मौजूद हैं। भाषा परक दृष्टि से विचार करने पर प्रेमचंद ने यथार्थमूलक जन सामान्य की भाषा में प्रयुक्त संवाद-योजना पर बल दिया है तो प्रसादजी की भाषा भावानुकूल, काव्यात्मक एवं प्रतीकात्मक शब्दावलियों से युक्त आभिजात्य संस्कार की भाषा है। दोनों की कहानियों में प्रयुक्त संवादों की कथन शैली में भी भिन्नताएँ हैं। प्रेमचंद ने कहानी-साहित्य में प्रचलित सभी शैलियों का सफलतापूर्वक नियोजन, अपनी कहानियों में किया है। जीवनानुभवों की तर्ज पर नींव डाली उनके संवाद, पात्रों में जान फूँक देते हैं। लेकिन प्रसादजी ने मुख्य रूप से मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि को ही प्रमुखता दी है। जिसके कारण उनकी कहानियों में व्यक्ति मन की सूक्ष्मतम भावनाओं का सशक्त चित्रण हुआ है। कथ्यपरक दृष्टि

से विचार करने पर प्रेमचंद की कहानियाँ आम-आदमी के आस-पास ही चक्कर काटती रहती हैं। अपने युग की समस्त समस्याओं को साहित्य में संवारने में उनके संवाद सफल निकले हैं। मानवतावाद के पोषक होने के कारण उनकी कहानियों का वास्तविक ज़मीन मनुष्यता पर टिकी रहती हैं। लेकिन प्रसादजी की कहानियों में कथ्यपरक विविधता पायी जाती है। यथार्थवाद, स्वच्छन्दतावाद एवं मानवतावाद की परिधि में रहते हुए भी उनकी ज़्यादातर कहानियों में असफल प्रेम की व्यंजना हुई है। फिर भी किसी-न-किसी भाव या विचार पर केन्द्रित उनकी कहानियों में स्वच्छन्दतावादी स्वर ज़्यादा मुखरित है।

अन्य विधायी प्रभाव की दृष्टि से तुलना करने पर प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना में उनके उपन्यासकार व्यक्तित्व काफ़ी सजग है। इसलिए उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद कहीं-कहीं लम्बे हो गये हैं। लेकिन प्रसादजी की कहानियों में प्रयुक्त संवादों की आड़ में एक कवि की भावना तथा कल्पना और नाटककार का विश्लेषण-चतुर-मन स्पष्ट प्रतिबिम्बित है। वे संवाद लेखन के कुशल आचार्य हैं।

उपसंहार

उपसंहार

साहित्य रचनाकार और अध्येता के बीच का संवाद ही है। उसमें मनुष्य और उसके जीवन की व्याख्या प्रस्तुत होती है। हिन्दी कहानी-साहित्य भी इसी नींव पर खड़ा है। इसलिए वह मनुष्य और समाज से गहरा नाता जोड़ता है। साहित्य की अन्य विधाओं से भिन्न होकर कहानी साहित्य की लोकप्रियता काफी हद तक उपर्युक्त बात पर निर्भर है। हिन्दी कहानी साहित्य में युगान्तरकारी परिवर्तन लाने वाले दो प्रतिभाएं हैं प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद जिन्होंने अपनी सर्जनात्मक कुशलता के बल पर अपने समय के युग को नई दिशा की ओर मोड़कर विकास के नये क्षितिजों की ओर ले गये। हिन्दी कहानी- साहित्य को कथ्य और शिल्प- दोनों दृष्टियों से आमूल परिवर्तित करके, एक सर्वथा मौलिक एवं सशक्त धारा के रूप में प्रतिष्ठित करने का पूरा-पूरा श्रेय प्रेमचंद और प्रसाद को ही मिलता है।

पुरानी कथाओं में लेखकीय उद्देश्य किसी घटना या घटना वैचित्र्य को दिखाना मात्र होता था तो आज के बदलते परिवेश में लेखकीय उद्देश्य पात्रों के मनोभावों एवं उनके चरित्रगत रहस्यों को खोलना है। अतएव यह परिवर्तन, समय की माँग महसूस होती है। कहानी के क्षेत्र में आए इस नवीन शिल्प वैचित्र्य को उसकी बारीकियों संहित प्रेमचंद और प्रसाद वे अपनी कहानियों के कलेवर में समाहित किया है। प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य को मानवीय मन एवं संसार की यथार्थता से संयुक्त करके उस के अनुरूप उचित एवं अवसरोचित संवाद योजना के प्रश्रय द्वारा जनसामान्य की समस्याओं के बदले एक हथियार के रूप में इस्तेमाल

किया है। प्रसादजी ने प्रवृत्तिमूलक आनन्दवादी दृष्टि से प्रेरित होकर अपनी कहानियों में देशकाल-निरपेक्ष व्यक्ति के ऐकान्तिक जीवन और उसमें मानव-मन के संघर्षों एवं वैयक्तिक भावनाओं के चित्रण हेतु भावात्मक संवादों पर बल दिया है।

कथा का भाषिक माध्यम संवाद है जिसके ज़रिये पात्र एवं पात्र संबन्धी सभी जानकारी पाठकों को मिलते हैं। इसके ज़रिये ही बिखरी हुई कथावस्तु व्यवस्थित होकर पाठकों के सामने अनावृत होती है। कहानी रूपी शरीर के अन्दर कथानक और चरित्र को आत्मा की भान्ति रूपायित करना संवाद का परम दायित्व है। इसलिए कहानी कला के सभी तत्वों के साथ इसका अभिन्न संबन्ध निर्विवाद रूप से स्पष्ट है। इसी कारण संवाद-रहित कहानियाँ रसहीन बनकर पाठकों को आकर्षित करने में असफल रह जाती है। उन कहानियों में गतिशीलता का बिलकुल अभाव दर्शनीय है।

नाटक के संवाद बोलने के लिए लिखी जाती है तो कहानी के संवाद पढ़ने के लिए लिखी जाती है। फिर भी प्रभावोन्नति लाने के लिए प्रयुक्त संवाद रोचक, अवसरोचित, पात्रोचित, स्वाभाविक, संक्षिप्त एवं नाटकीय होनी चाहिए। अर्थात् संवाद और चरित्र-चित्रण का संबन्ध अन्योन्याश्रित होता है। कहानी के क्षेत्र में तो इस तत्व के बहुआयामी प्रयोग पर बल दिया गया।

प्रेमचंद पूर्व हिन्दी कहानियों में कल्पना और घटना प्रमुख होने के कारण उनमें कहानी कला के सभी तत्वों का पूर्ण निर्वाह नहीं हुआ है। इसलिए संवाद तत्व के बहुआयामी प्रयोग की ओर कहानीकारों का ध्यान नहीं गया है। उस समय की

जिन कहानियों में संवादों का प्रयोग दर्शनीय है, उनमें कथा प्रवाह में घुल मिल हो जाने से या वर्णनों की प्रधानता होने के कारण उसकी व्यक्तिगत सत्ता नष्ट हो गई है। लेकिन इस युग के अंतिम चरण में आते ही संवाद तत्व के प्रयोग में काफी प्रगति दिखाई देता है। प्रसाद कृत 'ग्राम' तथा गुलेरी कृत 'उसने कहा था' इस दृष्टि से उल्लेखनीय कहानियाँ हैं।

प्रेमचंद-युगीन हिन्दी कहानियाँ अपनी शिल्पगत नवीनता के कारण पूर्ववर्ती युग से काफी भिन्न ही है। इस युग में कथानक से लेकर उद्देश्य तक के सभी तत्वों के सफल आयोजन के लिए उपयुक्त संवाद योजना का ही प्रयोग होने लगा। स्वयं प्रेमचंद और प्रसाद की कहानियाँ इस बात उत्तम उदाहरण हैं।

प्रेमचन्दोत्तर युग में आते ही कहानियों का ढाँचा और भी बदल गया। मनोवैज्ञानिक चरित्र-चित्रण की ओर कहानीकार उन्मुख होने के कारण प्रयुक्त संवाद- योजना में भी मनोवैज्ञानिक तत्वों का समावेश होने लगा। इस के फलस्वरूप संवाद अति-संक्षिप्त, नाटकीय एवं सांकेतिक हो गया है। एक तरह से विचार करने से इस युग में परम्परागत कथा तत्वों का ह्रास हुआ। पात्रों से ज़्यादा परिवेश का महत्व होने से संवादों की मात्रा में भी कमी आ गयी। इसका कारण यह हो सकता है कि पहले की अपेक्षा समकालीन कहानी में पात्रों की संख्या सीमित होने लगा। जो संवाद प्रयुक्त है, वह पात्रों के मानसिक स्थिति-सापेक्ष्य बन गया।

प्रेमचंद की कहानियों में प्रयुक्त शिल्पगत विधियों में सबसे प्रभावी एवं विशिष्ट विधि है - संवादात्मकता। अपने कथा-साहित्य में मानव जीवन की सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति हेतु संवादों की विशेषता को उन्हें स्थान दिया है।

संवाद-योजना के द्वारा ही प्रेमचंद ने आगामी घटनाओं की सूचना, कथावस्तु की सुसंबद्धता, संभाव्यता, नाटकीयता, पात्रों की चारित्रिक स्पष्टता आदि की जानकारी पाठकों को दिया है। प्रेमचंदीय संवाद योजना, कहानी के अन्य सभी तत्वों को एक साथ पिरोकर कहानी को गतिशील तथा परसंवेद्य बनाने में सर्वथा उपयुक्त ही है। उनकी कहानियों में पात्रों के सूक्ष्म भावों, विचारों, मनःस्थितियों एवं चरित्र विकास, सभी कुछ संवादों द्वारा ही पूर्ण अभिव्यक्ति पाती है। उनकी कहानियों के संवाद सुबोध, सरल, स्वाभाविक, संक्षिप्त तथा पात्रोचित ही है। अभिनयात्मकता से अधिक संवादों में विश्लेषणात्मक पद्धति पर उन्होंने बल दिया है। उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद कलात्मक गरिमा की पहचान होने के साथ पाठक तथा कहानीकार के बीच एक सेतुबन्धन है। अर्थात् वह अपने पात्रों के मुँह से निकले संवादों द्वारा ही सब कुछ कह डालते हैं।

प्रसादजी मुख्य रूप से एक भावुक कवि एवं मंचे हुए नाटककार होने के कारण उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना अद्वितीय बन पड़ा है। आभिजात्य वर्ग के कवि होने की हैसियत से भाषा पर भी उनका असामान्य अधिकार था। यह भाषाई कुशलता सचमुच उनकी कहानियों को एक विशिष्ट दर्जा प्रदान करता है जिसका स्पष्ट प्रभाव उनकी कहानियों में प्रयुक्त संवाद योजना में दर्शनीय है। 'छाया' और 'प्रतिध्वनि' संग्रहों में संकलित कहानियों में भाषा-शैली अनगढ़ होने से संवाद योजना उतनी प्रभावशाली नहीं निकला है। क्योंकि अति भावुकता कहानी में बाधक होती है। मगर प्रसादजी की विकासकालीन कहानियों में नाटकीयता की ओर ज़्यादा बल देने के कारण भाषा-शैली निखरे हुए रूप में पायी जाती है जिसका

सीधा प्रभाव उस समय की कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना में दीख पड़ता है। प्रसादजी ने मुख्य रूप से पात्रों की मनोगत भावनाओं एवं कार्यव्यापार को सूचित करने के लिए अवसरोचित संवादों का उचित प्रयोग किया है। उनके द्वारा प्रयुक्त संवाद काव्यात्मक एवं नाटकीयता से युक्त हैं। इसलिए उनमें अभिनयात्मक पद्धति का पूरा-पूरा निर्वाह दर्शनीय है। प्रसादजी के द्वारा प्रयुक्त संवादों की दूसरी एक विशेषता यह है कि वे पात्रों की प्रवृत्तियों के अनुरूप समय और स्थिति-सापेक्ष्य ही है। अपने पात्रों के संवादों में प्रसादजी काफ़ी कुछ पाठकों को सोचने के लिए छोड़ देते हैं।

प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद ये दोनों कथाकारों ने अपनी-अपनी कहानियों में संवाद तत्व के सार्थक एवं प्रभावशाली प्रयोग पर बल दिया है जिसका ज्वलन्त उदाहरण है उनकी कालजयी कहानियाँ। दोनों समकालीन होते हुए भी कहानियों में प्रयुक्त रचनात्मक प्रवृत्तियों में भिन्नताएँ मौजूद हैं। भाषा परक दृष्टि से विचार करने पर प्रेमचंद ने अपनी कहानियों में यथार्थमूलक जीवन दृष्टि को अपनाकर जनसाधारण की भाषा में प्रयुक्त यथार्थ एवं स्वाभाविक संवादों पर बल दिया है। दूसरी ओर प्रसादजी ने अपनी निजी भावमूलक दृष्टिकोण के आधार पर भाषिक चमत्कार से युक्त साहित्यिक और प्रतीकात्मक संवाद योजना पर बल दिया है। प्रेमचंद की यथार्थ मूलक परम्परा को उस समय के कई कहानीकारों ने अपनाया है।

दोनों की कहानियों में प्रयुक्त संवादों में कथन-शैली की दृष्टि से भी अन्तर है। प्रेमचंद ने अपनी कहानियों के कलेवर में तत्कालीन कहानी साहित्य में प्रचलित सभी शैलियों का सफलतापूर्वक समावेश किया है। कहानी कला से संबन्धित ऐसा

कोई भी तत्व नहीं है जो उनकी कहानियों के कलेवर से अलग रहा हो। यह उनकी कहानी कला की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता है। प्रसादजी की कहानियों के अध्ययन करने से पता चलते हैं कि उन्होंने मुख्य रूप से मनोविश्लेषमात्मक दृष्टि को ही अपनी कहानियों में प्रमुखता दी है। इसके ज़रिये चरित्रांकन को रोचक तथा सजीव बनाने में उन्हें काफी सफलता मिली है। उनके द्वारा प्रयुक्त संवादों में भावानुकूलता, प्रतीकात्मकता तथा व्यंग्यात्मकता का गुण पायी जाती है। इन सबके मूल में उनकी भाषाई निपुणता कार्यरत है।

कथ्यपरक दृष्टि से विचार करने से भी दोनों की कहानियों में प्रयुक्त संवादों में काफी अलगाव दृष्टिगोचर हैं। साहित्य के क्षेत्र में प्रेमचंद मानवतावाद के पोषक रहने के कारण उनकी कहानियाँ आम आदमी के जीवन के आस-पास चक्कर काटती रहती हैं। उनकी कहानियों का ज़मीन वास्तविक जीवन-जगत से जुड़ी हुई है। लेकिन प्रसादजी की कहानियों में कथ्यपरक विविधता साफ़ नज़र आती है। 'मधुआ', 'गुण्डा', 'बिसाती' आदि कहानियों में उन्होंने यथार्थपरक कथ्य पर बल दिया है तो 'देवरथ', 'विराम चिह्न', 'सालवती' आदि कहानियों में उन्होंने अपनी मानवतावादी दृष्टि का परिचय दिया है। लेकिन उनकी ज़्यादातर कहानियाँ असफल प्रेम एवं व्यक्तिगत संघर्षों के बीच पलने वाली होती हैं। इन कहानियों में भी संघर्षरत मानव मन का प्रबलतम रूप साफ़ दिखाई देता है। ऐसी कहानियों में प्रसादजी मनुष्य के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास में मूल्यों के प्रतिपादक एवं आदर्शवादी कलाकार के रूप में प्रयत्नरत दिखाई देता है। एक ही समय प्रसादजी यथार्थवादी, स्वच्छन्दतावादी और मानवतावादी बनकर हमारे सामने आते हैं।

दोनों कहानीकारों की कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना के प्रयोग एवं प्रभाव में अन्य विधायी प्रभाव भी स्पष्ट दर्शनीय है। प्रेमचंद के उपन्यासकार व्यक्तित्व उनकी कहानियों की कलात्मक गरिमा उजागर करने में सचमुच सहायक रहा है। इन दोनों विधाओं में कथा-तत्व की प्रधानता होते हुए भी भिन्नता केवल इस बात में है कि उपन्यास की अपेक्षा कहानी का फलक सीमित होने से, इसमें प्रयुक्त संवाद संक्षिप्त एवं सारगर्भित होते हैं।

प्रसादजी की कहानियों में उनके भावुक कवि मन तथा नाटककार रूप दोनों एक साथ धुल मिल हो गए हैं। सूक्ष्म विवेचन करने से पता चलते हैं कि प्रसादजी की कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना में कवि की कल्पना और भावना, तथा एक नाटककार का विश्लेषण चातुर्य स्पष्ट प्रतिफलित है। कहने का मतलब यह है कि प्रसादजी का कवि तथा नाट्यकार रूप कहानियों में उत्कृष्ट संवादों की सृष्टि में सहायक रहा है। वे सचमुच संवाद लेखन के अद्‌भुत आचार्य हैं।

कुल मिलाकर कह सकते हैं कि हिन्दी कहानियों में प्रयुक्त संवाद-योजना के विकास क्रम में प्रेमचंद और प्रसाद का योगदान अन्यतम ही इन दोनों कहानीकारों ने अपनी-अपनी कहानियों में संवाद तत्व के बहुआयामी प्रभाव एवं प्रयोग पर बल दिया है और आगे के कहानीकारों को दिशा निमंत्रण भी दिया है। उनकी कहानियाँ तो भारतीय कथा परम्परा में कई कड़ियाँ जोड़ती जाती हैं।

इन कहानिकारों ने अपनी कहानी कला की गरिमा से यह स्थापित किया है कि कहानी सचमुच एक संवादात्मक चित्र विधान है। समकालीन समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में, उन दोनों की कहानियों के शोधपरक अध्ययन की गुंजाइश अब भी है।

❖❖❖

परिशिष्ट

प्रेमचंद की कहानियों की ऐतिहासिक काल-क्रमानुसार सूची

प्रेमचंद की कहानियों की ऐतिहासिक काल-क्रमानुसार सूची

कहानी संग्रह (प्रकाशन वर्ष के अनुसार)

1.	सप्त सरोज	8 जून, 1917
2.	नवनिधि	दिसम्बर, 1917
3.	प्रेम-पूर्णिमा	दिसम्बर, 1918
4.	लाग फीता	मई, 1921
5.	लाग-डाट	अक्तूबर, 1921
6.	बड़े घर की बेटी	दिसम्बर, 1921
7.	नमक का दारोगा	दिसम्बर, 1921
8.	पंच परमेश्वर	दिसम्बर, 1921
9.	प्रेम-पच्चीसी	दिसम्बर, 1923
10.	प्रेम-प्रसून	जून, 1924
11.	बैंक का दिवाला	1924
12.	शतरंज के खिलाड़ी	1924
13.	प्रेम-प्रतिमा	जुलाई, 1926
14.	प्रेम-प्रमोद	दिसम्बर, 1926
15.	प्रेम-द्वादशी	दिसम्बर, 1926
16.	शान्ति	दिसम्बर, 1927
17.	गल्प-समुच्चय	दिसम्बर, 1928
18.	प्रेम-तीर्थ	1928
19.	प्रेम-चतुर्थी	मार्च, 1929

20.	अग्नि-समाधि तथा अन्य कहानियाँ	अगस्त, 1929
21.	पाँच फूल	नवंबर, 1929
22.	गल्प रत्न	दिसम्बर, 1929
23.	प्रेम-प्रतिज्ञा	दिसम्बर, 1929
24.	प्रेम-कुंज	दिसम्बर, 1930
25.	प्रेम-पंचमी	दिसम्बर, 1930
26.	सप्त-सुमन	दिसम्बर, 1930
27.	समर-यात्रा	दिसम्बर, 1930
28.	प्रेम-प्रतिमा	1931
29.	मृतक-भोज	जनवरी, 1932
30.	विद्रोही तथा अन्य कहानियाँ	जनवरी, 1932
31.	सोहाग का शव और अन्य कहानियाँ	जनवरी, 1932
32.	प्रेरणा और अन्य कहानियाँ	अक्तूबर, 1932
33.	समर यात्रा और अन्य कहानियाँ	अक्तूबर, 1932
34.	प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ	सितंबर, 1934
35.	पंच-प्रसून	1934
36.	बड़े भाई साहब	1934
37.	नवजीवन	1935
38.	प्रेम-पीयूष	1935
39.	मानसरोवर-1	जानवरी, 1936
40.	मानसरोवर-2	मार्च, 1936
41.	प्रेमचंद का हास्य	नवंबर, 1936
42.	कफ़न और अन्य कहानियाँ	मार्च, 1937

43.	मानसरोवर-3	अप्रैल, 1938
44.	ग्राम्य जीवन की कहानियाँ	1938
45.	मानसरोवर-4	1939
46.	गोदान (संक्षिप्त)	1941
47.	अलग्योझा और अन्य कहानियाँ	1941
48.	लैला और दूसरी कहानियाँ	1941
49.	मानसरोवर-5	1941
50.	मानसरोवर-6	1941
51.	मानसरोवर-7	1941
52.	होरी (रूपान्तर)	1941
53.	मानसरोवर-8	1941
54.	चन्द्रहार (रूपान्तर)	1952
55.	सोजेवतन	अप्रैल, 1960
56.	गुप्तधन-1, 2	जुलाई, 1962
57.	पच्चास कहानियाँ	1963
58.	प्रेमोपहार	1963
59.	प्रेमचंद की अप्राप्य कहानियाँ	1980
60.	गुल्ली-डंडा और अन्य कहानियाँ	(अज्ञात)
61.	ठाकुर का कुआँ	"
62.	दो बहनें	"
63.	द बहनें तथा अन्य कहानियाँ	"
64.	निमन्त्रण और अन्य कहानियाँ	"
65.	नेडर और अन्य कहानियाँ	"

66.	पूस की रात और अन्य कहानियाँ	"
67.	बड़े घर की बेटी और अन्य कहानियाँ	"
68.	बेटों वाली विधवा और अन्य कहानियाँ	"
69.	मंगलसूत्र व अन्य रचनाएँ	"
70.	मंजुषा	"
71.	मोटेराम शास्त्रों और अन्य कहानियाँ	"
72.	राजा हरदौल और अन्य कहानियाँ	"
73.	रामलीला और अन्य कहानियाँ	"
74.	सुजान भगत और अन्य कहानियाँ	"
75.	सुभागी और अन्य कहानियाँ	"

नाटक

1.	संग्राम	फरवरी, 1923
2.	कर्बला	1 नवम्बर, 1924
3.	प्रेम की वेदी	अप्रैल, 1933

जीवनी

1.	महात्मा शेखसादी	दिसम्बर, 1917
2.	राम-चर्चा	1928
3.	दुर्गादास	1938

अनुवाद

1.	सुखदास	अगस्त, 1920
2.	अहंकार	अक्टूबर, 1923
3.	टाल्स्टाय की कहानियाँ	दिसम्बर, 1923

4.	आजाद कथा	अगस्त, 1925
5.	चांदी की डिबिया	दिसम्बर, 1930
6.	न्याय	"
7.	हड़ताल	"
8.	पिता के पत्र पुत्री के नाम	6 जुलाई, 1931
9.	सृष्टि का आरम्भ	मार्च-अप्रैल, 1937
10.	शबेतार	जुलाई, 1962

लेख-संग्रह

1.	स्वराज्य के फायदे	जुलाई, 1921
2.	कुछ विचार	1939
3.	साहित्य का उद्देश्य	जुलाई, 1954
4.	विविध प्रसंग-1, 2, 3	जुलाई, 1962

बाल साहित्य

1.	जंगल की कहानियाँ	फरवरी, 1936
2.	कुत्ते की कहानी	14 जुलाई, 1936
3.	कलम, तलवार और त्याग - दो भाग	1940

चिट्ठी-पत्री

1.	चिट्ठी-पत्री-1, 2	जुलाई, 1962

कहानियों की सूची

प्रेमचन्द की कुल कितनी कहानियाँ हैं, इसकी सूची निरन्तर संशोधित होती रही है। अमृतराय ने 56 नई कहानियों के दो संग्रह 'गुप्तधन' प्रकाशित करके प्रेमचंद की कहानियों की संख्या में वृद्धि की। इस प्रकार विचार करने से प्रेमचंद की कुल कहानियों की संख्या 289 है। यहाँ प्रेमचंद की सम्पूर्ण उपलब्ध कहानियों की काल-क्रमानुसार सूची दी जा रही है। कहानी के हिन्दी में प्रकाशित होने की तिथि को ही स्वीकार किया है, उर्दू में प्रकाशन की तिथि को नहीं। हिन्दी में पहली बार जब भी कहानी प्रकाशित हुई है, हमने सूची में उसी तिथि के अनुसार उसे स्थान दिया है। यही कारण है 'गुप्तधन'-1, 2 तथा 'प्रेमचंद की अप्राप्य कहानियां' में पहली बार हिन्दी की जो कहानियाँ छपी हैं, उन्हें पुस्तक के प्रकाशन-वर्ष के अनुसार ही कालक्रम में रखा गया है। हिन्दी में सूची को तैयार करते समय हिन्दी प्रकाशन के काल को ही आधार बनाना उचित था।

कहानियाँ

1.	सौत	दिसम्बर, 1915
2.	शंखनाद	फरवरी, 1916
3.	पंच परमेश्वर	जून, 1916
4.	उपदेश	8 जून, 1917
5.	नमक का दारोगा	"
6.	बड़े घर की बेटी	"
7.	सज्जनता का दण्ड	"
8.	ईश्वरीय न्याय	जुलाई, 1917
9.	रानी सारन्धा	अगस्त, 917

10.	वियोग और मिलाप	नवम्बर, 1917
11.	अमावस्या की रात्रि	दिसम्बर, 1917
12.	जुगनू की चमक	"
13.	धोखा	"
14.	पछतावा	"
15.	पाप का अग्निकुण्ड	"
16.	ममता	"
17.	मर्यादा की वेदी	दिसम्बर, 1917
18.	राजा हरदौल	"
19.	दुर्गा का मन्दिर	दिसम्बर, 1917
20.	बलिदान	मई, 1918
21.	दो भाई	सितम्बर, 1918
22.	बेटी का धन	अक्टूबर, 1918
23.	सफ़ेद खून	दिसम्बर, 1918
24.	गरीब की हाय	"
25.	ज्वालामुखी	"
26.	धर्म-संकट	"
27.	बोध	"
28.	महातीर्थ	"
29.	शिकारी राजकुमार	"
30.	सचाई का उपहार	"
31.	सेवा-मार्ग	फरवरी, 1919
32.	पशु से मनुष्य	फरवरी, 1920

33.	मनुष्य का परम धर्म	5 मार्च, 1920
34.	इज्ज़त का खून	अप्रैल, 1920
35.	ब्रह्म का स्वांग	मई, 1920
36.	पुत्र-प्रेम	जन, 1920
37.	बूढ़ी काकी	जनवरी, 1921
38.	विषम समस्या	”
	(‘समस्या’ शीर्षक से भी प्रकाशित हुई)	
39.	विचित्र होली	मार्च, 1921
40.	विमाता	9 अप्रैल, 1921
41.	दफ़्तरी	24 अप्रैल, 1921
42.	आत्माराम	26-27 मई, 1921
43.	लाल फीता	मई, 1921
44.	दुस्साहस	18 जून, 1921
45.	अनिष्ट शंका	27 जून, 1921
46.	आदर्श विरोध	6 जुलाई, 1921
47.	विध्वंस	25 जुलाई, 1921
48.	लाग-डॉट	जुलाई, 1921
49.	प्रारब्ध	अक्टूबर, 1921
50.	त्यागी का प्रेम	नवम्बर, 1921
51.	मूठ	जनवरी, 1922
52.	सुहाग की साड़ी	”
53.	हार की जीत	मई, 1922
54.	स्वत्व-रक्षा	जुलाई, 1922

55.	अधिकार-चित्ता	अगस्त, 1922
56.	गुप्त-धन	”
57.	चकमा	नवम्बर, 1922
58.	पूर्व-संस्कार	दिसम्बर, 1922
59.	परीक्षा	जनवरी, 1923
60.	राज्य-भक्त	फरवरी, 1923
61.	नैराश्य लीला	अप्रैल, 1923
62.	बैर का अन्त	अप्रैल, 1923
63.	बौड़म	”
64.	गृहदाह	जून, 1923
65.	आप बीती	जुलाई, 1923
66.	आभूषण	अगस्त, 1923
67.	कौशल	नवम्बर, 1923
68.	सत्याग्रह	दिसम्बर, 1923
69.	नाग-पूजा	”
70.	लोकमत का सम्मान	”
71.	विस्मृति	”
72.	सैलानी बन्दर	फरवरी, 1924
73.	नबी का नीति निर्वाह (‘न्याय’ शीर्षक से भी प्रकाशित)	मार्च, 1924
74.	वज्रपात	मार्च, 1924
75.	मुक्ति-मार्ग	अप्रैल, 1924
76.	मुक्ति-धन	मई, 1924

77.	क्षमा	जून, 1924
78.	निर्वासन	जून, 1924
79.	सौभाग्य के कोड़े	”
80.	दुराशा	”
81.	नैराश्य	जून, 1924
82.	मृत्यु के पीछे	”
83.	यह मेरी मातृभूमि है	”
84.	शाप	”
85.	एक आंच की कसर	अगस्त, 1924
86.	भूत	”
87.	उद्धार	सतम्बर, 1924
88.	दीक्षा	”
89.	शतरंज के खिलाड़ी	अक्टूबर, 1924
90.	विनोद	नवम्बर, 1924
91.	सवा सेर गेहूँ	”
92.	तेंतर	दिसम्बर, 1924
93.	डिक्री के रुपये	जनवरी, 1925
94.	धिक्कार	फरवरी, 1925
95.	नरक का मार्ग	मार्च, 1925
96.	सभ्यता का रहस्य	”
97.	मन्दिर और मसजिद	अप्रैल, 1925
98.	विश्वास	”
99.	स्त्री और पुरुष	मई-जून, 1925

100.	भाड़े का टट्टू	जुलाई, 1925
101.	माता का हृदय	”
102.	चोरी	सितम्बर, 1925
103.	स्वर्ग की देवी	”
104.	दण्ड	अक्टूबर, 1925
105.	लैला	जनवरी, 1926
106.	शूद्रा	”
107.	मन्त्र	फरवरी, 1926
108.	कजाकी	अप्रैल, 1926
109.	प्रेम-सूत्र	”
110.	बैंक का दिवाला	जून, 1926
111.	शान्ति	”
112.	बाबाजी का भोग	जुलाई, 1926
113.	लांछन	अगस्त, 1926
114.	सम्पादक मोटेराम शास्त्री	सितम्बर, 1926
115.	रामलीला	अक्टूबर, 1926
116.	निमन्त्रण	नवम्बर, 1926
117.	आधार	दिसम्बर, 1926
118.	परीक्षा	”
119.	बहिष्कार	”
120.	हिंसा परमो धर्मः	”
121.	गुरु-मन्त्र	”
122.	सती	मार्च, 1927

123.	कामना-तरु	अप्रैल, 1927
124.	मन्दिर	मई, 1927
125.	सुजान-भगत	मई, 1927
126.	मांगे की घड़ी	जुलाई, 1927
127.	आत्म-संगीत	अगस्त, 1927
128.	एक्ट्रेस	अक्टूबर, 1927
129.	अग्नि-समाधि	जनवरी, 1928
130.	मोटेरामजी शास्त्री	”
131.	दो सखियाँ	फरवरी-मई, 1928
132.	मन्त्र-2	मार्च, 1928
133.	पिसनहारी का कुआँ	जून, 1928
134.	दारोगाजी	अगस्त, 1928
135.	सुहाग का शव	अगस्त-सितम्बर, 1928
136.	बोहनी	7 अक्टूबर, 1928
137.	अभिलाषा	अक्टूबर, 1928
138.	विद्रोही	नवम्बर, 1928
139.	आंसुओं की होली	”
140.	आगा-पीछा	दिसम्बर, 1928
141.	हस्तीफ़ा	”
142.	प्रायश्चित	जनवरी, 1929
143.	खुचड़	फरवरी, 1929
144.	प्रेम की होली	23 मार्च, 1929
145.	फ़ातिहा	मार्च, 1929

146.	लाल फ़ीता	मार्च, 1929
147.	पर्वत-यात्रा	अप्रैल, 1929
148.	भूत	जुलाई, 1929
149.	माँ	”
150.	गमी	31 अगस्त, 1929
151.	कानूनी कुमार	अगस्त, 1929
152.	अलग्योझा	अक्टूबर, 1929
153.	कप्तान साहब	नवम्बर, 1929
154.	घर जमाई	”
155.	जिहाद	”
156.	कवच	दिसम्बर, 1929
157.	घासवाली	”
158.	दो कब्रें	जनवरी, 1930
159.	धिक्कार	फरवरी, 1930
160.	जुलूस	मार्च, 1930
161.	सुभागी	”
162.	पत्नी से पति	अप्रैल, 1930
163.	समर-यात्रा	”
164.	पूस की रात	मई, 1930
165.	शराब की दूकान	”
166.	मैकू	जून, 1930
167.	स्वप्न	जुलाई, 1930
168.	धिक्कार	30 अक्टूबर, 1930

169.	आहुति	नवम्बर, 1930
170.	सद्गति	दिसम्बर, 1930
171.	उन्माद	जनवरी, 1931
172.	ढपोर शंख	जनवरी-मार्च, 1931
173.	जेल	फरवरी, 1931
174.	लांछन	"
175.	आखिरी लीला	अप्रैल, 1931
176.	डिमांस्ट्रेशन	"
177.	होली का उपहार	"
178.	प्रेरणा	मई, 1931
179.	प्रेम का उदय	जून, 1931
180.	शिकार	जुलाई-अगस्त, 1931
181.	तखान	सितम्बर, 1931
182.	स्वामिनी	"
183.	दो बैलों की कथा	अक्टूबर, 1931
184.	लेखक	नवम्बर, 1931
185.	सौत	दसम्बर, 1931
186.	मृतक-भोज	जनवरी, 1932
187.	गिला	अप्रैल, 1932
188.	चमत्कार	"
189.	नया विवाह	मई, 1932
190.	कुत्सा	जुलाई, 1932
191.	झांकी	22 अगस्त, 1932

192.	ठाकुर का कुआं	29 अगस्त, 1932
193.	अनुभव	अक्टूबर, 1932
194.	कुसुम	”
195.	तगादा	”
196.	सती	”
197.	डामुल का कैदी	अक्टूबर-नवम्बर, 1932
198.	बेटों वाली विधवा	नवम्बर, 1932
199.	कायर	जनवरी, 1933
200.	नेडर	”
201.	गुल्ली-डंडा	फरवरी, 1933
202.	वेश्या	”
203.	रसिक सम्पादक	13 मार्च, 1933
204.	बालक	अप्रैल, 1933
205.	ज्योति	मई, 1933
206.	कैदी	जुलाई, 1933
207.	ईदगाह	अगस्त, 1933
208.	दिल की रानी	नवम्बर, 1933
209.	नशा	फरवरी, 1934
210.	शान्ति	”
211.	मनोवृत्ति	मार्च, 1934
212.	जादू	अप्रैल-मई, 1934
213.	रियासत का दिवान	अप्रैल-मई, 1934
214.	दूध का दाम	जुलाई, 1934

215.	पण्डित मोटेराम की डायरी	जुलाई, 1934
216.	मुफ़्त का यश	अगस्त, 1934
217.	बासी भात में खुदा का साझा	अक्टूबर, 1934
218.	खुदाई फौजदार	नवम्बर, 1934
219.	बड़े भाई साहब	”
220.	देवी	अप्रैल, 1935
221.	स्मृति का पुजारी	”
222.	जीवन का शाप	जून, 1935
223.	गृह-नीति	अगस्त, 1935
224.	पैपुजी	अक्टूबर, 1935
225.	लाटरी	”
226.	मिस पद्मा	मार्च, 1936
227.	मोटर के छींटे	”
228.	कफ़न	अप्रैल, 1936
229.	दो बहनें	अगस्त, 1936
230.	रहस्य	सितम्बर, 1936
231.	कश्मीरी सेब	अक्टूबर, 1936
232.	तथ्य	फरवरी, 1936
233.	जुर्माना	मार्च, 1936
234.	यह भी नशा वह भी नशा	मार्च, 1936

'गुफ्तधन' भाग-1, 2 और 'प्रेमचंद की अप्राप्य कहानियाँ' शीर्षक से प्रकाशित कहानियाँ (प्रकाशन वर्ष के अनुसार)

1.	अन्तिम शान्ति	1935
2.	अन्धेर	जुलाई, 1962
3.	अपनी करनी	"
4.	अनाथ लड़की	"
5.	अमृत	"
6.	आखिरी तोहफ़ा	"
7.	आखिरी मंज़िल	"
8.	आल्हा	"
9.	कर्मों का फल	"
10.	कातिल	"
11.	कोई दुख न हो तो बकरी खरीद लो	"
12.	क्रिकेट मैच	जुलाई, 1962
13.	खुदी	"
14.	गरत की क टार	"
15.	घमण्ड का पुतला	"
16.	तांगे वाले की बड़	"
17.	तिरसूल	"
18.	दुनिया का सबसे अनमोल रत्न	"
19.	दूसरी शादी	"
20.	देवी	"

21. नसीहतों का दफ़्तर ”
22. नादान दोस्त ”
23. नेकी ”
24. प्रतिशोध ”
25. बड़े बाबू ”
26. बन्द दरवाज़ा ”
27. बांका ज़मींदार ”
28. मनावन ”
29. मिलाप ”
30. मुबारक बीमारी ”
31. राजहठ ”
32. राष्ट्र का सेवक ”
33. वफ़ा का खंजर ”
34. वासना की कड़ियाँ ”
35. विक्रमादित्य का तेगा ”
36. विजय ”
37. शादी की वजह ”
38. शेख मखमूर ”
39. शोक का पुरस्कार ”
40. सांसारिक प्रेम और देश-प्रेम ”
41. सिर्फ एक आवाज ”
42. स्वांग ”
43. होली की छुट्टी

44.	त्रिया चरित्र	”
45.	दोनों तरफ़ से	अक्टूबर, 1976
46.	रूहे स्याह	जुलाई, 1977
47.	करिश्मा-ए-इस्तिकाम	जुलाई, 1978
48.	आबेहयात	1980
49.	कातिल की माँ	”
50.	खौफ़े रुसवाई	”
51.	बड़ी बहन	”
52.	बरात	”
53.	रोशनी	”
54.	विराग	”
55.	शुद्धि	”

सहायक ग्रंथ सूची

आधार ग्रन्थ

1.	'कफ़न' संग्रह	मुंशी प्रेमचंद संपादक - अमृतराय हंस प्रकाशन, इलाहाबाद नवीन संस्करण-1988
2.	प्रसाद की संपूर्ण कहानियाँ	जयशंकर प्रसाद भारती भाषा प्रकाशन शाहदारा, दिल्ली प्रथम संस्करण-1988
3.	प्रसाद ग्रन्थावली खण्ड-4 (कहानी-निबंध)	जयशंकर प्रसाद भारतीय ग्रन्थ निकेतन, नई दिल्ली प्र.सं-1988
4.	मानसरोवर भाग-1	मुंशी प्रेमचंद भारतीय ग्रन्थ निकेतन, नई दिल्ली प्र.सं-1992
5.	मानसरोवर, भाग-2	मुंशी प्रेमचंद भारतीय ग्रन्थ निकेतन, नई दिल्ली प्र.सं-1992
6.	मानसरोवर, भाग-3	मुंशी प्रेमचंद भारतीय ग्रन्थ निकेतन, नई दिल्ली प्र.सं-1992

7. मानसरोवर, भाग-4 — मुंशी प्रेमचंद
भारतीय ग्रन्थ निकेतन, नई दिल्ली
प्र.सं-1992

8. मानसरोवर, भाग-5 — मुंशी प्रेमचंद
भारतीय ग्रन्थ निकेतन, नई दिल्ली
प्र.सं-1992

9. मानसरोवर, भाग-6 — मुंशी प्रेमचंद
भारतीय ग्रन्थ निकेतन, नई दिल्ली
प्र.सं-1992

10. मानसरोवर, भाग-7 — मुंशी प्रेमचंद
भारतीय ग्रन्थ निकेतन, नई दिल्ली
प्र.सं-1992

11. मानसरोवर, भाग-8 — मुंशी प्रेमचंद
भारतीय ग्रन्थ निकेतन, नई दिल्ली
प्र.सं-1992

अन्य कहानियाँ

1. अश्क की सर्व श्रेष्ठ कहानियाँ — उपेन्द्रनाथ अश्क
नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद
प्र.सं-1960

2. अज्ञेय की कहानियाँ-1 — अज्ञेय
सरस्वती प्रेस, बनारस
प्र.सं-1954

3. आप क्या कर करे हैं? — भैरव प्रसाद गुप्त
धारा प्रकाशन, इलाहाबाद
प्र.सं-1983

4.	इंसान पैदा हुआ	रांगेय राघव किताब महल प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद सं.
5.	इक्कीस कहानियाँ	रायकृष्णदास वाचस्पती पाठक भारती भण्डार, इलाहाबाद नौवाँ सं - वि.सं-2018
6.	इक्यावन श्रेष्ठ कहानियाँ	मुंशी प्रेमचंद दिनमान प्रकाशन, दिल्ली-6 प्र.सं-1987
7.	उसने कहा था और अन्य कहानियाँ	(संपादक) डॉ. मनोहरलाल विकास पेयर बैक्स, दिल्ली-10031 प्र.सं-1991
8.	एक छोड एक	रांगेय राघव आत्माराम एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6 प्र.सं-1963
9.	कल्लोल	विश्वंभर नाथ शर्मा, कौशिक विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा प्र.सं-1986
10.	काले साहब	उपेन्द्रनाथ अश्क नीलाभ प्रकाशन गृह, इलाहाबाद-1 प्र.सं-1950
11.	कोई शुरुआत	गंगाप्रसाद विमल राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., दिल्ली-6 प्र.सं-1973

12. गुप्तधन भाग-1	मुंशी प्रेमचंद साहित्यागार, जयपुर प्र.सं-1996
13. गुप्तधन भाग-2	मुंशी प्रेमचंद, (संपादन) अमृतराय हंस प्रकाशन, इलाहाबाद प्र.सं-1962
14. गुलेरीजी की अमर कहानियाँ	(संपादन) शक्तिधर गुलेरी सरस्वती प्रेस, बनारस पाँचवाँ सं-1959
15. छायाएँ और अन्य कहानियाँ	प्रयाग शुक्ल संभावना प्रकाशन, हापुड-245101 प्र.सं-1985
16. छोडा हुआ रास्ता	अज्ञेय राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6 प्र.सं-1975
17. जयदोल	अज्ञेय भारतीय ज्ञानपीठ, काशी तृतीय संस्करण-1962
18. जानवर और जानवर	मोहन राकेश राजकमल प्रकाशन प्रा.लि, दिल्ली प्र.सं-1958
19. जीत में हार	विश्वंभर नाथ शर्मा कौशिक विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा-1 प्र.सं-1959

20. जुदाई की शाम का गीत	उपेन्द्रनाथ अश्क नीलाभ प्रकाशन गृह, इलाहाबाद-1 प्र.सं-1958
21. जैनेन्द्र की प्रतिनिधि कहानियाँ	शिवन्दन प्रसाद पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली-6 प्र.सं-1969
22. जैनेन्द्र की कहानियाँ - प्रथम भाग	रानीमहामाया पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली प्र.सं-1978
23. जैनेन्द्र की कहानियाँ - नवाँ भाग	पूर्वोदय प्रकाशन दिल्ली प्र.सं-1964
24. जैनेन्द्र की कहानियाँ - दसवाँ भाग	पूर्वोदय प्रकाशन प्र.सं-1966
25. टूटना (और अन्य कहानियाँ)	राजेन्द्र यादव अक्षर प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली-6 प्र.सं-1966
26. देवरानी जेठानी की कहानी	(संपादन) पं. गौरीदत्त विद्यादर्पण यंत्रालय मेरठ सं-
27. दुखवा मैं कासे कहूँ	आचार्य चतुरसेन राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली द्वितीय सं-1963

28. धरती अब भी घूम रही है
विष्णु प्रभाकर
राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-16
तृतीय संस्करण-1986

29. निर्वासिन
इलाचंद जोशी
चान्द कार्यालय, इलाहाबाद
प्र.सं-1929

30. निशानियाँ
उपेन्द्रनाथ अश्क
निलाभ प्रकाशन गृह, इलाहाबाद-1
प्र.सं-1947

31. पहचान
मोहन राकेश
राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-1
द्वितीय संस्करण-1974

32. पोली इमारत
पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र
आत्माराम एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6
प्र.सं-1964

33. प्रतिनिधि कहानियाँ
जयशंकर प्रसाद
राजकमल प्रकाशन प्र.लि, नई दिल्ली
द्वितीय संस्करण-1990

34. प्रतिनिधि कहानियाँ
यशपाल
राजकमल प्रकाशन प्रा.लि.
नई दिल्ली
प्र.सं-1997

35. प्रासंगिक कहानियाँ
मार्कण्डेय (भूमिका)
लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-
प्रथम संस्करण-2003

36. प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ कहानियाँ	प्रेमचंद (संपादन) श्रीपतराय सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद प्र.सं-1965
37. बैंगन का पौधा	उपेन्द्रनाथ अश्क नीलाभ प्रकाशन गृह, इलाहाबाद-1 प्र.सं-1950
38. मेरी प्रिय कहानियाँ	अमृतलाल नागर राजपाल एण्ड सन्ज़, नई दिल्ली पाँचवाँ सं-1981
39. मेरी प्रिय कहानियाँ	अज्ञेय राजपाल एण्ड सन्ज़, नई दिल्ली तीसरा सं-1979
40. मेरी प्रिय कहानियाँ	इलाचंद जोशी राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6 चौथा संस्करण-1978
41. मेरी प्रिय कहानियाँ	कमलेश्वर राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6 दूसरा संस्करण-1974
42. मेरी प्रिय कहानियाँ	भगवती चरण वर्मा राजकमल प्रकाशन प्रा.लि, दिल्ली-6 प्रथम संस्करण-1971
43. मेरी प्रिय कहानियाँ	भगवती प्रसाद वाजपेयी राजकमल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6 तृतीय संस्करण-1978

44. मेरी प्रिय कहानियाँ	भीष्म साहनी राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6 संस्करण-1993
45. मेरी प्रिय कहानियाँ	यशपाल राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6 पाँचवाँ संस्करण-1979
46. मुक्ता	पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली-6 प्र.सं-1964
47. मोहन राकेश की कहानियाँ (वारिस)	मोहन राकेश राजपाल एण्ड संस, दिल्ली पहला संस्करण-1972
48. ये तेरे प्रतिरूप	अज्ञेय राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली प्र.सं-1961
49. वापसी	चन्द्र गुप्त विद्यालंकार राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-6 प्र.सं-1959
50. विपथगा	अज्ञेय नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली-110002 तीसरा संस्करण-1982
51. शरणागत	वृन्दावनलाल वर्मा मयूर प्रकाशन, झाँसी पाँचवाँ संस्करण-1962

52. सरगम — अमृतराय
हंस प्रकाशन, इलाहाबाद
प्र.सं-1977

53. हृदय की प्यास — चतुरसेन शास्त्री
गंगा पुस्तक माला, लखनऊ
संस्करण - वि.सं.-1889

आलोचनात्मक ग्रंथ

1. अमृतराय की साहित्य साधना — डॉ. प्रीति रामटेके
दत्त सन्स, सदर नागपुर
प्र.सं-1990

2. अश्क का कथा साहित्य — डॉ. अहिबरन सिंह
कौशिक साहित्य सदन, दिल्ली-32
प्र.सं-1974

3. अज्ञेय का कथा-साहित्य — ओम प्रभाकर
नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-7
प्र.सं-1966

4. अज्ञेय का कथा साहित्य — डॉ. देवकृष्ण मौर्य
अतुल प्रकाशन, कानपुर-208012
प्र.सं-1994

5. आज का हिन्दी साहित्य संवेदना और दृष्टि — डॉ. रामदरश मिश्र
अभिनव प्रकाशन, दिल्ली-6
प्र.सं-1975

6. आज की हिन्दी कहानी — डॉ. धनंजय
अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद-2
प्र.सं-1969

7.	आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान	डॉ. देवराज उपाध्याय साहित्य भवन, इलाहाबाद प्र.सं-1953
8.	आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों का शिल्प-विधान	डॉ. श्यामनन्दन किशोर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर प्र.सं-1967
9.	आधुनिक हिन्दी महाकाव्यों में संवाद-तत्व	डॉ. रामबीर सिंह शर्मा राजस्थानी ग्रन्थगार, जोधपुर प्र.सं-1991
10.	'उग्र' का कथा-साहित्य	डॉ. मधुधर राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली-1 प्र.सं-1977
11.	उपन्यासकार चतुरसेन शास्त्री का कथा कौशल	डॉ. भावना मेहता संस्कृति प्रकाशन, अहमदाबाद प्र.सं-1990
12.	कथाकार जयशंकर प्रसाद	हर स्वरूप माथुर साहित्य संस्थान, कानपुर प्र.सं-1955
13.	कथाकार प्रेमचंद	डॉ. रामदरश मिश्र डॉ. ज्ञानचन्द गुप्त नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली-110002 प्र.सं-1982
14.	कथाक्रम - भाग-2	डॉ. देवेश ठाकुर मीनाक्षी प्रकाशन, नई दिल्ली संस्करण-

15. कथा-विवेचना और गद्य शिल्प
डॉ. रामविलास शर्मा
वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली-110002

16. कहानीकार भगवती प्रसाद वाजपेयी : संवेदना और शिल्प
डॉ. गोविन्दलाल छाबड़
डॉ. लक्ष्मणदत्त गौतम
आदर्श साहित्य प्रकाशन, दिल्ली-31
प्रथम संस्करण-1972 अप्रैल

17. काव्य के रूप
डॉ. गुलाबराय
आत्माराम एण्ड संस
प्रकाशक तथा पुस्तक विक्रेता
कश्मीरी गेट, दिल्ली-6
चतुर्थ संस्करण-1958

18. कुछ विचार
प्रेमचंद
सरस्वती प्रेम
बनारस, इलाहाबाद
वर्तमान संस्करण-1961

19. जयशंकर प्रसाद
डॉ. प्रभाकर माचवे
राजपाल एण्ड सन्ज़
कश्मीरी गेट, नई दिल्ली
प्रथम संस्करण-1990

20. जयशंकर प्रसाद
आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी
भारती भण्डार, इलाहाबाद
संशोधित संस्करण-1972

21. जयशंकर प्रसाद की कहानियों में शिल्प विधान
अशोक कुमार गुप्ता
बेहरा प्रकाशन
चौडा रास्ता, जयपुर
प्रथम संस्करण-1996

22.	जयशंकर प्रसाद : वस्तु और कला	डॉ. रामेश्वरलाल खण्डेलवाल 2/35, अन्सारी रोड दरियागंज, दिल्ली-6 प्रथम संस्करण-1968 जुलाई
23.	जयशंकर प्रसाद : चिन्तन व कला	(संपादक) डॉ. इन्द्रनाथ मदान हिन्दी भवन, इलाहाबाद प्रथम संस्करण-1956
24.	जयशंकर प्रसाद साधना के विविध आयाम	(संपादक) प्रोफ. के.के. कृष्णन नंबूतिरी दोस्ती प्रकाशन, तिरुवनन्दपुरम-1 प्रथम संस्करण-1989 दिसंबर
25.	जैनेन्द्र की कहानियाँ : एक मूल्यांकन	डॉ. शकुन्तला शर्मा अभिनव प्रकाशन, दिल्ली-1 प्रथम संस्करण-1978
26.	नयी कहानी	मीरा सीकरी पराग प्रकाशन, दिल्ली-32 प्रथम संस्करण-1984
27.	नयी कहानी का शिल्प सौन्दर्य	डॉ. रामाश्रय सविता सुलभ प्रकाशन लखनऊ-226001 प्रथम संस्करण-1999
28.	नयी कहानी : प्रतिनिधि हस्ताक्षर	डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ डॉ. रंजना शर्मा जवाहर पुस्तकालय, रदर बाज़ार मधुरा-281002 प्रथम संस्करण-1981 जून

29. नाटककार मोहन राकेश : संवाद शिल्प	मदन लाल दिनमान प्रकाशन 3014, चर्खेवालान, दिल्ली-6 प्रथम संस्करण-1990
30. प्रसाद : एक आलोचनात्मक सर्वेक्षण	डॉ. रामप्रसाद मिश्र पल्लव प्रकाशन, 1458 मालिवाड़ा दिल्ली-6 प्रथम संस्करण-1979
31. प्रसाद का कथा साहित्य	डॉ. गिरीश रस्तोगी जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव द माक्मिलन कंपनी ऑफ इंडिया लमिटड प्रथम संस्करण-1978
32. प्रसाद का गद्य	सूर्य प्रसाद दीक्षित राधाकृष्ण प्रकाशन दरियागंज, दिल्ली-6 प्रथम संस्करण-1968
33. प्रसाद के नाटक : रचना और प्रक्रिया	डॉ. जगदीशप्रसाद श्रीवास्तव साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद प्रथम संस्करण-1976
34. प्रसाद के नाटकों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन	डॉ. निरुपमा मेहता अभिनव भारती प्रकाशन, इलाहाबाद प्र. संस्करण-1974
35. प्रसाद की कहानियाँ	केदारनाथ शुक्ल सरस्वती मन्दिर, जतनबर, बनारस प्र.सं-1950

36. प्रसाद की कहानियाँ : प्रवृत्तिमूलक विश्लेषण	एम.टी. नरसिंहाचारी नन्दन प्रकाशन रानीकटरा, लखनऊ-3 प्र.सं-1970 मार्च
37. प्रसाद की दार्शनिक चेतना	डॉ. चक्रवर्ती गन्थम प्रकाशन, रामबाग, कानपुर प्रथम संस्करण-1965
38. प्रेमचंद	डॉ. कमलकिशोर गोयनका हिन्दी पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-32 प्र.सं-1980
39. प्रेमचंद	डॉ. रामविलास शर्मा सरस्वति प्रेस, बनारस प्र.सं-1941 अप्रैल
40. प्रेमचंद और उनका युग	डॉ. रामविलास शर्मा राजकमल प्रकाशन लिमिटेड 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नइ दिल्ली-2 द्वि.सं-1995
41. प्रेमचंद कता साहित्य : समीक्षा और मूल्यांकन	डॉ. धर्मध्वज त्रिपाठी प्रेम प्रकाशन मन्दिर 3012, चर्खेवालान, दिल्ली-6 प्र.सं-1992
42. प्रेमचंद का पुनर्मूल्यांकन	शंभुनाथ नेशनल पब्लिशिंग हाउस 23, दरियागंज, नई दिल्ली-2 प्र.सं-1988

43.	प्रेमचंद : उनकी कहानी कला	डॉ. सत्येन्द्र साहित्य रत्न भण्डार, आगरा द्वितीय संस्करण
44.	प्रेमचंद एक अध्ययन	डॉ. रामरतन भटनागर किताब महल, प्रयाग प्र.सं-1944
45.	प्रेमचंद और उनका युग	डॉ. रामविलास शर्मा राजकमल प्रकाशन, दिल्ली-6 प्र.सं-1967
46.	प्रेमचंद के आयाम	डॉ. ए. अरविन्दाक्षन (संपादक) राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली प्र.सं-2006
47.	प्रेमचंद पूर्व के कथाकार और उनका युग	डॉ. लक्ष्मणसिंह बिष्ट रचना प्रकाशन, इलाहाबाद प्र.सं-1972
48.	प्रेमचंद की कहानियों का प्रवृत्तिमूलक अध्ययन	डॉ. रामानुज उपाध्याय जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद प्र.सं-2000
49.	प्रेमचंद : विविध आयाम	(संपादक) दिनेश प्रसाद सिंह अनुपम प्रकाशन, पटना प्र.सं-1983
50.	प्रेमचंद विमर्श	(संपादक) डॉ. रवीन्द्र कुमार रवि डॉ. सतीशकुमार राय अभिधा प्रकाशन रामदयालु नगर, मुजफ्फरपुर, दिल्ली-2 प्र.सं-2008

51. प्रेमचंद : व्यक्ति और साहित्यकार	मन्मथनाथ गुप्त सरस्वती प्रेस 5, सरदार पटेल मार्ग, इलाहाबाद प्र.सं-1961
52. प्रेमचंद साहित्य में व्यक्ति और समाज	डॉ. रक्षापुरी आत्माराम एण्ड सन्स, नई दिल्ली-6 प्र.सं-1970
53. प्रेमचंद साहित्य संदर्भ	डॉ. लक्ष्मीकान्त पाण्डेय रचना प्रकाशन, इलाहाबाद प्र.सं.
54. प्रेमचंद : साहित्यिक विवेचन	नन्ददुलारे वाजपेयी हिन्दी भवन, जलन्धर प्र.सं. 1952
55. प्रेमचन्दोत्तर कहानी साहित्य	डॉ. राधेश्याम गुप्त (1937-1967 तक) विमल प्रकाशन, जयपुर-3 प्र.सं-1970
56. बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध हिन्दी कहानी	डॉ. नरेन्द्र मोहन कादम्बरी प्रकाशन, दिल्ली-7 प्र.सं-1996
57. रांगेय राघव का कथा साहित्य	डॉ. उमा त्रिपाठी विकास प्रकाशन, कानपुर-27 प्र.सं-1998
58. वृन्दावनलाल वर्मा	रामदरश मिश्र एम. चन्द एण्ड कंपनी, नई दिल्ली दूसरा संस्करण

59.	शैली विज्ञान और प्रेमचंद की भाषा	डॉ. सुरेश कुमार मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड दिल्ली-32 प्र.सं-1978
60.	समकालीन कहानी की पहचान	डॉ. नरेन्द्र मोहन प्रवीणा प्रकाशन, दिल्ली प्र.सं-1987
61.	समकालीन कहानी : समान्तर कहानी	डॉ. विनय माकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड मद्रास प्र.सं-1977
62.	समकालीन कहानी : सोच और समझ	डॉ. पुष्पपाल सिंह आत्माराम एण्ड संस, कश्मीरीगेट, दिल्ली प्र.सं-1986
63.	समकालीन हिन्दी कहानी का परिदृश्य	रघुवर दयाल पंचशील प्रकाशन फिल्म कॉलोनी, जयपुर-302003 प्र.सं-1988
64.	साठोत्तरी कहानी में मानवीय मूल्य	विनीता अरोरा नमन प्रकाशन दरियागंज, नई दिल्ली-2 प्र.सं-1999
65.	साठोत्तरी हिन्दी कहानी और राजनीतिक चेतना	डॉ. जितेन्द्र वत्स साहित्य रत्नाकर, कानपुर-12 प्र.सं-1989

66. साठोत्तरी हिन्दी कहानी में पात्र और चरित्र चित्रण	डॉ. राम प्रसाद जयभारती प्रकाशन, इलाहाबाद-3 प्र.सं-1995
67. साहित्यालोचन के सिद्धान्त	डॉ. रवीन्द्र कुमार जैन नेशनल पब्लिशिंग हाउस दरियागंज, नई दिल्ली-2 प्र.सं-1990
68. स्वतन्त्रतापूर्व हिन्दी और तेलुगु कहानी	डॉ. शेख मुहम्मद इकबाल कदंप प्रकाशन दरियागंज, नई दिल्ली-2 प्र.सं-1988
69. स्वतन्त्रता पूर्व हिन्दी महिला लेखिकाओं की कहानियों का अध्ययन	डॉ. आलीस वि.ए. सूर्यभारती प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली प्र.सं-1996 अक्तूबर
70. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में ग्राम्य जीवन और संस्कृति	डॉ. राजेन्द्र कुमार परिमल पब्लिकेशन्स शक्तिनगर, दिल्ली प्र.सं-1988
71. हिन्दी उपन्यासों में कथा-शिल्प का विकास	डॉ. देवराज उपाध्याय साहित्य भवन, इलाहाबाद दू.सं-1963
72. हिन्दी कथा साहित्य का इतिहास	डॉ. हेतु भारद्वाज पंचशील प्रकाशन फिल्म कॉलोनी, जयपुर-302003 प्र.सं-2005

73. हिन्दी कहानी : आठवाँ दशक	मधुर सप्रेती इन्दु प्रकाशन अचल तालाब, अलीगढ़-202001 प्र.सं-1984
74. हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान	डॉ. देवराज उपाध्याय साहित्य भवन, इलाहाबाद दूसरा संस्करण-1963
75. हिन्दी कहानी : अंतरंग पहचान	डॉ. रामदरश मिश्र नेशनल पब्लिशिंग हाउस दरियागंज, नई दिल्ली-110002 प्र.सं-1977
76. हिन्दी कहानी : उद्‌भव और विकास	डॉ. सुरेश सिनहा अशोक प्रकाशन, नई सड़क दिल्ली-6 प्र.सं-1967
77. हिन्दी कहानी : एक अन्तर्यात्रा	डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ गिश्नार प्रकाशन पिलाजीगज, उत्तर गुजरात-384002 प्र.सं-
78. हिन्दी कहानी : परम्परा और प्रगति	हरदयाल वाणी प्रकाशन 21-ए, दरियागंज, नई दिल्ली-2 प्र.सं-
79. हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया	डॉ. परमानंद श्रीवास्तव गन्थन प्रकाशन रामबाग, कानपुर-1 प्र.सं-1965

80. हिन्दी कहानी : समीक्षा और संदर्भ	डॉ. विवेकी राय राजीव प्रकाशन, अलोपीबाग कालोनी इलाहाबाद-6 प्र.सं-1985
81. हिन्दी कहानी : प्रक्रिया और पाठ	डॉ. सुरेन्द्र चौधरी राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लमिटेड दरियागंज, नई दिल्ली-32 प्र.सं-1995
82. हिन्दी कहानी : संरचना और संवेदना	डॉ. साधना शाह वाणी प्रकाशन दरियागंज, नई दिल्ली-110002 प्र.सं-
83. हिन्दी कहानियों में शिल्प विधि का विकास	डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल साहित्य भवन लिमिटेड, इलाहाबाद प्र.सं-1953
84. हिन्दी के प्रमुख कहानीकार	श्री. राजनाथ शर्मा विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा प्र.सं-1961
85. हिन्दी नाटक	डॉ. बच्चन सिंह राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड जगतपुरी, दिल्ली-51 पहला संस्करण-1989
86. हिन्दी नाटकों में शिल्पविधि का विकास	डॉ. शान्ति मलिका नेशनल प्रकाशन हाउस, दिल्ली प्र.सं-1970

87. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास
डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी
लोकभारती प्रकाशन
महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद
प्र.सं-1986 जुलाई

88. हिन्दी साहित्य का इतिहास
डॉ. चातक एवं प्रो राजकुमार शर्मा
कॉलेज बुक डिपो, जयपुर-2
प्र.सं-

89. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास
बच्चन सिंह
राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
दरियागंज, नई दिल्ली-2
प्र.सं-1996

90. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास (द्वितीय खण्ड)
गणपति चन्द्र गुप्त
लोकभारती प्रकाशन
महात्मागाँधी मार्ग, इलाहाबाद-1
षष्ठ संस्करण-1998

91. हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास
डॉ. विद्यासागर दयाल
शान्ति प्रकाशन, हैदराबाद-500001
प्र.सं-1982

पत्रिकाएँ

1. आलोचना
जुलाई-सितम्बर 2001
अंक-2, वर्ष-32

2. मेरठ विश्वविद्यालय हिन्दी परिषद शोध पत्रिका
कृष्णलाल शर्मा
मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ
प्र.सं-1981 मार्च

3.	वर्तमान साहित्य	जुलाई 2005 वर्ष-22 RN पंजीकरण संस्था-40342/83 (प्रकाशक) नमिता सिंह अवंतिका-1, रामघाट रोड अलीगढ़-202001
4.	वर्तमान साहित्य	जून-2006 वर्ष-22
5.	वर्तमान साहित्य	जुलाई-2006 वर्ष-22
6.	वर्तमान साहित्य	अगस्त-2006 वर्ष-22
7.	वर्तमान साहित्य	सितम्बर-2007 वर्ष-22
8.	संग्रथन	नवंबर-1997 वर्ष-11, अंक-5
9.	समीक्षा	जुलाई-सितंबर-1999 वर्ष-32, अंक-2 संपादक - गोपाल राय (प्रकाशन तिथि-15.9.1999)
10.	समीक्षा	जुलाई-सितम्बर-2001 अंक-2, वर्ष-32

English Books

1. An Introduction to the Study of Literature - W.H. Hudsons - Ist Edition-1958

2. Dialogue in American Drama - Ruby. Caan

3. Literature and Art - Carl Marx, Frederick Angels - First Edition-1956 - Current Book House

4. The Art of the Play - Herman Aould

5. The Construction of a Play - Raichel Kather

6. The Ocean of Story (Vol.I) - N.M. Penzer - Ist Edition-1924

लव्ली वर्गीज़
चात्तेनिक्काड़
किष़क्केक्करा
मुवाट्टुपुष़ा पि.ओ
एरणाकुलम-686661
केरल।

लव्ली वर्गीज़ का जन्म केरल राज्य के एरणाकुलम जिले के मुवाट्टुपुष़ा शहर में 30 जनवरी, 1973 में हुआ था। प्रारंभिक शिक्षा मुवाट्टुपुष़ा के एक सरकारी स्कूल में हुई। बि.एड. की उपाधि हासिल करने के बाद उच्च शिक्षा के लिए मुवाट्टुपुष़ा के निर्मला कॉलेज में भर्ती हुई और 2001 में हिन्दी विषय में एम.ए. की उपाधि महात्मा गाँधी विश्वविद्यालय से चान्दी पदक से प्राप्त की। 2001 में मुवाट्टुपुष़ा के निर्मला पब्लिक स्कूल में प्राथमिक अध्यापिका के रूप में नियुक्ति हुई। दो साल के बाद स्नातकोत्तर शिक्षिका बनकर कोट्टयम के मौंड कार्मल उच्च माध्यमिक स्कूल में अध्यापन का काम संभाला। तीन साल वहाँ काम करने के बाद नवंबर 2006 से कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय में प्रोफसर डॉ. एन.जी. देवकी के निदेशन में अनुसंधान कार्य शुरू किया। दो साल बीत जाने पर केन्द्रीय विद्यालय संगठन में स्नातकोत्तर हिन्दी शिक्षिका के पद पर नियुक्त हुई। शोध कार्य के अध्ययन के दौरान दो राष्ट्रीय संगोष्ठियों में शोध प्रपत्र प्रस्तुतीकरण हुआ। कोच्चिन विश्वविद्यालय के वार्षिक शोध पत्रिका 'अनुशीलन', हिन्दी विद्यापीठ, तिरुवनन्तपुरम की मासिक पत्रिका 'संग्रथन' और विकल्प की कविता विशेषांक, 'कविता का वर्तमान' में शोध प्रपत्रों का प्रकाशन हुआ। आजकल केन्द्रीय विद्यालय, कंजिकोड़, पालक्काड में स्नातकोत्तर शिक्षिका के रूप में कार्यरत है। अब 'प्रेमचंद और जयशंकर प्रसाद की कहानियों के संवाद तत्व का विश्लेषणात्मक अनुशीलन' शीर्षक विषय पर पी.एच.डी उपाधि के लिए शोध प्रबंध प्रस्तुत कर रही हूँ।